



लोकायतन



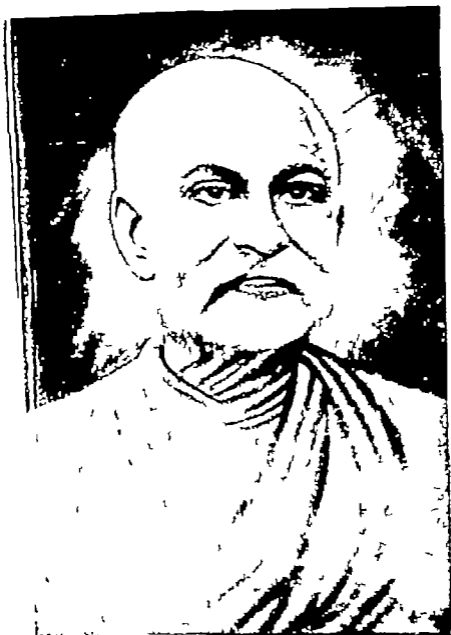


लोकयान

मंगलायतनी हरि

संगत
श्री युगिप्रानयन पत्त

समन्तव्यस्युक्त प्रकाशन



श्री गंगाधर पत

शभ हिमालय मे अतर म
पुण्य शिवर सुम रिम पहिठित,
युग पेरित भु-भग गीत यह
पद पफो पर पीति समरित् '

मूल्य २५ रुपये

प्रकाशक

राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

दिल्ली ६ छात्रा पटना ६

मुद्रक

बोम्बेकाय कपूर

ज्ञानमण्डल लिमिटेड कबीर चौरा वाराणसी

१९९८ २०

१९६४, श्री सुमित्रानन्दन पंत इलाहाबाद

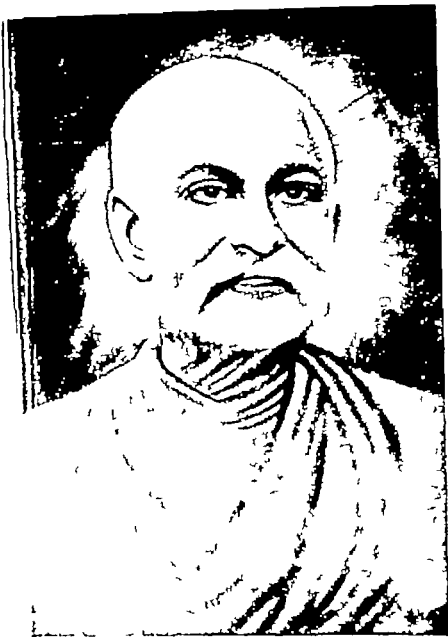
LOKAYATAN

by

Shri Sumitranandan Pant

'सोहाय्यतम' का अंगरेजी में ८ अक्टूबर, सन् '५६ की किया था। संघोपपत्र, यह ८ अक्टूबर, सन् '५६ को ही समाप्त भी हो गया। प्रायःपरा के अन्त में जन मावना के छन्द में बड़ी, युग जीवन की इस घायल कथा को काव्य प्रेमी पाठकों को भेंट करने में मुझे प्रसन्नता है। युग जीवन के सम्बन्ध में लिखना कठिन होता है क्योंकि उसके स्तर बतमान पीढ़ियों की चेतना के भीतर होते हैं। इसीलिए मैंने कथावस्तु के अथवा एक संयोजन में आद्यत संघर्ष से काम लेकर केवल अविनाश तत्त्वों एवं घटनाओं ही का समावेश किया है। गांधीजी के अतिरिक्त इसके दृश्य मात्र कल्पित होने पर भी उनके द्वारा मेरे अति जीवन की अनुभूति एवं सत्य को बाणी मिली है। इसके अतिरिक्त केवल मानव चेतना के पालकी बाहक भर हैं। यदि मेरा कवि प्रयास इस लक्ष्य के अन्तर्गत ही युग पाया के भीतर से विकासकारी मानवता के जीवन सत्य की शक्ति प्रस्तुत कर सके तो मैं अपने कृत्रिम अन्त को सफल समझूँगा। युगवस्तु।

—सुमित्रानन्दन पंत



श्री गणारत पत

शुभ हिमालय-से अतर में
पुण्य शिखर तुम गित प्रतिष्ठित,
युग पेरित भू-चक्र गीत यह
पद पदो पर पीति समर्पित ।

प्रथम खण्ड

शास्त्र परिचय

तुम्हें सौंपती लो, यह कलक प्रभुत घट,
नर नारी के रस मंगल से भूषित,
प्रकृति पुरुष की शुद्ध प्रीति का पावक
साधधान बन जाय न बिप बन भू हित ।

पूर्व स्मृति
(मात्स्या)



वाग्देवीति धमर क्वि पिर प्रनाम
 जपति पार्वती परमरकर प्रिय राम ।

बाणी शुभ्र नितंबमयी शीया पर
 बरमाधो चित्पावक कण स्वामिम स्वट,
 मुक्त बस्त्रमा हूंम मार मानम में
 छोसे मोमा पंघ दिगंत अगोबर ।

प्राण सनित में ह्यय कमल पर शमित
 स्वयं प्रभ मिठ भाव रूप, धंठ स्थित
 ध्यान मौन समपता में तुम करनी
 धर्षोन्मुख धम्मकत मलय स्वर ध्वंजित ।

त्रिमयी मूमा-बीणा व ककुमों स
 प्रभव-मुगत निठ प्रकृति पुत्र स याजित
 स्पुन 'मूयम जड़ धंजन अंवाग स
 जन-धु पय रखने मव शीवत क्विठ ।

परब्रह्म से मां ब्रह्ममयि मन्मय
 एति रज ही स्वयं गरिमाया में मुक्ति
 रचो मगमायतन मोह बन्धापी
 निर मयप्रता में धमीय म प्रेरित ।

जिस पति में बँध बने सूर्य तेजोभवस
रजत चन्द्र बट हुए प्रमृत रस पूरित
जस जय में बाँधो कवि उर संती को
परम शक्ति जिस पति जय में धारमस्थित ।

मध्य कल्प का प्रादि काव्य यह धनगढ़
वन्य कसा—मृदु फूल गुम सँग गुफित
सिंह नाद कोकिल स्वर पावक व्यंकक
नव भू मानव चरणों पर रस धपित ।

शब्द रत्न बहु कौन ? वर्णमाला का
ज्योति तरल उर में शब्दा गुन शोक्ति
नाम नीच ध्रुव रूप हृम्य जिस पर स्थित
नव कल्पों में नवम गुणों में विकसित ।

मानव उर, युग सागर का मंचन कर
नव रत्नों से करो ज्ञान पत्र धीपित
दूर, पूर्व पश्चिम के दिग् छोरों पर
इन्द्रधनुष स्मित प्रीति सेतु कर विरचित ।

भारत चेतस् को कर शोक समन्वित
भू जीवन की घोर करो रत्न ध बिच्छ
बहु विरक्त जीवन निषेध विष मुच्छित
जाति पाति मृत कड़ि रीति से श्री हृत ।

पर भाषा, पर संस्कृति छोड़े युग के
प्रंतर गौरव शून्य सिद्ध मुक्त पंडित
मनोर्मय निष्किय पर-धी संजय त्रिव
बहिरंतर के दैव्यों में शत खंडित ।

स्वर्ष सूख में कविते गुपी जन मन
मुय बाणी में नव मानस कर निमित्त
हो कृतापे जन जीवन मन का अनुभव
निज भाषा में नाव कोय वा अतुमित ।

जय जीवन के तलों को गुन धुन कर
प्रमुख कृतियों की पुनी कर निमित्त
कसा मूय बँट बुनी लोक जीवन बट
मानव उर कर नव भू गरिजा मंडित ।

छंद प्रथित कर खंड धरा मानम का
 जीवन रचना करो संत में नूतन
 कृतियों क मृत संस्कारों स मरित
 पुष्ट का हो मानम का नव चेतन ।
 त्रिसको बेधा ऊर्ध्व-प्राण भर हर ने
 स्मर ने महज नवामा मधु सायक धर
 त्रिने राम ने उभय छोर प्रतिभ्रम कर
 क्रिया प्रीति नठ धरा चेतना को कर ।
 मनुज मेर को परिवारिनी बनाकर
 मत्त तार कर सत्य सोच क संकृत
 प्रभिनव स्वर सिपि रपो बिम्ब जीवन की
 प्राण घनाहत पर रह स्वत प्रतिच्छिन्न ।
 रमि करों से छू उर के तारों का
 पय पय पर कर ठंडिल धमि मुखरित
 घन मुख स्वर्गों से घमृत स्फुरण भर
 मोह बह में करा स्वर्ग मधु मन्त्रित ।
 कैंने कह दूँ इडा सुख युग मनु से
 भया संगे कह करे मर नग रोहप
 प्रातमबोध की निच्छिन्न समरस स्थिति को
 जन भू पय पर करना सक्रिय विपरप ।
 घात सर्व मुख म मणि छीन - प्रथोमुख
 प्रबचेतन पय करा चेतन ज्योतिष्ठ
 बिजबूट से मीच धरा कुहर में
 उतर प्रबतन निर्भर जहाँ बिर निर्झिन !

उदर गुग में बीन वहाँ घन ग्मिष्ठ
 स्वर्ग शिखा सी भद्र रही पर्वत तम
 यह निरपेयन सुवन धरा मानम का
 घमनिष्ठ तपों मा मरित भव मणि क्रम ।
 यहाँ मय ज्य्या पर धरती सोई
 कासिय कुहल ने केष्टिन इद्रामन -
 स्वर्ग गुनी मा भूब इन्द्रमुख युग के
 कवि का करती बुँछ हिमा धरिवाणन !

कौन मौन बह ? अपसक, पूर्व स्मृति ही
 सृष्टि स्वप्न ही निधि पलकों पर प्रकृत
 प्रमा निबधित प्रतिपत् शक्ति लखा ही
 सत्य मूल नब प्राप्ता भंङ्गुर ही सित !
 साक प्रीति में मूर्तित तन्मयता ही
 प्रादि शक्ति ही नित नब स्वयं प्रकाशित
 सुरधनु षट में सिपटी शुभ किरण ही
 कौन ज्योति शाश्वत निजीय में जामुत !
 भू षट की बेतना मुघा घाघ ही
 तन मन प्राणों के भुबनों में वितरित
 नीस नृप्य में पद रज हरित घण का
 मत्त सिन्धु जल से रघती जो सिञ्चित !
 अप्रकृत तम ! ज्योति शिरा ही वैठी
 भ्रंघ महनशाभों को करने बीपित
 जड़ स जीवन में जीवन से मन में
 बिभ्रसित करने निज वैतम्य अपरिमित !
 भ्रंघकार के निबिड़ मंच पर जैसे
 चन्द्रकसा रह सनती नहीं तिरस्कृत
 गत ऊपार्थों शत सुरधनु बुतों से
 प्राकृत ही बह करती वृष्टि जमलकृत !

ध्यान मान अतिमेप मौन नत पितवन
 पीस कमल बन मुंदते जाते प्रतिपम
 युग संख्या के घने छुनहले तम स
 कंधों पर महाराज कोमल कुंठस !

पूर्व जगद बुध नत भू जीवन साछन
 भास मुकुर पर जोमित बन स्मृति कज्जल
 युग प्रभात ही घट्टे छुले तितित्तों पर
 ज्योति रेख मानस ही स्मित मुक्तोद्भवस !

शुभ पयोधर, प्रीति मिथु शिखरों मे
 स्वर्ग मार्य के मधु उमार मे स्पन्दन
 जीवन मूर्खों की धमूय मजिपों मे
 बन हर धनय प्रकाश मे मंदिन !

रागात्मक कंचुक पंचक देही में
 मरद उपा सिपटी हा हिम सिपटों पर,
 पोत दौम का मसुष मार प्रसों स
 मरता स्वर्णिम ज्वाल्ना का सा निर्भर !
 माहू मठाओं में वह सहज समेटे
 मू पीबन की बदना ममता निम्बर,
 प्रेम गौर हो डोर, छोर युम हा मुज
 राग मूत्र मुडु बर मुष मनाहर !
 मोड सुषर पुटन बीठी वह निरबन
 मुष्र धानि जपनो म धम्य बुयासन
 कनक कौत्र पर बाँधे वृग कटि तट पर
 धने विबुक बरतल पर, स्थिर गत धानन !
 स्वर्ण हरित मखमली शस्य से पाबन
 धयोभाग—मू के प्राणों का जीवन
 धरती की हो हठी ज्वाल में सिपटा
 गध मरद मना धनंत मघ पीबन !
 मरव मूत्र परतल छू फूसों में हंस
 मोर एह बरसों पर बन बर पापन
 धरा स्वग की उपमा सी बह जीपित
 भावी मधु शरणा म सुरभिप्र धाबन !

बिलनपर मूत्र बाप्य इबित मत्रि मइम—
 मुनग उठे हों स्मृति में पाबक क दाप
 मूम रहा स्थिर मयनों में पगा तट
 मूत्र रहा शवनों में शरन्न एव म्वन !
 बह मुमंत्र क्या ? ऐ, रोते क्या देवर ?
 परिगाप ? परिजाम मन करो पद मन !
 वन श्रन्न गुन रवा गिरी का मन्न
 मून गा मूम परमा म्निमित्त मगना !
 मूर्तिमती पुष्पी की बरना भी बह
 गिरी विमूर्छिता ध्यया मपिन बय्यान
 धाम बाध उब उगा देव श्रंग मुनि
 करने म बाप्पीदि म्ने मे श्वाण !

अनभे तुम निर्दोष जात रघुवर को
पूतयोनि रटते तब मूम खग मिरि बन
अन्ध अविश्चित संशय एत जन भू मन,
अविश्वास ही धरा नरक का कारण !

अनरक अय से रावण ने पत्नी को
छोड़ा था क्या ? क्या पुरातन है यह
घाई थी वह अग्नि परीक्षा देने
जन भू का दुख भार जेसने दुःसह !

यह इतिहास न हो तप्यों पर अस्मिन्
भारत भू मानस का सत्य समातन
देश काम पुंसिनों को खा दुबाता
यही वेतना के जीवन का प्पावन !

राम राम्य की रानी की जन सेवा
रवा भी करता जन मठ का पालन
श्रीच लोक के पुष्प श्लोक कवि ऋषि के
तमसा तट आभम में अब वह पावन !

सहसा स्फुरित हुमा स्मृति पट पर,— कैसे
धरा गर्भ में वह संतप्त समाई—
लोक कार्य करना या उसको गोपन
अवचेतन में रही तमिस्रा छाई !

मर्त्य दैन्य पीठिका स्वयं जीवन की
ख न सकेगी ज्योति तिमिर में गुंठित
संशयशील स्वभाव अरा की रज का
धी स्वचिन्म आस्था में होगा कुनुमित !

स्वयं वेतना कर का पा अदभोग्गम
चिर विकृत पथ में जन धरणी का तम
राज द्वेष हिंसा स्वर्ण सपर्यय
भू जीवन अन्धोदय के सपु अन्धम !

उने अमरक या देने निर्वातन मुन
बिहेला आत्म प्रबुद्ध मुह्य उसका मन
जन अमात्रता से जो नित्य अर्पणित
उन्हें बिसय कर करने कब भंनुर राध ?

उदय हृदय में हुए राम पुरपोत्तम
वीप्त नीलमयि पर्वत से दृग् मोहन
बोसे विचलित सी सगती तुम सीते
भूसो बीती को गत वृत्त समापन ।

मृत संस्कारों का उपचयन पू मन
बिर बनादि जड़ बतन का संवर्षण
नव प्रकाश में मड़ना तुम्हें घरा मुख
भाषी मानव के सम्मुख भीषण रण ।

चेतन ही जड़ बड ही चेतन जीवन
बुझ म पाती मूरम तत्व तार्किक मति
मन ही बाहर स्थिति न्यिति ही भीतर मन
ह्रास विकासमयी युग की गति परिणति ।

राज्य तन्त्र का मूय सिद्धि में घोमम
राम राज्य का कृपि मात्र का युग वर्षण
पत युग के जीवन मन के संवय को
अगदाति मो करता तुम्हें समर्पण !

देखोमी तुम सोकृत स्वर्णोदय
मानव जीवन मूर्खों का नव बितरण
नए कल्प की प्रसन्न व्यथा पुष्पी की
छिड़ा निषिप्त अय में बाहर भीतर रण ।

रहा मनोमय - पुरय रूप बहु मेरा
कृपि युग की मर्यादा से निर्धारित
येत इनाई या कृदुम्ब का जीवन
त्रिमयी जड़ सीमा पर या धारित ।

धम नीति संसृति विचार विधि दर्शन
बिबिध शास्त्र बहु यज्ञ नियम प्रथ माघन
शासन पद्धति अनुबंधों अनुतापन
घपित तुमका गत युग कर्म विभाजन !

हैंसी जानवी—राम, तत्व जाता तुम
स्वीकृत मुझका यह मन्त्र समर्पण
नाम का युग मे धनीन गिनत मुझमें
बनो पुनः त्रिय मा कल्प क दर्शन !

घनमे तुम निर्दोष बात रघुबर को
पूतयोनि रटते तब मूम बग गिरि बन,
घनघ्न धबिकसिद्ध सत्तप एत जन मू मन
घबिश्वास ही घरा नरक का कारण !

जनरज भय से राघव ने पत्नी को
छोड़ा था क्या ? कथा पुरातन रे यह
घाई थी वह घमि परीसा देने
जन मू का दुख भार सेमने दुःसह !

यह इतिहास न ही तथ्यों पर कल्पित
भारत मू मानस का सत्य सनातन
देन काम पुमिनों को रहा दुःखाटा
महीं चेतना के जीवन का प्मावन !

राम राज्य की रानी थी जन सेवा
राजा भी करता जन मत का पासन
बौध शोक क पुष्प स्तोत्र कवि ऋषि के
तमसा तट धाधम में घब वह पावन !

सहसा स्फुरित हुआ स्मृति पट पर,— जैसे
घरा बर्म में वह संतप्त समाई—
शोक कार्य करना था उसको मोवन
घबचेतन में रही तमिजा छाई !

मर्य ईम्य पीठिका स्वयं जीवन की
रह न सकेगी ज्योति ठिमिर में गुटित
संशयशील स्वभाव घरा की रज का
धी स्वगिम घास्था में होना कुमुमिठ !

स्पर्ध चेतना कर वा पा करजोम्बल
धिर विकास पप में जन घरनी का तम
राम ह्य हिता स्वर्दा संपर्वण
मू जीवन घदपोरप के सधु सपक्रम !

उसे स्मरण था जैसे निर्वाण मुन
बिहूना घातम प्रबुद्ध बुद्ध समका मन
जन पसाईता मे जो निरप घर्षोहित
उम्हें बिलप कर नजने बब भंमुर राज ?

उदय हृदय में हुए राम पुष्पोत्तम,
 दीप्त नीलमणि पर्वत से दृग् मोहन
 बोसे बिचसित सी समती तुम, सीठे,
 भूलो बीठी को गत कुत्त समापन ।

मृत संस्कारों का उपचेतन धू मन
 बिर घनादि जड़ भतन का संपरण
 नव प्रकाश में गड़ना तुम्हें घरा मुख
 भाबी मानव के सम्मुख भीषण रण !

चेतन ही जड़ जड़ ही चेतन जीवन
 कृम न पाठी सूक्ष्म तत्व तार्किक मति
 मन ही बाहर स्थिति स्थिति ही भीतर मन
 हास विकासमयी गुण की गति परिणति !

राज्य तन्त्र का सूर्य क्षितिज में घोसल
 राम राज्य या हृषि मज का युग दर्पण
 गत युग के जीवन मन के संक्षय को
 अगच्छाति मो करता तुम्हें समर्पण !

देखोगी तुम मोक्षतंत्र स्वर्णोदय
 मानव जीवन मूर्खों का नव बितरण
 नए कल्प की प्रसन्न व्यथा पुष्पी की
 छिड़ा निधिल जय में बाहर भीतर रण !

रहा मनोमय - पुरख रूप बहु मेरा
 हृषि युग की मर्यादा से निर्धारित
 शैत हकारि या बुद्धुम्ब का जीवन
 जिनकी जड़ सीमा पर का प्राधारित !

धर्म भीति संसृति बिचार विधि दर्शन
 विविध ज्ञास्त्र बहु यज्ञ नियम श्रुत साधन
 शासन पट्टति चतुषण चतुराधम
 धर्मित तुमका गत गुण धर्म विभाजन !

हैसी जानकी—राम तत्व ज्ञाता तुम
 रवीश्वर मुझको यह मर्बस्व समर्पण
 नाम रूप गुण मे घनीत स्थित धर्ममे
 बनो पुन, दिव्य ज्ञान ब्रह्म क दर्शन !

धनमे तुम निर्दोष जात रघुबर को
पूतयोनि रहते तब मृग जग गिरि बन
धन्य धनिकसिद्ध संक्षय रह जन भू मन,
धनिरवास ही धर नरक का कारण !

धनरत्न भय से राघव ने पत्नी को
छोड़ा था क्या ? क्या पुरातन रे बहु,
धार्मिक भी बहु धर्मि परीक्षा देने
जन भू का दुख मार छेड़ने दुःखद !

यह इतिहास न हो तर्कों पर कल्पित
भाएत भू मानस का सत्य समाप्तन
देन नाम पुत्रिनों को रहा दुःखदा
यहाँ चेतना के जीवन का प्लावन !

राम राज्य की रानी भी जन संभा
राजा भी करता जन मत का पालन
बीच शोक के पुष्प श्लाघ कवि श्रुति के
तमसा तट घाघम में धन बहु पावन !

सहसा स्फुरित हुआ स्मृति पट पर,—कैसे
धर गर्भ में बहु संतप्त समाई,—
लोक कार्य करना था उसको योषम
धनचेतन में रही तमिसा छाई !

मार्ग ईश्वर पीठिका स्वयं जीवन की
रह न सकेगी ज्योति तिमिर में गुटित
संशयगीत स्वभाव धरा की रज का
भी स्वयंम घास्या में होना कुमुमित !

स्पर्श चेतना कर था या करघोम्बल
बिर विक्रास पत्र में जन धरणी का तम
राय द्वेष हिता रपडा संक्षयन
भू जीवन धरचोर्य के लघु उदक्रम !

उने समरत्न था कैसे निर्बानन मुन
बिद्वेता धारम प्रबुद्ध बुद्ध उत्तका मन
जस जनार्दता मे जो नित्य धर्यदित
उन्हें विमम कर मरते कब भगुर राज ?

उत्तम हृदय में हुए राम पुरपोत्तम,
बीपत भीलमपि पर्वत से पुगू मोहन
बोसे विभसित सी सगती तुम सीते
भसो बीती को गत कृत समापन !

मृत संस्कारों का उपचेतन पू मन
पिर भनादि जड़ चेतन का संभर्षण
नव प्रकाश में गङ्गा तुम्हें धरा मुख,
भाबी मानव के सम्मुख भीषण रण !

चेतन ही जड़ जड़ ही चेतन जीवन
बूम न पाती मूर्ख तत्व तास्त्रिक मति
मन ही बाहर स्थिति, स्थिति ही भीतर मन
ह्रास विकासमयी गुण की गति परिमति !

राज्य राज्य का सूर्य क्षितिज में घोसल
राम राज्य या कृषि मत का युग दर्शन
गत युग के जीवन मन के संलय को
अगच्छाति मो करता तुम्हें समर्पण !

देखोगी तुम मोक्षार्त स्वर्णोदय
मानव जीवन मूर्खों का नव चितरण
नए कल्प की प्रसन्न व्यथा पृथ्वी की
छिद्रा निखिल जग में बाहर भीतर रण !

रहा मनोमय पुरस रूप बहु मेरा
कृषि युग की मर्यादा से निर्धारित
धैर्य इकाई या कुटुम्ब का जीवन
जिसकी जड़ सीमा पर या धापाहित !

धर्म नीति सत्सृष्टि विचार विधि दर्शन
विविध ज्ञान बहु धर्म नियम अत साधन
शामन पठति धनुर्बर्ष चतुराक्षर
धर्मित तुमको मन युग धर्म विभाजन !

हैती जानकी—राम तत्व माता गुण
स्वीकृत भ्रातृ पद मर्बरक समर्पण
नाम रण युग से घटीन स्थित मुझमें
बनो पुनः, द्विज जग बन्धन क दर्शन !

अश्वत्थीय अयुगलता प्रेम हमारी
 नहीं समझता भेद बुद्धि रख जन मन
 बही आनता जिसे बनाते प्रिय तुम
 गुह्य रहस्य परम बह कहते भी जन !
 प्रभु साए थ जगे कौन कह सकता ?
 अवे परम यदि मुझमें जगे असंख्य
 दपी मुझमें ही मित्र महिमा गरिमा,—
 भाव रूप सीसा भर जेप—न विस्मय !
 पुल्लोत्तम शौर्भर्ष राम नव रवि से
 विश्व धिठिज पुर पुन परम भी शोभित
 चित् समितों में पुस्त सूरज मधुरस मय
 स्वर्णम मू हृत् कमल मौन दिक् प्रहसित !
 तुम अनन्त शैतव्यों के भवि पर्वत
 शत शत गुरधनु आभाओ से मञ्जित
 भयवत् करुणा के कोमल मरकट जन
 जन मू दुख ध उर मुक्ता जस विमसित !
 शौम्य चाप शर हीन धड़े दृग सम्मुख
 शीघ्रों को नव विश्व रूप देता सुख
 जन समूह में अम प्रिय साधारण ध
 देघ रही तुम में नव मानव का मुख !
 राजा के तब सर्व एक में प्रवित
 लोच तंत्र सब सब में सहज प्रजाजब
 बंधा खेतना मुमुक्षु एक मुख वा वा
 भाव पित उठा बह सहस्र रत्न बहु जन !
 विश्व रूप भयवत् धामर तुम जन प्रिय
 नृत् शीर भर जिसक व्यक्ति परात्पर
 अभिभ्यक्ति पाता तुम में जय जीपन
 भाव सहस्रियों में उच्छ्वसित निरन्तर !
 सब बहती तुम शोष स्वकृते सीने
 विरज रूप ही में होगा मैं विहसित
 लोच कर्म में रत्न प्रजय वा मानस
 के जीवन शिल्पी देने प्रिय जन नित !

मध्य युगों से बिरल शून्य में आए
मनुज खोजते मुक्ति कम बचन स,
सबे मुक्ति ही व्यक्ति मुक्ति, मरत मत
प्राप्त मठत या विन्य यज्ञ साधन मे ।

मब विभीत जन जन्म मरण से पीड़ित
मुड़ मुड़ मत व्यक्ति - परक जीवन मृत
विमुक्त बृहत् सामाजिक जीवन क प्रति
कर्म भूमि में रह सकते कब जीवित् ।

परम तत्व पर्यंत हमारय अविगत
बही दृष्टि मति कृति न बापी जाती,
अपन को मे प्रिये दयता तुममें
तुम अपने को मुममें कश्चित पाती !

अविज्ञम का बोध न मन स मन्भव
नति बुद्धि की तार अनिबन्ध अत्रय
पूर्ण समर्पण कर जीवन मन तुमका
अन भू रचना करें मोह गग निभय !

तुम्हें करें निठ व्यक्त विश्व जीवन में
प्रति युग में भू स्वर्ग बन मुदरतर
देवि तुम्हार ही शत कर - पद मुर - नर
मुक्त कर्म अन तुम पर करें निछावर !

अमित अभीप्सा तुम भम न भू - मन की
बिसही स्वर्गिम पूति ताक क्पायता
मे निमित्त भर तुम्ही अविद्या विद्या
विगये गौने जगने निगिन जगत्तर !

निष् मए साधन तुमने भू जन का
विश्व गितिक पर हेमता स्वय युगातर,
मपन तुम्हारी मत्त साधना नीत
जड़ भू - तम विज्ञान रश्मि मे मास्तर !

प्रिये अचरन में प्रयेन कर तुमने
ही वैज्ञानिक दृष्टि अंध भू - मन का
जड़ जन का बिरतपण कर द्ये नर
एक शक्ति शक्ति बनती विमुक्त को !

युग युग से निष्क्रिय जड़ भू जीवन स्थिति
हुई विश्व सक्रिय पा तब संजीवन
युक्त प्रकृति बस से सब भौतिक मानव
नए स्वर्ग युग में कर रहा पवार्पण ।

जबस न हा रे वह समु स्वार्थों में रत
सबु बस का कर धरणी पर आबाहन
भेद बुद्धि पर जय न पा सका भू मन
विश्व एक्य ही सुखम मुक्ति का साधन !

निश्चर छी मन के शानर से धरती
देसों के धरतों में राष्ट्र विभाजित
गुप्त मुनहसे संघर्षों पर निर्मित
नव मानवता धरा स्वर्ग पर स्थापित !

अंतराश्रित वर्तमान जो प्रेयसि
भू स्तर पर वह भाबी में संपादित
भगवत् धर्म में महत् कर्म पटते नित
बहा दिवस होता कल्पों में साधित !

देख रहा मैं मनस्वरु के सम्मुख
जन भविष्य का स्वप्न तुम्हारा उम्बल
भूम रहा नत स्वर्ग मुग्ध भू पर तन
बिहैन रही बहिमा जन श्रैतन मयल !

नई श्रैतना मुघा प्रीति स्वनिम तुम
नई पात्रता देनी सब जन मन को
धारमा इन्द्रिय बीज भेद तम भ्रम हर
स्वीकृति देनी पूर्ण जगत् जीवन को !

घारि शक्ति धर्मों से स्वर्णबस का
हरना काम प्रवाह धरुम तरंगित
धूरछाह मूर्तों में मानव जय का
पम विज्ञान नीला बिलास में मुम्पित !

मून प्रकृति तुम धरा धोनि में प्रैसकर
धनक निष्ठ रह मुक्त प्रीति आत्मस्थित
करना एगों मे जड़ भू मानव क
धय स्तरों का बग्गी रही प्रधाजित !

बदल रही तुम बदल रहा तुम में जग
निबिडकल्प भूमिजा तत्काल निश्चित
भाव बोध भाषार बिचार पुरातन
नव भू जीवन प्रतिमा में नव सजित !

दास रही तुम गत सज्जा सबि मण्डन
मुक्त हो रहे मृत मर्यादा बर्धन
तुन अक्षय भव भूम दर्पण में बिम्बित
सात मर्म इष्टा कवि श्रुति को गोपन !

तुम्हें समझना चाहे यदि भू जन मन
तपगत, — व्यक्त जगत को कर दे बिस्मृत —
बेले मुझमें बेश काम से पर तुम
नाम रूप धुप देश काम में भी स्थित !

ध्यात लीन उर में उपा भगवत् करुणा
दृष्ट रूप घर होती सहज उपस्थित
उदित हो रही तुम अस्त शिखरों पर
सुमुग्धि उपा सी नव भुपमा में पण्डित !

जन धामा की संजीवनी सता में
धनि प्ररोह पिता हा ननव तपाग्बल
देख रहा तुम धरा कस के तम में
बदल बसा सी जग बरसानी भंगल !

कद्र कसा क्या गहो ? पात्रं मुग्ध गोभा
धमिनव धामा रेखाओं में धरित
भूनों का प्रिय धनुष विद्या तनु छवि का
मम मिथोने रम क शर यद्दु विरुचन !

तो वे धनुष यद्दु छाया-सै पीठ
गडमण मीना राम - पूर्ण रामायण
बदल भरत धामा महत् कृति युग क
मा बँनेयी बर सारग्य निदर्शन !

दो माताओं क प्रतिनिधि हम धामा
हनुमत् प्राणा क धरप पीण्ड कन
पिता मय्यजत युग बिष्ट मानग विधि
दिगिन्धर, धनकर धम क बर गमाशन !

घहं बुति रावण संका हुमति गढ़
विषय ब्रह्म बंदी चिति इन्द्रिय जन में
मुक्त हुई तुम मिटा अविद्या भय तम,
हनुमत् प्रेरित जमी चेतना जन में।

प्रति युग की निर्मम विकास सीमाएँ
भयबत् सत्ता होती सदसत् खंडित
मुझे मारना पड़ा रक्त विष ब्रह्ममुख
तुम्हें हृदय परिवर्तन जन का स्वीकृत !

उत्तरे का युग रहा मूक शारी क
मम सं पावन रत्न उत्तरे का मूल्यांकन,
सहमज रेखा सीमा पर धीवन की
सीक साधना मोक वृष्टि का साधन।

अनुप मंग की विषय सांस्कृतिक घटना
युग युग से बिछुड़े थे इतिहास उत्तर,
रत्न विष्णु का शिब में हुमा समन्वय
पसा शिला उर, हुई महस्या उर्बर !

सीता जन भू हृदय राम जन के बस
नर अरिष घर, मानस पात्र धनशबर,
प्रीति प्रकृत सहमज धनस्य पौरुष बल
शील मूर्ति अमिता विरह रस मायर।

यह रूपक संक्षिप्त प्रिये पत मुन का
काम अन्न हो रहा अल्प परिवर्तित
मूक अमिता क सहृदय धीबल म
नव युग स्वप्न करो तुम भीता मुग्धित।

त्याग मुझ अमिता स्पष्टिक रस पात्री
स्नह दुग्ध पत सौम्य मुमिद्यानन्दन
मूर्ध्ति मंग की नियम मटी प्रिये तुम
रथो मूर्धिका मानवता की नूतन।

धनपे तुम्हें घरा निशीथ में पुनकर
जड़ जो चित् में कर सबती युग शीपिन
मर्द पयोति में देय रहा धर तुमको
तुममें माही जन भू मंगल मूर्धित।

प्रिये, वागवधि यदेही ही क्या हम ?
 परब्रह्म में परगच्छित तुम मुविदित
 मबेवक मबेवक मबगन मारवत
 बहुरूपी में भी हम एक अत्रण्डित ।

महमा उज्वल टन्द्रधनुष मण्डल स्मित
 नील मध्य बिन्दु रश्मि व्यूह द्विक स्फुरित
 प्रकट हुआ अभिनव थी मूढमाकृति में
 स्वयं शुभ्र हा नर्तनना शोभित ।

दिव्य रत्न म हा राम अम्बुहित -
 बोले मरुमण पुनश्चित अवनत शीघ्रम
 मुझे तुम्हीं मबेवक दीयती जोजी
 धर्म धार का अम्बुजन का क्षण ।

स्वप्नित छाया मा भुवना का जीवन
 रजत नतना पट में हा अत्र चित्रित -
 तुम धावन्त रहित अन्त जगधारी
 बिन्दु बिन्दु में अगणित गिण्डु उरगित ।

बिन्दुस्ता तुम अमृत प्रीति धम - जिगमें
 ये धमल्य ब्रह्माण्ड पार अह प्रसरित
 शिवा ज्ञान नीतिमा मिण्डु जल पावक
 हरित धरा रजमी ममीरण परिभूत ।

ऊपर ज्याति अरण्य अथ नील तम
 रश्मि मनु शिब म जन अत्र हरिहरस्मित
 अह म तथ इमि रग अत्र नर मुर अत्र तत्र
 अहम पील मूवन मगान अत्रिभित ।

जहाँ अमावस तुम गावना अत्रन क
 बर्ही दुःख मृग्य, पार पुन्य अभा तम -
 बिनामन् रम की मय में अथ ज्ञान
 तुम में अत्र अथ इण्डु अत्र त्रिभ अत्रिभम !

मन म ही ज्ञाना अत्र म ज्ञान का
 शाना न छ भाग तत्र में मृग्य दुःख
 अत्र म पार अत्र का अत्रिभन् अत्रिभ
 अत्रिभ म पार बिन्दु शाना में अत्र मृग्य !

तुम्ही भवेतना जड में दवि निर्बलित,
प्राणों में प्रहसित मानस में क्षीपित
हृदय कमल में स्थित धात्मा में केम्बित,
युग-युग में श्वेतन्य ज्योति में विकसित !

कलक शुभ्र तुम सतरंग प्रभ सीपी में
हंसता हो स्वर्णोज्ज्वल सित मुक्ताफल
हरित स्वर्भ स्मित पारिजात पुष्पो से
सोभित हो बम भी का मरकत करतल !

जात तुम्हें मन के रहस्य सब भाभी
ऊर्मि सहित सदमय का जीवन धरित
सम्मोहन बल जीवन उग्मुख जन मन
संघ मात हम प्रीति श्वास से जीवित !

बिन्दित हा उठता रह रह मेरा मन—
कभी स्वर्ण होगा क्या यह भू जीवन ?
वही छोड़ आए थे हम भू मन को
वही पड़ा वह — कल्प न बीते हों राग !

वही स्वास कटु राम द्वेष जन मन में
बुद्ध बैभ्य स्पर्शा हिंसा पर साछल
काम क्रोध मय सोभ मोह भव सद्य
साधधान करते जिनके प्रति बुधजन !

एकाकी भौतिक अति से घय जग को
जुटते भीषण भ्रशु बिलास के साधन
बैठा विपरीत मित्रिरा में स्थापित बम—
जीवन मुख सर्जन बनता सघर्षण !

कभी महत् युग मृत्पांजन में निश्चित
बाह्य नहीं घग्तरंजना में त्रिमित
इह पर स्वर्भ नरक भय में शब्धित जन
भौतिक ध्याप्यात्मिक जग में न समन्वित !

वही जानता विधि को क्या कुछ स्वीकृत
एक रोग क सी मिन्नन जन गम्मुख
महा मरध पन छोले कल मधि जन युग
विषम न हा जाए भव प्याधि — मुः। दुः।

धीर धीर मरे प्रिय देबर सदमन
ज्ञात मुझे वे जीवन गति से परिचित,
उन्हें सासता जन मन का पायल दुख
उनके स्वर में मेरा भाग्य मुखरित !

कर्म क्षेत्र भू जीवन जिसका गुण मन
सूक्ष्म निरीक्षक यत्र नहीं संभासक
कर्म चेतना के प्रकाश में जन को
गढ़ने सब आदर्श क्षेम सुख प्राप्त !

यत्र मर्यादाएँ भी थी कृति दपण
जिममें बिम्बित था हृदि जीवन का मुख
जकड़े हुई मनुज आत्मा को पिछ्छी
छायाएँ, भूत भाव बोध स्मृति मुख दुख !

भावों की नावों पर पार न होगी
दिशा शून्य जन भावी भव धामर पर,
प्रबल ग्वार उठ रहा सोच जीवन में
कर्म पूर भू यत्नों को बेसा भर !

भाव कर्म में जहाँ सम्नुसत हो ध्रुव
वहाँ दिशा में करती निर संभासित
स्पून सूक्ष्म जड़ चेतन धर्मों से ही
करती जीवन में समग्रता स्थापित !

कास करास खड़ा जग के मिरहाने
दुस्त विपद् में पैग भरेपी भव गति
दूर भुसाएँगे सम छस बन के परि
प्रति संकट में जग उठती मोई मनि !

धन्वरतम भी धारणा में भू मन की
युद्ध शांति में शांति बुनेगा जन मन
दनुज ध्वंस से मनुज मूजक होना प्रिय
मरपट से प्रिय स्त्री जिगु म्मिन कर धौवन !

जबल रहा बिदाह ऊमिना बामी
जीजी सब से मेरे जग में गौरन
पैगा यत्र बहने भू जीवन का जन
घोर न पाण मूय - ध्वंस यत्र दर्शन !

भयवत् जीवन भू जीवन में कब से
 भ्रिष्टि लड़ी दुर्बोध भेद की दुर्गम
 बन्ध्या भू सीधी हमने प्राणों से
 बामु में बोए जप तप व्रत संयम !
 शोध सत्य परिणाम रहे दिम् भ्रामर
 तत्व नियम उपयोग प्रतीक प्रसंगत -
 मूर्त न कर पाए जीवन में उसकी
 मन जिसको पा रहा भ्याग में तद्मत !
 धुनते धाए गत संस्कारों का मन
 उसे मान मुम मुम से सत्य सनातन
 बुन न सके बन घटा स्वर्ग जीवन पट
 बट न सका सुखों में बाप्यों का भन !
 व्यक्ति मुक्ति के सर्प पाए में फँसकर
 कर्म पंथु, पर भया जाति गत जीवन
 शुष्क प्राण रहे गए रिक्त मति पंजर
 इन्द्रिय रचना बधित सामाजिक जन !
 जड़ से पर शैतन्य तत्व तब हमकी
 निर्मित करनी सत्य श्रेणि मुम विस्तृत
 धर्म काम सौम धर्म मोघ इह सँग पर,
 व्यक्ति विश्व सौम ईश्वर कर संयोजित !
 ज्योतिर्मय व्यक्तित्व जगत में प्रकृत
 बुनी चिन्तनियों से निष्पन्न साधारण
 बन फूलों की हंसमुख बिन्दु मानवता
 उग न सकी - शैतन्य शून्य भू प्राण !
 ज्योतिरिषियों के सँग भास्वर रवि जलि
 नीला शिमे क्या धकून धंवर में ?
 उनक प्रिय सहचर समूह में हँसते
 जा उज्ज्वल नरात्र न हों पर पर में !

भारत का धारोद्ग पब यह, छाटी
 भयवत् जन के योग्य प्रसिद्ध पुरातन
 साधारण हिन समदिम् भयवत् जीवन
 तुम्हें दृष्ट - यै करनी पूर्ण भयवत् !

अकत सत्य का अंश मात्र प्रति युग में,
 बाह्य बोध में स्वामादिक किञ्चित् अम
 विश्व सुजन की अम विकास बोधी में
 पूरा पूर्ण को करता प्रतिपद्य अतिक्रम ।
 मुखर हो उठी मीन अमि नव युग में
 संगस मुखर यह तृती भू के हित
 नारी की अिर मूक अम्या के सायक
 देखें नव अेतना अर पर अामृत ।
 अात अुन अग में अाने की नव अुग
 अर अुतार्थ हागा भू पर अन अीवन
 अर्य अेतना से परिधीत अर मन
 अन्द अुनत अर देगा पूर्ण अमर्षण ।

एवमन्तु - अिहोते करना अधु के अत
 अरुट हुए अास्मीकि अावना अेरित
 बोने अम भू की अुर अाभा अुन में
 मन के अत में अर न अका अ्यानस्थित ।
 अाकृति अत अापद् अान अयानक
 अमय अुनत में अिहा अिर अातर अण
 अिर अाताम अवेस नही अर अार
 अर अेतना अिन्तित मन अम अारण ।
 अा अाम अा अाय न अिपटित भू पर
 अर न पाए अतिवा अक अामर मन -
 अाअान करने अाया अी अत को
 देख अवन पर अिरे अोर अंकट अत ।
 अाता हो अदेश अयअारी का
 एक अार अिर हूँ अीवन अंगन हित -
 अय अाति अरि अहा अुन अरुमय न
 अिन अति यह अया अरु हो अुनरित ।
 बोने अुनि अर अदा अृष्टि से अमभव
 अरति अतना अुनि अरण अरि अरि - अर, -
 अत मन में अुननु अुन अामी में
 अर अरुण अर नर अाम्या का दे अर ।

पद रज मी बिद्या वैभव पद बंचित
काम्य कमा धनभिन्न भाव रस विरहित
घसंतुष्ट जब से जन से जीवन से
कबि पीड़ा करता करणों पर अपित !

भूत भविष्यत् वर्तमान के तम में
देख सकू मानव का भी जब ध्यान
स्वप्नों की निधि से मड़ सकू घरा मन
धंतर-धामा का जो शोभा दर्पण !

तुम घर मेरे शब्द मीड़ युग गायन
लोक शास की हृदय शास पर निमित्त
पूट प्राण पिक के रस स्वर, जन मन को
करें असीक्तिक घण प्रीति से मुदरित !

कहा इविठ सीता ने मनोमुहा से
देव अभी निकसे तप से तेजामय
अंतर्दृष्टा जब युग गति से परिभित,
हैं घरा तम मिटे अंत भय संतम !

भाव बाह्य पट परिवर्तन के सेंप ही
अंतर्मन हो रहा ज्योति बस प्रह्वित
भेद बुद्धि मठ इन्द्र साध भू-पव के
स्वर्ग मर्य हो रहे प्रथम संयोजित !

तन मन के नैतिक तट कर रस मग्नि
चित् प्रकास का शरता स्वर्णिम निरंतर
भव पैठन्य सरोवर का रिमठ शतदम
प्रेम मूर्त धारण प्रस्फुटित भीतर !

देव मनुज पनु का जब स्पांतर कर
घाण-स्यास बन पाएँ जन युग का जय
जब युग के वास्मीटि निकल बाँधी से
मैं छँ में विग्मूत्यां का घाय !

महत् धनुषह ! मुझ नड जब को मैं
जाति मंड हुँगा जन मठ कर संघिन
ममवासेया रण भू पर जन घरि का
भूर वृत्ति को बिना मर्म कर बंदिन !

सोक जुगुप्सा के बन लक्ष्य पराङ्गित
 रक्त तुष्ण मर हिंसक होंगे पद मत्स्य
 घरा घृषा से घृकगी जब मुख पर
 दशमुख भी तब होंगे लज्जित श्री हृत् !
 शकू से कवि बना शीघ्र कल्या बल
 ज्ञात सुदृढा विद्वति मुझे जीवन की
 धंध स्वार्थ की काम गुह्य गतियों में
 ज्योति घटकठी पग पग पर धू मन की !
 यादी के पट में सपेट में जन की
 संधि पत भूंगा - धम मूख्य समन्वित
 विद्व्य स्पर्धा रहित यंत्र युग का धम
 यादी सा ही हो पावन जन प्रादुत !
 संधि नियम होंगे धू पर सह जीवन
 रचना धम का बरण सोरु दाम बर्जन
 मंगल उर पावों में घर भूषा में
 घरा दुग्ध का शुभ पहिया माघन !
 बंधे प्रीति के स्वर्ग मूल में धू मन
 एक बने जग बहु देशों में यदित
 देश जातियों से निखरे मानवता
 विविध धम संसृति हा विश्व समन्वित !
 सर्वनाग क धनु उद्जन धायोजन
 मनुज सिल्पु जसतल में करे निमज्जित
 हो रचना सफल महत् बन धमता
 नाक धेय हो दुर्ग विद्वति पर जय नित !
 विरह एक्य की रिक्त धारणा घर बहु
 विमर्मे हो जीवन वैचित्र्य न सुचित
 जन गुण प्राहृ मन निनिज हो व्यापक
 निरौ विमुग्ध धू धाम शानि दन रणित !

या इन युग मूल्या को धनिकम कर मन
 दण रहा मानव मक्षिण ध्यानमिया -
 रनर एा स्वर्गिम प्रकाश रन निरौ
 शिममे कुम विन् विरणा में देकाकिन !

मई बेठमा निखर रही उर मबि से
 गुठ मुरघनुषां की ज्वाला छ मंडित
 वदस रहा मब वस्तु ज्ञान विकसित हो,
 भाव बोध इक्षिय मन प्राण प्रहृषित ।
 ज्योति प्रीति ध्यानद मधुरिमा संसप्त
 जन जीवन में मूर्त हो रह जन में
 समुत्त चापो से गुजरित धर मन
 धामाएँ सी जसती जन मू मम में ।
 भाबी वसंत पर थड़ापित कर मन
 पाएँसे जन सुखम वृष्टि नब जीवन
 रहस कसामधि महाशक्ति जय धात्री
 प्रभु मे जो करती समत मव धारण ।
 देख रहा उठता मू गोमक ऊपर
 उर्वर ज्योतिषिण्डा से अभिनवित
 जड़ क मुप पर शक्ति पाठ बेठन का
 मन श्रुम पर हों जत तद्वि प्रकंपित ।

स्वर्ण मजरब के सेंप मघड़ का स्वन
 गुना सभी ने मधुर भीम रस मिमन
 समुत्त वृष्टि सेंप बस्य लिए पंचों में
 पुमह रहा हो रजत देख धारण घन ।
 देया सब ने तम का दुर्घर पर्वत
 उठता धर मज्ञा बाहा से बेष्टित
 उतर रही हिमवत् से शरद उपा सी
 स्वभ मुघ्र भी ज्योति कुपम शक्ति सी स्मित ।
 सेप नाव के उर्ध्व शील पर शामित
 उरित हूँ मू हरित जसधि धंजन मृत
 नील लीम का रल छत्र धर तिर पर
 पवन बसाता धैबर पुण रज मुरमित ।
 उमड़ा हो रम ज्वायन नब नावन जन
 जन जीवन के बहँ मार में पुलकिन
 मत्त टूपा रज गद्य मूँब बदि का मन
 समधिप तड़िता क प्रवेग से रादित ।

मूकम मुरमि सी उठरी उमा हृदय में
 रबत रमिम सी बनव दीप्ति से परिवृत
 दक्षिण हुषा भू-मर्म मञ्जुरिमा में नव
 तिमिर गर्त पर गया गितर छवि मञ्जित !

धी, गिब सुंदर सत्य सार धी मूर्ति
 प्रीति कसा सी बरद कसा धी गिर पर
 छल नर्म मुस्ताम स्वर्ण दही धी
 सोमा से सोमाएँ पड़ती भर भर !

हँसी दिमाएँ, पूजे प्रति कुजे पिक
 पञ्च न रहे उपचेतन ही में सीमित
 ज्योति पप सा पिना निमीमित भू मन
 भिव् दपण में हुषा स्वतः भिव् चिम्बित !

पुष्पी ने सीता को गोरी में भर
 मूँचा हरि प्रिय गिर, कुसका मुस्ता जम
 पन माया ने उर की तद्वि मता सी
 पुत्री पुष्य प्रभू से धी तेजोस्वप्त !

मिसी उमा बैदेही प्रिय शयियों सी
 गूँघ्र चंद्रिका स्वण उपा हों मोहित
 श्रुति को सम्मुख कर पुसकित बंरति ने
 क्रिया प्रगत स्वागत भुम शबुन प्रबोधित !

घाई बंठ से बानी घरती बेटी
 गात तुम्हें मेरे मन का संघर्षण
 युग संघ्या घब मची प्राति घम जम में
 मपन रहा मेरे भीतर नव जीवन !

नए बन का जगम जितिक-मुख स्वयिम
 बाहर भीतर घटते नव परिवर्तन
 स्वर्ण मूकन से बलिन उर में जप का
 बिर विराममय जीवन बनना धारण !

हुन् हप पूषारा में निनि धमिन
 मग मपु मपा से मपित संभ
 कुमे विरोधी गिबिरा का घन घम ह
 मत्रन गीति स्पागि बननी भू तन पर !

भौतिक बीमब के मद से उत्तेजित
शोषक शोषित में विमक्त भू प्राणध
बायुमान में उड़ते बाहर तन मन
घतर्मन प्रस्तर युग का जड़ पाहन !

इधर घंघ भौतिकता का ककम स्वर
उधर रिक्त तप त्याग विरति का रोदन
दो अपूर्ण मिस सब पूर्ण कब होते ?
महत् साम्य अनुरूप न मंगल छाघन !

बृहद् समूहीकरण अपेक्षित जग में
जिसमें जन भू धार छोर हा मुच्छित
बीज भूमि से नया व्यक्ति पनपे छिर
स्वर्ग प्ररोह,—नई क्षमता से सृपित !

मुट्टी भर मन के जन्मम मानों में
क्रिया बौदिकों ने मरु मुष्माकन
तरबविरों ने मर्य घाम बतसाया
जरा रोम भय पाप ताप का प्राणध !

घर्मतां ने त्याग विराग सिखा कर
कहा धर्म जय मिथ्या माया बंधन
मुक्ति मार्ग विज्ञापित कर मतिपों ने
बाहा जन घरबी बम जाए निबंन !

स्वय मरक जड़ चेतन इन्द्रों में रत
ज्ञान दग्ध पा सब न मेरा परिचय
तर्क बाद में छोए, समझ न पाए,
बुध समप्रता में मेरा महावाणय !

मैं हूँ जीवन क्षेत्र बड़ी मैं मन मे
राज परिमित में हूँ मैं नित्य अपरिमित
श्रुत प्रकाश में मुझको जन जीवन में
मूत्रन पूर्णता करनी पपनी निमित्त !

युग मन का परिचय कर मेरा जीवन
बहुता उठ निर यत्न मिड निर पप पर
नया जग्य से मेरा घतपी बन
शाश्वत नित्य के शून्य पुमिद देता भर !

स्वर्गों का घलय प्रकाम से मुक्तकी
मङ्गला जन का शोभा भंगुर जीवन
दलों के घमरल्ल साग स विरचित
भू की भंगुरता का मलय चिरंतन !

विचित्र सोक बहु विधि जीवा से उबर,
चिन्मय सत् के मूलम स्पून माना स्तर
सब के मुग बैचिष्य महता सपुता,
समी पूर्ण घपने में मार्मक सुंदर !

निवृत्त पूर्णताओं का सार ग्रहण कर
हनी पूर्णता जन धरणी की निश्चित
जन्म मृत्यु, बहु ज्ञान बृद्धि द्वारों स
अभिभ्यक्ति जो पाती सोकोत्तर निठ !

घादिम में ज्वातिप्रिय - मूल गए जन
दीप्त प्रहा क सँग हैम करती मर्तन
नीग पून मेरा रवि शशि मुख रूपन
उपा भीग रोमी ज्योत्स्ना तन उबटन !

जीवन शोभा की प्रतीक मुक्तों में
नहमाते रम धारा में मुक्तकी जन
पद् श्चतुर्ण करती परिव्रमा पर मन
नितमी पून विह्वल करने अभिनन्दन !

निश्चेतन क घौघ्रियाम पवन में
मै हूँ छोई ज्योति काम बुम्भमार्ड
घेगद्गार्ड भरती मन की द्वाभा में
निज प्रकाश गरिमा में जाग न पार्ड !

मद् दीवक मरा निज 'नर भंगुर तन
तुम घमरल्ल शिष्या त्रिनकी चिन्मणि रिमन
तुम्हें मंत्रोण मंत्र प्राण घंतर में
मै नर विमर घमरा न चिर बन्नि !

प्रीति ज्वाति मुन मेरा उर की घनमुग
मलय शिष्या घंतरल्लम रूप्य प्रकाशित
बाट जोन्नी घन्नी क घोरल्ल न-
धी नमज्जा में हो त्रग में ज्वाति !

पराशक्ति तुम निखिल भुवन में व्यापक
 गुर मर मूम मंयस किठ जिसके प्राणित
 बुद्ध सत्य बहु अधिभूत किए घट मन
 बोनो स जगती का जीवन प्राणित ।
 तम प्रकाश जड़ जठन को उपभूत कर
 मुझे पूर्णता में होना निज विकसित
 सीमा में निःसीम क्षणिक में शास्वत
 मू रज में कर भगवत् स्वर्ग प्रतिष्ठित ।
 शंखों जड़ी प्रवास पीठिका मू की
 कौपी कौपा मणि जड़ छल फिर ऊपर,
 युमे केज स्वर्णम नीलम निर्भर से
 धिसका प्रंचल मरकत छाया सुंदर !

दया शक्ति ने तप्त कणक मू गोसक
 हरित शक्ति के प्राणित सिन्धु से परिवृत
 रजत तिमिर से मिथर रहे शत रवि शक्ति
 मुर किमर मुनि नर मूम छग इनि प्राणित !
 देये कवि ने स्मित ब्रह्मांड प्रकल्पित
 दीप्त भुवन देवों शक्तियों क प्राणम
 कोटि सम्पत्ताओं संसृष्टियों के युग
 घट गर्भ में छिपे स्वर्ग स्तर निराम ।
 युद्ध हरित तम में प्रंतहित भास्वर
 ब्रह्म बिष्णु शिव रज बरम यम शास्व -
 गूत्य कर रहे मूजन शक्तियों के संग
 बंधे सृष्टि सय में धानन्द निरत प्रक ।
 देया मुनि ने मोचन बाठायन ग
 प्रेम रश्मि दीपित जन मू का प्रतर,
 गोमा के सो स्वर्ग विप से भीतर
 भावा के शत एशवों में उर्वर ।
 बोना उमेगित स्वर्ग में शक्ति का कवि
 धन्य जननि मैं उठा बहिर्मुख मुजन
 मूक बुद्धि का देय रहा नर मूम में
 रानी रश्मि छवि मृगिण मुग्धता धानन !

मील जाति के चित् ससिलों में प्रविगत
महा पद्म सी मूष ध्यान में साधन
यिसती नब धामा सहस्रान्त सी तुम
ननश्चक्षु के सम्मुख घर शोभा तन !

स्वर्ग भरदों से विरचित सौरभ बपु
सुधा शुभ्र मधु भाव रंघ रस सिञ्चित
प्राण नूत पर हरित श्वास बेष्टित तुम -
मरव्य धमर मधु मुख धमर से गुञ्जित !

देख रहा नीरव करमा ममता की
गहरायीं भरिं प्रसंध्य जर भीतर,
निरबधि सागर, भी करता चित् जस में
भाव नाम ई छोड़ छोस सुध क पर !

जीव भगत के सहरे दुख वाणों से
निखर रहे ही सितिक स्वर्ग के निःस्वर,
धूम नील भावना मेघ पुजों से
उभर रहे शत शुभ्रात्म धामा स्तर !

महाभ्योम में स्वर्गागा सी पुञ्जित
शुभ्र धम्र छवि कनक रश्मि रेखांकित
प्रमित मनोभुवनों को चित् साक्षों को
प्रतस्तम में दिए मीन प्रतर्हित !

जग रसा न सिए प्रमय मुद्रा में
दिव्य तमस ही किए नील बपु धारण
वो फटन का सा प्रकाश प्रतस्त स
पूट रहा रिमत मारव स भर धामन !

इष्टा सतिम मी प्रथम मीन चितयन में
उमड़ रहे जीवन-उभर बरणा पन
धो निरपेठन शक्ति मुहाते तुममें
विष्णु गुरधनु हरीतिमा बस स्वन !

मटरागी तुम निर प्रत मुद्रा में विषम
उदा बस कर पन करती मय मर्जन
शुभ्र गनना म शून्य पीठन्य छमरना
रश्मि जपनों ग मरजन धू जीवन !

निहित विश्व इतिहास रिक्त छाया सा
 विगत प्रयोजन पड़ा प्रचल चरणों पर,
 मृग कर्म से मड़ली तुम नब मानव
 भावी बीभत्त से दीपित कर घंटर !
 एवं काम की रचना कर मानवता
 विविध युगों के स्वर्ण पाह कर खचित
 विग्न विकसित ही रही विश्व संस्कृति में
 मू जीवन सोमा मंगल कर अजित !
 प्रधरू रहा चित् पावक की सपटों में
 जन मानस का निश्चेतन तम सागर,
 मार्जित इद्रिम जीवन की सोमा में
 धमर विचरते भी साकार धरा पर !
 देया रहा मी राम बेतना मू की
 मुलम रही जीवन सोमा में नूतन
 गुणारुण पवातापों में जन उठता
 उपचेतन मन का छाया तम मुंठन !
 इह पर के भर ईश्वर के छोरों पर
 स्वर्ण सेतु, शत रत्न ज्योति स्मित निमित्त
 तोष मुक्ति ही मुक्ति कर्म सब पुवन
 भव मति में विज्ञान ज्ञान संयोजित !
 निघर रहा नब स्वर्ण मर्त्य मू रज से
 भी सोमा महिमा मंगल में मुठित
 उतर रही निस्वर लहस ज्योति
 धन का बातापन सावकत मुख बीपित !
 कर्म अक्षर कहे शब्दों के मन से
 दिन प्रकाश स धीरोहित कवि घंटर,
 दूट रही भावी विमुक्त पर्वत सी
 कू रहे धिरेजों से स्वदिक निरंतर !

स्वस्ति तम इष्टा ज्योति योरी बोनी
 बुनि की उर संवी के कँपा रह स्वर,
 मी प्रगभ नुन धारी जीवन मंगल
 कवि का स्वप्न सपन हो ईश्वर के वर !

मू जीवन ईश्वर इच्छा का स्वैंग,
जिसे ममज्ञाने में अदृष्टार्थ मनुज मन
उदगत उर में घुसता प्रभु का प्रामद
नात मुहकियों को रहस्य बिर गोपन !

सहज बुद्धि में भी होता वह बिम्बित
नही घपेदित उसे तर्क बिम्बेपण
यन्ि यपार्थ को भी मिरवें बरवें जन
छोल मर्गे वे हिम्बमय गुडन !

निर्मम जड़ मोमा-जीवन मपुर तन
शाश्वत उतही भव गति का अद्विदित कम
पीबों को रहना मिस जुस मुतन पर
जस्य मरण मुह सत्य न कल्पित मति अम !

मापधाम की बुनिवार स्थितिया में
जन समाज रचना रटा हित बालित
अबिर कास सहरो पर मीब उठा कर
अमर भवन धारमा का करना रथापित !

बेह अनित्य अनेत पीढ़ियों का अम
जीव अमरता का बिधि गित्य निवर्गन
मानव में जीवन बिनाम की परिणति
सीमा में कण्ठी असीय को धारण !

राग द्वेष, हिमा रपर्दा स बीमे
जन मू नीड़ बया सक्ते भव तम हर,
पुषा कोष मर रवार्य मोह तुष्णा अय
निम्न योनि बुत्तिया मनुज के भीतर !

देश प्राणि के ऊपर उठ जन मन का
मानवता करनी धरनी पर रथापित
मनुज प्रीति कर अक्लि मुक्ति हिन अजिन
तोह माम्य रय बिबद तेवर के धापित !

मूज मार्य मर - जिम मून कर मानव
महाभाग बाणगा जन धरनी पर
बन्नु इष्टि से मुद्य मपुडि मपित कर
अनू निरणा धारणा से अम को ठर !

निबिन्न दिग्द इतिहास रिक्त छाया सा
 विगत प्रयोजन पद्म प्रगठ चरमों पर,
 युग कर्म स गङ्गी तुम नव मानव
 भावी वैभव से बीपित कर घंटर !
 धर्म काम की रचना कर मानवता
 निबिन्न मुमों के स्वर्ण पाश कर खंडित,
 दिग्द विकसित हो रही विश्व संस्कृति में
 नू जीवन सोमा मगल कर धजित !
 धमक रहा चित् पावक की सपटों में
 जन मानस का निश्चेतन तम धागर,
 भाजित इन्द्रिय जीवन की सोमा में
 प्रभर विचरते धी धाकार घघ पर !
 देखा रहा मैं सय चेतना भू की
 सुसम रही जीवन सोमा में नूतन
 गुभास्व पवासापो में जल उठता
 उपचेतन मन का छाया तम गुंडन !
 रह पर के नर ईश्वर के छोरों पर
 स्वर्ण सेतु, लठ रत्न ज्योति स्मित निर्मित
 लोह मुक्ति ही मुक्ति कर्म धम पूजन
 मभ गति में विज्ञान ज्ञान संयोजित !
 निघन रहा नव स्वर्ण मर्त्य-भू रज से
 श्री सोमा महिमा मंगल में मूर्तित
 उतर रही निश्चर सहज झमाएँ
 क्षम का वातापन शास्वत मुख बीपित !
 कैस व्यस्त कर्से दग्धों के मन से
 किस प्रकाश से प्राचीनित करि घंटर,
 टूट रही भावी विद्युद् बर्बत सी
 फूट रहे क्षितियों से स्वयिक निर्भर !

स्वस्ति सत्य द्रष्टा ज्योति यीरी बोनी
 मुनि ही उर संज्ञी के ज्ञेया रहे स्वर,
 मैं प्रसन्न मुन भावी जीवन मंगल
 करि का स्वप्न सद्यम हो ईश्वर हैं वर !

मू जीवन ईस्वर इच्छा का दर्पण
त्रिम समझने में प्रकृतार्थ मनुज मन
तद्गत उर में खुलता प्रभु का धामय
जात गुरुबियों को रहस्य फिर गोपन !

नहव बुद्धि में भी हाठा वह बिम्बित
नही प्रपेक्षित उसे तर्क विश्लेषण
यदि यथार्थ का भी निरर्थे परये जन
छास सकेंगे व हिरण्यमय गुठन !

निर्मम जड़ सीमा-जीवन प्रभुर तम
शास्त्रत उसकी भव गति का प्रवृत्ति क्रम
जीवों को रहना मिस जुम भूतल पर
जन्म मरण ध्रुव सत्य न कल्पित मति ध्रम !

मत्यधाम की दुनिवार स्थितिमा में
जन समाज रचना रदा हित बाछिन
प्रभिर काम सहृदों पर नीब उठा कर
प्रमद भवन धारमा का करना स्थापित !

देह प्रकृत्य धर्मत पीड़ियों का जम
जीव धमरता का विधि शिल्प निर्गत
मानव में जीवन विक्राम की परिमति
सीमा में करती घसीम को धारण !

राग द्वय हिमा स्पर्धा स बँसे
जम मू नीड़ बसा सकतै भव तम हर,
धृता भोध मद स्वार्थ सोम सुप्ला भय
निम्न योनि बृत्तिया मनुज के भीतर !

देन पाति के ऊपर उठ जन मन को
मानवता बरनी धरणी पर स्थापित
मनुज प्रीति कर ध्यस्ति मुक्ति तिन धरिन
मोक्ष ताम्य रय बिग्न ऐश्व के धाधिन !

मूज माय मह - त्रिम भूत कर मानव
महानाम बाण्डा जन धरणी पर
बन्नु दृष्टि मे मूय मबुद्धि मीबाड कर
धमून तिलमा धारणा न तम का तर !

पूर्व ज्ञाति घातक मुक्ति उनके हित
बिनाकी अंतर भास्वा प्रभु को अहित
महच्छक्ति विद् ज्योति भूति दीपित के
उन्हें न छूते मृत्यु, कमुप तम किचित् !

जो अपूर्व अस्मिर कहत जीवन को
विधि विधान के प्रति निब्र मन में अंकित
अर्ध पठित के अमु मुख स्थायी में रख
रेख न पात अम मे प्रभु मुख विम्बित !

समस्त जीवन के पुस्तक संकट अम
उच्च कृपा ही करती प्रति पत्र प्रथमित
अर्ध रीढ़ की अम सिद्ध अमता यह
तमस मृत्यु से निकले ज्योति अमृत हित !

यही तत्त्वत अम भासा-मानव को
स्वर्ग अङ्गि तानी भूतम पर निश्चित
अन समाज के सामूहिक जीवन की
अम अेविका पर कर उसे प्रतिष्ठित !

अर्ध हीन अम व्यक्ति पूषक से अोजे
पीड़ी पीड़ी अमृत तत्त्व अपने हित
स्वर्ध ज्योति तम स्वर्ग रर्धे भू पर अत—
विभि विधान में यही अ्येय अंतहित !

ज्योति तिमिर, मुख दुख गुंफित अम जीवन
पूर्व रहस्य-अता विधि की नि संलय
अमरों की शारवत समरख मुख की स्थिति
मर्म सुरभि ऐश्वर्य मूय्य मुशको अम !

प्रीति प्रतीति अहित हो अम यह भू अम
अर्ध घाम हो अमर अोक से सुंदर,
अह्वय अरुणा, अमता सहपीडा की
गहराई का कहीं स्वर्ध में उतर !

मृष्टि महत् सोपाज-अंत अम अविधित
अह विकास पत्र अमु उर में अम-विस्मय !
पायी के स्वनिम गुंठन में विधि का
अंतहित जीवन का स्वनिम अगतय !

बतमान में रहते जो निज में रत
झँप भीष समु स्वाधों में उठ गिर कर
भू मंगल क द्रोही वे जन बंधक
द्वेष बग्न शक्ति बित मर भू पर।

मंगलमय की विधि को कर यदार्पण
भू रचना धम में रत धरित जा जन
भाबी स्वर्गों के स्वर्गिम वैभव के
रहस्य मुंजरित रहता मित उनका मन।

रक्त प्रसारा में भव नृत्य निग्न हर
हरित हर्ष बरसाते भू पर उबर
स्वर्ण गहनताओं में बिर जाग्रत हरि
मर्म वेषु में भरते मुघा सवित स्वर।

जीवन के घंटरत्नम शतदल में स्पिन
गुप्त शांति भरती रहती उर क व्रण
ज्योति प्रीति धारण-समृत स्वर्गों म
स्वप्न मंजरित रहते जन भू का मन।

कविमयीपी का बलम्य मनातल
जीवन संघम का करना गुह्य सखन
धी गुपमा रम महिमा स्वर गरिमा म
कुमुमित बुजित रहना जन भू प्राणम।

मुघा शांति में मज्जित कर भू उर गुह्य
बहि को रचना तब मियाता जन को
बनौगुहा में माया भाबी बानर -
उमे जमाना जड़ में स्थित धनन का।

जाति बर्म रत भूषा द्वेष का लम हर
भू बुद्धि रत स्वार्थ साथ धरितम कर
बहि मन का दबा धामोद जग्न का
जाति प्रीति धारण जाति मंगलर।

धधमानम की बाप धनुषा का दुः
उत्सव शरणा राना का मा भू पर
प्रणाभूत म धाना नद बर्बादन
मानव उर का पादक रम जा धारण।

स्वर्गिक सितियों के प्रलय बीमब से
 शब्द सृष्टि कवि रहे मर्मसुम् मूतन,
 भाव राशि में चिदानंद होमा धर,
 माही मानवता हित रच उर कर्षण !
 प्राणोदधि में अये स्फटिक चिखरों पर
 युग प्रभात फहराता स्वचिन्म केतन -
 अस्त् तमस पर सत्य ज्योति की जय का
 कवि को गाता धू विकास पद्म गायन !
 प्रीति गीढ़ होमा न मर्म ज्ञान जब तक
 भेद मुक्त उर में न बिभेमा चित् धर
 कवि मन के भावना प्यार में उठकर
 रच निमग्न होका न जनों का धंतर !
 तुम्हें सौंपी जा यह कणक धमूत बट
 तर गारी के रस मंगल से पूरित
 प्रकृति पुष्प की सुभ्र प्रीति का पावक
 सावधान बन जाय न बिय जन धू हित !
 नया प्रेम सित होमा बाहों म धर
 रस बीमब भण्डित कर देया धंतर,
 तन्मय कर देया चिन्मय भासियन
 शांति ज्योति धारद पड़ेगे सर सर !
 ऐसी उम्मद पाङ्गायक रच धारा
 धू पर सौटी कही स्वर्ग से प्रेरित
 यह प्रवाह प्लावन - पावक सागर से
 निखरेमी मुग्धा धू उर यौवन स्मित !

बोल मुनि धो धमूत दुग्ध गुम उर में
 सरती आने कित्त निस्वर धंकर से
 तिमिर ज्योति दुग्ध हर्ष कमुप बनता सुभ
 खंड पूर्ण धू स्वर्ग - रस कित्त धर से !
 वैशि गुम्हारे सित पति प्रिय पद छुकर
 बनता निष्क्रिय जीवन मज निब केतन
 मृत्यु कृष्ण स रचती गुम भव जीवन
 मुग्धा गान सी सर धंतर में गोपन !

परम प्रभा ही शुभ चेतना जिसकी
हेम गौर पावता ही शोभा उन
प्रमित क्या स्वयिक स्वभाव, श्रेयस् मन
सुजन हर्ष ही प्रतर्पति धिरंठन।-

सहज प्रसन्न जननि बहु जन को दें बर,
बरस भी लोभा मगम पग पग पर
महत् सत्य से प्रेरित हो मानव उर
धरा स्वर्ग ही सुंदर से सुदृष्टर।

कहा तथास्तु! उमा ने भव स्मित मुख
बोली बहु सीता से स्नेह विनय नत -
विश्व चेतना तुम प्रति युग में विवसित
नए रूप का करन आई स्वागत।

शुभ रश्मि सतरंग श्री से एकान्वित
व्यक्ताभ्यक्त धमिध्र धभेध परम्पर,
तुम घंठ स्मित सत्य व्याप्त भुवनों में
मैं घंठ केन्द्रित सित ज्योति परात्पर।

धरा चेतना व शिष्टों की ऊग
मित शृंगों स उतर हरित धरती पर
स्वर्ग मलय की वेद तिमिर की आई
भर बोली तुम - स्वयिम निर्भर सी शर।

प्राणों की मयु भूमि छाड़ कर भू जन
पंख छोड मन के उड़ बिद् धंवर में
बहुं योजने मुक्ति? मुक्त विगमय शिव
स्नेहछा से रहते जड़ मृम्मय पर में।

मुनि सरमन क्रमिना धरा में जाकर
घोले जन मन में प्रकाश बाठापन
शुभ शक्ति में रचना मंगम में रह
सार्थ हो भू पर मामूहिक जीवन।

धम्य धम्य बान सब उमपित मन
हृमा धगावर में मय धंत्तंगन -
बहुं क्रमि सगमन - श्रुति सीता मोरी?
धरा मान! - धरा वा श्रुति पर उदात्त।

स्वर्गिक सिद्धियों के अक्षय वैभव से
 लब्ध सृष्टि कवि रच मर्मसूक्त नृत्य
 भाव राशि में चिदानन्द बोधा भर,
 नाभी मानवता हित रच उर बर्षध !
 प्राणोदधि में जये स्फटिक सिद्धियों पर
 युग प्रभात फहराता स्वर्णिम केतन -
 अक्षय तमस पर उत्प ज्योति की जय का
 कवि को माना भू विकास पत्र गायन !
 प्रीति भीड़ होना न मर्म ब्रह्म जय तक
 भेद मुक्त उर में न विवेका चित् हर,
 कवि मन के भावना उबार में उठकर
 रस निमग्न होगा न जलो का अंतर !
 तुम्हें सौंपती सा यह कनक धमूत बट
 भर गायी के रस मंगल से पूरित
 प्रकृति पुरुष की शुद्ध प्रीति का पावक
 सावधान बन जाय न बिप जन भू हित !
 नया प्रेम सित लोभा बाँहा ने भर
 रस वैभव मज्जित कर दिया अंतर
 तन्मय कर देना चित्तमय आसिगम
 जाति ज्योति आनंद पढ़ेंगे हर हर !
 ऐसी उम्मेद आह्लादक रस धातु
 भू पर लोटी नहीं स्वर्ण स प्रेरित
 यह प्रकाश प्लावन - पावक मापर से
 निखरेकी मुग्धा भू उर यौवन स्मित !

बाण मुनि धा धमूत बुद्ध तुम उर में
 मरती जान किस निस्वर अंतर से
 तिमिर ज्योति बुद्ध हर्ष कमुप अमता मुप
 पंड पूर्य भू स्वर्ण - उद्दय किस हर स !
 वधि तुम्हारे गित नति प्रिय पर छुकर
 अमता निष्क्रिय जीवन सब निब केतन
 मृत्यु शुभ्य स रचनी तुम अब जीवन
 मुग्धा श्लेष की हर अंतर में गोपन !

परम प्रभा ही मुझ बैठना जिसकी
 हेम पीर पावनता ही शोभा तन
 धर्मित दया स्वर्गिक स्वभाव, श्रेयस् मन
 सृजन हृय ही घंठर्तुति बिरतन !—

सहज प्रसन्न जननि वह जन को दे कर,
 बरसे भी शोभा मंगस पग पय पर,
 महत् सत्य से प्रेरित हो मानव उर,
 धरा स्वर्ग हो सुदर से सुदरतर !

कहा तपास्तु ! उमा ने मं स्मिन् मुख
 बोली वह सीता से स्नेह बिनय मत्त —
 बिस्व बैठना तुम प्रति युग में विकसित
 नए रूप का करने आई स्वागत !

मुझ रश्मि सतरंग थी स एकाञ्चित
 व्यक्त्याभ्यक्त धर्मित धमेद्य परम्पर
 तुम घंठ स्मित सत्य ब्याप्त मुबनों में
 मैं घंठ केन्द्रित मित ज्योति पराम्पर !

धरा बैठना क मिश्रण की उपा
 मित शृंगों से उतर हरित धरती पर
 स्वर्ग मार्ये भी मद तिमिर की धार
 धर दोगी तुम — स्वर्गिम निर्मर भी धर !

प्राणा भी मधु जूमि छाड़ कर नू जन
 पंथ गाल मन के उट बिद् घंवर में
 कहीं छोड़ने मुक्ति ? मुक्त बिमय निव
 रक्षणा स रहने जड़ मृष्यय धर में !

मुनि लक्ष्मण इमिना धरा में पाकर
 छोड़ें जन मन में प्रकाश बाणापन
 मुझ भाति में रचना मगन में एत
 धारण हा भू पर मामूर्ति जीवन !

धन्य धन्य बाने मर उमरित मन
 दृषा धर्मोक्त में मय घंठर्तुन —
 कहीं इमि सम्मन — ज्योति गीता गौरी ?
 धरा मान ! — व पा मृति पट उदात्त !

मंगल ग्रह हो जन भू के जीवन हित
 घंटाघन का यह पावन आरोहण,
 मृत अभिव्यक्त के ज्योतिष्पुत्रियों पर
 बने पुष्प स्मृति स्वर्ण सेतु जन मोहन ।

भारत भू का ही यह नहीं धरीत
 एक शक्ति से भू स्वर्णक प्रणीत ।
 एक हो रहा घम्य भाज मज धाम
 सत्य एक ही - विभिन्न रूप गुण नाम !

जीवन द्वार

- १ युग भू
- २ ग्राम शिविर
- ३ मुक्ति यत्र

युग-भू

घमिष्ठ शून्य दिक् पर पर
 रह् मृष्टि छवि घणित
 कास तूति गति त्रिम पर
 घुपछीह भरती निग !

नव युग जगम जगत हित मुभ हा
 भू की प्रमव व्यथ जय माधो
 कनि शिशु को मानन पममे जे
 घिला पिना स्वात्र मुत्र पाघा !
 मुम जीवन क बषा मूत घर
 पोधी बापी की रम बषी
 नूबा जम मन क स्वना मे
 घरा स्वर्ग संस्कृति मणि भेजो !

जाने बीज पुन चित्तमे युग,
 चित्तनी गतिपा बर्ष माम दिन,
 मुटिन घमु शापा के पतार
 रंग मंग बज ब मणु घनपिन !
 पीप्य रज दुग् मुग्घनु पावम
 बामुयी मन शरत पघ मन —
 देव बुरी तब न जन घू बट
 जय भारत रामान पतम रण !

सेन चुकी वह बोर हाठ दुख
 रस्य दासता - दस्यु आक्रमण
 संस्कृतियों का बृहत् समन्वय
 जाति पतिव्या का सम्मिश्रण !
 दूट चुका गठ राम राज्य का
 स्वप्न - वृष्टि हठ वृषि युग दर्शन
 नव जन भू जीवन प्रतिभा स
 शोभित पद जन मन सिंहासन !

मानम जीबी ने भू पर धा
 जीवन मूर्खों की नीचों पर
 संस्कृतिया के दुर्ग गढ़े बहु
 भू खंडों देगों में बँट कर ! -
 देश विविध युग पट परिवर्तन
 कहीं घात पहुँचा घनेम नर ?
 क्या होता घब माघ्ट भू पर,
 बानी दासो शूद्र सत्सत्वर !

जन समुद्र कवित भारत भू
 विसर्के तट पर मोक जागरण
 उत्तर रहा स्वयिक प्रमाउ सा -
 मदनी उर को बात्या भीषण !
 युग संघ्ना में धोत्र सकोपी
 कहीं ऊर्मिमा श्रुति कवि सम्मय ?
 बन्ध पया मठ जब मानस पट
 बरन पया पठ जन भू जीवन !

परम शांति व गुप्त मुकुट में
 पर प्रकृति भी ही प्रतिबिम्बित
 नील प्रक मे ही धरती
 मौन मधुरिमा मे ही मज्जित ।
 प्रकृति रहस्यमयी सेटी हो -
 चित्त विराट् - दिक्पट पर चित्त
 निमित्त मुक्त भू मुक्त योबना
 प्रथम प्रमुक्ति हरी प्रथम चित्त !

पीत वर्ण रेगमी हिमाक्ष
 रंगा भी प्रामा सा कोमल
 साँसों में रज गंध समीरण
 प्रियका पंचस बन छायांचल ।
 जलत पांडुर तस्मत्त ममर
 धूसि धूसरित रिक्त दिगंतर
 ताम्र वसगा मा रश्मि हीन रश्मि
 बन गंधों मे मानुस प्रंतर !

रजत बुहाम पट में सोपा
 धाम सोम किनुक मिरीच बन
 स्वप्न देयता स्वप्न मधु के
 मूरे तदिस विमलय सोचन ।
 रगा तट - रूप उल्ला वर पर
 टिपुटा मा भ्रम्य शेषि पंग पम
 उबने को छटपटा शेष मा
 सटा मूक नेती पर पापन !

सात वेतना नी ही ग्राम
 धान वनांग टिपुटी जल धारा-
 मृत्पुत्र के प्राम राज्य वा
 जीवन यात्री हा पय हाग !
 परमगत्रिय मध्य मुर्गा शी
 वेदिय पंजिय धाग प्रति पम
 रज्य वगारों मे बहु बटनी
 मुग नृप्या मिथ्या मामा जप !

बोर असुंदर पा सुंदरपुर
 ईश्वर अविद्या का बड़ पंजर,
 कड़ि पीतिमों का निष्क्रिय गड़
 विगत सभ्यता का हूत बौद्धहर !
 साक फूस के नमन बरौदे
 भन्न रीढ़ रेंगते भीत जन
 राग द्वेष भय बृथा कमाह में
 पचराए दुब से भारी मत ।

अजगर सा गुंथसक मार कर
 बेरे हो नैराश्य अमंगल
 माय्य भरोसे बैठ जीवन -
 सुष्टि प्रयोजन सयता निष्फल ।
 सुंदरपुर क्या था युग धू भी
 महा हास का छाया दिग् भ्रम
 मूक प्रतीक्षा रत जन मन में
 पी फटने से पहिले का तम !

मिश्रबेतन उर क्या धरा का
 जहाँ न पीठ हो प्रकाश कर,
 मर जीवन स्पंदन से बंभित
 बड़ मिश्रजन निर्जीव अनुर्वर ।
 तट के भीटे पर, तस्वन में
 निभुत कुंज था घुपछाहू स्मित
 स्वप्न मीढ़ युग द्रष्टा विक का
 प्रेम नाम बंसी जन प्रचलित ।

तरुण मदन साधना निरत हो
 युव का विषय कल्पुष विष पीकर,
 अमृत कला धर मग भाल पर
 भस्म हीन हो नव युग शंकर ।
 जन धिल्ली बहू, मड़वा भू मन
 उसे बनाने नव युग दर्पण -
 मन क्या था गत संस्कारों के
 अश्वबेतन तम का बड़ पाहन !

घरा गर्म का मरक कुंड था
 सुंदरपुर जमपन विपन्न मन
 मू शक्तिपा का दुर्गम गढ़ -
 निज दुर्गति के प्रति निरस्त जन !
 घात्र मंजरी की छाया में
 पिथी बूज देती धामलस
 प्रवृत्ति गद्य सविज्ञ चेतकर
 मधु गोपन बरती संभाषण !

जनसम मन का मुक्त ध्यया मर
 कवि उर में करता कर्षण प्रण
 मधु श्वेद रज पट में लिपटा
 मानव भावी का था धानन !
 उस दृष्ट था संघ गर्त में
 लीज मूज जन मन व ऊपर
 प्राय पंक में भाव बूत पर
 मानव कर्मन गिताना मू पर !

मन के घुंटे स जीवम की
 बेपी घेनु का घाम प्राणपथ
 मुक्त चेतना के प्राणम में
 उसका नव विधि करना पोषण !
 मोषा करता कौन चेतना
 नील ध्योम में छाई मास्कर
 कौन चेतना घनिष पवन जल,
 कौन घरा बन भेटी निम्बर ?

विमर्शी कसा ? घमूज घट मा मजि
 स्वप्न डोर में मटका ऊपर
 घमिन नील मणि मर - नव सिमु गदि
 निरला श्मिग - मुष्ट श्वथ हाम्य भर !
 गिरि श्मिगरो पर लया उरती
 पट्टा पावत चेतन मुंदर,
 पुननू बीप तिका पाटी में
 सुरकुत बाने बग्ने निम्बर !

भार असुंदर वा सुंदरपुर
 वैश्य भविष्य का बड़ पंजर,
 बड़ रीतियों का निष्कर्म गड़
 विगत सभ्यता का हृत् खोंडहर ।
 भाड़ फूँठ के नमन बरौदे
 भग्न रीढ़ रेंगते भीत जम
 राग द्वेष भय भृणा कतह में
 पथराए दुब से भारी मन ।

धजगर सा गुंजलक मार कर
 बेरे हो गैरात्म धर्मगत
 भाग्य धरोसे बैठ जीवन -
 सृष्टि प्रमोदन जगता निष्कल !
 सुंदरपुर क्या वा युग भू बी
 महा ह्लास का छया दिप् भय
 मूक प्रतीक्षा रत जन मन में
 पी छाने से पहिले का तम ।

निश्चेतन उर कल धरा का
 जहाँ न पैठ हो प्रकाश कर,
 मज जीवन स्पंदन से बंचित
 बड़ निश्चय निर्वीच धनुर्वर ।
 तट के भीटे पर, तस्वन में
 निमृत् कुंज वा घुपछरीह स्मित
 स्वप्न नीड़ युग श्रष्टा पिक का
 प्रेम नाम बंसी जन प्रचमित ।

उदय मदन साधना निरत हो
 युग का विषय कभुप विष पीकर,
 धमृत् कला धर यय भाल पर
 मस्म हीन हो नव युग शंकर ।
 जन तिसवी बह गड़ता भू मन
 उसे बनाने नव युग दर्पण -
 मन क्या वा बत संस्कारों के
 धधचेतन तम का बड़ पाहन ।

धरत गर्भ का मरण बुँड पा
 सुदरपुर जनपद विपणन मन
 भू दारिद्र्यों का दुर्गम यह -
 निज कुर्मति के प्रति विरक्त बन !
 धाम मजरी की छाया में
 पिही बूझ देती धामंत्रण
 प्रकृति मंघ सदिस भेजकर
 मधु गापन करती संभाषण !

जनमण मन का मूक व्यथा भर
 बहि उर में करता बर्बाद व्रण
 धम्ब स्वेद रज पर में मिपटा
 मानव भाबी का पा धानम !
 उमे इष्ट या मंघ गर्त मे
 वीष मूम जन मन के उपर
 प्राण पंक्त म भाव भूत पर
 मानम कमस गिमाता मू पर !

मन के वृष्टि मे जीवन की
 बँधी धनु का घोल प्राणपण
 मुक्त धेतना के प्राणपण में
 उमवा नव विधि करता प्राणप !
 मोबा करता बौन भतना
 भीस ध्योम में छार् मास्वर
 बौन बनना धमि पवन जम
 बौन घरा बन सेटी निम्बर ?

किमबी कसा ? प्रमून घट सा बनि
 स्वप्न डोर में सटबा ऊपर
 धमिा भीम मनि सर, - नय गिमु रवि
 निरला निमल मुष स्वर्ण हाम्य भर !
 निरि निघरों पर उवा उतरनी
 पदग पापक बनन मुंन
 बुगनु दीप तिना पाटी में
 गुरबुा बाते बग्ने निम्बर !

धंधकार	किसका	धबमुञ्ज ?
क्या प्रकाश	किसका	दर्पण ?
सुझ भाव	में	दीखते
उसको ज्योति	तमस	बरण !
टीमे से	घट बहती	टलमल
नीस बसन	बस धारा	निर्मल
पुस मास के	सूर्य बिम्ब	पर
डाल स्नेह	छाया का	धांस !

बह भीटे से उतर,	ध्यान रख
जाता समित	पुलिन पर
बहते बस से	सूजन पावन
पाता उसका भाव	प्रबल प्रेरणा
घट पर रखते	सोम मन !
कंधी करते बक	कर्मधी नीससर,
कीकिस्सा शब सा गिर	पर,
जड़ता लिए बाँध में	बस में
	बसबर !

फिरते बहा पनेबा फर फर
कमरब करते कौक फर फर
उसको छुटपम ही से सीखपर,
मीन फूस माटे खग भाते
ग्राह सुँस जब पूँछ मार कर
बारि पुझार उड़ते ऊपर,
कुभ पुलक से भर जाता मन
स्वप्न सृष्टि में डूब मनोहर !

बहते बस जब की उज्वलता
उसके उर को करछी बंधन
खोज करछा बह प्रकाशमय
सक्रिय जीवन के भेठम पल !
यह उसका भीतर का मन पा
जब में रख रूखा बह बाहर
ताम्र पीठ बन तरघों के बस
हिम विभीठ सब पड़ते शरार !

रेखा पंजर श्रुतु विटपा पर
 ट्ये नीड़ हिम सगत सुदर,
 जाड़े स बोंप भूडा बौबा
 खासा करता बीड टूँठ पर।
 तथ कोन्र स कूर मिसहरी
 फिरती बन छाया से डर डर
 उम बीस थी पकड़ स गई
 जान बची थी पूँछ नुचा कर।

सहसा मम्मुर बहत जम में
 बापी सम्बी बसती छाया
 बगी म पाळ मुड देगा
 उसबा स्नह सखा पा प्राया।
 कौन हरित ? बह-बंगी न रब
 रोग उगडा बिनागुर मुग्र -
 जस में संघ्या थी छाया मा
 निरता या मुग्र पर नीरब दुप।

घसंगन दिनमजि थी विरसों
 प्रनि स्त्रम्प नी जम में घंस कर
 हरि क डर के तल गूम बा
 बापी सी रनी थी नि स्वर।
 फ्या मूरे मैयों र पर
 छिन्ने प टानी रंग नम पर
 बिाबबरे केपुम - म जम पर
 रंग रहे से प्रतिम रति कर।

हिम मध्या घन नारबता में
 इमती थी महरी हा प्रतिपा
 बरि क डर में उडर गी थी
 युप मध्या गुन इवमुक बा स्वन।
 मानप ज्ञान दमप्र रा मर
 पर बीग हा मचना मंभव ?
 गाबा बंदी हा न निर मन में
 धार बिना बिना क जा इव !

पूछा क्यों कैसा भी है, हृदि,
 मुझ पर कैसे बिर मौन घन ?
 तुम पर दुःख काठर छटपन से
 हृद्य हो उठा कौन छिपा ब्रह्म ?
 तुम उस पार गए वे कोई
 बटमा बहाँ मटी क्या नूतन ?
 कहा सुनी या हुई किसी स
 क्या इस मूक व्यथा का कारण ?

कैसी बीत रही मोर्षों पर
 कैसा नाम नचाता जीवन ?
 भाव्य भरोसे बैठे सब या
 कुछ करने की सोच रहे जन ?
 बोला हृदि, सूरज के नीचे
 मया कहाँ क्या होता भाई,
 भू की दुःख बारिद्वेष निता ही
 मेरे मुठ मुख पर भी छाई !

यही मया बस बिना भ्रम घन
 बीबित सदियों के सब जनमण
 बिना बस्त लज्जा में लिपटे
 डंके लम्ब मा बहिनों के तन !
 स्नेही हो तुम मुद्दय सहामक
 तुमसे कुछ भी भेद न पोपन
 बूद पिता माता के पुत्र का
 मैं धिक् बनता जाता कारण !

यह सब है उनका इकमीठा
 मैं ही कुल का मास बमघर
 छोटी मेरी छामा सी है
 बिमग न रूती मुमसे क्षम भर !
 पिता बाध्य करते सब मुमको
 मैं पावों में बेनी बामू
 कहने या तुम बेल बड़ाघो
 पितृ श्रम वो - या मैं विप या भू !

कहते फिरा पढ़ा सिखा कर तुमने
 बबारी दिया छोटी का भी सिर,
 कुम रहे सपानी बस्या
 बहते मरवादा कहीं रखी फिर !
 तुम्हें वून पसीना करके
 कुसांगार उरूप शिराा दिमबाई,
 गाड़ निन जममे तुम दिघा
 काम म घाई !

मा रात्री बम इतना कर दे
 जिसम मेर प्राण सिराएँ,
 सिरी ब्याह की हामी मर से
 तुरत हाथ पीले हा जाएँ !
 ठाकुर ने बम पासी बक दी
 उठा नहीं पाते बप्पा सिर
 जेप पढ़ा पिछला सगान कर
 कास बेज में पढ़ता फिर फिर !

छोटी को छोड़ा मुन्दर मे
 उगे घनेसी पा पनपट पर
 मा बहरी में डूब मरनेगी
 मोब साज की हिमे नहीं डर !
 मुम जानते वंगी तुम में
 शिष्य तुम्हारा छाटा भाई
 जन समाज मैबा बँम हो
 पर ही में जब छिड़ी मड़ाई !

बीड़ा म विमन हों पग पग
 जब जन निर्धन कुग्र ब नीप
 तब धामू ने घारे जन ग
 बंश बस बाई क्या नीप !
 नाम हव मय पूना माए रत
 मुए मुए में बँट मड़ जन
 परम्परागत निजरा ब गुए
 र्दि रीतिगा ब बुयो जन !

पले भ्रम बिम्बासों में यत
 बने कूप मच्छुक रनातन
 निज सामाजिक जीवन के प्रति
 विरत, - घेंघेरे भर के प्रायत ।
 सुलभ नहीं धरपेट धम कन
 पड़े बेह पर बिपड़े सते
 जाड़े में हिम हृद्बी बबती
 कौपते तन क पीसे पते ।

पर निम्ना ही बधि का भोजन
 कलह स्वभाव कुटिल मति भूपम
 अजिर एक दुर्गंध कृमि मरे,
 व्यर्थ अज्ञान स्तन सा जीवन ।
 भाम्य खोप बतभाते बुध बन
 पूर्व जन्म के कर्मों का पल
 बीसे मुक्ति मिले पर दुख से
 कहीं राम जो निर्बल के बस ।

मुड़ निरक्षरता के पत्थर,
 बंजर भू पर कहीं बसे हस ?
 शक्तिर्षों का पर्वत सिर पर,
 भला समस्या का हो क्या हस !
 ऐराजठ सा देह हमार
 रीज खोप बल हठ बल होकर
 पराधीनता के दसरस में
 फेंसा हुआ निज यरिमा खोकर ।

अम्य देल भी इस पृष्ठी पर,
 पड़ता बिनकी पौरव गाया
 दुःख रीम्य क कुणित बोस है
 शुक आठा मग्जाबल माया ।
 क्या बिघान इसमें बुबिधि का
 पाहू नहीं पाठा रपमा मम
 महा पुरप जगज बिस भू पर
 बहीं गरक मय बिचरे प्रतिराज !

कोटि करण कर, - सब निरस्त बस,
 पदा वायु से पीड़ित हों बन,
 युद्ध यह का रण क्षेत्र उर,
 क्या इस महा प्रगति का कारण ?
 दास सनातनता के मन में
 दास शक्तिओं से हम घर में
 दास युगों से स्वर्ण धरा मह
 धर्म काम जीवन संवर में !

प्रथम सम्पत्ता का प्रभात जो
 साई बन पू से जीवन में
 महा राष्ट्र का प्रसकार सब
 बास किण उसके प्रांगण में !
 परिमल का इतिहास हमारा
 यन रोदन का हो क्या उत्तर ?
 बिस ईश्वर के पूजक हम सब
 बह निःस्वर मिर्मम जड़ परपर !

गरमा से सपु यज्ञ करें क्या
 पकत ता शक्तिओं का संकट
 धार धार तम - मिथ्य गरजता
 नही शूराता प्राणा का तट !
 बंगी म मम म्यपिन इगिट मे
 दया हरि को दुःख से बाहर
 उमे सान्त्वना द बचनों मे
 बोमा षड का भाव मुखर स्वर !

जब स्वदेश में प्राण मयी हा
 धू-धू कर जनने हों सब घर
 तब शिमकी निर दुःखदा राना
 भाता ? हरि तुम पर सेवा पर !
 मानव की दुःख क्या पुणन
 बरंर स्थिति मे हो वह बाहर
 बना मरी पाया सब तक निर
 मन का जीवन स्वयं पता पर !

जाति पाठियों में देखों में
 वर्ण भेदियों में विभक्त बन
 बाधक उनके योग खेम का
 गठ संस्कारों का बीना मन ।
 हँसते जहाँ प्रसूनों के पल
 पक्षों के राग बरसाते क्षय
 पवन नाचता सरिता गाड़ी
 बहती साम्य हठ हो मानव जय ।

निम्न घम्य बीबों से मानव
 उसके सुख दुख उस पर निर्भर,
 हमें खोजने निम्न दुर्यति के
 भौतिक नैतिक कारण बुस्तर ।
 प्रगतिहीन मानव - विकास का
 उसके भीतर गुप्त संभरण
 सामूहिक जीवन रचना कर
 कर सकते दुख सागर जनयण ।

पर दुर्यय दासता वर्त में
 पिरा वेस हठ चेत भ्रमोमुख
 पराधीन को सपने में भी
 ठीक कहा हरि, सुलभ कहीं सुख ।
 क्या ज्ञान से विचलित चित्त पर
 महर् कर्म करले में क्षम
 एक ध्येय रत नित जितका मन
 उनको नहीं सदाता विष् भ्रम ।

प्रथम बेच स्वाधीन बन सके
 यही परम हो सदा हमारा
 पूर्वों मुम जागरण संघ हम
 जन स्वतन्त्रता का वे गार ।
 मुक्त देश के संग ही होंगे
 माँव मुक्त गाँवों के संग जन
 साब कर्टेमे सब क बंधन
 होंने संग ही कष्ट निवारण ।

दश पाठिया क जीवन में
 साथे एष महत् शान्ति दाय
 जीर्ण सम्भवा के भव में जब
 बहने सगता शान्ति केतन !
 पञ्चसर यह नव बीज का रहा
 शिशिर प्रमंजन उड़ा जीण बल
 नन्द ईश्वर पंजर म बन क
 शोक रहा सोया मधु मगन !

माया हम गता जल छर
 जन मवा का में पबित्र बल
 हम स्वदेश हिन जिरे मरेमे
 जब तब हा स्वाधीन म भारत !
 मुनते हा प्राज्ञान बेग का
 प्रकट हुए जब मायक गांधी
 मायत रेणी हुआ पड़हा भी
 बनने का मम पागल घाँधी !

लिए महिमा दुग कउन बह
 धड़ माय का मोक्ष निर्भय
 सरदिब शुभ स्वर में पुकार
 काता धरती पर प्राणायाम !
 जाम उठी सार्द जब धरणी
 साट रही ममि - पम शरमा पर
 मौन भंग कर मूँज उठ पिरि,
 गरज रू मूय मू महूर !

करका सता रूद विगु घर
 निवन पड़ विपरा म जनक
 बढ़ने प्राणिन बल मगर पर,
 प्रतिप्रति पुर पध गुरु प्राणम !
 दीद रू मूरम धरा पर
 उमड़ रू प्राणगा क पन
 प्राणकार मनों में दात
 बीजार मना जग प्रकृत !

दूट रहा धन्याय बच्य सा
 धनि मुष्टि हो रक्त कीइ धन
 मुषा सत्य में, दग्ध विजय में,
 वुरित म्याय में छिड़ा मृत्यु रण !
 सुनो महारमा बांधी की जय
 जिस्माते गूमे धू रज कम
 भारत का ही यह न मुक्ति रण
 विश्व मुक्ति का प्राया शुभ क्षण !

धात्म त्याग की यज्ञ भूमि यह
 धन्ध स्वार्थ रत धू संघर्ष
 यन्त्रों से पर बलित धरा धब
 सत्य पंख नब करती बापण !
 स्वर्न दूठ युग संत नीतिविद्
 भारत के ईदीप्य तपोबस
 कठिपों की साधना सिद्धि बह
 धात्मा के प्रतिनिधि तेजोम्बस !

संस्कृति के नवनीत त्याग की
 मूर्ति अहिंसा ज्योति सत्य प्रत
 भोक पुष्प विबतप्रज्ञ स्नेह धन
 युग नायक निष्काम कर्म रत !
 बच्य अस्त्र तप दृढ़ तन पंजर
 धनि बर्न त्वच मंडित धास्वर,
 गीत गुध्र बेबोपम विग्रह,
 मेक द्विचर से बसते धू पर !

उग्रत जन धन देवबाह - से
 स्वर्ग छत्र चिर पर तारक नम
 सौम्य धास्य उग्मुक्त हास्यमय
 प्रात रवि - सा स्निग्ध स्वर्न प्रभ !
 सतपापह वृष - अस्त्र छोड़ते
 बह संवक्त साभ्राज्यवाद पर,
 धासमुद पुष्पी को जिसने
 जूम लिया जन - गो को दुह कर ।

रक्तहीन धन करता उर में
 दिम्ब धस्त्र कर धस्त्र मपन
 मनस्ताप के धधु बहावा
 विपस स्वार्थ कुंठित उर पाहन !
 संसृति का वह गूम प्रचेतन
 धात्मा में धुम करता चेतन
 तप रविम शर मनोमुहा को
 वीपित करता भीर तिमिर धन !

धस्त्र धस्त्र सम्भित मृत धू हित
 मानव करणा धर साईं तन
 धग्नि स्पर्श पा धन के भीतर
 सुसग उठे सीमा प्रकाश कथ !
 मुक्ति युद्ध यह मुक्ति बाहिए
 धू को युध के धनाधार से
 ईन्य धबिधा धृषा धप से,
 धय संशय मिथ्या प्रचार से !

मुक्ति शक्ति के धहंकार से
 धसत मृशंस के धर प्रहार से
 मुक्ति धर्ष यह मुक्ति बाहिए
 धीतिरता के धंधकार से !
 धूंज रद्दा रण शंघ धरजती
 धेरी उड़ता मुरधनु चेतन
 ऊर्ध्व धर्मध्व पगों से धरणी
 धमती धड मानवता का रण !

धिजय नाद से ध्वनित निनाई,
 सत्य सैम्य जन धरले स्वागत
 धरती धधून धहिगा धिज धन
 देवधुज धू धर धम्याना !
 तुमने देवा ही नगरा में
 बाइता निज जाना धांशेनन
 धाधनन के निज धधरता
 नान धड धारण का धीरन !

पृथ्वी दिक् श्रीति तिरंगा
 इन्द्र धनुष सा नभ में सोभित
 ध्वजा बंधना मातृ धर्मना
 पाता नव भारत का योगित ।
 स्वाभिमानी बिसमें स्वदेश का
 स्वत आत्म बलि हित बहु तत्पर,
 समन श्रुतसता बात पत्र सा
 उफन वरजता उठ बन सागर ।

सभी सम्य सम्भ्रान्त नामरिक
 मुक्ति मूल्य देने को उद्यत
 बना बध्न प्राणीर वेद्य प्रब
 बड़ा मूल्य सम्मुख अप्रतिहत ।
 मानव की संकल्प शक्ति में
 बाहु बन्धित में छिया युमुन रण
 प्रथम बार सामूहिक धारना
 जूझ रही नर पशु से भीषण !

इधर जड़े फिर सीम्य बेवता
 उधर घड़ा उगमत् वैश्य हम
 शक्तियों में सक्रिय हो पाया
 धु पर शुभ्र अहिंसा का बल ।
 अंध अहं गतिरोध कर रहा
 छु प्रकाश पथ करता विस्तृत
 घुना डेप की आहुति बेटी
 बरसाती हैम प्रीति शमाश्रुत ।

मूल्य भीत रज प्रकृति कापटी
 पुरुष अमर्या कृष्ण सोभित
 प्राण मिथीनी खेल रहा युग
 बिजय अस्त पर मत् की निश्चित ।
 मुट्ठी भर हठिया बुसाती -
 छात्र निरुक्त पड़ते सब बाहर,
 लोग छोड़ कर द्वार, मान पद
 हैम हैस बीबी गृह रहे भर ।

शीक घाय में तम बे कपड़
 मिरछ प पर पागल स्त्री मर,
 भद कभी इतिहास कहेगा
 बौन पुरय भसवा मुग भू पर !
 दख रहा मे निखर रही भू
 भुपा बुहासे से कड़ बाहर
 मब उपा प्रंसस में सिपटा
 हेमता शिगु युग रबि बिम् मास्वर !

बहक रहे मूनी डामों पर
 रंग मखर पत्सब पड़का पर
 जम मन बन में मक्ति भतना
 पूट रही बन मय कुमुमाकर !
 धारमा का स्वयिक पावक रूप
 मोया निप्रभ जन उर भीतर
 तुम को धांधी बनना होगा
 जग बुझी मी दोड़ म पर !

छाया घाब प्रमाद सोम म
 डोह माह नीरास्य दोम डर
 ब्याग कम मरक तिमिर में
 स्वर्ग ज्योति की छिनी घरादर !
 निज मुय दृष घणित कर मा का
 नौद सगलित करो सोरु बस
 जन स्वर्तवता क धांचम में
 बेघा निशिम घरणी का मगम !

मुक्त घोट जय लछ न मितगा
 स्वच्छ म हागा मविन रउ जन
 संप शक्ति की बहि गुडि हो
 प्रप्त गुडि - म जन्वित बचन !
 एक दगाद म पुरा रहे मर
 नपर नून भू नागा का कृण
 बुप म ररेम हम बनि घर म
 घड़े प्रप्त सं/ में राव न !

प्रसह्योव वावोसन में धब
 प्राया बहु धनिवार्य महद् क्षब
 कैले गाँवों में मृ प्वासा
 वधक उठें क्षमिवाग वेत बन !
 जाघो बंजर जन धरणी को
 जोत बसाघो पौरुष का हस
 सोहे को सोगा कर देगी
 छिनी स्पर्श मनि उर में उज्ज्वल ।

अग्नि बीज बोघो स्वरुग्ग की
 फसल उगे जन बीजन उर्वर,—
 यही घटक प्रावेश देघ का
 तुम कुम संकस्मो के निर्घर !
 बोला हरि, मैं कर्म यत्न भर
 लोच प्रेरणा के तुम भास्वर,
 प्रसन्न बिह्व मेघ प्रातुर उर,
 तुम बिभाषाघों के उत्तर ।

कवि अघि तुम रवि से भी उज्ज्वल
 हृदय तिमिर हुरते बिसके स्वर,—
 मुझे दीखते विश्व व्याधि के
 मूस प्रीर भी गहरे बुस्तर !
 जब तक दैत स्वर्तल न होगा
 तब तक प्रगति न सम्भव निश्चय
 सिधु पार का द्वीप करे धिक्
 तीव कोटि धाम्यों का निर्णय ।

वैदिक प्राचिक जोपन से जन
 बनते जाते निर्बल निर्धन
 सबसे पहले हमें काटने
 दोमे दासता कुल के बंधन ।
 किन्तु दासता से भी दुःसाह
 धब से पीड़ित धाव मनुज मन
 भारत ही क्यों निखिल जगत ही
 पंच शक्तियों का रण प्रायण !

राष्ट्र मुक्ति भारत की कीड़े
 विश्व मुक्ति का होयो कारण ?
 मनुष्यत्व के लिए मनुष्य को
 अपने से करना रण भीषण !
 स्वर्ण पूर्व परिचय दिग् भ्रम में
 भू जीवन का ऐक्य विभाजित
 पूर्व हृष्य मन होता जग का
 परिचय से जीवन संपासित !

हम देते धर्म्यात्म जपत् को
 मानव होता अस्त संसृष्ट
 परिचय जड़ विज्ञान शक्ति से
 जन मुख साधन करता अज्ञित !
 मुझको सगता यह सुंदरपुर
 मेरे ही मानस का खंडहर,
 मुग्धी रूप तम में दूरे जन
 मेरा ही उर करुणा कातर !

समस्त न पाता भाव मुझ मन
 सत्य बहिर्मुख या अंतरंग
 अंत शुद्धि करें पहिले जन
 बाहर धोर बजाएँ या पग !
 तुम चित्त हा तुमने इस पर
 मोबा होया कर उर मंचन
 मुझको इसमें ही मुग्ध विगता
 बन्दे तुम्हारी भाजा पानन !

गाँव गाँव में सत्याग्रह का
 मैं संदेश कसैया बितरण
 राष्ट्र पत्र में बाबू क शेष
 जन जन मन कर मर्के ममर्शन !
 मुझे यही प्राणा थी तुमसे
 मुक्ति शंघ पूर्वो तुम पर पर
 माया बिनक का जम भीतर
 हरि शिखरी बर्मी का बाहर !

इससे अंधी वह बंध स्थिति
 जो मात्सा रत कर स्विर पर
 बाहर भीतर में समत्व भर
 रहती सुभ में निरुत्त निरंतर ।
 कवि की वी कल्पना पटक कर
 प्राप्त मुक्त बनती पागलपन
 सर्वमुखी प्रतिभा बोधित कर
 बिसे पुचते बुद्धि प्राप्त जन ।

तुम सब स्थिति से दूर रहो निर -
 कार्याधी तुम जनगण बसस
 माहृ बुद्धि यहि जो मत फल कर
 यहो विनय का सात्त्विक संभव ।
 प्रहसन भर होगा वह दर्शन
 कर्म प्रेरणा फल से बंधित
 मध्य युगों के संतों की सी
 हरि, तुम भूस न करना किंचित् ।

भौतिक धार्म्यात्मिक धर्मिन भित
 सौग संय होखे विकसित बंधित
 पूर्ण काम हों राष्ट्र प्रथमतः
 विश्व ऐक्य तब होगा निमित्त !
 यद्य हृदय भाष्य भू - यथा
 संयम त्याग विनय से विरचित
 बहुता बितके गिरा बास में
 ज्ञापि मुनियों के तप का शीघ्रित ।

इस जगत् बनती समस्तो तुम
 दया क्षमा प्रति में प्रसन्न स्थित
 भारत के पीवन संयत्त में
 निखिल भुवन सब जीवों का हित ।
 महा ह्रास के युग पसने में
 तुम्हें दीखते यह तम दिग् भ्रम
 जग्य में रही नव मानवता
 ईशित करता भव विकास जग ।

बाह्य बुद्धि में संशय के
 वा न जाय कृच्छ्र ताकि मन
 साक सम रत एहो प्राप पण
 बिबब कर्म ही मू पय साधन !
 बंजी ने निब प्राप सखा को
 सहज स्नेह म द धारबासन
 धपन ही प्रिय मन स्वप्न को
 दिया शीम दुःख कम निष्ट तन ।

हरि महदय वा पर हित रत नित
 जन मेवा ही वा उमका धन
 हाक मोस क तून पंजर में
 बह वा बीबित पावन का रूप ।
 महपती जाती हिम संघ्या
 तद कम धब नीरब तम मागर
 छोर गणि सा शुक्र बीखता
 भाब मूह - जन मू तम दुम्बर ।

धनु स्वभा म नहरे कम पर
 ज्योति रेख के प्रतिपस पर पर,
 यगा की नि म्बर पद गति का
 पित्रिन बरता भूपछीह मर ।
 जम म बाँब पटा कर बुरती
 उदनी गोमे पानों म पर,
 इर बहीं टेल्ली म टिटिहरी
 स्मिष्ट नाम धरना र र कर ।

संघ्या बन्ध का माघो दुःख
 बुबबी मेने बर यय हर
 बाब बाब बर मेरमाने मिन
 बाक गांग वा दे दुहरे स्वर ।
 निग्नि बाप धहि मी रती पर
 माण रती दी उग धूमि पन
 नट पर तरबुदों ब मिर पर
 बपा का मरण के छाजन ।

इससे जो बाहर खड़ी प्रास सर्वमुखी बिसे
 आस्था भीतर गुम की भी मुक्त प्रतिभा पूबते
 वह अंत रख कर ईस्वर पर में समस्त में निरख निरंतर ।
 कल्पना बनती पागलपन, घोपित कर
 बुद्धि प्राप्त बन ।

तुम उस स्थिति से दूर खो नित -
 कार्यायी तुम बनगम बरसम
 यह बृति यहि को मत फल कर
 महो बिनय ना सारिकक प्रंचल ।
 प्रहसन भर होया वह दर्शन
 कर्म प्रेरणा फल से बचित
 मध्य मुमों के संतों की सी
 हरि तुम मूस न करला विचिद् !

भौतिक धार्म्यात्मिक अमिस नित
 सैग संय होते विकसित बधित
 पुखं काम हों राष्ट्र प्रबधत
 बिबब ऐक्य तब होगा निर्मित ।
 घरा हृदय भारत मू - बदा
 संयम त्याग बिनय से बिबधित
 बहता बिसके तिरा बात में
 ज्ञापि मुनियों के तप का घोषित !

इमे जयत बनती समझो तुम
 बया दमा धृति में अन्त स्थित
 भारत के जीवन संयम में
 निविम मुषन तब जीवों का हित ।
 महा हाम के युग पलने में
 तुम्हें बीघते घब तम बिम् प्रम
 काम से रही नब मानबता
 इमित करता नब बिकास नम !

बाह्य बुद्धि में संशय के
 जो न ज्ञान कृच्छ्र ताकिरु मन
 साक दोष रत रूओ प्राण पण,
 विश्व कर्म ही भू पण साधन !
 वंशी ने निज प्राण सब्बा को
 सहज स्नेह से दे ध्यासासन
 धपने ही प्रिय मन स्वप्न को
 दिया शीत दुःख कर्म निष्ठ तन ।

हरि महदय वा पर हित रत निर
 जम सेवा ही वा उसका धन
 हाइ मांस के तुण पंजर में
 बह धा पीवित पाबक वा कण !
 गहराती जाती हिम संघ्ना
 तद जल ध्रुव नीरव धम सागर
 छोड़ कशि सा शुक्र बीजता
 भाव भू - जन भू ठम दुस्तर ।

धनु स्वभा से सहज जन पर
 ज्योति रेघ कौप प्रतिपन्न धर धर
 यंगा की नि म्बर पण गति को
 विवित करती धूपछोह धर !
 जम म धौष सटा कर कुररी
 उड़ती छोने वासों - से पर
 दूर करीं देखीं दिदिहरी
 सिन्धु नाम धपना रट रट कर !

संघ्ना बन्धन को माधो दुःख
 दुःखी सते कह गणे हर
 बाक बाक कर भेंटमाने मिम
 बाक सांग वा दे कुहर त्वर !
 निर्गार भाव धहि की रनी पर
 साट रही की उटा धूनि धन
 तट पर तरबुजों क मिर पर
 बंधा नन मग्गन क छाजन !

बटी धूम रेखा रस्सी सी
 टैवी खिठिय पर समती सुंदर
 पार्श्व चंद्र साकठा पार से
 सिठ कपोत सा बीठा तव पर !
 त्ना त्ना करते स्यार मार्त रब
 बंध बघट बजते मंदिर में
 बिबा मित्र से हो जब बंसी
 सौटा तिज एकांत धरि में !

यूह मबाज पर लटका
 हिम शीतल सिठ शशि मुख
 प्रथम प्रथम की स्मृति बा
 भाज उपेक्ष्य मधुर मुख ।
 सप्राटे में समता में
 मेंबरते बेबना मत भय
 पार पर पा को
 संघकार पर पा जय ।

ग्राम शिविर

गारी गूड़ समस्या जग की
 नर नारी उर का हा परिणय
 राय खेतमा का बिकास ही
 निखिल प्रगति का मार न संशय ।
 भले ज्ञान विज्ञान बनाएँ
 मानवता वा सौघ चद्र - स्मित
 गोमा - देही उप मिठा ही
 स्वयं ज्योति कर नवती वितरित।

मबल बधू पैठी खर्तों में
 या हिम श्नु घब छार्द पर - पर !
 क्रिसन हमरी ममरी उसरे
 धर्ष सिसे बोमल धंगों पर !
 सहपाठी पीती सरमा स
 स्नेह गंध उक्री रम भीनी
 पदपाठी उर हमकी धाबी
 कृते की पूनर बंपे शीनी ।

जाम वधू बद् बिरमय स्परित
 जल में डूब नम मी चितवन
 या बहु लीनी गिमी छप्परी
 ग्राम नीमे निरलम साधन ।
 हिक्रम के मुक्तामरणों स
 शोभित बंपेता कूनो का मन
 स्वप्न बोन श्मुनि मन को वाले
 माच माम व हेम तीर राग !

हरी मधमसी हरियासी का
 भूम रहा भोगा भू भू कर,
 मठखेसी बेमठा पवन बठ
 सचकीने उन में उभार भर ।
 रोमांचित ह्य उठ्ये भू प्रोग
 पी मेहू में धार्द वाली
 छोटी सी बंधिया मटर की
 धाँधों में छार्द मव साती ।

प्रथ मधराष्ट बन उरुभो पर
 गद्य मत्त मँडलाते धनि दस
 सुंभ धाम्न मंवरियों का मुख
 जया रहे या या नर कोयस !
 टेसू निज रक्तिम सुक भासा
 धमी छियाए छव पुट भीतर,
 पीपस के बिनपी से कोपस
 कभी कूट कद् धारै बाहर !

सिठिब नीस नमना गाँवों को
 हरी भरी भू हरी बन मन
 हँसती रज हँसती हरीदिमा
 हँसती बिबि हँसते धनिमिय सच ।
 मूर्तिमती जगु की बोभा सी
 तुहिनो की तनिमा में न्हाई
 सुपर सिरी पी बड़ी द्वार पर
 सुभ उवा सी सहज सजाई ।

बह बोधक का रहस द्वार या
 नव स्वप्नों भावो का प्सावन
 त्रिषस बह नव बोभा सुध में
 मग्जित कर बेठा तन्मय मन ।
 बाहर से उठकर मन के पय
 अंतर जग में उड़त निस्वर,
 जहाँ सुक संपीठ तोष था
 धी सुव सुपमा धासा केस्वर !

भर्षं घुसे उर ने कपाट से
 स्वर्ग स्वप्न प्रसूट बेही घर,
 शीत रत्ना हो मूर्ति होने
 भाव बोध के क्षय में सुवर !
 उसे देख कर सोचा करता
 रूप - पारधी बंजी मन में
 रूप को धतिक्रम करता
 प्रतिपत्त ग्रिमते तामा तन में ।

संघ्या व स्वर्णिम श्रुटपुट स
 कोमल कुंतल तम में वोकर
 प्रणय भावना मीड़ खोजती
 मूंद पारणामी मन के पर !
 उर का स्वर्ण मुकुर ना स्मित मुख
 सूक्ष्म भाव छवि से जाता भर
 उदय हुमा हा नव शोभा प्रह-
 निष्कर्षक सौंदर्य सुभाषर !

समा गया था मठ नयनो में
 मौन नीस दो नीसों में डल
 ध्रुव कता उड़ महज मर्म को
 बितबन धग पलकों में निरपत्त !
 कहता वशी का कवि मन में
 द्रव्य मधुर धधरों की सासी
 गुप्त हर्ष न प्रीति प्रमृत हित
 शानी मागिब शोभा प्यासी !

गाना ने स्वर्णोदय जल में
 सहस्राना माधुर्य हृदय का
 उछली विरलीं तार - बीबियां
 कौता धूपछाँद विम्पय का !
 गुने भवण छवि के गीनों म
 पदें गुमापित के गुपि माती
 गुन बिहीनता च्छनु मू धनु गुन
 दृष्टि मन्दि गर मैन हानी !

मधु शीबा में सहज भविमा,
 मुख सरोज प्रिय कन्दु बूठ मत्त,
 शौकुमार्य के प्रथनु भार से
 मुके धंस शोभा तठ निश्चस !
 स्वर्ग मांस का सर बस स्पन्न
 स्वर्ग हंस सिद्ध बठरे बिस पर,
 मुग्ध प्रीति तिखी उपकृत हो
 कनक गौर धामद कलस मर !

स्वर में हैसमुख बीजा के स्वर
 दशनों में उर की धामा स्मित
 प्राणों में बहता वा निश्चल
 शोक हीम सवीर्य पर्यन्त !
 बनीभूत धानर पुष्प के
 स्तम्भ उरोचों म वा मुकुटित
 धनों की साधम्य मठा में
 प्रेम स्वतः रोमांच पस्तकित !

नदी शील ने बुग प्रिय रेही
 शोभा में भर सौम्य संतुलन
 स्वप्न पाव फूलों की बाँहें
 मन में भरती पुस्तकालिपन !
 सिग्ध शीदनी सा स्वभाव निव
 छिटका करता उन से उज्जस
 तब उरों के झोठ फूटते
 सु उसके मति बंधन पर तन !

धाम बीबियों पर, शरों पर
 छिखी हो श्राव मधु हाथा
 जनपद मू की जामा हो या
 उठती हो तब मुद की धामा !
 धरती के रज कण से उसने
 तठ दुग पद चारों से परिचित
 धरनुय सात्थिक उर बंधन या
 जन कदवा ममता से विस्तृत !

नव प्रमात घातप में पुम मित
 निखर उठी थी घर बिनि साली,
 भूम रही थी मद पवन में
 धौबसी की मरकत सब डाली !
 तुहिन मुकुट स्वपिम प्रकाश की
 मौन मूर्ति गङ्ग तन्मय मन में
 सिरी धनमनी सी समती थी
 घोई मन व नीरख क्षण में ।

सोच रही थी बह — क्या स्त्री के
 घोया में निर धारा पानी
 दुघ न मूर्ति गङ्गी हा उमकी
 घोगू ने हा सिखी कहानी !
 मुमती सधिया स उनपर वा
 सतत टूटत दुघ के पवत
 घास पाप दया कटती जा
 उमस मन हा उल्ला माहन !

जब बंभस बिजवन सा यजन
 सहपाता मांवर स मुंदर,
 रक मुक पूँछ कौपाता पर पर
 उड़ - फिर रंगता श्चतु श्चतु में पर !
 घोई उमम बहता पुपक
 यह जीवन का सीमा - प्रिय मन
 उम याद घाता सधिया वा
 निजर बढ बिहग का जीवन !

पर घोगत ही क्या स्त्री का जग ?
 सोछन ही उमना निर भूराग ?
 दृष्टि सर्ग दग्नि बबनों म
 मग्ने उमक तन का इजग !
 मिहर मौन उल्ला स्मृति वा मन
 मुन मीता वा बन निर्वामन
 पर संमूर्ति में नहती पवता
 कर मे ईर्ष्या दुग्गा पाहन !

धनुषि भर रख तन में सीमित
 वह घर के कोने में स्थापित
 ज्योति पीत मयभीत सिखा सी
 जसही स्नेह रहित विधि स्थापित ।
 पद छाया सी सौटी भू पर
 निज पर की चितवन से सज्जित,
 मुग मुग से गुच्छित कुल का मुख,
 राहु ब्रसित क्षति वह भी विरहित ।

कुतुक विजन में सहसा पी जग
 जब उबेलता मुख के मधु घट
 किसी गुह्य माधुर्य लोक में
 खुल से पडते तब घंटर पट ।
 प्राणों में वह धमूत कहाँ से
 सरता ? कह उल्टा पुसकित मन
 स्वर्ग बिहय हित घघ घण ने
 स्वर्ग गड़े कट्टु पिजर बंधन ।

क्या इसमें नीतिक प्राथमिक
 समझ न पाता उसका अंतर,
 भाव विकृति तन मोह, प्रकृति या ?
 धुन्न धसलम स्त्री द्वेषी तर ।
 मधु ने कल पत्नी को पीटा
 उसे रात भर घर घर बाहर,
 मेसे में हंस बोल रही भी
 राममता जो कह वह देबर ।

पारसास ही तो घर नाया
 रंजन गई बधु कर सुंदर,
 दुखिया का सिदूर सुट गया
 उसे देख धाँत्रे धाँत्री घर !
 सत्ते की पटरी सी सुइकी
 रहती मूने बूह क्षान पर,
 हूँटी पतझर भी टहनी भी
 पित न भेंटेगा कुमुमाकर !

नहीं जानती वह क्यों स्त्री के
 धर पर कानिष्ठ मा विघ्नबापन
 बढ देह अपित समाज को,
 मुक्त हृदय मन प्रभु का भाजन ।
 क्या न देह से उपर उर का
 स्नह संवरण हा जन विस्तृत
 भैया मात म पून घरा में
 करता निब उर मौरम विनष्टि ।

मोच रही थी जड़ समाज का
 वह क्यों बेधे बलि पभु सा उन
 भैया का वह कार्य करेयी
 जन जन का होगा उसका मन !
 हरि भैया का मधुर स्मरण कर
 उमका उर हो उल्ला पुमकित
 वह प्रादल प्रतीक पुबक या
 छापन से स्मृति मन पर भविन ।

मौरा की गुंजा से पीम
 बाएहामा क भीट स्वर
 पड़े मिरी क बानों में जब
 मूत्र बड़ घाया या झार ।
 गाती थी मुबनी विजोगिया
 छाप के नीध मन जु क
 जहाँ मित्रया का कमा मिदिर या -
 हरि का छोला मा प्रयोग मर ।

रिना गाँव मुद्रिया थ जन त्रिय
 पका मुपग या पर पौन
 दक्षिण का दानान बड़ा या
 त्रिम पर शय पूग का छजन
 हरि मे तक्षनी बर, कप
 उटा मिरी बर म कबानिज
 गामा मूह ग्दाल मिदिर या
 गी जन क जीवन रिझग लि ।

बबती हों बँटियाँ सुनहरी,
 उलठी भी कल कँठों से ध्वनि -
 पूस मास कुहरे का डेर
 भीग नयी रँग की बूनर, धनि !
 बकई बकना बमुना तट पर
 तिरछे मिना सुनहरी भिय पर,
 पहर न कटते पूस निहा के
 श्याम बिना बसता मूना बर ।

मास मास बरछी सी बबती
 हिम बवार, कँपता उर बर पर,
 पत्र नहीं भाए भियतम के
 बाहर भीतर छाया फझर !
 कठिन गुवार, कुई कुम्हनाई,
 कहीं राम सबसल बो भाई,
 बन बन फिरती होगी गीता
 बिलब रहीं कौनस्या माई !

फामुन में फूले बन के धँग
 बान पात में छाए मब रँग
 मन की बूनर रँग से सबनी
 हामी खेसेयी साजन रँग !
 मधु का पंख सँदिया पाकर
 लौटे बिबुड़े भ्रमर छाड़ डर,
 धनि निर्मोही श्याम न धाए,
 किसको भेट्टे पूस बाह मर ।

फूसों फ झरने मटक व
 बर के धाम बड़ी बेल पर,
 नारंगी रँग क गुच्छों की
 बगल बेसिया भगती सुंदर ।
 एक घोर बीपाल बना बा
 धार पार के बाँधों के पन
 जहाँ सीत को सत्याग्रह पर
 बर्षा करते उन्कँठि मन ।

पास पास से खेत सुहाती
 लकी घोंगूटे क बस घरदर,
 भरमाता चादनी रात में
 धलसी क फूलां का सागर ।
 गोरी मटरों पर परियों सी
 गुरेग तितसियां फिलती बंबम
 इत्रिम नपरो मे गोमा में
 घाम प्रकृति थी के रंग स्वस ।

मिरी त्रिबिर में घुनी दृष्टि ग
 महज हास स करती स्वागत
 घर सिया उसको स्त्री जन ने
 नदी पीछ थी उसकी घनुगत ।
 राष्ट्र बंधना गई मदन-
 बर्म भूमि जय जनपद भारत !
 बसकंठा मे मित तिनार उठ
 गुमा गगन में स्वयं छत्रबन् ।

कर्म भूमि जय जनपद भारत
 जन मन हो भू रचना में रत !
 पू ही जन मन जनगण जीवन
 तुम मे हा सब लोग एक मत ।

गिर पर स्वपिम शस्य मुकुट म्मित
 उग पर भम मुक्ता सब मोमित
 स्वग बाँद होमिया कटि पर म्पिन
 बम बुतन वनि त्रिय कर प रत !

नावन बना गुहाणी बापी
 हेमती मान की हरियापी
 घाघ्र मीर की पानी बामा
 पद् शतुन बरगानी घमिमन ।

जीवन गोमा शिर्पी हो मन
 भू स्वप्ना मे घनक तोवन
 गुरन एन जन प्राणा बा घन
 बंधनों में बग बग घनरित्त ।

दृष्टि सत्य के प्रति हो बाप्रत्
सोक कर्म हित भुज नित उषत
भतर में हो प्राप्ता पसत
घरा प्रीति हो जीवन का प्रत !

हम नव भारत की बालाएँ,
मुक्ति चेतना की ज्वालाएँ,
सीस स्नेह सेवा मामाएँ,—
राष्ट्र शक्ति में हों जन परिणत !

सोक बोमियों में बंसी के
रेल शक्ति के बे सहबायन
हिन्दी ही में सिरी केन्द्र का
भरसक नित कष्टी संघासन !
हरि कुंभी कहता भापा को
बुमता जिससे सामूहिक मन
शेख कृति से उठकर ही हम
कर सकते जन राष्ट्र संघटन !

कमाबाज कहता हरि उनको
उड़ा कल्पना के कनकौरे
बोसी का रंग दे मड़ते जो
मर्बहीन दिनों के हौरे !
जन घरनी की प्रसन्न श्मया का
जिसमें महीं महत् उद्येसन
बंभ्या वह कबि कमा धर्ह प्रिय
भयु निबत्त की घोषी शर्षन !

तरुमी चरते सेकर स्त्रीजन
मूठ कातनी का चतु उर्षन
नव पीजन पट बुनतीं बुनतीं
मए विचारों से पिछड़ा मन !
मुनती गांधी मौरव कीर्तन
राष्ट्र पामरष के जन नायक
रामकृष्ण की पुष्प भूमि में
प्रकट हुए जन भाष्य विधायक !

नम्र मिठी हास्य यह रण बलि मत्स्य विभव
 प्रबला बलाती संगठित
 प्रमहयोग गूढ़ यत्र प्रेम
 प्रवीचन दैत्य को निमंत्रण !
 बनता जाता जग
 प्रगणित निरीह जन
 ही कर सकत
 स जन संरक्षण !

मत्स्य हृदय जग कैने सरस्य भू जग रहे
 घरा शक्ति सूर्य—मनुज का
 मग्य दपम प्रास्था न्यून
 का मिथ्या मान स्वय भी
 रह सकते जन जीवित !
 मनुज क मुख दुख जिन पर
 करते जन निमित्त
 का माया बह हम जग में
 उपेक्षित पीड़ित क्षोषित !

मानव बह पराधीन पर महत् मोक्ष बह स्वप्न स्तम्भ
 धारमा रहे जग में निज
 की पुकार यह जग में निज
 कर बठपुत्रस मा
 परिचालित जीवन मृत !
 राष्ट्र क स्वामिमान शिप
 धम्मदय मरण क्षपित
 स्वप्न यह विश्व ऐक्य का
 बने बय विभव समन्वित !

संघ धपनाना विभव धेयकर पर धम इसमे जीवन इन्द्रिय
 जर्जरित जग में जन का
 कर पर का उद्यम
 भाव स मोक्ष स्वाग्ध्य हित
 वैभव पर संघम !
 का उपमाग कर कर
 मुषकर स्वयं बरे धम
 विमुक्त रहे मन—मनि प्रम
 गुण रन रहे—नरक नम !

कसन बटने बिनने के सँद,
 उन्हें सिखाती वह सहजीवन
 घर प्रांगण को मुबरा रचना
 स्वच्छ स्वस्थ सुबर रचना तन ।
 रूई के धनपढ़ माने से
 दूम बीन जन मन व वूपन
 वह संवाली उन्हें मुक्ति से
 नव भावों से कर उर पोषण ।

सोपा करती थी ईसे हो
 जन मन का सस्कार निरस्त,
 कैसी हो शिक्षा जिससे हम
 विकसित संस्कृत कर जन संतर
 निर्मित करें घरा जीवन नव
 विश्व ऐक्य में बँधे परस्पर, —
 उसको जगता मनुष्य प्रेम ही
 मावी भू मयत का ईस्वर !

रचना मम को सोच लोक हित
 प्रथम स्वान देता उसका मन
 द्वेष बुद्धि जिससे छोड़ें जन
 बिकृति प्रमाद कस्तह पर लच्छन ।
 मूख्य समय का समझें भू जन
 जगे समस्त का षड् बँडहर तन
 जीवन इति का परिष्कार हो
 शोभा का घर हो भू प्रांगण !

मानु द्वार बहु लोस राब में
 नवागता का करने स्वापत
 मा बध्य की देव देव का
 मुबती सधियाँ छड़ी उद्यत ।
 जिन्हु का जगम बधू समाज को
 रहा सदा ही मे धाकर्यन
 जिन्हु पामन पोषण की सिदा
 पाती धन नव जनी हृष्ट मन !

बहती धी, सारस्य, पुमा मन
 मुमरापन ही स्त्री के भूपप
 पर सेवा ममता प्रिय हा उर,
 क्षीस दृगा में हैसमुख भानत !
 भदे पीतस गिसट के कडे
 गहन बुरबि गडे कुल्प प्रण -
 पार प्रशिवा नरक ईस्य भय
 परबत भारत भू के रूपप ।

पाठ पङ्काम बरा में पुमकर
 मितती जुसती सखिया जन से
 रागी बुझा ना नमामती
 भय प्रबसाद मिटाती मन से !
 सीप पाठ पर चौक स्त्रिया का
 जागृति का सदेन सुनाती
 बन्ना के कपड़ सी धोरुद,
 रहना तन हैम खेस रिताती !

पाठ निराती फमस बाटती
 जात बसाती या गा बर घर,
 मधुर कसा धम का गठबधन
 छी पाब की प्रया निरंतर !
 रंग गहृषा तूनी प्रीगिया
 धानी सारी प्यात्री पूनर,
 पाँवों की धी पबती रंग प
 धी क मम्मूख धार्ड खोन स्वर ।

उन स्मरण भाता पदन का
 पनेग गेजा गीता में मुदर
 पन्हेगी की बाट जाहनी
 ईमे पाय बधू दुय बागर !
 निरी सोबती इस छली को
 राट द्यनी जान बर ता
 बर जन जीवन स्वप बन मर -
 बिछ प्रतीसा में दूय धाकर !

धकमप्यता क मितने से
 उसकी लपटा जन के मन में
 मुक्त गक्ति पर जाय रही नव
 बिजली सी है स्वामन जन में !
 बह - छा सी उसके उर में
 जन मु बीमब न रिक्त मुहुनिउ
 सामूहिक जीवन की मोना
 परिमा हो उछी नव जादुत ।

सामाजिक जीवन की यासा
 बहिर्गण में हो श्रम स्थापित
 मानव माना की परिमा से
 भीतर जन मन हो मानोहित -
 बहिर्तर के संयोजन स
 घण स्वर्ग हो ली प्रतिष्ठित
 लमी सत्य सिद्ध सुंदर जग में
 दिन नव कर्मों में ही बिरसित !—

यह यह उसे स्मरण हो पाते
 मीना बड़ी क संभावन
 मन की प्राणों में बुत पड़ता
 बधुर कल्पना मुक्त मुख सन !
 हरि ने नव धारणों में पा
 बाला उनका पुनःप्राणी मन
 धादर करती वह बंगी का
 हरि को उर का मोह नमनन !

धडा प्रीति मनीमा समुना
 उमकी सी बिजसु नहेनी
 ताप जिन्होंने मेवा पप की
 फुटारे बाजारें टेनी !
 — ह जगजग जी जी

मह घुमी हिम दोपहरी सो
 मगती धब बह माखिक निगछन
 हसके मे साबने रंग का
 तिल का पेत खिसा हो निर्मल !
 मिटे कुटिल गति बाम पिह्ल धब
 गंवा रेती सी बह उम्बल
 निबिकार जीवन रम धारा
 बहती रीते उर में कम कम !

बून्हा पीका कर हरि के धर
 धडा करती जीवन यापन
 देख रेख उद्योग सिबिर की
 रगती बह धरती सब का मन !
 पर बी ही प्रथम छाया में
 हुभा प्रीति वा सामन पापन
 बड़ी पान परबर सी सँग सँग
 बोला मखियाँ - बीठा बचपन !

समपुन रूप गुमाब सेबनी -
 बन क गुन दोपा मे परिबिन्न
 स्नेह शील मेबा ममता प्रिय
 मुडु स्वभाव मे रगती मोहित !
 सिरी ज्योतिषी प्रीति मुनहनी
 छाया - संस्कारों में पोषित
 एक प्राण धी धम्य रूपमी
 काया - स्नेह डार में पुषित !

गुमगी बीच पूर गाय दुः
 बाम कात्र कर वा मैमात बर
 हरि सींग पा नरी देखने
 जगन्दा ने गावा बाहर, -
 नू तबामी के मँग माया गुरु
 बीटे नीम मन धांगन में
 गहर म भी की मैगनी बी
 बर्बा बग्ने ब नाम में !

धर्ममयता के मिटने से
 उसको सगता बन के मन में
 सुष्ठ शक्ति सब बाग रही नब
 बिजली थी हंस स्वामन बन में !
 बह छटा सी उसके उर में
 बन पू बैभव से रिक्त मुहुसित
 सामूहिक जीवन की शोभा
 गरिमा हो उठती सब बायुत ।

सामाजिक जीवन की शोभा
 बहिर्बंगत में हो धम स्थापित
 मानव धारमा की गरिमा से
 भीतर बन मन हो प्रासोक्ति —
 बहिर्ंतर के संयोजन से
 धरा स्वर्ग हो नई प्रतिष्ठित
 तभी सत्य तिन सुंदर धम में
 नित सब रूपों में हों विकसित ।—

रह रह उसे स्मरण हो धाते
 भैया बंही के संभावन
 मन की धाँसों में झुल पड़ा
 मधुर कल्पना मुबन मुख लण !
 हरि ने सब धारनों में बा
 बाना उसका मुपघाही मन
 धारर करती वह बंही का
 हरि को उर का स्नेह समर्पण ।

धडा प्रीति ससीमा ममुना
 उसकी बी बिरबस्त सहेसी
 साप जिन्होंने सेवा सब की
 पुंठाएँ बाधाएँ टेली !
 धडा कभी जवाना सी ही
 बिघबा मुबती रही धकेली
 प्रीति कोश में धाई बरबस
 कानि ग्लानि दुखिया ने सेसी !

मेह घुसी हिम दोपहरी सी
 सगती घब बह माखिक निरछन
 हसके न साब्य रग का
 तिम ना छेत खिमा हो निमस !
 पिने कुटिम पति काम बिहू घब
 गंवा रेती सी बह वस्वस
 निबिकार पीबन रस घारा
 बहपी रीते उर में कम कम !

भून्हा बीका बर हरि के घर
 भडा कपती पीबन पापन
 देग रेख उद्योग शिबिर की
 रगती बह घरती मब का मन !
 पर की ही पपन छाया में
 हुषा प्रीनि ना मामन पापन
 बड़ी पान परबर सी संग संग
 शोना सदियाँ - बीना बबपन !

समयुन रूप गुलाब सेबनी -
 जन क गुन दोरीं मे परिबड
 स्नह शीत सेबा ममगा प्रिय
 मुहु स्वभाव म रगती मोहित !
 सिरी ज्यानि पी प्रीनि मुनहमी
 छाया - संस्कारा में पोपित
 एक प्राग की धम्य करनी
 बापा - स्नह डार में गुजित !

मुनमी बीछ पूत्र गाय हु
 नाम बाब बर वा मंगल बर
 हरि सींग या परी देगने
 जगदंबा ने ताका बाहर, -
 भू स्वामी के मंग माया मुद
 बीडे बीप जन धीग्न में
 लकर म पी बी मंगनी बी
 बर्बा करने ब दोरत में !

साध मुहूर्त निकल शुभ क्षण में
 धनुजय भर निज स्वो स्वर में
 कहते वे पुरु योम्य सिरी के
 वर के सब सव्युष संकर में !
 खेव बाय वर द्वार, उच्च कुस
 मान प्रतिष्ठा भय सब जन में
 तुम्हें ज्ञात ही रघु, ऐसा वर
 नहीं बूझा सी योजन में ।

पिता महेश भान के पक्के
 रहे मानते बूड़े ठाकुर,
 जैन देन वा राजा क वर,
 बामजीस वे गाता मद्य पुर !
 मेरे सब शिष्यों में संकर
 बुद्धिमान सच्चा जन मेवक
 कीन नहीं जानता सिरी को -
 रूप हीम मज वा बहु चातक ।

लोभ नित्य पैमान बामत
 पर मन में हूठ ठाने संकर,
 तुम्हीं न जब तक हूँ ना भरबी
 बहु न किरी को बेगा उत्तर !
 बुरा न मानो कुस मर्यादा
 शास्त्रों का भी बचन समाजन
 कई में सिपटे पाबक सा
 बाहक तस्नी का ब्याखपन ।

बिम्बानुर ब रघु मन ही मन
 गुद का करत वे धनुमोदन
 तोते पपत उनक वर में
 काँटा सा गड़ता निठ मोपन !
 संकर सा पति पपदा भी
 वर वर का करती भमिर्नदन
 गीरी की मानती मनोती
 यमपति वा बग्ती घट पूजन !

किन्तु क्याह की स्वीकृति भरना -
 मात उन्हें या सतति का मन
 प्रभु काड़ में दूब बुका या
 गई बार पर में छिड़ कटु रण !
 हरि पर भूमिमा बहते ये रणु -
 तुमसे कुछ भी छिया म भाई,
 बटी बेटे की स्वदेश से
 स्वतंत्रता स हुई सगाई !

बहा दिया नीने गंगा में
 उम दानों को पड़ा सिखा कर
 पार सगें, मोंमघार बीच या
 दूब पार्ये जाने जगदीश्वर !
 कीन प्रखर युग की घारा स
 सड़ सफ़टा ? जन मठ की घोषी,
 सत्याग्रह की नाब ग्रहिषा
 डीठ, सिद्ध जन कबट घोषी !

मुँह बिचका गुर ध्यंय हेची हँस
 बोसे, लीखा कर कहुवा स्वर,
 राजनीति का फेर म यह रणु
 छाड़े साठी भाई सिर पर !
 स्यारों का बन रादन मुनकर
 सिद्ध छोड़ हों क्या वंगल ?
 पंद्रेजी साम्राज्य भसा क्या
 इना नमक का - जो जाए मत !

पहच देता मूय जहाँ त्रित
 बहाँ पटक सफ़टा घोषियाता
 घोषी म बाजीपर का मा
 गोरखधंधा शुभ निकासा !
 गिर धुन चरणा मुड काठ कर
 देग नम बन जाय जुसाहा
 बुन न मबेग जन स्वराज पर
 तन मन धन नय होगा ग्याहा !

बुहिया जोदेगी पहाड़ क्या
 मा टिटिहा पाटेगा सागर ?
 तोपों से मड़ रामराज्य या
 नेंगे बुड़क निहत्ते बंदर ।
 ने भी लें क्या घण्टा होगा
 गोरों से कारों का सोपन ?
 लहर बहर घब बर बर में तब
 क्या दो जून जुटेया भोजन ?

स्वार्थ रूप घन राय सुव ख
 मामंती प्रभुओं से परिपुठ
 भीर्नेने क्या बीतो का मुब
 रामराज्य नारवि जनहित ?
 खावी मड़े घब पापों के
 देखी नेता नाय न परिचित
 घंट न सकेगा महनों में भी
 उनका पव मद जानी निश्चित !

सोच रह बे पुर मन में कृद
 यह सब बंगी कवि की माया
 पड़ी लनीचर छाया रघु पर
 जब से कपि सुंदरपुर घाया ।
 उमटा सीघा समझा हरि को
 अपना सबका किया पराया
 नहीं जानता माधो गुरु को —
 देखूया किध मा का जाया !

प्रतिस्पर्धा गच्छते बली स
 गुर माधव इन बोली के कवि
 गदत छन्द कवित सबैये
 गिद राज कवि अस्तंमत्त रवि !
 पूट रहे बे जन मानस में
 नवी बतना के जनु पम्पव
 बरनाता पावक मरंद मधु
 बनी का मादक बनी रव ।

ठंठ मंत्र विधि के शाठा गुण,
 बड़ी मान्यता भी सब जन में
 बीस बीस के हट्टे कट्टे
 मार पार सब करते मन में।
 हंस टहाका मार, सोच कुछ,
 खैनी मार फटक मुंह में भर,
 बोले रबु, गुम लमल बूझ सो
 घण्टा जय काली ! — जय शहर !

गुह जाने ही को उछल प
 गाँव माँ में घूम समा कर,
 खेतों की मेड़ों से होकर
 लौट रहा था हरि प्रसन्न घर !
 भाते उफलाते सागर से
 घेठ ईष के फूले सुँवर,
 हसकी फाससई चाहर सी
 सिपटी बी रेलमी दोपहर !

डोरों की बोनी छारी केंप
 बरती उबड़े पे हिम मोहर
 पबार बाबरे की बरबी के
 हेर मूम बन परछा क पर !
 पनों के कर स मुँह बपि
 बुड हीन सगने उदाग सर,
 टंके तापनों मे ऊमर में
 गारग आँपिन एव वीर पर !

बीच बीच में गड़ मंसोल
 रोमिस हरे बबूम मुहात्रे
 धूप महक उठनी रेंप भीनी
 नयन निग्य छबि नहीं घघान !
 माया गुं का देख घघानक
 गुवा निया हरि न निब मस्तक
 गहर चाहर गैधी टाँगी —
 ए ताकत मा बगिरे टक !

कौन ? घरे हरि ? कहीं पा गए,
 भैया, नतापों का बामा
 बोसे गुरु हैंस, विरगिट का सा
 रंग बदसता नया बमाना !
 मामा भी की बोड़ी मेरी
 ही ही - मह तुमने क्या ठाना ?
 बंसी स्वर में तुम्हें नचा कर
 निघर छिने मधुवन में कान्हा ?

पी कदु बूट सहज हरि ने हैंस
 कहा न बोसी मारें चाचा,
 नेठा क्या, मैं बन सेबक भी
 नहीं नचामा बिखन नाचा ।
 बात बबस कुछ सोच नरम पङ्क
 बोसे गुरु मच्छा हरि, धाना
 मेरे मठ के बेनों को भी
 सत्याग्रह का गुरु रे बामा ।

मह कह उठ बस बिए गुरुठ पुर -
 जगदंबा ने बाहर भाकर
 कहा महा धो पहले बेटा
 चा पी लो - बक कर भाए बर ।
 जाने के दिन में लीटे हो
 बुबसा तन से मुष्पाया मुख
 बोटो तुम भीरो के हित नित
 कब समझोये मपना मुख दुष ।

भैया भाए जान समेगदी
 छिरी भीठि भाई हुठ बाहर,
 निबिर प्रगति मुन बोला हरि, मैं
 होता धाया बंसी के बर ।
 पाष पुर के सब गाँवों में
 हुए जहाँ भी मेरे भाषण
 असह्योम मोहोत्तन में ई
 गाँधी जी के साथ सभी बन !

पुर में सभा बुसाने का भव
 हमें यहाँ करना आयोजन,
 जहाँ गुनाहमें सब साथी
 पद यात्रा का बिल्लूत वर्णन !
 ममक बनाने कर बन्दी की
 तिथि का कर बहु मन से निणय
 सरयाग्रह की बलि बेदी पर
 हम सब धाहृति बेंगे निर्भय !

लाली बजा कृहा सजियों ने
 बोम महारमा गांधी की जय -
 मुक्ति यज्ञ में हम भी साथी
 होंगी होम स्त्रियों का दुख भय !
 इस प्रकार सुंदरपुर का पा
 कष्ट बना हरि का पर धीगन
 बट पुट में हैसता था मुग शिशु
 उमड़ा था नव जीवन प्वावम !

बुद्ध सकल्प बनाता निर्भय निज पथ
 सामूहिक जन बस ही मुग जीवन रथ !
 जन समुद्र का दुर्गम उबार न धमता,
 दुर्बल ध्मकिल सोचता रहता इति भय !

मुक्ति यज्ञ

अतिबिठ ही रह जायी तब
 नब मुब की गाथा नि संछय
 जो भारत की मुक्ति कथा तुम
 गाओ नहीं गिरे, रह तन्मय ।
 कथा नहीं यह, कृष्ण साधना
 भू जीवन ममस की निश्चय
 सत्य अहिंसा का पय कबिते
 नब भू मानवता की मुप पय !

कौन बत रहा बह नर भूधर
 बन धरती पर ऊर्ध्व चरण धर ?
 शक्ति अगस्त्य सा लक्षण सिन्धु को
 पी हैस हैस अशक्ति पुट में धर !
 तुम प्राणों के लक्षण धरणि क
 लुप्त आत्म बस करा संयत्ति —
 तेजोमय सात्विक बाधी मे
 कीम सत्य करता उद्बोधित !

भू जीवन सावध्य सिन्धु यह
 सोफ सवय रम मे सपोषित
 लक्षण प्रतीक स्वराज्य मुक्ति का
 लक्षण सिन्धु पंचम में सचित !
 शक्ति गुम बपिन लक्ष्मणपुर
 पून अहिंसा करा पराजित
 मुरग अक्षय रावण कर म हो
 लपय राष्ट्र का करा प्रमापित !

सबन म बय बडोर मुष्टि में -
 दुई सफल मय्य अपराधित
 जम मरण दण - प्राय्य बहि कम
 जो वाह्य बल मरता जीवित ।
 बौन छीम मरता मुष्टी मे
 मस्याग्रह का सबन - मुक्ति पण
 प्राण छू जात छूनेनी
 धान न प्रन मू पन का माघन ।

बह प्रसिद्ध दाही याना थी
 जन क राम गए ब फिर यन
 मिग्धु तीर पर मय्य विरह का
 दाही शाम बना बनि प्रायम ।
 पत्रण द्वीप में थी सागर ब
 मोर मुक्ति बनिनी विमुक्ति
 धर्याबार धनय नायन के
 रता पदग दैया म परिबुन ।

नमब बनाना ध्यय गही वा -
 तीम बोनि भाग्य जनगण का
 बह प्रतीर बिदाह पबे वा
 दुय्य एतिहासिक युग शय का ।
 गिन पुन माघन संग मरन
 बड धमय्य धरप दा पण यन
 वर प्रसिन् स्वगिा मुर्त वा
 जद मू गिना बनी नर पनन ।

उपन मग्ना पर नर पर न
 रता जिनर शयी का भाभित
 धारणीय ग्यांस्य मृय मा
 दूर भाग पर मग्ना दीगित ।
 ब बौरीम दिना वा पय प्र
 दा गो मीन रिग दा पानन
 एत एत पर नर वा नर पुनन
 गिन शय मयाग्य दान ।

देव	कृप	वह	कृप	कर	गए
शासन	क	देवता			बुद्धिहठ,
बढ़ता	अभय	समग्र	राष्ट्र		वा
एक	व्यक्ति	बन	पर्वत		उभर।
सुभ	मीन	अधियान			सत्य का -
पग	प्रयाप	करता	बन	पू	बन
वक्ति	दृष्टि	देखाता			विश्व वा
मूर्तिमान	ही	मानव			मंगल ।

प्राप्त	त्याग	बुगा	पग	पर	ही
उठा	सका	दी	बधि	न	लमक कर,
लौट	न	आभय			में
ओ	स्वराज्य	जा	सका		मही
बीरोचित		बर	घाबेकों		स
सुनम	छा	बा	बापू		का
पय्याला	को	निकले			बन
व्याकृत	वे	बन	पुनक्ति		सुरमय !

वह	प्रकाश	पति	से		दूतबामी
अहिंसकों		का	बा		पैरल
कैल	रही	धी			बन
बन	आगुति	पग	पग		पर
भार	मुक्त	समती			बन
बन	मन	उठ	उड़ता		हो
पनु	बस	के	बड़		उमस
आत्म	तेज	बलता			हो
					पू
					पर ।

कितने	ही	सोए	बुग		सहसा
पाम	उठे	वह	बा		अपूर्व
कोटि		पनों	का		कोटि
वह		मदमुठ			मन
मोक		प्रपति			का
तीस		कोटि			का
विश्व		अमलूठ			सोच
क्या		भारत			की
					सिद्धि
					साम्य
					धन ?

दया ब्रह्मिण वा हुष्मा स्वर्ग उर
 दक्षिण मन्त्रीका की मू पर
 जहाँ प्रबानी भारत सहृदा
 गारा के उत्पाठ निरन्तर ।
 वहीं प्रथम सत्याग्रह अस्ति वा
 युग मापक ने धरा मान पर
 मन्त्र अक्षता मे जय पायी
 अम्बायी वा कृत् मान हूर ।

मज असता बिद्रोह बलि मे
 हृदय क्षमा मागर धा शीतल
 युगा पाप स कर्ता युग मर
 पापी दुबल का पा संबन्ध ।
 राजनीति के हृमि कदम मे
 सन्धुति का बलन कर स्थापित
 धोने प्राया बह मू कित्थिप
 मय्य अहिमा पाबक से गित ।

हिम जगत मे उगा महत् बह
 मनुज दया वा मायन पबठ
 देखा सम्मुख बाल प्राह स
 कबलित स्वर्गवाह गज भारत ।
 शुभ्र तिमिर क धारम गल मे
 गिरा युमा स बह मिर क बल
 कम प्रेरणा शुभ्र बिरापी
 अंग्र अहिमा वा अद् अंगम ।

जन समाज मे विमुख, स्थापपर
 शानि शानि पप मज मे अहित
 पिश्य बिरल बट माय्य मुक्ति रत
 दुय दासिप करब जीबित मृत !
 देग रत धा रम विगमय एत
 पुष्य भूमि वा मय्य ज्ञायरग
 युग युग के शान्तों स अमनित
 मान दीण वा धनर दर्शन ।

काम जीर्ण घूसर खँडहर से
 प्राणा रेखाओं में प्रकित
 जीवन का प्रासाद प्रसौक्ति
 जाग रहा था पूर्ण प्रबोधित !
 मन कल था प्रज्ञा विस्तृत
 हृदय कोष्ठ प्रेमाभ्युत सिंचित
 सिर पर स्वनिम सत्य कसबा था
 अक्षय आत्म \ प्योठि से दीपित !

मया वेठना पुष्प जूना हा
 मिटा भेद प्रथम मन का संशय,
 हिंस्र शक्ति से मत्त जगत को
 मिना प्रेम बल का नव परिचय !
 देश राष्ट्र में भक्त धरा पर
 हँसने को था नव स्वर्गोत्थ -
 देख रहे थे शोचक शोषित
 गनुज सत्य का महत् समन्वय !

अंतराय में बंध मानवता
 धरती पर रहे सकती थीवित
 बाह्य विविधता बहु की समता
 विश्व बल पर ही प्रबलंबित !
 नभ पहिना की क्षमता स
 दीग्य प्रथम प्रथ पर प्रथ पाकर
 मनुष्यत्व था जन्म से रहा
 पात्रवता की कूर जोड़ धर !

विश्व सिंघर पर नए कल्प का
 उदय हा रहा था नव पुष्य
 मनुज प्रह की हिंस्र वृत्ति पर
 पश्य चित् स्वनिम जय वेठन !
 आत्म शक्ति क शीघ्र तेज स
 कोपता धरि का अंतर धर धर
 कहां छिपाए निज कुरूप मुख
 पशु बल सोच मात्र से मर मर !

सोच रहे थे जग क बौद्धिक
 कैसा धर्मज्ञ रहते
 प्रसन्न हीन जन हेम हेम करते
 प्रतिपत्नी को धारम समर्पण !
 क्या मू की उपलब्धि युगों की
 कैसा रह मूय बह सोपन ?
 धारमा की अनुमति प्रसौक्तिक
 यदा धारमा का मू जीवन !

योग त्याग कैसा तप मयम ?
 स्वर्ग परात्मा का उर पावन
 भव दृष्टों म परे मन स्थिति
 शाश्वत मुग्ध भयबन् मुख दर्शन !
 यम नियमों में शुभ मंगलिन
 कैम बे पतना प्राप मन ?
 अंतर रचना में रत प्रबिन्न
 नव मृत हित प्रेरित प्रतिक्षण !

इच्छा श्रुति मुनिया की मू का
 क्या विशिष्ट गुण जप तप प्रबिन्न ?
 इच्छा प्राण हो समाधिस्थ मन
 कैमे रूढ़ता ज्ञान धारमस्थित ?
 अंतर जग का ने वैज्ञानिक
 माय गाद्य रत भारत तन्मय
 धर मूना में उमे दिग्ग पा
 शाश्वत का स्थित मूय स्यातिमय !

मनुष्याय वा त्वं मिना वा
 ह्यय मूना में धरगुण धनय
 प्रीति धाम निज जा दरबर वा
 जन क भीतर निय प्रनामय !
 बिद्वत्वात् मागर में दूबा
 बाहर जय विष्णु तद्गुण मन
 दग्धा उमन विधिगत बिबर वा
 निम्न गति वा मीना प्राणा !

इन्द्रिय द्वारों में वा गुञ्जित
 शिवानन्द विषया में कुसुमित
 सहिर्दृष्टि के कमुप भेद तम
 सत्य ज्योति में हुए निमग्निवत ।
 वाहर के तम से अंतर तम
 महानाथ का वाहक मिश्रित
 अग के हित आदर्श वही स्थिति
 बहिरंतर अत्र युगपत् ज्योतिष्ठ ।

भू जीवन पद अभी अतिक्रमिष्ठ
 बहिर्वेष कर उसने स्वीकृत
 निज अन्त साधना निरंतर
 धरी विविध विघ्नों में पीडित ।
 मानवीय जीवन पदार्थ रे
 भारतीय जन का तप संस्कृत
 निश्चित विश्व जीवन संवत् हित
 अचरअचर व प्रभु को अर्पित !

मध्य युगों से योग त्याग तप
 अपर सोक पुत्र कामी वन कर
 छिर के वन बसते जो ऊपर
 लड़ा उन्हें होगा वा भू पर ।
 जीवन विमुख विरक्त मूल्य रह
 आदि पीठि में शीर्ष शीर्ष नर, —
 उनको बसना या यथार्थ की
 बुद्ध भू पर सामूहिक पम घर !

प्राण मुक्ति के रिक्त गमन में
 अन्त जन मन को विश्वास पद
 इति रीति कर्म से निष्क्रिय
 या उबारना भू जीवन रह ।
 प्रेम निश्चित शीर्षों का ईश्वर
 प्रेम मूर्त ही मनुज धरा पर,
 प्रेम शक्ति पशु शत में अविज्ञित
 प्रेम मूत्र में बड़े अचरअचर !

पुणा बस प्रयोग हिमा मानवीय जीवन मानव काम मरक
 भूमा पर होमी मूय सुय शोष घरा
 स नहीं साधन न मुझे हो भय स नित करते कुठिल राग द्वेष का बसह कटवित्त !

बहिर्बिजित बहु बपन बाह्य श्रेयस्वर भूत धपन मनुज पमु
 भीतिर उसने परिस्थिति घनर्षमब प्रकृति पर बिजयी पर जय पामी मनुज यम राव - दमी की भी संतुष्टि न सगय !

ध्यान मौन ताक मीनि शील घनामकज जन देबदून रवर्ग
 श्रेय पुरय शुक्र धान- मरक हेम ग्यानि
 सक्कर्म हित बर, गुप्त्र पाबी धान- मरक हेम ग्यानि
 मुखर ब जीवन धर्मि स्वय बपुर घर, में मंदिन ! मूर्ति निन बरिन करते बिननि ।

भारतीय मनुष्यघ्न घन शिमा मज घाम्मा ट ट
 स्वानम्य बा शिकत गार्गी कमग में प्राप्त स्वर्गे
 दुद पर युग स्व ममूद उग वा प्रांग्ग ! जन जो वा बेनिन निहां वा पुनाग्नीदिता !

सत्य पहिंसा से बे सदिनम
 युग जन का कल्ले संभालन
 हिंसक मानवता के पूजक
 भीहूँ मानवता का धानन ।
 किंतु, हिंस पशु वा भूचर नर,
 बल कूर उसका विमूढ़ मन
 मनुष्य रक्त का प्यासा कटु उर
 दृष्टि हीन पुट घंतर लोचन ।

दमन बल बल पदा निरंकुश
 कुत्सित वा नर पशु का तर्तन
 धमानुपी पाशब नृत्तसता
 रोमांचक घासुरी प्रदर्शन ।
 भस्त्रहीन निर्दोष जनों पर
 घंघ हिंस बल का प्रहार कर
 सौम्य सबध धनुषिण्ट मनों पर
 बहु ना घत्याचार भवकर ।

बध की स्निग्ध पृथाहृति वा ज्यों
 हो उल्टी मख बह्नि प्रग्भमित
 विगत पहिंसा की नर बनि वा
 पशु का र्व्य हृथा उत्तेजित ।
 तमक छिड़कटा कुमति कटे पर
 कूर कृत्य को बना कृत्तर
 बेहू दंड के संग प्रचंड घनि
 स्वर्ग छर को अपमानित कर ।

भारत नायक को कारा में
 दूँस दस्यु ने सोपा - दुर्बर
 ज्वार कुचम देया समूत्र का
 बह बम शनि को पित्रर में घर ।
 शात न उमर्यो भारत धारमा
 जनमी नारायण के भीउर, -
 बाह्य भी बंदी ही बे जन
 उन्हे न वा कृपायन का दर ।

जनगण के मताप्राप्त को चुन
 देश किया क्या - जड़ मति शासन
 भारत की संघी धारणा को
 मुक्त कर दिया निर्भय प्रब मन !
 महलों पर सहरे प्रदम्य ज्या
 टकराती तट मे प्रभा हत
 प्रतिमकों की भीड़ दूटती
 सभण राशि पर - तन दात विजत !

सभण उदधि में सभण प्रवृत्ति में
 सभण गया था प्रभर में भर,
 सभण बापु पत्नी पर उड़ता
 सभण छा गया था जन मन पर !
 स्वाभिमान सर्वम्य देश का
 सभण प्रेरणा का बन पबन
 जड़ स बनन शक्ति बन गया
 राष्ट्र मुक्ति का दाहर शासन !

मनु मसावन का विप्लव था
 मोक्ष द्राष्ट म प्रगति निहित
 बन शक्ति मा फैन यता जा
 जन मु बन था तब म संमति !
 मादनी उच्छ्वास ग्ना बर
 राष्ट्रिय धारणों म विरति
 धाम्नां की बबंगना प्रय तट
 धूमिल नाट म उर में धरिता !

टारे गा बीरों की टारी
 रानी गीत मुकुट शौर्य - गिता
 धान ही पुत्रा की धनि ग
 भारत मा तब हर्ष बराजित !
 धारा का बरणा कृष्ण दा
 जति - दन ग य ब धीरि
 हृष्यारे यय ग गिता म
 जन जन मया बर दे दिव्या !

सामंती बिभोह् एहा बहु
 अभिनव वैज्ञानिक युग के प्रति
 रीढ़ मम्म भू परंपरा की
 मोड़ स्फिपत वी बिचने मति ।
 मोक बेतना सयी खोजने
 नव युग संयोजन स्वर संगति
 छूटा मोह् मूठक मतीठ का
 देब बिरब मुख बेठी बन मति !

हाठ सिष्ट सब खे देत बन
 बापू के कारा बघन पर,
 उनका था धावेत वृतीबन
 रचना कार्य करें रह् तत्पर ।
 एष्ट्र संयठन का अनुशासन
 प्राण - कार्य समता का वर्षभ
 सत्याग्रह का भाव पक्ष ध्रुव
 कर्म शक्ति का सात्विक सर्वन !

मुठ पहिसा की प्रतीक बुधि
 खासी - कार्ठे पूठ मूठ बन
 ठकभी बरसे करबे हवि
 नवे मूखे भारत का तन ।
 धरना रें गारियां करें सब
 मरिण धस्युस्पता निवारण
 त्याग विदेधी बस्त्र काठ बिन
 हों सम्पन्न वखिनरायन ।

सभिय मुखर पहिसा हा सब
 मम्थाग्रह का कर भाषाहन
 मूठ पहिसा का युम बीठा
 बहु पी बन जिसा की साधन ।
 घस्त्र हस्त्र से सखिबठ नर पशु
 गृणी दंष्ट्रा पशु से भीषण
 मनुष्यत्व बी ज्योति यमाने
 निर्मय गीग करें जन पर्यब !

पूजा प्रेम प्रसन्न स्वर्ग पुस ध्याम देश राम
 वंक में रक्त मह-कृच्छि दया स स्वार्थ त्याग प्राप्ति
 सना स कर मू मन व नरक व्रण !
 धरा मुख प्रलामन मरु हृदय में
 तम रुद्र का सित बाधामन
 का सित मू दय
 संवित मू दय
 का ज्योति जागरण !

राजशाह प्रथम धर्म हमारा,
 मू समिधाप विदेशी शासन
 बहु मोतिक नैतिक साम्प्रदायिक
 महा नाथ का दारुण कारण !
 महा पाप का काम कूट विप
 जन जिसके कम बड़ मूर्च्छित मूठ
 सामाजिक सांस्कृतिक रक्त क
 गोपण क शक, इमिबत् बीबित !

हैसते जन परि बाहर भीतर
 बहु उसका नमकीन मुक्ति रण,
 मह स्वराज्य भी बड़ा सप्ताना
 हागा बहुत स्वामि भक्त जन !
 क्या या सब भारत ? शक्तिया का
 ईश्वर दासता दुष्ट का धर्महृद,
 पर निरा संस्कृति मू में पापित
 धन जन मन म गोपित जर्जर !

ग्राध बस्तु, धनगड़ इन्धों का
 बहु धनन मूष सात निरंतर
 चादुकरा पर रण बीरा का
 भीता दाम प्रभु भक्ता का पर !
 प्राण दात धन प्रभु क दिन
 विगडे मू मूत गहन कृमि तनर,
 बेच गण्ड मन्मान उमे पा
 म स्वयम्भवा स्वर्ग ग्राह हर !

मध्य युगों से प्राप्ति पाठियों
 मुँह मर्तों में बेटे भुङ्ग जन
 रुढ़ि रीतियों के बेरों में
 बव अपरिवर्तन कामी मन
 कुन बंशों के मोठ भेषि के
 डीठ दर्प के खोसे बिय फल
 सप्रवाय के कुंडल मारे
 निष्प्रिय धरगर, - धना यम स्तन ।

स्वर्ण भूमि भारत जिसके पर
 घोटा नठ मस्तक खनाकर,
 निनिमेष खूता बग जिसकी
 प्रतुप्त स्वर्ण सपवा निरख कर !
 जिसके उर में घुमा स्वर्ण का
 शार, - शीघ्र शैलम्य दिगंतर,
 धार पराबित धात्म मुँह यह
 दिग् गज छा पपरामा भू पर ।

ह्रास तिमिर से घस्त धरिशा
 लस्त - धर्ष पर मद हित कातर,
 जन समाज स बिरत व्यक्ति रत
 राय द्वेष में मक्त परस्पर,
 बापक न रदान जन बचक
 मान रीढ़ जिसके विपन्न नर -
 ऐसा भारत बन सकशा बा
 प्रभु सिंहासन की सीढ़ी धर ।

भारत ही क शीठ दास सुन
 मा ना रा करते पर मंडित
 नठ सिर पर प्रभु पर साण बे
 निरन्ध्राय स जिनक मोधिन ।
 छिप्ट मुक्ति क प्रनी महिमक
 शिग्रनाथ धरतिहत गात्रम
 सग्याप्रह के मर्गें दून हेंग
 धोने शनियों का भू कल्पय ।

उपत जाप्रत् भारत सारा
बारगुह्र में या तब जीवित
बना शमशान महान देम का
सौम भार बाते बाहर मृत !
दृश्ययान् सब पायल ये तब
दृश्यहीन पत्थर जन भारत
धनि कृष्टि सहुने मर्माह्न
मुक्ति स्वाति के याचक पातक !

सगा भाइय तम क रामर में
बुम न जाय मारिकक प्रकाश कण
पर, वह बाइब बन कर भवषा
आत्मा वा स्फुलिंग नय पठन !
भारत व जान बोन में
फैल गया संदेश मुक्ति बी
उमरा ही फन ठुमा जयत में
धम्यापी बी इमन मुक्ति वा !

धरमाना फिर मुटा बढाता -
पुष्प मूकन दग भवन जन
दृष्टि शून्य परि' शीप दार का
यना शिवा शानिा ग्ग प्रागण !
अधर बनी दार माथ्रे गनी
पुट स्पोटब मर शिग् यर्वन
हन्ताने प्रतिगण ममाते
उधर ग्ग में बरा प्रतिगण !

रुग धीत बारी बनी मु
कगशर में रवा ग्गत क
ल दीग्यानिा निग्न जन
मकिा न शि पाग्म दन क
मात् त्याग बी रवा र्दि में
रुदं ग्ग ग्ग ग्ग ग्ग मन
धाम्नीन धीग्न ग्ग ग्ग ग्ग
पाय यन ग्ग ग्ग ग्ग

कास अस्त पर्वर बन खंडहर
 बाग उठा बन जीवन मंदिर,
 स्वर्ण कपल घर मश भास पर
 खड़ी हो गई मिरी भित्ति फिर !
 शक्तिपों के हत पतसर बन में
 फूल पड़ा मधु जीवन शोषित
 नग्न रक्त शोषित तन पंबर
 हुए नभ्य जीवन उभेपित !

अगे खेत अशियाग बाम फड़
 अगे बैस होंदिया हस विस्मित
 हाट बाट पोषर बर घौमन
 बापी पनबट अगे अमलकूत !
 मोट नकारी नार अफत अम
 अगे मांझे मुक्ति अस्य स्मित
 अंगेबाई सं अगा पुरातन
 युग युग सं अड़ निष्कम निहित !

कोई नृप हो हमें हानि क्या ? -
 अक न साधता कुठिल अम मन
 राम राज्य स्वर्णों में अुरे
 न अचार्य दर्शी अम शोचन !
 हाथ पैर अरली के अयनित
 अहसा अाप मुक्त नर अेसन
 आग उठे पाकक प्ररोह से
 मुक्ति स्पृहा हो मत अमीरन !

पुष्पी पुवा ने अवरज्य को
 धारम अान निअ दिया प्राण पण
 अिक अत पुर हार, अम अर,
 सुटे अड़ मा अहिला क तन !
 मुठ अिअिर अन अवा अश अर
 निअमत्रा पर सैनिक अासन -
 पनु अम के अठ कुंअम अीअ
 काम सौं माअे ली अामन !

क्षीरान्धि तब सबस अतधि में
 मोठे अब हरि बसि भय कारण
 उन्हे जगान गए महारमा
 मिन्यु तीर, करन स्तब पूजन ।
 लोटये पावर प्रभु बर बे
 कहवे येड़े पुन्व के जन
 भौतिव राशन म पीड़ित भू
 उनके साथ गर्द मित यो बन ।

धतिम सांसां की डारी स
 प्राब हीन केंबुन म निस्वर,
 सम्र सैन्य अरवापारों स
 ऊंनं बेसां पर सादे पर
 सीरु बाध रोगने डगर पर
 भग भूये बास बुद्ध तर, -
 मांभ उजड़ बनन निर्जन बन
 एबनाग वा हा यर पतमार ।

मुंदरपुर वा मयाबह भी
 प्रतिष्ठित पूज रहा युम रण वा
 धारम त्याग वा परे धनौकि
 उम्पों वा उम्पब जन वा ।
 गामूहिन - बर पर बरिष्ठता
 बनी दिम्बर गह धरराजिन
 एतन्ना हिन पर पिट जनता
 हई रकड बसि दे बरिष्ठाजिन ।

हाइ मान टगरी में इनता
 गौर्य बीर्य गह मबता बुदिन
 बनिशता की अघ होइ पर
 एन निजबिमा उटना बरिम्न ।
 धीर्य ह्याय मन् गौर्य धरि उ
 एर्य शिउिन बो बरनी बीदिन
 धमर निग्या पी धरि जनता -
 जन जममा ग हाइ धरि ।

प्रकस्मात् चर प्रस्ता से हों
 भूमिस्तात् पुर मठ चर छपर
 छितर घँठकियों से बिबने से
 बास पूस बाँसों के टणर !
 बायस अंगो का जगस बा
 सुंदरपुर, बन जीवन, पूमर,
 मूत मानव धारमा के जब पर
 मर्तन करता पशु बस बर्बर !

माधो गुरु क हृषकडा से
 शक्ति रहत सरस प्राम जम,
 चर क भरी बन सिधसाठे
 से प्ररि को निठ चाले मूतन !
 हरि का चर अम मन्त इह बा
 कारा में बंसी उसका तन
 सत्याग्रह का नेता था वह
 प्रामीर्षों का सखा हृदय धन !

बंसी को पिटवा कर गुरु ने
 क्रिया कूट खस नेता घोषित
 साठी की छा चोट फटा छिर
 रहा रक्त तपपय वह मूर्च्छित !
 मन की टीस मिटा माधो ने
 छल बस बन्ध बनाया बुन्सित
 मधुर सिरी की रखा के हित
 क्रिया मुग्ध शंकर को प्ररित !

काराबास मिला बली सँव
 हरि को - जनपण म अभिमंशित
 गए कुरब गृह के जय छबनि में
 हुषा गाँव का मयन तिनारिन !
 स्नेह डोर में बँधे सहज जन
 तन से अधिक् मर्म में श्राहत
 हरि से बिछुट बिलगने मन में
 दुन पय में बिछ करते ग्वागत !

बनी हरि यंगी को थी न
 बिहूम बिना नी बाप्य विमोघन
 पीण्य हीन विभीत माय्य मुम
 बहा पूजा धनु शाह धनु कण !
 स्याप्रह का धनि पय नूतन
 मानव गोरव का कर रक्षण
 साक यम की सुध धनि को
 हैम हैम अत कग्ने तन प्रपण !

सगिधा संग घषनी मिरी न
 भडा उग किया मायाप्रह
 स्नह शत वन उमे बचाया
 शबर न बहन टाये मह !
 प्रेम बाप्य न बिद्ध प्राण मुग
 गिग गज शय तन से विधान
 धाम्य त्याग न छुपा मिरी का
 मय्य ह्यय उगने बुड वन रत !

प्रीति भीति न उम संपाला
 गिया मिरी न स्नह प्रबाधन
 स्वय देह मन कहर न उ
 पुना स्वयं बागगुह खीचन !
 मुन मुन कर हैग गिग - धनुमर्षी
 प पे घग्ना थी माशान्य
 धैवं गीय ही घग्ना प्रम व -
 धाम्य बिबर पर ये प्रमत्र मन !

दाया गुर न गहर व प्रति
 मिरी गहर मन न घावगिग
 गहर स्ने निरय दर - शंकर
 गग्ना गीय गग्ना निर्भर गिग !
 बनी के घग्ना घग्ना मे वंग
 गग्ना शर हरि मिरी प्रवकिन
 गग्ना गग्ना वग्ना वा बाग्य
 गग्ना धनय घग्ना नघ निग !

माघो ऐंठी द्वेष रज्जु से
 अहम्मम्य यम - स्पर्धी उद्यत,
 सोचा करते डोम उम्हीं का
 पीटे जय चरणों पर फिर नत !
 पाँच म धरने बूंगा पुर में
 मैं बंशी को - कर पूरु निरुपय
 टटा प्रेत से मने भूमने
 मरनट से पुर में मे निर्मय ।

एक बहक बीता पुत्र संकट
 भय संशय तम में विषाद में
 जटु पैतरे रहा बसते
 निज नृसंतता के प्रमाद में ।
 चेता क्षम निरंकुश परि मन
 मयी विस्तता रक्त स्वाद में
 भारत हित में या मुय जन मत
 बुद्ध ध्येय सिद्ध मुक्ति नाद में !

बिगा नहीं भारत भुज पप से
 पा झूठे रीते धारिदासन
 सिधे रह गए काम पृष्ठ पर
 रिक्त संघियों के धारोशन !
 राक्षसीति के नृटिल चक्र में
 विश्व म्याय का कर धारोहन
 अज्ञा रहा बहु मत्प मित्रर ता -
 धम पू मन का हो धारोहन ।

युग जीवन का हासाडोसा
 या बिहार भूषण बिह्व भर,
 धूम युव मे पंच शुभ्य मम
 जीवन धारोशों से बर्बर !
 क्षोभ गाय धरसाद निरुभा
 मंथित करले इन जन धनर,
 स्तंभित सा हो मया काम या
 च्छ निरति गति छिन्न प्रगति पर ।

भाग्यहीन इन पराधीन भू
 काम पड़ा बंगाल दण में
 युग जीवन बी मल्ल बुनौली
 साई मृत्यु कराम बग में !
 मदिपों क पिच्छक पत्तों म
 बिया सुधानं कदण बन रोहन
 था दुकाम निमम प्रतीक भर
 बब म भूय मु क जनगा !

क्या कर मेंगे मम्य निहत्थ
 व्यग्र मोचने गदित मन जन
 धाग उगम बम बरमा ग्रम परि
 जो गगनों का कर ३ निबन !
 जात म उनका ग्रहिमका बी
 तपन राग्य म' उमड़ धमि धन
 शम्भ्र मड माम्राग्यबाद का
 १४ मम्य कर टेंगे तग्यन !

प्रन्याया क भू हृय मे
 बब बिदाह मल्लता भीरण
 उम धनमन क विप्लय का
 राऊ नदी पान शन राबन !
 मुड मीति बी मयांग भी
 हात्री बिग्न मनम क धाधिन
 बूटिम बंग का निघन धुब नियन
 फिर फिर बरता काम प्रमानिन !

दैव दण्ड एम ही शान में
 परिषम क नम में बन दनिा
 धूमरतु उर उग उग भर
 गदों बी बरन धागिता !
 पूर्विसानी धा क बिम का
 उडउ पर दाण मधि शिरघा
 माम्राग्या का मग निरन
 शानबीच धर धाहिा नों !

हिंसा प्रतिहिंसा से मोहा
 सेती युग मन का कर ममन
 शक्ति शक्ति को नमन रीवती
 मह मा जग हित धात्म बोध क्षण !
 नमक फूट कर सगा निकसने
 चेता विभित मदाघ लक्ष मन -
 स्वर्ग वाय सी शुभ धाहिंसा
 निवार उठी संकट में पावन !

नमक मिर्च बहु जगा ग्राम जन
 मित्र राष्ट्र का गाले परिभक्त
 प्रवचन में बुद्ध ममाते
 विषय धुरी राष्ट्रों की निव लक्ष !
 सुक्त जानते मनुज बरा पर
 छिड़ा प्रभुम भुम में फिर युग रण
 संकट लक्ष में नहीं सुहावा
 धरि का धार बुधाना गावन !

धात्म देश क प्रति बहु कबल
 क्षम प्रवेश रखा जन मन में
 प्रगति पुरस्तर राष्ट्र रखा वह
 पूंजीवादी युग जीवन में !
 हृदयवान् से धात्म भस ही
 हमें छड़ना पड़ा ग्याय रण -
 मुक्ति मौपती रक्त दान निव
 मुक्ति मौपनी पूर्ण समर्पण !

पर, माझाम्य म्यूहा से पावस
 धरि न प्रभुम क प्रति का जायत्
 मह धार्मिक नीतिन धाध्यामिक
 शापन का भारत भू का हन !
 भू क्या थी जर्जर जन पंजर,
 दुग्ध दारिद्र्य धनिध्या पीड़ित
 मानवता का ण्ड न वा मह
 धात्म जन धन त्रिन मे प्रेरित !

धर्मत् भस हा मू भंगल हित
 पर, प्रतिभार्य प्रपात्रन शामन
 सन्नायन क्या ? मरक भय हित
 भाः शक्ति का सौह समटन ।
 दीव विदगी शामन म बब
 संभव जनगण का हित माघन
 धाम पराशिन पीडित शापित -
 पराधीन भाषिन भाषित जन ।

प्रीयापित युग व उपक्रम में
 ह्यून पदापों हित शापित
 परिश्रम न छल बन उद्यम स
 क्रिया विविध रत्ना का प्रकित ।
 जाति जीग मारती वंडहर
 गृहा मध्ययुग का तब भारत
 शर्धी का वैज्ञानिक युग क
 रणों म हाता पा प्राप्त् ।

बिना बुद्ध की छाया में घर
 बन स्थित ही युग नर बिन्दन -
 का हा धामन नीति ? बुद्ध का
 मिन माय छु म मुक्ति पा ।
 नरी प्रतिमा रण तप बाधर
 धामन नाग में धर बुद्ध पर
 धामन जन जूमें धरि शिन तर
 काँ जब निर दुःख बंधन ।

का स्वामन न ममभागी हा
 कने गमर शिन जन धन धरिन
 स्वाभिमान का घरी मय तप
 मग प्रबुद्ध नर का पा शीत ।
 एकराश्रित धर धर में भा
 घरी कर्म तप पा तप रिता
 गतिदत्ता धरिवाय कर्म र
 धामुग ध रीतन बिनाम शि ।

मित्रों का बय कामी भारत
 उनके प्रति सद्भाव बिभ्रवित
 जन धन मन से विश्व युद्ध में
 मित्र राष्ट्र के सैन्य वा निश्चित !
 जीत वास रहे शोषक के हित
 बरबस जन का देना जोषित
 घोर भ्रष्टाचार पहिले स्थिति थी -
 प्रथम मुक्ति थी उसे अपेक्षित !

धरि का धरि, कृमि जन का कृमि प्रह
 ताम ठोकरा बड़ा द्वार पर,
 बरमा मसया निगल फेरता
 गुड वृष्टि भारत पर दुर्बर !
 हिम कूर साम्राज्यवाद वा
 पर नास्ती फसिस्त कूरत,
 इन यात्रिक रैत्यों के बने
 सैनिकवादी जिव्य मयंकर !

निज प्रबुध मत के विरुद्ध जन
 युद्ध कर्म को होते बाधित
 संघ स्वार्थ के अग्नि कुंड में
 वास पूष खर तृण से अपित !
 भारत के सम्मान योग्य वा
 बहु विधोभ मूक जन मन में
 प्रकट हुमा वा पुन व्यक्तिगत
 सत्याग्रह के प्रतिवर्तन में !

जन को शक स्वार्थस्य बाह्य, -
 दिया सोक नायक ने मारा
 विश्व युद्ध का अंतरंग रूप -
 मज बन गया भारत सारा !
 विश्व विद्रोह में अग्नि शिखा से
 अग्नि भारत वा नैतिक पण
 पण के मनीषिया के मन वा
 शना धारम विस्तन का बाण !

बिपन्न हुए सब मंथि यत्न जब
 बिनय त्याग प्रत्ययन प्रबोधन
 रागी के बदमे शोषक से
 भूखा ने जब पाए पाहम -
 क्या मयु छोड़ा नर बर ने
 भागत छोड़ा का अद्भुत रण
 ग्राम दिया क्षण में जन सम्मुख
 ज्यों स्वराज्य का स्वर्णिम तोम्ब !

निम तिम किया उन्हाने निर्मित
 बाहर या मत भीतर जन मत
 स्वयं उत्तर आया ज्या मू पर
 भागत छाड़ा का आम्बोमन !
 भारत छोड़ो ? महमा अरि का
 नहीं हुआ बिस्वाम एक दण
 बह उद्घोष न पा बौतुब भर
 तीम कोटि जन प्रतिनिधि का पथ !

छोड़ा भारत का ईश्वर पर
 तुम्हें नहीं यदि आम्बा प्रभु पर
 ता छोड़ा विष्णु व हाथों -
 रत्नपात का उठे बर्बदर !
 श्रेष्ठ भरावतता बदरता -
 भयम दामता म छूँ नर,
 ० व वनेगे अरि व हटते
 भागत मू जन श्रेष्ठ मूस कर !

मर्ग मर्ग मने का सबगर
 अरि ने जब क दिया प्रात पण
 यात्रु क मंग उमी रात को
 परद निरा घर मर नेनागण !
 पप दर्भ व बिना प्राध म
 बंध दुष्ट महु गम लेने जन
 बोरि न धर वर पुग नायक
 करने हो रत मू अरि म रत !

बिप पावक तम के समुद्र का
 वह पा जन युग जीवन मंचन
 कृष्ट दमन पस खर बात्या मा
 करता निर्मम ताडब नर्तन ।
 दानब डग खर बहु जन मन की
 हिस्तीसों का करता मर्दन
 भारत क्या पा - मूर्त दमन अहि
 पून्कारें भरता महस फन ।

सन्नता स्वेच्छाचार शीर्ष पर
 बिजयी होया इम न्याय पर
 पीट फे के बस रेंगाठे
 गन्न निरीहो को प्रभु क खर !
 लाटी बस्ने कुम्हे भासै
 नि नस्तों का करते स्थापत
 प्रवक्तनों पर गोसी जमती
 जम्बु बाप्य बम फटते जन मत !

रस पेस धक्कम धक्क में
 कूट पिस बाम युवक नारी नर
 भारत छाड़ो - नारा बेते
 धुधित घेड़ियों म न तनिक डर !
 मंघड़ संसा जब से मधित
 वाहत बंसा क जन जन म
 हाथ वीर धड़ बटे फटे सिर
 दूटे पंजर बिखते क्षण में !

गनियो में जन का खड़ कर
 पर पर पुम पड़ते मरि बंधर
 अत्याचार बसात्कारा की
 अकबनीय बहु नचा धर्मर !
 आग मया गम हाब मेरमे
 पूछ मुस्मे , टोमे पुष पर
 दानब का मुघड़ा पुम पड़ता
 रस्यु सम्यना के पुर्मुय मर ।

धानी पस बुर्गे म पानी
 श्रीच ताइले बदी पन्धर
 पिसले शत घमिदात रम में
 कृचम दमन पाटा में दुर्धर !
 घहिमबा का प्रत धनुगामन -
 हंसले पिट जी खोल श्रुती मर,
 दृढ़ शूर पनु बनता बितना
 पगती पौरय त्रिगा उच्चतर !

हाट बाट की मुठभड़ा में
 सभा समाजा में सच्चिदप जन
 शृणित नृगमा की घातें मह
 मनुज हृदय छूत घबिचम पण !
 बट मय युग की प्रमय बना
 मब मानव संस्कृति का युग रम
 घाग्मान का अभिसापी या
 तप पूत हा त्रिमम भू मन !

मिमें बर निम्बर हाट पट -
 घमिकों न हृदियार दास कर
 दिया प्रचट विराघ दमन का
 पीरा म पत् त्याग त्रिरमर !
 जनी पुतिम बीरिया दार पर,
 शार पीन क तार गए बर
 उमगी शट पटगिया रोग बी
 शगन की नादिया गर् पट !

घाग्म मुक्ति त्रि घनजन जन में
 बाहु की घाग्मा पी घबिचम
 लल स्वय - म त्रिगर घमि में
 क भू पीरन का हन मन !
 घागा का क मृपु माय में
 जन भू मन का कर्म जागृत
 शानश्चिब त्रिना यग मर म
 घग एन का त्रिवा घमि !

प्रांगण भास बच मया - काजिमा
 बड़ी न प्रति पाठक की प्रथम
 घूट गए मूली से ईसा
 हुरले बन मु का पाठक भय ।
 नहीं चाहते न युव इष्टा
 नहीं चाहते ये भारत बन
 साँप छर्चूर क इस रज में
 मनुष्यत्व के उर में हो बन ।

निश्चित विश्व के पाप नाश हित
 भारतमोक्षार्थ बना आबाहन -
 पश्चिम के देशों का शौर्य
 हिंस्र अस्त्र हस्तों का अस्त्र रज ।
 प्रतिष्ठापित होता अमर्त्या में
 भारत आत्मा का नैतिक पण
 नदी चेतना दिखा अगाथा
 आत्म शक्ति से लोक उन्नयन ।

प्रकटे न युग पुरप उस समय
 निकट था रहे ये जब मु जन
 वैज्ञानिक मनुष्याधीन से
 विना काम के रहे न बंधन ।
 शक्तियाँ बलक बलक बलसर बन
 धनीभूत होने के प्रतिअन
 स्तमित था मानव विकास क्रम
 भू पर अमर्त्या पनु संकल्पण ।

जीवन रचना में योजित हो
 धन शक्तियों का अग्नेयम -
 आध्यात्मिक का मजन नाति हित
 नव आध्यात्मिक ज्योति आपरज ।
 मन के मुस्या ही के बन पर
 मनुज विकास नहीं संभावित
 भारत भू के हित विनिष्ट चिन्
 कर्म अमर्त्या पय में निष्पत्ति ।

भौतिक युग के काम पुरप को
 घतमृद्य हाता प्राप्तिक्रित
 भयम् हित बिकान जान को
 बहिरंतर जीवन सेकर प्राए से
 उर्ध्व वृष्टि के उभायक
 समदिम् जीवन के उभायक
 सद्य हित घर युग कर में
 मरय परिहमा वा धनु मायक !

महादब संय माध्मी बा की
 काखिक बसि कर मर कर अपित
 जीवन उन्मुख हुए जगत हित
 जीवन संयिनि म हो बचित !
 कर्ण परिहसा प्रंसस पट में
 रूहा बहुत बुछ गापन अकमित,
 बुम्भित बूर इमन की काष्ठा
 कभी मविष्य कहेगा निरिचित !

मुक्त हुए बारा स बापु
 मुक्त बीर बंदी मतागम
 मरुत हुपा युग - स्वप्न पुरप का
 फारत न पाया स्वराज धन !
 बिजय परिहमा की कहिए मा
 बिबर पुज ग बटित बिन्दय
 बिरागं मा जइ ययार्थ का
 घाघर बरिए युग का निर्णय !

इन्द्र जन्म की मार्ग क्रियो
 मंगलम बिधि म धनुगामिन
 अग्निमानम वा पूज नियम पर
 ध्वज दुगाभा वा धर निरिचित !
 जय थी मिनी मुहूर राष्ट्रों का
 गाम्य बय बम म प मन्त्र
 धारमपात ही मन्त्र मुक्तम पा
 माध्मी एन अग्निनादक ब तिन !

हिरोजिमा नामानाकी पर
 भीषण भयु बम का बिस्फोटन —
 मानवता के मर्मस्वस का
 कभी भरेगा क्या दृसह घन !
 वीर किट किटा ठठा शक्ति मर
 भरखा सब दिगु दारण गर्जन
 उपजा यांत्रिक युग भयु दानव —
 बड़ भौतिकता के घंठिन लण !

मानव धारमा की विमुक्ति की
 भारत मुक्ति प्रतीक असंघम
 कटे विश्व मन के बड़ बंधन
 हुमा धेतना का भरजोन्म !
 भाषी सब इतिहास कड़ेगा
 कवि बचनों का भाश्य गापन
 निश्चेतन के घंघ समस सं
 निरर रहा धू जीवन प्राणन !

पूट शप्त धरि करठा हागन
 बड़े सायदायिन संघर्षन
 मध्य युगों के नरक प्रत अम
 मड़ते गत शक्तिमां का मृत रण !
 धनिम सौह सात बीरी बी—
 भारत का कर धूर विभाजन
 ज्यों फिर भाषी विश्व मुठ हिन
 रखा हिसकों न रम प्रायण !

भारत धू उद्वलित सागर
 कच्छन मुम नायक का दुह पन
 जलगाण बस महि रज्जु कौटि पन
 मदन यिनि स्थिर ताक मंगलन —
 प्राण्य शक्ति पमुबम जुट मजत
 मय मुम बेबामुर संघर्षन —
 जब म्बराय्य नरमी प्रकटी तब
 जन धू संघम हिन या मुम रण !

प्रमणित सागा के त्यागों से
 हुआ मुक्ति प्रासाद प्रतिष्ठित
 प्राणां की पावन प्राहुति स
 उटा रश्मि - मोसाध स्वर्ग स्मित !
 धन्य ग्रहिसक भारत के रम
 सरय मिष्ट जय जन रण मायक
 तूम पशु बम को प्रीति प्रपत कर
 मानवता के बने बिघायक !

बहि सगठित परिचम जग के
 प्राप्त स्पश स हा युग जापन्
 निज स धरि म सब शत्रु बल्सर,
 पशुधीन प्रब रहा म भारत !
 उम मुक्ति - रचना करनी प्रब
 धपने हित जग जीवन के हित
 युग युग वा मू कक्रमप धाकर
 पशु को बना मनुज मब सम्भृत !

उतर रही उपाएँ मू पर
 जन मन तम वा कर धामावित
 स्वर्न रश्मि स्वातथ्य मूर्पे जम
 जन मू छार करे दिम् प्लावित !
 भारत की धध्यात्म ज्वाति में
 गुजन शांति हो बिरन गगटिा
 धमूत धहिमा बने धम्य मब
 सत्य करे जन - मू पप दीपित !

भारतीय स्वातंथ्य शानि वा
 प्रमर दाप जन मू जीवन तिा
 निव्य धहिमा - रिम धरा पर
 हाना जन धम्य हित विरमित !
 युग मुद वा पशु - बम मपरक
 धम्य स्वर्न पा विजता मनुज
 मह्य हा उड धन धमिा
 भारतीय धहिमा के धरित !

स्वर्ग लंडनद् भारत भू को
 छाड़ा क्यों धाम्सी मे परबह ?
 कुटिल काल गति युग भू स्थिति या
 जग का मत माझे का प्रयत्न ?
 सदे सूर्य साम्राज्यों के दिन
 बटते निरुध्वंसित परिवर्तन
 दीर्घ वधि कूटन धाम्नी जन
 काम बन्ध के प्रति निरुध्वंसित !

उस्ताधों से मुकुट टूटते
 उमट पुसट धंसते सिंहासन
 महत् ज्ञाति का सुप प्रब जग में
 दिग् भू व्यापी भोक्ता वासण ।
 प्रब धरा के घोर छोर सब
 बीभत्स करता मज युग पुपण
 निम्न मर्त धर समस्त बनते
 मिमसा रज में धीर्घ पुरातन ।

मंथमथ की मूर्त पीठ भू
 मंथम हो जन जीवन मंथन
 भारत भू की स्वर्ग मुक्ति हो
 जन भू हित प्राध्यात्मिक संबल ।
 ज्ञाति ! ज्ञाति कायी हों भू जन
 रजत ज्ञाति छाया में निर्भय
 प्रगति करे रचना प्रिय जन मन
 हृदय स्वर्ग सर्जन में तमय ।

मुक्ति पब जन मना रहे वे
 जन नायक से लिए मीन बत
 कह उपनाम करण प्रतीक का
 रजन पंक धा रंक नबागत ।
 धंतिम चाहति का धन प्राया -
 लोच रहे वे तब मूर्धुजय
 मर्म रघिर पीकर ही बर्बर
 भू की व्याम बुझेगी निरधम !

भीष्म भीष्म बीठा तप खेट कर
 पंथ धुध से मूं निर्गत,
 बन्ध ब्याप्त स गरज पंथइ
 मूब रशिम रण पूर्व प्रखर स्वर !
 मुक्ति घुनी कारे थापस पर
 साटक गाध जटा धर धूसर,
 हा प्रबंध पंचागि धिकता
 महम रमार उग्र रह पर !

घुन रवि कर स लीप सिधु जप
 म्यान बभ तम गढ़ा जितिक पर
 नहलाता नभ द्विप पद भू को
 बरमा गनमुग्र सीध भीकर !
 भाग्य नदमी का धमिपकिन
 करत हो विगु गज जपमुधु कर
 रोपाकिन भी गम्भ हलिन भू
 मुग्ध बघु मी पा म्बराग्य बर !

जन मन धाबगों की बिटुन
 मत नाबरी हर्ष घोप कर
 नभ शुभ - भर मितता नागर मे
 नागर उड़ नभ उर दगा धर !
 इन्द्रधनुस सुर बजन बरना
 मुक्त निरमे का धमिबादन
 उड़ उड़ मित बर पाति शाति ध्वज
 शुभ शक्ति ग हगरी नाचन !

राण मुक्ति ने कबल प्रथम बरन जर
 बिबन रक्ता बरनी भू पर निमित्त
 ननुज बीति क धमर नूत्र में मुक्ति
 स्वर्ग पीठ बरनी म - मन पर स्थापित !

बय पात्र धमदिन न धनप्र नभ न
 बीबित राबन नम धवान धन में
 मानव बनना दूद दीर्घ दुखर बर
 धन नून ! साहि तम म प्रामम में !

संस्कृति द्वार

- १ आत्म दान
- २ संक्रमण (दास पिपटम विद्युत्त)
- ३ मधु स्पर्श

आत्म दान

पाँचू मे माहोमी
 मु उर बा मोपम व्रण ?
 श्रद्धा मौन करोगी
 मन्म प्रमूत समपण ?
 धमरों की माषाण
 गार्ह कुाठी बाणी
 नियन न यह पीवन बनि
 जन मु हित कस्याणी !

गत नियति ! मुक्ति उपक्रम में
 भारत का करम विभावन
 साया संग दुमति प्ररित
 कटु रक्त पात दस गृह रण !
 मु मन की दमित विहृतिपा
 हल बन ग्निु छप म पोषिन
 मद्रकी भीषम मणटा में
 हिमा जिह्वाणे मोहित !

स्त्री तिगुषा कुडा का बघ
 मर ह्वाणों, धुर पाने
 अमिषाट मूट मंगलता
 बामी धनरटनी बाने !
 दुर्पण राम ह्द नि
 बागुर धावेगा र धण
 मग मरर प्रउ धर मर मग
 करने जन म् गर करि !

निश्चितम	अंध	वमन	धा
धन वा	आश्रित		मयानक
घघका	विपास्त	धूमों	में
कर्म पर्वत		का	पावक !
बनचर	दहाड़ता	मन	में
आदिम	हिंसा	को	उमुख
नर	पशु	रक्षास्त	नशों को
शौचता	शोच	मानव	मुख ।

वायल	से	जल	के	बवले
बरसें	बाष्प	पावक		कय
शुचि	स्वाति	त्याग	मोती	को
अब	करे	आह	तिमि	धारण !
मानव	उर	का		प्रेमाभ्रुत
बन	मवा	बुजा	श्रिय	भीषण
मधु	पुष्प	हार	पद्म	बन
रंजता	फूँफकार	अधिर		एन !

बह		नारसीब		प्रतिहिंसा
शीघ्रत्व		बुजा	का	उत्तर
हत्या	का	पैसाधिक		मुख
शोभित	की	ज्वाला	का	अब !
निर्ममता		यर्बरा		का
ईर्ष्या	स्पर्धा	का		तांडव
कद्दू	कस्तह	शोष	कृत्वा	के
कंकालों	का	भैरव		एव !

पग	बढ़ि	रीतियों	क	जब
सधु	स्वापों	में		पथपर
अधे	मूठ	विस्वातों		ने
क्रेतां	स	भू	पर	छाए !
साम्यता		कीस	संरुति	के
उच्छेदित		मूछे		पंजर
दुः	स्वप्ना	की	दुः	स्मृति से
पत	आस	ज्वग	क	पैदर !

उम्मीदों - से
 हव पर्यो का विस्थापन
 भयठा उठ मिर - पड़ जन बन
 हासादोना ही जीवन !
 पशु बसात्कार, तन धर्षण
 छीना सपनी प्रायुष छण
 मठ मूठ प्रठ हों छूटे
 मय कपित कर भू प्रागण !

टुटा निरड प्राणों का
 विद्वेष कुड धंधक बन
 मू कप सांप्रदायिक बहु
 पा धर्म प्रष्ट पागसपन !
 उईड कल्पना के रँग
 उम्मात बाधना मठन
 फिर प्रघर नगर दया का
 मर तन में प्रत्यावर्तन !

कग मसक मम धर्मों को
 स्तन काट टटा हँसते यम
 बरषों को बीर पटक मठ
 हेपामि बुझाने पापम !
 भगडीढ़ धाय बोनाहल
 बनने पुर गर पय निर्वन्द
 मंदिर ममत्रि के ईश्वर
 धरना मंत्रन ध्यावन मय !

मिरि तट मे लख्य तरमें
 टकरा हारी उवा विगत
 मममत गाँ मइ विद प्यां
 मिरले भू पर रक्तान्न !
 उडभ्राग मूद मर मिन्ने
 पण्डे नील घर का छं
 कर रका मनी घर का छं
 टाँगे करे धर्मों का !

कृतम्	मूढ	मय	स्तम्भित
देखते	स्तम्भ	हूत प्रभ	बन
दुर्दांत	आत्म	असक्त	बह
धर्माधि	संप्रियायिक		रण !
संभा	शोभित	धामर	का
हो	प्रलयकर		उद्देशन
या	उपस	रहा हो	भु - उर
बिप	संभकार	पावक	बन !

धनमिन्न	काल	भव	मति से
सामंठी	जय	के	पंजर,
मृत	रुद्धि	रीतियों	के
धनपद	धनपद	कृच्छित	नर,
इस	रक्त	काष्ठ	के
बे	मध्य	पुर्णों	के
उच्छिष्ट	वीर्ण	संस्कृति	के
स्वार्थों	के	नदूर	पत्पर !

क्षण	उत्तेजन	स	पावक
हूत	मनुज	दनज	बन बैठ
आदिम	बर्बर	पशु	जम कर
फिर	घंटर	में	हो पैर !
मनुजन	रोप	पावक	को
भङ्गकाते	भूत	आहुति	बन
बह	सर्वप्राप्त	या	मति का
बेचना	शीप्ति	हूत	जन मन !

दुष्कृत	कृतमय	का	प्लावन
सोल्ता	मल	बन भू	पर,
जन	स्फूर्ति	मल्लु	पन पैला
पत्कार		छोड़ता	विपन्नर !
गृह	बाह	मार धाड़ों	की
दुष्ट	मापा	अकरन	भीषण
अकपित	ही	रुड़े	गिरे बह
बीत्कार,	सास	बन	रोदन !

उस प्रसय वाड में करता
 जब उब डूब नब शासन
 सब क्रिया सोफ नर ने उठ
 फिर छिमुनी पर गिरि धारण !
 मैतिक धर्म मे उसका
 निमनित धतर बा अर्चर,
 उस लडित् स्वमितमय धन सा
 जो मण म हो मुहु अमधर !

धाँधी में अडिग मिश्रर सा
 दुर्गम जन बन में पुम कर
 बिचरण करता एकाकी
 वह सोफ लेबय हिन बातर ।
 पा राष्ट्र मूक्ति - चिन्तातुर
 करता वह अंतर मंथन
 बीमे हो एका ध पर
 भाई सब धर्मों क जन !

यह धरती स्नेहमयी मा
 प्रभु पिता क्षमाश्रुत मायर,
 बसुधैव कुटुब बना बुन
 बनो रह सकत न पररपर !
 धारमाहुति देकर भी मै
 रोडूंगा यह नर हया
 मब मनुज एक - १। सकता
 यट काय कभी बना मिध्या ?

मानव का दुग लम म बड
 सना लब जग्य धरा पर,
 जनगण जिनके बड कर प
 गिर मुय टन मन बहिनगर !
 मब धर्मों का निश्चिन्त मन -
 दुग मण्य एक ही ईश्वर
 जो प्रम न्याय करणामय
 जिनको गवान गधराधर !

सब धर्म सत्य ही के पत्र,
 मेरा दृढ़ अनुभव निश्चय
 धास्वा बड़ा बन करना
 सब का ही सार, समन्वय !
 प्रभु एक जगत् कर्ता जो
 भस्मा कहिए वा ईश्वर,
 वह सर्व मूठ रत व्यापक
 सब संग्रह से ऊपर ।

बन बुधा ठेव हिंसा से
 कैस रह सकत जय में ?
 भय काम शोध मय तुम्हा
 बाधा जीवन मग में ।
 भडा करना मय संवत
 कहवा नी बचन सनाउन
 तप त्याग विनय नय संयम
 पापेय ईर्ष्य पत्र साधन !

वह पत्र लोक मूर्खों को
 करता जनबग में विवर्तित,
 पत्र संस्कृति के पाबक कण
 धन भस्माभूत जीवन मूठ ।
 वह व्यक्ति साधना पत्र या
 धति कुण्ड, ऊर्ध्व भारोहण
 म स्वर्ग प्रतीक्षा रत वा
 समदिन सामूहिक जीवन !

शर्मो क दिन भव बीठे
 धास्वा धानोभिज हो कर
 नद संस्कृति में विवर्तित हो
 मन मंदिर में करती घर !
 धाम्पारिमद भौतिर धधिरन
 वायव्य तुस्य संवीरित
 ईश्वर मू जीवन भात्रक
 सब धिति हो रही धिति !

प्रस्तुत मित्र की प्रतिम
 नत किरण ! महत् तम पर्वत
 उसको दिग् दीपित करने
 बहूत शी छत्रसिंह !
 युग संघ्या की जामा में
 बहूत जाता सागर तम
 नव यम प्रभात को टहल
 शठिया का या बिम् गज भ्रम !

उस धमूत पुत्र की धामा
 जानती न बाधा बंधन
 धर्माधी का बह दठा
 नव धारम ज्योति क मोहन !
 उच्छ्वसित हृदय बहूत बह
 उनसे उच्छ्वर्म बचन निठ
 जन वन में सुनगी हिमा
 उजामा को करने प्रगमित !

मीसा वेदम जस पर पर
 आता मांभा के भीतर
 पीड़ित शोपित क्षासित को
 धारबामन दे दुग् मय हर !
 मु - स्वर्ग दूत सा संग संग
 बह नव प्रकार से जाता
 जन मम का तम हर उर में
 मुष शक्ति किरण बरसाता !

हिन्दू हो धार्म मुममना
 बहूत धाता तन मन क का
 शैशव्य विवाह घटा तम
 हंगा बन प्रम प्रभदत !
 दोनों निर धार्मिक का का
 करने कर्तव्य धर्मिक
 का राष्ट्र तिया धर्मिक
 पर जन का निर्धन का जन !

नर मस सत्य द्रष्टा हो
 स्थित धी हा, सित प्रज्ञा स्थित
 भावी के ज्योति विभव से
 उदका मानस हो दीपित !—
 क्या कर सकता वह ? निर्णय
 जन मन की स्थिति की कुस्थित
 बिस स्तर पर युग भू जीवन
 वह नारकीय जीवन मृत !

नोप्राद्वाली में घघरी
 जो निर्णय हिंसा ज्वाला
 उदका बिहार ने बदसा
 चर फूंक दुरंत निकासी !
 पंचाम रक्त से सचपप
 हुत बना कूर बम दासा
 विस्ती में लपटें फैली—
 मुख कुमा रेल का कासा !

जम जिन्हें ग्रहिसक कहता
 निर्णय पनु निफले के जन
 भावकों की सीमा स
 घब रक्त पंक बम प्रापस !
 जम के सम्मुख भारत का
 आत्मानिमान हो बंदिठ—
 शम्भ गृह कसहों से बा
 युग नर का घंठर पीड़ित !

सेना बल पर विस्ती में
 खोखमी शाति धी स्थापित
 भीठर किलोम गरबता
 पागुर के जन हिंसा हित !
 दुःसह बिद्वेष बनों ने
 घंठर दृम् से पाच्छादित
 सत् पर धी बिजय मयत् की
 तित ज्योति रेल तमसापुन !

वह वा न मुझ सरवाग्रह
 जन हाते स्वत समापित
 दो रक्त रीत्य कट मरते -
 हिमा कर्मप हों मूर्खित !
 वह बनिक् सम्मता क प्रति
 बिगोह प्रबुद्ध बना का
 यह शाह ह्याम बिबटन में
 पदराए धंघ मना का !

प्रार्थना ममा में प्रतिदिन
 वह करता सविनय प्रबचन
 मु रक्त - पात धीम को
 उर प्रेमाञ्जुत कर वर्षण !
 उमक धंठर कर्म स
 विदमित होने जड़ पाहन -
 गुसते न घना तम के पर
 मय हय रउ या जन मन !

उम न्या प्रम मागर को
 कग्ने काम जन प्रस्वीकृत
 मयगीत कम विनय पर्वत का
 माहल या दुा धपयमित !
 दुर्मति दुःशीम कुचरी
 कग्ने गउ का शोपाशेषण
 बरमाडे उर का कर्मप
 धाकोन नोय कए साछन !

प्रापना समय बरंन कर
 व्याघाउ डामने कुर्वन
 वह धमा निष्ठु मर मुहता
 उमग न छिना या जन मन !
 उर दरु छा हो उर में
 का उमानामुग्गी भयकर
 उर ईमे मोग मुनेने
 शोनाह्य में कन मर !

मन के ठंड घल से
 रह सकते मृ वन भीषित
 कोपित की घाम कुझे पर
 तब हो सम्मति भी जापुठ
 प्रार्थना रोक कहते
 मैं करता सभा समापन
 मुझको न इष्ट बरबस
 उद्दिग्न करके जनमण मन

यदि जात रह सके सब जन
 तो जाति स्वयं प्रभु पूजन
 कुम जाति स्वयं - संजीवन -
 हों जाति धसात हृदय मन !
 गीता कुरान दोनों ही
 जो हम न सुन सके सबिमय
 तो ग्ययं प्रार्थना करना -
 मेरा सीधा सा पाठम !-

भारत सब धर्मों की मृ
 सब का हो यहाँ समन्वय
 प्रिय राम एहीम उभय ही
 ईश्वर के नाम न संशय !
 मैं देख रहा - यह कहते -
 बन संघकार दुग सम्मुख
 हिंसा बिनाश के भग में
 जीने में सब न मुझे सुख !

यदि धरें न द्वेष मृना पर
 प्रभु प्रेम विमुख जन संवम
 तो मुने मृत्यु सब स्वीकृत -
 मैं यदि सेवा के पथम !
 नित साथ साथ पावों में
 रहता धामा जन भारत
 जीवन छाने जाने में

यह	रक्तपात	क	पानयता
एग	धाबगों	धम	कारण
प्रति	विस्तृत	जग	हृदय, - बह
करता	समस्त	रे	धारण !
यह	धर्म	नहीं	निश्चय
जा	पीता	मानव	शाभित
नर	कफासा	क	उपर
त्रिमका	मिहामन		शाभित !

दा	चुंढ	गा	बेट	जाण -
यह	हा	भागा	का	मातक
बा	टक	हृदय	पर	जाण, -
भापी	मगस	दिग		पातक !
गूह	पुंड - मुक्ति		छाया	में -
मिटता	जाता	मन	का	धम
जन	मन	में	बुंढन	मार
बैठा	प्रति - शक्ति		का	एम !

प्रति	मागत	की	भी	धारमा
गा	जाण - हा			तमगाबुन
जम	क	दुग	मे	भागा की
होगी	हम	रिख		रिखति !
भौतिक	शर्मा	ग		जंरर
भ	भात्र	दुष्ट		उद्धति -
दग्नी	मोन	माल		मग
धम्माम	उदाति	म		मदि !

धम्माम		धम		परिधान
बमगुनक		मन		पीरन
नर	गया	दुग	पना	का
निर्वाण	बाह	पर		भीगा -
दह	प्रदिक्	न	मा	गगा मन
जाता	हृदय		न	पगमन
उगा	धम्म		मा	मन
गव	भा	मड	मन	मन !

मैं धारम गृहि से प्ररिख
 कल से माध्यामिक मनहन
 मारम कसेवा, - टकठा
 मेरे न हृदय का रोवन !
 बीम भी यह मेरे हित
 ईश्वर माता का पालन -
 पुग लोक यम प्रभु होवा
 मुसकी बसना धातुति बन !

बिजसी सा उर में कौषा
 भाग्मा का अंतिम निर्भव -
 पर दुष में ईसे तिविय
 रू सफटा कोई सहाय !
 भारत में बिबर सबे किर
 सब धर्मों के जन निर्भव -
 सत् वाए बिजय मसत् पर
 सम पर प्रकाम की हो जय !

ईश्वर इच्छा पर निर्भर
 सब मया अर्पित जीवन
 बन सबे प्राण मन मरे
 प्रभु इच्छा के सिठ स्वंग !
 यदि रूँ स्नह छाया म
 कटु द्वेष मता किर जनयम
 तो मार्भक म पर वेरा
 उनके हित जीवन धारण !

मेरी बिल्ला न करे जय
 बन करे हृदय मन मंवन
 मुसकी न सीमता विविन्
 संपूर्ण मड हो जन मन !
 यदि किस्मी गाठ रूँपी
 तो गान रूँवा भारत
 बनना धारम निर्भन
 केर्याय मार की से बन !

मे परम शान्ति में है सब
 मुझ पर मन दया करें जन,
 घपना उर मुझसे मैंबाते
 शस्त्रों उममें प्रेम धामन !
 शो बिचग बिचम जीवन स
 प्रिय मुझ मृग्यु धाबाहन -
 मानव का उष्य उठान
 कर सब प्राण मन धरंश !

उम यज्ञ बलि स तप कर
 निग्रह भू मन का कापन
 बह धारम मक्ति धर्मपवित्र
 जन मन इद्रि का धा शग !
 शब धार छा म भू क
 भक्तो न बिया धरम पन
 हम म माव धर्म पन
 वीर धान् प्रम में मुनन -

बिचाम प्राण कर जन का
 नर वर म ताहा धनजन
 दुहर्गो म कते छ फर
 भय पुगा प तम क पन !
 पग मन क कृष्ट शगा में
 उमन कर तन मन धरम
 जन क बा पुन उबाग
 संकट धरम म न शग !

पर, दूर धर्मो का शुभ दिन
 न्य प्रेम बने भाग्य जन
 उमम मुझ मरिम धा
 जन निष्ठुरे म मानव बन !
 न्य धर्मो म मरुतिनों में
 दुर्म विगाय कर विपन्न -
 भू मन का मरन धर्मोनिग
 सब करन धरना पावन !

इस नारकीय हिंसा के
 माण्ड का करण समाप्त
 प्रिय बापू की बलि में हो ! -
 श्री अकल्पनीय अमर्षित क्षम !!
 प्रार्थना समा का धाते
 साकार प्रार्थना - से नठ
 के हुए निष्कार मृ पर
 नर पशु प्रहार सं भाहत !

बिस्वास न होता बानी
 हतवाडक रहा मुक्ता मन
 उमड़ा धँधिवासी का बम
 स्मिर कास बज वा उम क्षम !
 कुछ मूर्छित बखाहत बम
 सींग बसे प्राय अर्पण कर
 मर सकी न अमर पहिंसा
 पा कापर हिंसा का कर !

जन मृ मन का कस्मय घो
 धर पूर्ण जाति में हरि जन
 लाभन विराम सेता यह
 कर निज सर्वस्व समर्पण !
 उलक सोमित स रचित
 मृ उर का सोहित शठरम -
 स्वयिक स्मृति मुर्धनि सेओ कर
 नव महिनाम्बित स्वनिम इस !

मृत्युत्रय की दृष्टा यह
 या विधि अमिशाप भयकर ?
 शृंठिन मृ अहि तम इजन
 या पुम नर का अतिम कर !
 यह अक्षम विरय जानक का
 या शुभ समर्पण मृ पर
 धर निविस अर उर मंजित
 या मृत्यु स्पर्श निर निस्वर !

बह	निधन	प्रथम	जगत्पथ
नव	बिरय ऐवज	वा	निरवय
मिठ	मनुज	प्रवाग	बिरय म
मू	गुहा	हुई	ज्वातिमय ।
जग	क	घान	शोन में
छाया	पहिमा	भयवत्	तम
सम्पू	देन	गाट्ट	मीमार्त
त्रिमन	बी	दापन	घनित्रम ।

उम	महदुग्	बी	गग्मा म
मू	मन	दिनित्र	हो बिम्बुत
युग	मानव	क प्रति	घमिनव
घाम्पा	म	। घा	समपित ।
बह	ज्योति	जम ग्री	मव भी
उर	क	घमंग्य	ीसा में
मुबनाभा	मोन		बिदुग्बन
जम	मन क	एपि	मीग में ।

माग्यन	बमत	बन	घिनती
बह	जम जीवन	पउमर	में
नमय	मघ	गिह	बन गती
मुम	बहि क	प्रग्ति	स्वर म ।
उमरी	भस्मात	प्रकृति	म
तीबो	क मित	जम	पावन
हेम	इग	पुप्य	मू रत्र पर
उर	मीरम	म घर	शाम् ।

जा यत्र - मग्म	बी	तन	रत्र
गवम्प - घग्मि		घडा	मिग
रह	गाग	ग्नाउ	नय मग्ना
बिन्	। धिर	प्रग्ना	ग्नि -
घाम्पा	वा	घनमुग्	उर
नग्म	हा	प्रग	समार्दिन
ठर	बी	वर	मव रग्ना
मग्मि	ग्ग्म	क	निमि ।

बह
 भाषो
 मया
 नव
 तुम
 कर
 उष
 गरिमा

राजपाट
 कबिते
 सक
 मस्तक
 स्फटिक
 स्मृति
 प्रलय
 में

में
 नि
 करें
 परिक्रमा
 गुप्त
 गुह
 सुग
 रणो

स
 नि
 समर्प
 कर
 शब्दों
 विरचित
 की
 आत्मा
 सुरचित !

आत्मा
 धर
 निज
 परिवरत
 बन
 हुरता
 मु -
 उजती

स
 पंच
 मीलिक
 मेवा
 पवन
 प्रबल
 तपस्तेज
 निज

विछड़
 तत्व
 जीवन
 रूपों
 में
 मुमय
 प्रबल
 स
 निश्चयन

प्रनिश्चित
 मृत -
 समय
 प्रपित !
 प्रबल
 प्रम
 गमित—
 तम !

नव
 जगता
 निष्काम
 प्राणों
 मुचि
 जस
 श्यामल
 स्मृति

मम
 निजा
 म
 तुहिन
 ममना
 स्वरों

महल
 में
 नाति
 भीतम
 मोठियां
 को
 नाठी
 म

प्रहरी
 प्रगतक
 बरसाटा
 पावक !
 में इस
 नित
 पुष
 सुचरित !

पर
 करती
 शौर्य
 शक्ति
 उगमुक्त
 मु
 बह
 नि

अगुटे
 स्मित
 आत्मा
 बाग
 सीम
 ज्योति

मरु
 मोमा
 छायातप
 हिम
 सीम
 मोर्द
 गी
 में

श्रायण
 में
 नउन
 सुरधनु
 कर धर्यन !
 के नीचे
 बाहर
 संतर की
 निश्चर !

नो, तिम बी घाट छिपा था
 शासनत प्रकाश का पर्वत ।
 बाभी सब उमरो मन बी
 घाघा मे दया लडुगत ।
 रत्र तन कर तुलकन् घपिन
 उठता बहु प्रका पन मित्त
 घानोक छत्र गा छाया
 भू पर - दिव उर कर बिगदिन ।

स्मृति मज्जन हृदय में उमरे
 भू स्वयं मनु - मुरघनु गिमन
 वह मानवग्न जल भूधर
 उडुता नम पथ कर दीगित ।
 उठ घग ग्योति समग बी
 करन जाती घमिपनि -
 भू स्वयं मुकुट ही मुगपु
 गत्रिय हो मूय मदा छन ।

भिन् बीज घग ग भू का
 रत्र हगिन धानि कर उधर
 बहु मे तिमन एष पुण कर
 मय विनि में शुद्ध परालर ।
 बहु शुभ्य गृही घगर धर
 निर का जग में प्रगगिन कर
 बहु पुग में बहु क्या में
 विरमित हागा बहु म पर ।

त्रिमर्ष त्रिमय घागिन उर
 गच्छा - गसुनि में मुगिन
 कर घरे प्रकृति ग रबाधित
 कर स्वयं ग² त्रिमर्ष गिमन ।
 कर घनन उमर घग कर
 उर घनन गी कर घतिरम
 घा रर गगग ग घगगा
 घव ३²ी सं नर मगनद ।

नित जन्म मरण के तट कर
 तना प्यार से स्थावित
 ससृति क्रम में बहु रचता
 नव जीवन साठ प्रवाहित !
 पीड़ी विकसित भू जीवन
 होता समर्थ संबधित
 खसता धर्म में हैस छिय मिश्रीनी
 नव क्रम में हैस छिय दिप नित ।

बौद्धिक सोपाना पर नव
 मठ विरे ऊर्ध्व में हो सय
 प्रव उतर, - प्रगत पर रज छू
 ने मुय चरणा का भाषय !
 पू नव मुय चरय बरण कर,
 मन में मठ सा प्रय ससय
 मा व्यक्त प्रयत्न प्रय म नव
 सांस्कृतिक बत का भाषय ।

प्रय पद पिता जम मामय
 प्रय मुम पुरुष मुय संभव
 प्रय धारम शक्ति के परंत
 भू स्वर्ग कृत युग नर नव !
 तुम छू जन जीवन के बहु
 अर्जर पलाहठ प्रभवयव
 भू संस्कृति को मुय मन को
 दे गए उद्यम नव नीरव ।

प्रव ज्यानि लय तुम - विच्छता
 जन धग लंघ में विच्छित
 गीतम ईमा म उगहन
 नर चरित - स्वयं भू विस्तृत !
 प्रय भ्रष्ट यव युय को तुम
 दे गए साध्य संन साधन
 नत्तर्म चेतना का कर
 भू मयन हित भाषय ।

कृषि युग की नैतिकता की
 तुम पतिम दीप मिथा बर
 मार्गनी मरुति के सिद्ध
 नवनीत - शमा भूत भाकर ।
 तप त्याग गीत सहृदयता
 बदना तुममें नव तन घर
 निर्मम यथार्थ के युग का
 विस्तृत बर गर् विगतर ।

प्राचीन नव का तुमने
 फिर निया प्राप्ति गौरव
 पा रह स्वग नव जीवित
 ही उठा नव्य का जड़ शव !
 गामूहिक बनी पहिमा
 मत्रिय - तत्र निया का भय
 धारमा जीवन मे खेती
 रज दुर्बलता पर पा जय ।

प्रब गापीबाण हृष्य मे
 प्ररपुटित हा रहा नि स्वर
 ममम धामात कमल सा
 जा जरा मृत्यु भय स पर !
 वह प्रम त्याग बदना का
 धनु मून भू जीवन हित बर
 धनधर्म गान धरा पर
 रचना उग्रमय धनधर ।

तुम धाम्य नित ब बदल
 भू मन की बर धारणित
 जत ममारा मे रत
 नित लकारी धन स्थित ।
 ध श्रमण मे निर्मिति की
 बिन् मध गति बर रधारित
 दुः कथ निग रते तुम
 धानर मुनि नि गृह वि ।

सुर मृत्यु गर्त अति दुस्तर
 मर सकते मुक्त म भू बन
 अपवाद यहाँ धा पाठे
 सित स्वयं बूठ मुग मर बन !
 बीमों की जन धरणी पर
 जीते मरते महाँ दुर्मम साधारण
 भमररत्न महाँ का हो जो
 बन मर्यादा का हो भाजन !

तुम स्फटिक सत्य क दर्पण
 बहिरंतर सित क संयोजित
 मन बचन कर्म से अचिरत
 एकाग्र लक्ष्य की अचित !
 अंत स्थित बाह्य जगत में
 करते अद्यय तुम विचरण
 मरते जीवित मर्यादा से
 अङ्ग मू क मय संघम बध !

सामूहिक अस्त अहिंसा
 स्वातंत्र्य युद्ध की निश्चय
 सर्वोत्तम देन बयत को -
 धर्म मरित मू हा निर्भय !
 नैतिक पुनरुज्जीवन का
 अथ समस्त न पापा धातव
 भौतिक मू का धार्मिक
 बनना यगापत् मि संतम !

इतिहास पर तुम
 मार्कोण्डेय नर भूधर
 गण्डूब जो विचरत
 जनगण अंजो मू पर !
 तुम जर्जर मू पर के भोग
 लक्ष्मण शिखरना के निम्न
 मर्वरव शक्ति के प्रतिमा
 जन मू सेवा की हिन तत्पर !

निरुपम		सर्वांग	ममन्वित
जीवन	के	पूग	निदर्शन
भगवत्		पाबित्र्य	सरमत्ता
भद्रा	तप	म	कर
प्रति		मानवीय	मानव
बुन	धारम	जक्ति	का
जन		कल्मष	घाने
करम	गु	मार्ग	प्रदर्शन ।

प्राचीन	आर्ष	सम्भृति	क
नव	पुग	चिति	क
नीतिक		शिष्टरा	म
जन	भू	पर	करन
आदर्श		व्यावहारिक	तुम
युग	सगु	कर	गा
भीति		आध्यात्मिक	जग
शिष्टाचार		पर	मग्य

नि	शम्य	निर्दला	का	कर
दृष्ट	धारम	जक्ति	मे	दीरित
तुम	धरत्र	शम्य	क	धामुर
बन	को	कर	गा	पराश्रिता ।
दग्ग		सहमा	प्रबता	न
उर	मे	धरम्य		उद्विग्न
गौरव		समुद्र ! - सम्मु -		न
दुपर		भूषण	म	मन्ति ।

धनीता		मे	वा	तुमन
बाया		बिगानी		पादर
पैना		भू	ग्यामा	पन्दर
का		धार	गा	धर धनपक !
धरिजा				गिजा - गिजा
भू		धार	ग्याम	धरम
पाया		क	ईन	पदका
नापते		जक्ति	नव	पादर ।

पशु	बस	देवस	सामूहिक
संहार	शक्ति	से	परिचित
जीवन	की	शक्ति	अहिंसा
रचना	मगल	में रत	नित ।
वह	मुत्सु	हीन	आत्मिक बस
रखती	मन	उद्यत	आगुत
पशु	बस	अमानुषी	असिद्धे
मानव	सद्	भृति	परचित ।

तुम	पुष्ट	मठ	अग	के	हित
रच	आत्म	शक्ति	का	वर्धन	
अभ्यास		बुना	से	नकने	
के	गए	सांस्कृतिक		साधन ।	
बन्दु		राजनीति	कीमत	को	
नद	पिना	मत्स्य		सजीवन	
नीतिक	परिमा	से		महित	
कर	गए	मनुष्य	का	आनन ।	

अङ्गवार	अस्त	अग	में	ले
अभ्यास	शक्ति	का		केवल
व्यापक	अधीर	आस्था		में
संमिष्ट	कर	गए	अन	मन !
शौतिक	मूर्खों	से		पीड़ित
अविह	अग्ध	से	शु	अन
तुम	अत्य	शिक्षा	से	आए,
अर	शौम्य	अहिंसक		का

अवयुग	के	अवयव	पुरव	तुम
अत	मुग	के	अतिम	मानव
जीवन	अविनाम	अम		तुम
अर	अर	अ	शु	अर
अम	अवयव	अति	के	मुग
अर	अग	का	अर	अनुभव
तुम	अहे	अन	अत	अविनाम
अविनाम	अ	अ	अनुकर	अर ।

मित जा शक्ति स्थाग म जय में
 प्रबिनशर हुरि निर स्फुरित
 करती घटमुंघ मानव मन
 दीरित कर गए घरा लम
 धारमा कर जन में जागृत
 पेशम्य मूमं बन मया
 तुम जइ मू क मगन हित ।

मकम्य शिघर तुम - ना कह
 प्रबिचम गृह पण में नित
 शत काटि बठ म बहु पण
 बनडा ध्वनि पबंध निमन्त्रित ।
 गुणबन् तन तुमवा - मू जन
 धारमा ईशर मबा हित
 नैनिष प्रमगन घर बरते
 तुम निमम युग मन विपत्तित ।

दया न शक्ति घरा म
 तुम मा ममप्र सदाशित
 तुम धारम एक्य वा अनुभव
 कर मन बिचय मंग जीबित ।
 निर्बम निग्रह ब प्रतिनिधि
 पर हित जीबन मन धरिन
 पा मद्र बिचय तुम जग पर
 र धारम बदी बिच धरितिन ।

युग पश्यनीति दी तुमवा
 ध्रुव गम्य शानि बी गायन
 निरकाम लोक मबा पी
 मत्रिय ईशर धाराधन ।
 ग्यातय धर्य - रा निर मंग
 गाल धधम गार्ज रण
 गम्युक्ति बती शिगम ह
 धारिधर उग्रम प्रनिधन ।

प्राध्यात्मिक ज्ञानमूर्ति के प्रति
 उन्मुख न धमी जन मू मन
 एकांकी भौतिकता से
 संभव न श्रेय संबर्धन ।
 उठ ज्योति स्थम सा जग में
 बापू का धारिमक दर्शन
 भव नौका पार सगाए -
 टल ज्ञान स्वस दुर्घर क्षम ।

तप आत्म बुद्धि पर सेवा
 वास्तविक मुक्ति के लक्षण
 बहु मुक्ति नहीं जो धारिमक
 नैतिक उन्नति हित बंधन ।
 भौतिक प्राध्यात्मिक बँट कर
 रह सकते खंड न जीवित
 जन संयम हित जीवन को
 होना जग में संयोजित ।

अंतराद्भिबता का जो
 भौतिक धार्मिक रूप प्रांगण -
 उसका अतिक्रम कर तुमने
 पक्ष प्राध्यात्मिक कठन
 नव क्षितिज लोभ मू मन में
 कर दिए ऊर्ध्व मुख सोचन
 बेतना मुखा का बरमा
 बौद्धिक युग मह में प्वादन ।

पत्र बस की धारिमक बस में
 कर सामूहिक नव परिणति
 सत्नाथ्य गुरु साधन में
 स्थापित कर संत संयति
 फिर मनुज प्रेम को तुमन
 सक्रिय कर ही जीवन पति
 नैतिक एवना निधिस की
 घोषित कर, विसृज की मति !

गत युग व जगत् में ही
 कर व्यक्त मय्य का प्रथमतः
 द गा तव निष्ठा पुन
 तुम भद्रा वरणा पर मत्त !
 भू पात्रव पा प्रसो के
 वनाया वा गमयण
 भाग्य जन ताठन धान
 कर गा प्राण तुम धर्म !

बापू नून ! धमर रहे वह
 नैतिक जग व उग्रामन
 मित्र रक्त रहित धार्म्यात्मिक
 जीवन रण व पश्चिनायन ।
 बल मर प्रतिमा भू पर
 धुब बिरय शानि परिचायक
 जग मे मर मानवता व
 युग धार्या बने विधायक ।

भू व समुद्र देना सा
 भारत स शक्ति तात्काल
 दिव्यान्त्र प्रतिष्ठा - उर के
 वनुरा वा वरुणी पापन ।
 भीतिर बंधव मन्त्रि पी
 मन बना ध्वम हिन पाण्य
 नैतिक समुद्रि ही भू निधि
 गाना निरुद्ध पनपन !

शुभ शानि वही ज्ञा भू पर
 तर ग्याम मुद्रि म धर्मन
 बह सात्र - उर नियमा मे
 बंध वरुणी वमी म विविध !
 दर भीत पुढ वा बंधन
 तिम शक्ति मुप सामन्त -
 का वनमृग देना
 निरु ने मया करो मन !

जन चिर कृतज्ञ ! शक्तिपों की
 दासी भू के उधारक,
 शुभ आत्म शक्ति के दर से
 प्रभु मृत जन भू के तारक !
 प्रिय रहो सदा तुम — निरक्षर
 मर्या हो सित चरणों पर,
 युग तंत्री साध सके मन
 भर सरय महिमा के स्वर !

मैं बड़ा तुम्हारी कष्टान
 पस्तक छाया में युग नर,
 जन भू स्पंदन से मंचित
 कित रहा व्यपित कवि मंतर !
 भू कंप रहे तुम दुर्जय
 सोई भू को कर चेतन
 उच्छिन्न न कर उमक धर्म
 विच्छिन्न कर गए बधन !

मुक्ताभा घट में थी जो
 रस शुभ चेतना संश्लि
 उसको पावन प्रवृत्ति भर
 कर सधुं अवत में वितरित !
 तुम संयम प मित — जिसको
 मोना वा जन भू कस्मप
 कवि भाव मुक्ति उन्मपित
 पणित करता पद पर यज्ञ !

सौ जीवन आ जीया
 एक मरुत जीवन में
 सौ युग त्रिसष्टि सैय तित
 बसते थे प्रतिगण में !
 एक कल्प उमके सौम
 सार्वभ घात्र समापन
 पद चिहनों पर मर युग
 करता मौन पणार्पण !

संक्रमण

(दास)

धनि नियमा की जगती में
 संक्रमण तिरतर पनना
 प्रमयंकर दाम मुजन वा
 त्रिममें बिराम त्रम पसना ।
 बनन गर की पुम नौरा
 बननी हानी परिवामिन
 निग् प्रच्छ त्रम प्रम में प
 हा ज्ञाप न पण्य प्रताडिन !

उर लग मुनिन क मंग ही
 बाणमुन मे छूरे जन
 यगी गरि भी कर मौरे
 हरीडिनिया मन वृत्त जन ।
 पातर क पकर गर म
 पागा मुमुमा म मदिन
 मुगात दगा में धे
 व नवाप्पाम उमेदिन ।

मणपु क ली मर ने
 बड़ बिजा मुनिन धमिबान
 उर मुगुर पाण मदुगा गर
 जी उग मर जन प्रादन ।
 पातरगा हू गर पु जन
 हरि भी क कर दान
 के हा मर बाण प्रदिन क
 दा उर दान दम पावन ।

हरि उर से सिपट गई भी
 मूडु स्नेह माम ची पुस्तकित
 पद रज सगर्भ सिर पर घर,
 दुग मूंद घम्मु मुक्ता स्मित ।
 बगबंवा ने सिर सूबा
 धीचम से पौछ मयज बन
 रज्जु ने मस्तक उल्लस कर
 मल मुत का किया समर्पन !

उत्कृष्टि कसा तिरिबिर ने
 माया कुमुमित धमिबंजन
 सज बंजनवाग पुमक के
 रज धपसक चितजन तोरण ।
 बहु प्रपम मुक्ति उत्सव वा
 बहु कीड़ा रंग प्रबर्चन
 प्रिय मोक नृत्त मीतों का
 मुप पर्व मनाते बे जन !

मुक्ता फुहार बरसा बन
 फहरा स्मित सुरधनु कवन
 रज लङ्कित शीप दिग् तोरण
 करते धू का धमिर्नदन ।
 गा बस बलाक कंठी से
 रिमि धरती भंयस मर्मर
 लगठा धनंत करलस बत्
 शुभ मील छत्र मा धंवर !

बगी एकांत धमिर में
 बैठा वा पुम चिन्तन रत
 बिर वाछित मुक्ति दिवस धर
 हंसता मम्मुत्र जन धमिमल !
 स्वातंर्य म मिट्टि म्बय में
 बहना उमका मर्जक मन
 बर रज स्वैर धमिपेरिन
 मु जीवन रजना माधन ।

धारित्व स्वर्ग वह दुष्कर,
 मन बचन कर्म कर धर्म
 उद्यत जाग्रत रह उसका
 करना पङ्कता संरक्षण ।
 धारित्व विमुक्ति हो तांत्रिक
 के बाह्य उपकरण निश्चित
 जीवन मंत्रन मुबिधा ही
 धारमा विमुक्ति की जीवित ।

स्वर्गम जीवन मठदल हा
 मू पर समग्र सयोजित
 इन्द्रिय मन उर, धारमा हा
 बहिरंतर विम्व शमन्वित ।
 जीवनास्नाग जन मंगम
 जन मू क धंग बनें नित
 हो प्रेम प्रनाग जगत वा,
 गुम रचना शानि प्रतिष्ठित ।

अरिपार्व कामनाएँ हों
 प्राणों व गुरु मे संकृत
 मोमा वा स्मित बस-रपम
 रम मुष्प प्रीति म मुक्ति ।
 मव जीवन मूस्पांरन हा
 जन ररमं धग पर रपारित
 बहु देग जानिया मे बड़
 मानवा हा महिमान्निन ।

जानियदो बी ज्योतिर्मय
 केनना वही धव धाई ?
 उर में प्रकाग उजरा पर
 तर धरती धी बना मोई ?
 पय जीवन में वह धामा
 बसो नहीं हूई विद मूर्ति ?
 स्वर्गम नवाग से जन - मू
 बसों रही गन से यति ।

बहू कथा पुरातन कबिते,
 भीते सहस्र युव बत्सर,
 भारत का साम्प्रतिक युव
 अब रहा विकास विचार पर ।
 जीवन प्रमात नै भू के
 पतने में खोले सोचन
 वाञ्छित्य कसा संस्कृति का
 बहू रहा स्वर्ण मुख दर्शन ।

प्रामोद वापरण मुग बहू
 जग हित का विषय निवर्तन
 विचरण करते भारत में
 सुर बंदित इष्टा अधिपत ।
 तुम मध्य विन्दु बन करना
 साम्प्रतिक वृत्त के दर्शन
 भू मन भूम पर उठरा
 अब ऊर्ध्व ज्योति का प्लावन ।

जग प्रीयण में थी बिहौसी
 सम्मत्ता प्रथम रिक्त कुमुमित
 श्री राम कृष्ण में धर तम
 कृपि विमल मुकुट से संबित ।
 भमबद् भीसा भू को गुण
 मरिमा गाने में यशम
 तुम करो नमन प्रास्तम को
 पर मुखर, पिरे, धर संयम ।

भाववत् नंदन जग में प्रब
 दिग् घुंठर पतंगर का क्रम
 विचरा शूठ स्वर्ण बही धर
 पहुरा दे रहा गरक तप ॥ —
 बंगी ने सजत नयन से
 चाहत तन मन से देखा
 गृह कतह राष्ट्र मस्तक पर
 श्री धर्मित वाणिमा देखा ।

भारत का करुण विभाजन
 या जुड़ा म पाया जन मन
 नगर का बटु कोताहम
 भरता उर में उद्गमन !
 जिस मय्य घहिमा तप स
 मू ने पगु बम पर पा जय
 साम्राज्यवाद रबि का म
 निस्तेज बिया हर जन भय ! -

तोहित बरम में सपपय
 मिठ प्राप्त शक्ति बहु भी हठ
 बटु नारणीय कृत्यों से
 मू का पीरब मन्तव मत !
 बहता मत शक्तियों से संग
 मोए जागे जा प्रतिष्ठा
 वे एक नहीं हो पाए,
 क्या इसका दायग भारत !

बंट दो बिपदा शिबिरा में
 एह तरे मुगों तक दो जन
 मिठ तरे न वे भीतर मे -
 बीसा जनबा गोन वण ?
 क्यों मानब बरणा मयता
 या बीटी निब धारण ?
 बटु पूजा इय बरम में
 मन गए धर्म दीवित मन !

मू लय एक महदय मम
 जीवन सिपडिया मे श्रित
 बाहर के बाम - मुहद य
 धामा मे रहे धारिबा !
 पन सिपड बमा मारुति म
 जा हुए बाह्य क्रांति
 धारर प्रयत्न मे शर्मित
 के मरत प्रयत्न के बर !

कुछ हिंस नृसंस नरों ने
 मुब पहन धर्म का भीषण
 धाक्रमण किया हठ भू पर
 क्या इससे विमुक्त हुआ मन ?
 गबनी गोरी नादिर से
 भेड़िए निरीह बनों पर
 दूटे सुटे स्त्री पुत बर
 जन नमर किए जन खँडहर ।

कर भजन कसा प्रतिमार्ण
 खंडित मंदिर पुर प्रायण
 ने मण साद उँने पर
 के स्वर्ण धरु का मणि धन ।
 कुर्माय्य हुआ क्यों संभव ?
 क्या विकसत पंगु से जनगण ?
 इस सिंह बाहिनी भू पर
 स्वारों का तांडव नर्तन ?

दुप धम्मूख मध्य युवो का
 सङ्खडा उठ भू पंजर
 बेतना शुभ्य बहुमत रत
 शत रुद्रि रीति छमि बर्बर ।
 निर्वासत घसंध्य राश्यों में
 खंडित भू, हतबल जन मन
 कदु राय होय क्रुत्सा के
 भू बर में पूय मरे बण !

घापस में मङ्ग घोछे नृप
 करते मरि का घाबाहन
 बाहरी रस्युषों ने बिर
 भू बनी हिल एण प्रायण ।
 बुदधी बर मीनिक सेकर
 दूटते बर्बरों के रस
 जोतते छूठे भू को
 मूटते कसा बँजव रस ।

हृषि ब्रुत ब्रम विकसित हा
 जब त्रमग टुपा समापन
 छाया हत माम्य घरा पर
 जड़ हास बिहृति तम बिपटन ।
 कबि सोष रहा पा बीम
 पत्र मन में पैठा बर्जन
 बर्षा त्याग निषेध बिरति क
 मर में भन्दा मानव मन ।

क्यों सिद्धि बन या रीते
 माघन - मायंकता या कर
 मांगिक मामाजिक रचना
 क्या रही अपूर्ण घरा पर ।
 कब धारम मुक्ति जीवन का
 बन गई मरत्य धमिशापित
 धावाग कुमुम की मो में
 उर ज्वाति हृद निर्बापिन ।

क्या जीवन बिमुष मनुष ने
 मम्यास निवा भोग मे,
 छन त्यस नरक के भय है
 पत्र वाग दिया जीवन म ?
 धति वीपदिन मूर्खों में
 कब सिमट गया विधि प्रलि
 मामूर्ख जन जीवन का
 विस्तृत यथार्थ धन मर्दिन ।

बिच्छिन जगन जीवन मे
 मन प्राणा म भी बंधि
 धारमा के मर पर जगत्
 पनुमर पाणिष पा निच्छिन ।
 मिष्या बन गया जदा पर,
 माया मू जीवन का कर
 इह पर की बन्धिा बर
 बर्षी ही न्द निरतर ।

दुखमय, भंगुर जग श्रीजन,
 प्रिय सुष्टि पवित्रा प्राभित
 पर लोक नुम्य कामी मन
 जन मू से कृपा प्रकाशित !
 विधि यज्ञ कर्ष काशों के
 कृता इति में पकड़े जन
 प्रदे विश्वासों शोधी
 आस्थाओं में खोए मन !-

बहु पाप पुण्य संतापित
 अपवग स्वर्ग सुख कातर,
 गत जन्म कर्म फल बंधन
 श्रृंखला तस्त कायर गर !
 मत आवि पाति बनों में
 मेड़ों कीड़ां से पुबित
 नत शीघ्र भ्रम रीढ़ों पर
 सधु राय होव भव पबित !

स्फुति जीर्ण व्यभस्वाधों की
 काय में बंदी स्तंभित
 सामूहिक श्रीजन के प्रति
 बंजर विरक्ति से कुठित !
 कटु मुंड मलों गुट धर्मों
 बाधां में कूर विभाशित,
 संस्कृति के कठगुडसों से
 धृत धम्यालों न जाभित !

प्ररमा नमिन स शक्ति
 जन रदे न प्रादिष्कारक
 मन बस्तु दृष्टि से विरहित
 भाषामरु धाम्य प्रतारक !
 धंतर्पन स्तर पर सीमित
 जन नवा योग नम विच्छेद
 मरु कर्म दृष्टि से शक्ति
 रर मया न बहु कृनि बीमन !

प्रत्यक्ष के मे नर नारी
 गत रीति काम्य में मूर्ति
 उपमन कुंजा में करने
 निज काम प्रियी मुचित ।
 बहु देह भोग यौवन वा
 मित व्यक्ति प्रणय के पाबित
 मामूहिक मानस के स्पंदन
 तब वा न प्रम में जागृत ।

बाहर न जब परिबर्तन
 जीवन को रहा अपेक्षित
 पोंचे नी धरने में विश
 जन मजा रही तिरोहित ।
 युग युग में महा पुराण बहु
 बिचारे धनुष्य वा बहु प्रम
 छाई बी हाम तमिस्रा
 मित्र मका न जन भू वा तम ।

गानाधरार वा युग तब
 बन्या वा मूड घटा पर,
 भय बैसनस्य संलय मे
 जन भू जीवन वा जर्जर ।
 मार्गती युग की पद्धति
 संसृति बिचार बिधि दर्शन
 निवार हो बुद्ध प सब
 जीवन विदाम के माधन ।

धार्म्यागिब दुर्बनता म
 संकीर्ण बना में गदिन
 मनु त्वापी में न ब जन
 नर विना दृष्टि मे ब विना ।
 निप्यन निरीच पिनीना
 बट्ट सिन्दुर उमर वा
 सैन्हाता निम्न भू पर
 बीदे नर युग हद घा ।

मू मानस का कस्मय वा
 वह मध्य युवों का भारत,
 भ्रम, पराधीन शक्तियों तक
 मूठ, धारम पराबित बाह्य ।
 निब संरक्षण हित पैठा
 वह छिप अपने ही भीतर,
 बन के हित बाबे मूरे
 मन में चरित चरंग कर !

शंकर चैतन्य असोकिक
 वे ज्ञान शक्ति रस निर्भर,
 तुलसी कबीर युव मानस
 रच गए, सिगु तम मत्र कर !
 बिचरे बहु संत मतस्वी
 भास्कर बन्मभ रामानुज
 बड़ ईश्वर पत्र के अपर
 उठ सका न मू उर भबुच !

गुरुओं ने शक्ति धरा का
 करमा बाहा संरक्षण
 स्वामी जी ने धारों का
 फहराया वैरिह केतन ।
 श्री रामकृष्ण जाए संग
 मुग का पहला अदधीदय
 धार्मिक ज्योति जपद् मे
 कैसी कर धर्म समन्वय !

कवि देव रहा वा - मू का
 सक्रिय चैतन्य सिमट कर
 वा पहरा बुका - निरर्वक
 बन मन वा शब्दांबर !
 जित मू की संस्कृति में धन
 पत्र गई धारिया घगनित
 परिपाक न वह कर पाई
 हरमाम धर्म का किपिन् !

मुन प्रहम गीमता उसदी
 नि-नोप हो गई या मूठ
 बड़ कड़ि रीति सीकत में
 पिन् स्रोत घो गया जीवित ।
 बह मर्ब मूत गत धारमा
 बसुधैब हुदुम्बर का रव
 ईबा धरम्य रोन्न बन
 एह गया जात्रिया का गब ।

शार्चना गान तीर्पाटन
 उपबाम नियम वन माघन
 दोनों ही धर्मों में या
 नैतिक जीवन मूसावन !
 दोना एवेगवर बादी
 भडा धास्या ग दीपित -
 प्रनिमा पूजक भजक से
 दोना ही पालिक धर्मिन ।

मिन मही न ऊच मनोमनि
 गमदिक प्राणिक जीवन मे
 धनि बैधस्त्रिक उगत रवि
 जन धर्म तंत्र रत मन मे !
 धंठमुंग्य बहिमुंगी जन
 पुण्ण हुठा मे पीदिन
 पुन मरु न नवन जमधि मे
 निर्बम म्बापदी - पछिया ।

बिदुब पूया बिन मूटिन
 आगीन धरु मे मीमिन
 के गे रिन्द बिमुष नि
 गग पाचारों में धरित !
 शानो बीने हुबर कृमि
 रेलो एह पुग पू वर
 सभ्यी हुन नमम मे
 निर रता तिन बिर ललर ।

भू मानस का कर्मण्य या
 वह मध्य युगों का भारत
 शक्य पराधीन शक्तियों तक
 मृत भारत पराश्रित पाहूँ !
 निम्न संरक्षण हित पैठा
 वह छिप अपने ही भीतर,
 जप के हित प्राणें मृदि
 मग में चरित चरित्र कर !

संकर चैतन्य प्रतीकितः
 वे मान मक्ति रम निर्मल,
 तुमसी कबीर युग - मानम
 रण गए, सिन्धु सम मय कर !
 बिचरे बहु संत मनस्वी
 पास्कट, बस्तम रायानुज
 जद ईश्वर पंक्त के ऊपर
 उठ सका न भू उर प्रभुज !

गुरुओं ने समित धरा का
 करना बाहा संरक्षण
 स्वामी जी ने पापों का
 पहराया ईरिक्त वेतन !
 श्री रामहृष्य जाए संग
 युग का पहला प्रसोदय
 प्राध्यात्मिक ज्वालि जपू में
 फैली कर धर्म समन्वय !

कवि वेद रहा या - भू का
 मन्त्र चैतन्य सिमट कर
 वा बचप बुद्धा - निरर्थक
 जग मन वा गण्डादंबर !
 निम्न भू की संसृति में जप
 पक्ष यई प्राणियों प्रसन्नित
 परिपाक न बहु कर पाई
 इस्लाम धर्म ना छिद्र !

गुण	ग्रहण	शीमता	उसकी
निशेष	हा	गई	या मूठ
जड़	रुढ़ि	रीति	सैकत में
धित्	सोत	शो	यमा जीवित !
बह	मर्ब	मूठ	गत घारमा
बनुधैब		कुटुम्बक	का रब
हूबा		परम्प	राहन बन
रह	गया	जातिधों	का शब !

शर्मना		बाग	तीर्पाटम
उपबाम		नियम	घत साधन
दानों	ही	धर्मों	में वा
नैतिक		जीवन	मूल्यावन !
दाना		एककर	वादी
धडा	घारमा	ग	दीपित -
प्रतिमा		पूजक	भंजक घे
दोना	ही	घास्त्रिक	घणित !

मित	शकी	न ऊष्य	यनागति
कमदिब		शानिक	जीवन मे
घति	बैयस्त्रिक	उपरत	रुचि
जन	धर्म	तंत्र	रत मन मे !
प्रतर्पुण		बहिर्मुग्धी	जन
युगपत्	कुटा	स	पीडित
युम	सक	न	मबन जमधि मे
निर्वम			रबापही - गठनित !

बिरुप		पुना	बिन भुछि
जाीन		घई	में मीमिन
बे रहे		बिरुप	बिमुष निज
गा		घाबारा	में घरित !
दाना		बोत	कुबद इमि
रैगने		रहे	युग मू कर
सामेनी		रुप	तमम में
नित्र		रता	तिन बिर तावन !

प्रति	घाँवर,	प्रति	वैयक्तिक
परसोक	दृष्टि	हित	निविष्ट
वैधी	प्रतिशोध	रहा	बहु -
(जीवन	हो	पूर्ण	समन्वित ।)
इस्लाम	घरा	पर	सतरा -
प्रमु	धीब	दृष्ट	हो
ईश्वर	घास्ता	हो	मृ
वन	घर्म	तब	संरक्षित ।

प्रिय	कवि	श्री	नबी	मुहम्मद
एनेश्वर			पर	बड़ा
मानव		समता		के
घास्ता		के	पब	से
बहु		देख		रहा
मस्तक		प्रमु		बरणों
सित		चित्		किरणों
स्वयिक				गंधों
				का
				पर्यंत ।

कुर्मायि		समेट		न	पार
निब		विस्तृत		बाहों	में
यह		भूमि		मुसलमानों	को
तमसाबुत		बा		वन	घंवर !
वैतन्य		वृत्		से	क्युत
विधि		नियमों		में	रत
तब		विश्व		योनि	का
रह		गया		न	बा ।
				दिक	नाछन !

घब		बीते		घमों	के
बेठना		उन्हें		दे	नब
घमों		के		खंडहर	से
निचरे		घाभ्यात्मिक			धुम
वैज्ञानिक		मुग		के	विद्युत्
संस्पर्शों		से			घनुप्राणित
निष्क्रिय		सामंती			स्थितियाँ
हो		रही		जागरित	विकसित ।

गत जाति धम कदम स
 बाहर निकले युग मानव,
 भव मानवता का स्वप्नित
 मू स्वर्ग रच बहु धमिनव !
 साक्षोदय की रचना हो
 बहिरंतर मलय समन्वित,
 मू बन की सित समता पर
 पग में हा ऐव्य प्रतिष्ठित !

(विघटन)

देखा बंसी ने हत दुगु
 दाखिप पाक्षितिक पैना
 नगरा की मा प्राम्या का
 प्राचम कर्म के मीसा !
 दाखिप मना के पीठर,
 दाखिप जना में बाहर,
 लख रकउ माम मग्ना में
 दाखिप पुष्पा धति दुन्दर !

दाखिप धरिया मणि धर
 ज्यों गत गृहस एग विगधर,
 पत्नी में पकड़ मू का
 हा नियत एत कम प्रस कर !
 परंतावार उम लम से
 निज धंतर में पागवित
 गावन लण पाण की
 बधि किरण प्रान हां बीन्त !

देखा उसन भाग्न में
 हरि गिरी पद पे निरबर,—
 हा साब रहे—बिन्दु में
 बापा दी हमने पाकर !
 बागडी री की गाडी
 मुदी धंगिया त्रिप लम पर—
 बर लख नर मपु थी ली
 सानी की निरी मनाहर !

बंसी ने स्मित स्वागत कर
 हुत उन्हें बुझाया भीतर,
 मत्रणा सखा से की फिर
 जन भावी को सम्मुख धर ।
 बोला हरि, स्वतन्त्रता को
 सब होते बीबह बख्तर
 इतने में शान्त सब हर
 सौटे कर विजयी रघुवर !

हम कुंघकर्ण से सब भी
 छोए प्रमाद में छोए,
 पुन बीबन की पंजा में
 मू ने निज पाप न छोए ।
 सामाजिकता के प्रति जन
 हो सके न सब भी पापद्
 निष्ठाव रिक्त केंचुल से
 प्रेरणा बूम्य तामस रत ।

मन रुढ़ि रीतियों का जन
 कद्रु जाति पाति तम मुक्ति
 बत पाप पुष्प के जन पद
 रखते जन उर भावकित ।
 जन सुमाकृत का गाहर,
 सत विस्तत बिससे तन मन
 जन हाड़ फूस बिबरों में
 कुमि बीबन करते यापन !

बाविरप अधिला दुव के
 शान्त जन पर मुंह बाए,
 बिनके उबरा में सद्गुण
 सुव मेव समस्त समाए !
 सब निज निर्बाधित शासन
 निज बिल म्याप मंत्रीपक्ष
 बड़ता ही बाता प्रति दिन
 मू पर वारितिक विघटन !

प्रब मुड दूध भी मक्खन
 दुप्राप्य तेस रज् मिथित,
 भेहणी ही मात्र प्रमति पर
 ही, घनाचार भी निश्चित !
 कर्तव्य मूढ़ मे जनगण
 निज भाबी क प्रति संकित
 त्रिय राम राज्य के सपन
 मन से हा रहे विरोहित !

हुलस प्रब जीवन साधन, -
 पूह प्रप्र बस्त्र बन - पो - धन
 मंत्रियों पदों तक सीमित, -
 बचित मुग्र गुबिघा से जन !
 बर्दम करप्र मे पमठे
 मन्त्र कर जन साधारण,
 परतंत्र दख स दुष्कर
 स्थायीन धरा का जीवन !

यह गांधी का पौरव युग
 गण लोक तंत्र का प्रापक
 हन जिलों पटौहों में पुन
 रेंपता सावृ हृमि जीवन !
 बनने ऊँचे महनों में
 स्वार्थी गर लोक प्रतारक
 जन रघर म मयद बन
 मेवक म प्रभु पू शामक !

बिर दमित मध्य युग का मन
 गम खेल रजा प्रा बाहर,
 दा जाति बय शीतों में
 बर रजा मय भू खेहर !
 जन मन का बांध न पाता
 पण्डित्या का घावर्य
 एगा बुट करी तरी जो
 बूँके जन में नर जीवन !

करदान मित्रा या हम को
 स्वातंत्र्य, - न पौख्य प्रकृत
 हम मोक्ष राष्ट्र रचना हित
 जीवन न कर सके प्रकृत !
 शक्ति रख गए पावन
 प्रिय राष्ट्र पिता जो हम पर
 यह पूर्ण न कर पाए हम
 बन धातम सिद्ध पद पाकर !

बन सेवक प्रब सासक बन
 रहते नगरों में सुख से
 सौधों में सघे सुरक्षित
 नाता न बनों के दुख से !
 पकड़े शीतों पंखों स
 भारत मा का सब बर्बर, -
 प्रम हित कार क्या मोमी
 करते बसूत उचका कर !

हमने भी नाठी बार्ड
 कारा की सासत प्रेसी
 फंफड़ फूटे, बकरी नित
 पीसी बानी भी पेसी !
 हमने म कभी जगहाया
 प्रम तप का मृत्य - प्रभेला
 निष्काम लोक सेवा यह
 युग जीवन का या मेला !

बस राधा बन रहें हम -
 मन इस पिन्ता से कातर,
 हम देख प्रकृति के बाधक
 समझौतों क हित उत्तर !
 सात्त्विक मानव दे बापु
 जो भोष्ट समझते बन घन
 हम बचा छठरियाँ पू की
 साथे बड़ सब पर भासन !

मन	मूत्र	मनी	जन	घरणी
हग्गा		निरराय		कनपती,
हिम	में	धबमन	तन	बैपती
मन	के	निदाप	में	तपनी ।
सामंती		द्वं	भर	भर
प्रब	करत	उम	पर	शामन
मन्ति		विनर	पद	मद स
हृ	भाप्य	घरा	का	योन ।

मह्याम		धाम		पचापन
लगन		बारे	पुग	प्रहमन
समुचित		मेतूख	बिना	क्या
घा	गकटा	उममें		जीवन ?
वारिचिक		पतन	न	एमा
देया	ज्ञा	भू	न	धीयन
मुद्री	भर	बी	मुबिया	हित
विमने	निरीह	घयनिल		जन ।

भापी		उवाग		घड	कर
कत्रम्य		न		पूय	हना
ग्या		देश		घनायामय	हा
जन	मन	भीतर		मे	रता ।
भू	भाग	घौर	भी	जय	में
मगटिन		बहा		जन	जीवन
धी	मुदर	बहा		घरा	मुय
त्रिय	मुन्बान	जीवन			क्षम ।

भू		यहा		कुम्प	उनेतिन
दुर्गप		भरे		जन	शोपन
दुगिन		शाटाप्र		मरक	नन
नैगान		बिना		पुग	मन ।
मानुगी				जगता	बिरति
गहदयता		दुम्प		बिमुय	जन
जीवन		पगार्य			पूरे गा
बिगना		धी		नगिया	निर्धन ।

धामा		तृतीय	निर्वाचन
पुर	वप	में	फहरा
मत्तों	मारों		से
मर	हीयुग	निब	मिजापन ।
मपन	प्रभुत्व	पर	के हित
पन	स	कर	भिषा
चाहते	क्षिति	मद	कामी
भेड़ों	पर	करना	शासन ।

सिद्धांत	छोड़	पनु	बम	पर
उठरे	मब	प्रतिपक्षी		बन
संज्ञे	उबाड़		बूँछे	बड़
खीर्बा	से	मिड़		उच्छ्वस !
बैसों		की	बोड़ी	मड़की
भापड़ी		जमी	धू धू	कर,
बर	फूंक	दीप	स	बचना -
हंसठ	गुंहे	हस्तड़		मर !

ठाक्ये	एकटक		पनु	स
मंजाभिभूत		इठ		जनमग,
हो	घोट	बोट	हैं	परवर
कहत	कूड़	हंस	मन	ही मन ।
त्वोहार ।		कबतिया		कत
माई	बुनाब	की		होनी
कीबड़	उछाल		पासी	बक,
मर	हो	-बोटों	से	जोसी !

गाबों	में	प्रथम	हमें	बा
निमित्त		करना	बम	वीजन
पो	ईत्य	घबिघा	दुय	क
महदे	में	मिरे		चिरेदन ।
धू	पर	कुम्पता		के जो
कुत्सित		मारपी		निर्जन
तन	मन	की	दण्डिता	क
पाटों	में	मदित		प्रतिघम ।

मन्त्र गिरीश्याम हो जन में
 भू जीवन का दिग् उर्बट,
 गाँवा की धी सपद् दे
 नगरा का मन्त्र संरुति बर !
 परिषम की कर्षी प्रतिवृति
 नयरो का हृत्रिम जीवन
 प्ररणा न उमग पाता
 भू प्रतिनिधि जनमन का मन !

हम जाह हूमरा का मुख
 धनुवरम बर रहे पहिउ
 जन भू की मोतिक प्रतिभा
 हा रही न बिकसित किचिन् !
 परिषम न रोग में रोग बर
 हम भूम गा घनमान -
 मरणाभ्युग मन्त्र बहु संरुति
 घटना विमने जित विपटन !

मात्रिष उषाग घनेनिन
 भारत का सिन्दु गमाउर
 मूठ घणा की उमनि मे
 थम रल रुन गाँठी नर !
 हम हृनि ऊरिन भू का हा
 पीपेदीकरण बिकेनिन
 गात्रिष मुन्द जन जीवन
 मन हा घनमुग केनिन !

मानगिष दामता बुनि
 हम स्वादिमान न विरहित
 पर भाग जीवी बघ जन
 मन्दी बिद्या पर मरिउ !
 पर - भाव विमन मे विरते
 बरते धन का पहिउ
 पर कमा बाउ गाँटे हम
 निरुत बरुत न मन्त्र !

राष्ट्रिय	एकता	म	संभव
सांस्कृतिक	ऐक्य	भी	हुंकर,
पर संस्कृति	में	पोषित	मन
भू	वन	सं	विरत - पर्यंकर !
हैरे	हम	राष्ट्र	बनें
देहाभिमान	सं		बिभित
अम	छिन्न	मूस	पावप से
गाँवों	से	पुर	न समन्वित !

बंजर	भीतर	मम	की	भू,
हम	पर मानस		बीबी	वन
चित्	आद्य	न	उपजा	छकते -
कब	से	पराम	सेबी	मन !
हम	पोष्य	पुत्र	निब	मा से
चिर	बिमुच	बिमाता		साहित
वन	अंधकार		अंतर	में
बाह्याभासों	में			पासित !

इस	नैतिक	दरिद्रता	का
कवि	अंत	कहीं	क्या
हुंकर	राष्ट्रिय	स्वर्गों	पर ही
अंतराष्ट्रियता			निर्मर !
मधु	अक	तुल्य	अथ जीवन
बहु	भू भाषों	से	संचित
मानुषी	एकता	का	पट
बहुमुच	सूत्रों	सं	मुपित !

भाषा	न	शब्द	संग्रह	अर
राष्ट्रिय		आरमा	का	अर्थन
सामूहिक		जीवन	सं	छन
बनते		विचार,	विधि	बर्णन !
घोरों	के	जीवन	मन	की
माने	अपना		जीवन	मन
हम	सगा	दूसरों	का	मुख
होते	रीते	जीवन		अन !

पर पतंग का मंजुल कर
 निर हूँ ठंठी में मंजुल
 जन पूँ पारमा के बातक
 हम रूने इयिम जीवित ।
 उगृष्ट बिन्गी पट ठर
 श्मने खादी धनार्
 तब बस्त्र बना भारत में
 मय्यक बिनाम कर पार् ।

यन् छोड़ गये परबीया
 भाया की हम शठ ममता
 जन पूँ गृहिणी बापी ही
 बड़ मके दात्र पा दमडा ।
 वैज्ञानिक दृष्टि नहीं पर
 हम हा पर भाया पोपिन
 तात्रिण ग्यतवता पा हम
 घब मानम मर पर गोपिन ।

भारत प्रतिमा निर म
 पर नहीं विर म न्याबिन
 निर मिश्रता ग विरहित हम
 छाया जन शोष प्रबाहित ।
 वैज्य रज्जु माप ही
 का मरनी मुषा हुप मन
 शंता में बटे जनों का
 तिर बाण गडु में मूत्र ।

भाया एका व पर में
 बाणक पापिर गपरी
 बिदेय मोर प्रादिका
 मधम दरगा शिन गमन ।
 पूर्व का मय्य मुषा व
 प्रामर बोदिक मूयोरन
 इव बिदा मंगल जन व
 त्र हीन बाव पीदित मन ।

प्राकार		बेस		घंटेकी
छाई	जन	मन	पावप	पर,
बीबन		विकास	कम	बिससे
कुठि	हो	रखा		गिरंतर !
इस	पीड़ी	के	मस्तक	से
कब	छूटेगा	यह		सांछन ?
इतिहास		पुकार		कहेगा
जम	बातक	बे		नेताबन।

बहु	प्रांती	की	बाची	का
जन	मानस	हो	रस	सगम
सांस्कृतिक		दैन्य	की	छाई
फिर	पटे	मुर्गी	की	दुर्गम !
उत्तर	बसिष	छोरी		पर
नव	सेतु	बंध	हो	निमित्त
इस जन	विहाल	मू	में	हो
राष्ट्रिय	एकता			प्रतिष्ठित !

निम्	अष्ट	प्रवृत्ति	के	अम	में
रख	कर	पीड़िया		रेहन	
निर्माण	म	हम	कर	पाए,	
निरपाम	बच		का	मीबन !	
मू	देखों	को	पूर	कर	भी
हम	हुए	समूह	न	किचित्	
जन	मोह	वक्ति	मोर्चा	वा	
कब	से	निर्भीष		उपेक्षित !	

भावे	पैस	बो	बो	कर
संभव	क्या	जन	बैभव	बन ?
मू	रचना	हित		सावश्यक
अम	कुमत	करों	का	कीमत !
वामृति	का	डोसा		घाता
उपह	समस्त	बंधों		पर,
प्रेरणा	मूर्त	हो		अम
संपद्	जन	अम	की	अनुचर !

ऋण पवन कंधा पर घर
 हैम उटना जीवन मगर
 मोमरी याचना बसती -
 जन मु हडकी का पत्र !
 मबित गमस्त युग मंगद
 घनागियों में मुट्टी भर
 घब मध्य निम्न यगों के
 जन निर्धन म निर्धनतर !

गन नार काप मुझों
 बदमी पुर पंथ पुरानन
 बन्मी न दृष्टि धनना
 बदने न मून्य मन बिन्दन !
 बदन न मनुष्य - मगिशा
 गच्छिप पीर पर भीरण
 यह प्रगति धगति या दुर्मति ?
 बुछ समात नरी पाता मन !

जन धम ही मन्वी मंगद
 बैतानिक युग का पोषण
 प्ररपा धुन यति मू मन
 निष्णम बिज्ञान धायाजन !
 हैमी उदरति यह त्रिममें
 हा मानक इन्म न विरगिता
 दयना पद बीरक म
 यति मौनिक मगन बधिद !

जन धम म हागा कन्वित
 यति न राष्ट्र का जोरन
 र्धणा गति मर में जन मन
 शोष युग शक्ति होइ जन !
 युग शिष्टि म माध उठा हम
 बर नर ग नको खीरिद ?
 धरमरबाणी न का न
 इम धर नर न य दन्दिद !

सामयिक
 सित पंचशील समस्याओं का
 जो हुमा न मुझ साधन
 निर्मल कृषि के धरा पर
 यदि राष्ट्र रिक्त के कारण !
 कैसे हो पूर्ण भीतर से
 लक्ष्मी का सज गौरव प्रयोजन ?
 पा महत् कृपा के कुछ कण !

नव मामबठा के पक्ष पर
 बाघाएँ बनीं हिमाभय
 विस्तृत हो जो मानव मन
 बाहर जड़ बंधन हों लय !
 वीरता महत् हिमकिरि से
 मानुष्य विचार स्वर्गोत्तर
 बरसाता हँस प्रेमाश्रुत
 चोटी पर स्वर धर भारत !

संश्रुति पर्व चाते मिल
 मंचा नहान को जनगण
 प्राबाल बृद्ध बस कोसों
 वैश्व मंडा भीये मन !
 जन मन प्रेरक सित धास्वा
 धब मात्र रुद्धिमत पंजर,
 विस्तृत जीवन रघु धारा
 विषसे जन तरणी उर्बर !

जन मन में हमको मरना
 धब गई प्रेरणा का बस
 पू जीवन हो प्रति दे धास्वा
 विषय जीवनी मानव मंगल !
 जो स्फुरित शक्ति प्राणों म
 हरि पद से रही प्रतिक्षण
 बह धपने में शिर पावन !

हरि बंगी पुग गति बिधि से
 मंगुष्ट न वे बिन् स्पन्त्र
 घंठर जीवन के प्रतिनिधि
 उर रहता नित प्राशमित ।
 बहिरंग मात्र मानव वा
 विज्ञान स्पर्श मे विरचित
 घंठर मात्रक बिरमित हो -
 दानां को मगत प्रपेगत ।

जन मुक्ति भूमिका केवम
 बंती का मन वा निरिबन
 पुग प्रजन मुख्य - मानवता
 किम तप्या मे हो निर्मित ?
 हरि वा नीति दुग मंदिन
 श्री पुग जीवन प्रति प्रापुन
 पुग कवि उर उमेवित वा
 मम गूड पतना प्रगित ।
 (बिबाम)

बगी न हरि के घाह
 बचनो का बिपा गमयन
 उगती मात्रवी श्री बानी
 मुप तप्या की श्री दान ।
 बाभा पुग कवि - नतिपा म
 श्री के प्राणों वा मगत
 निरवच्छ रग पीरे ही
 मोमेगा उगमे जीवन ।

यह नच न मित घटा
 जन श्री की मय वा बाह
 मेनी मुवा तप्य वा तन
 निर समिप्यति पय गावत ।
 श्री नई नीतिवा वा मत
 मंगुमन घटा नर श्रीवित
 नर गच्छ पतना श्री
 शान वमन वा श्री

जन तांत्रिक दृष्टि में वैश्व
 भारत की आत्मा अलय
 बहुसूत्र एकता अपनी
 चरितार्थ करेगी निश्चय ।
 बहुमुखी सूत्र जीवन के
 फिर गूँब राष्ट्र पट में नव
 नव सहज सँभो पाएगी
 निज धनेकाँठ उर अनुभव !

नव मुम जीवन मंदा को
 मत दान धर्म कर अपित
 बुन कर्मठ लोक पुरोधा
 बन करें सुदृढ फल संचित ।
 नव मन संवत्स का जल
 बन हित हो कर्म प्रवाहित
 नव सोक तंत्र समय पर
 धास्या हो जन की बधित ।

नव सेतु बंध रचना कर
 तरमा बन को तम सागर,
 पाटें निज मठ के जन से
 बारिखप अधिष्ठा बंध में बुस्तर ।
 प्रति पाँच वर्ष में जन भू
 करती युग मानस मंजन
 नव रत्नों स भूयित कर
 फिर धरा मुकुट - जल नासन ।

हम कूर हिम भू पक्ष में
 मनुबोधित बुद्धि न खोएँ,
 मुख संपद् संन जन मन में
 मानुषी मूल्य भी बोएँ !
 कुशाध्य समस्या जन की
 योजना धनेक जगन्निष्ठ
 पाटना पत क्षतिया का
 हो उठती बुद्धि धमकान !

धन मह्य साध, यहु जस बन
 मब बुर ताप मिचन हित
 जन गृह आबागम साधन
 परिपहत मनु पप विस्तृत
 उपाग वत्र बिद्युत् गृह
 इस्पात गिमंट यपाचित
 हा र्हा सोर जीवन सेग
 उत्पादन गोधन बिद्युत् ।

प्रादाप्र परम आपश्यक
 जन हित मह म किबिन्
 पर, मित्य बना मस्तुति मे
 कचित मर पगुबन् जीवित ।
 पारिविक उपति क हित
 ज्यां धीति बन कर माधन
 सामाजिक जीवन पट मे
 मोर्य बाध मणि काचन ।

गत जाति पाति कर्णो क
 विप म विमुक्त कर जन मन
 अद् रुडि रीति वा तम हर,
 युग दीरित वर भू प्रागत -
 हमर। निमित्त करना मय
 राष्ट्रिय मानम दिम् बिद्युत्
 धाम्य घरा जीवन वा
 मन वा कर पूर्ण गमगिन ।

धीरे मार्ग बन मे
 स्पातिव - म हममे मान्य
 धीत गुणम रिजान मनुद वा
 इन रुडि मे लिने वा धन ।
 ईर्जित बिपिजामय
 हा जन मकार रचना नि
 वा एर एर बहु के मंग
 हा जननि धीति म मुक्ति ।

यह सत्य नग्न निर्भयता
 भारत मस्तक की पातक
 बन मन नैराश्रय अशिला
 जीवन विकास हित नाटक !
 भु की कुरूपता पहिले
 घोनी हमको निःसंशय
 बाहर हो नरक तिमिर से
 बन साँस ले उन्हें निर्मम !

तुम वस्तु दृष्टि उन्मेषित
 करते युग का विश्लेषण
 यह ठीक मोड़ जीवन तम
 दीपित कर सका न सासन !
 निर्मम युव सीमाएँ ये -
 कैसे हो खुटि संतोषन
 सायक बासित में भरता
 हमको सक्रिय संयोजन !

यह भी अनिर्वास्य हूँ धर
 ऊँचा करना धपना स्वर,
 तब लोक कति की घेरी
 जन मन में बैठ करे धर !
 यदि स्वस्व सबल प्रतिपक्षी
 न धरेगा रश्मि नियंत्रण
 स्वयं प्रजा तस युव का रज
 होगा पथ भ्रष्ट प्रतिक्षण !

सामाजिक कति धनेक्षित
 भारत जन के मंगल हित
 हो जाति वर्ण में विचारी
 चेतना राष्ट्र में केन्द्रित !
 यत् धंध रुद्धि पित्रर में
 बंदी निर्बल निष्प्रिय मन
 उद मुक्त प्राय बिद् नम में
 फिर बुगे स्वर्ग पावक कण !

ठहरी पी
 बिमान शक्ति
 वह मूर्त हा हिन कातर
 पा नमदियु जीवन का मु पर
 वह नमाधिस्प हो निस्वर
 सित ऊर्ध्व गगन में पी स्थित
 प्रब सय भूत रत भू पर
 जन स्वग कने वह निमित्त !

भौतिक मद क परवा का
 करना मर वा अनुगातित
 यात्रिक न बने भव जीवन
 हों पत मनुज क धामित्त !
 बिमान स्वम के बन्त
 युग रचना में हा यातित
 हा मानवीय निष्कुर भू
 नव प्रकृति विभव मपापित्त !

वैज्ञानिक युग में विरमित्त
 बहु उन्मत्तन क साधन
 प्रब पाप तद्विन् अनु बम म
 ऊर्ध्वस्वित जन मू जावन !
 धादिम बोने मानव को
 करना निर म मपयन
 वह बने न बाधत - मू क
 वैभव वा हा मम बिलग !

पबधान बुगमा ग
 कति प्रच्छन्न मनुज मन
 दा दारण बिार रण म
 वन बरा दगल मू प्राण !
 प्रब रवा तुर्वि धादिम - मर
 निर गवना तिन ततर, -
 निरवतन वा नइवन
 नव नवन बन्ता बातर !

बाहर का मुझ समापन —
 घंटर मानव हो विकसित,
 सब ओर छोर जन मू के
 हों गोमा संपद् मंडित ।
 जीवन शिल्पी मानव क
 जन बास बने विक कुमुमित
 मित सार्विक बहिर्बिभद् हो
 घंटर ऐश्वर्य अपरिमित ।

वैज्ञानिक यंत्रों से हो
 भारत में कृषि फल धर्मन
 सामूहिक कृषि से युग्मव्
 बसित हो तस्य हरित धन !
 संगीत बने जन मू अम
 हों कृपक भूमिक अनुप्राणित
 बहिरंतर जीवन गोमा
 संयम पर हो भाषारित ।

घर द्वार बेष कर भी जन
 प्रातुद, बनन को साक्षर,
 मगधों की मौन बुनौती
 स्वीकृत करडा मू घंटर !
 शोशिकता के मित तम से
 बोधा सब सम्य धरा मन
 संस्कृत बनना ही शिक्षित
 सार्विक विनम्र हों मू जन ।

कृषिधर्मों की बढ़ जन संतति
 मू मार बढ़ाती प्रतिराज
 संपन्न धरा संभव तद
 जब हो परिवार निवाहन ।
 संघर हो धरणी का मुज
 शिक्षित संस्कृत जनमण मन
 सौम्य सृजन मुख में रत
 जन कमा तिस्य हों नूतन !

हरि सह - प्रस्त्रव घरा पर
 ऋण समाधान भर निरिषय,
 वीरक्तिर सामूहिक गुण
 जन मू पर धमी बिकसित !
 दा प्रतिस्पर्धी भिबिरो मे
 जन मन जीवन बन धंभित
 उमीत बेतना ही मे
 हा सतने उभय समन्वित !

सा मुना बनी रण भेरी
 हिम शृंगो का नादित कर,
 दिग् ध्वनित हूमा जपती मे
 भावमण पीन का बंधर !
 उत्तर प्रार्थार हिमासप
 धरि चारां म धर बरित
 भारत का बिकसित प्रहरी
 होमा म कभी पर मरित !

इतिहास रहेगा मारी
 प्राचीन पदासी महत्कर,
 साहसतिर गिन्ध भारत का
 जन रवा पात्र का तलर !
 हर गिरि का पुन हिमाना
 मुम राक्षय उग्रर दुयंर,
 बहु हरित धंघ धर हाटी
 धमिगर न बने उमे बर !

बरा कही बिना भारत मे
 उमर टि इन बनी मे
 धर भी तटस्थ गति रिम
 धरिषय निर धाणी मे ।
 निर जग उठी बिर भाई
 जन धाणी बन धर बेतन
 बहु घट मड धरिगत
 दा बरा टा नरंर धर !

उपबेदन मन के दारुण
झुझों का कर उम्मुजन
चित् सिखरों की किरणों से
धासोकित करना मू मन !
तब तक प्रबल संवर्षण
करना जन मू को प्र विरत
समदिक कृठित मन जब तक
हो सके न ऊर्ध्व समुप्रत !

जन रक्त पात बर्बर रण
होगे तब तक न समापन
जब तक विकास सिखरों पर
मू मन न करेया रोहण !
इसलिए सत्य की जय हित
जन युद्ध करें विरत ज्वर,
मानवता आत्मबपी हो
रण विमुच न हो डर घंठर !

जन सदै - एक जन मू हित
पा विजय भेद इन्हों पर,
जो सापित से मू तम मुच
नब पुम प्रभात ना सुहर !
मर कर ही मर्त्य घमर को
भमररख विष्य बैठा बर, -
यदि मरे सोरु मंपस हित
घपित हो मूस्पुजय नग !

घपनी कुरूपता पर ही
घति मुग्ध दीवता मानव
घज्ञान महंता ही को
सममे मर जीवन नीरव !
मू के घतीत से घविरत
संवर्षण कर ही घपिनव
रसापित कर मरता मू के
मन में मारी जन वैमव !

भू सोक प्रमिता निरचय
 मत्र स्थितिमा में बी सीमित
 मठ राग ह्य मय मद बे
 पठ रिपुधा से उन्नीहित ।
 नव बन्ध गुना में उमका
 हाता सब विवमित बधित
 यह बैरव मकरण - त्रिमयी
 सामूहिक परिणति निरिचय !

घष्यात्म मय म कर सब
 विज्ञान तप्य मपाकिन
 घामुर पत्रा वा करना
 जन मवा हिन घमिमरित ।
 परिवम मे गिरा से जन -
 भौतिक मर म सम्माहित
 हम पिर न घघ तमम में
 विघ्नम दन कर निमित्त !

मानव व वचन तन मन
 मोनिव युग में मवधिन
 बह ह्य हीन तिना त्रिय
 जन भू विनाश तिन प्रतित ।
 घनि ताविक घाम्या विरहित
 विवतियों वा दाम मगति
 प्रेम्णा मूय धन बीबी
 घाम्या मे निर घातिबत ।

मकिर हा मानव घाम्या
 हर् हीन मर्ग पो विरिन
 मर्वाग मयनिता निगणे
 मर मनुष्यघ घनमित्त !
 विवर भू प्रमी मानव
 निर उच्य धेनिता व निर
 वर हा दवा वा घातन
 जन भू रन मन घातिबत ।

मू जीवन मूल्यांकन हित
 सांस्कृतिक पीठिका मूवन
 आहिण, - वृजन मूख्यो की
 जा हो अंतर्मुख स्वर्ण ।
 जन मू पर आरिभक सुख की
 बाहक हो स्वयं प्रकाशित
 प्राणों की मू पर उतरे
 धानंद प्रकाश अपरिमित ।

गत स्वयं मर्त्य की छाई
 पाटनी मनुज को अनुशास
 सौमिक आध्यात्मिक में हो
 क्यों अडित जन मू जीवन ।
 अड मू से विन्मय विभु तक
 सित सत्य अंगि रस पावन
 संशय न मुझे - कैसे हो
 जन मू जीवन प्रभु स्वर्ण ।

शैयकिक मुक्ति निरर्थक
 बहु आभिक आरिभक स्तर पर,
 सामूहिक गरिमा में ही
 मूर्तित जय जीवन ईश्वर ।
 धानंद मधुरिमा मंगल
 मू मानस लतवन में भर
 आभोक प्रीति होमा का
 मू स्वर्ग रचें जन सुखकर ।

कवि स्वप्ना से सुख पुनक्ति
 नत कहा सिरी मे सादर,
 स्त्री कला तिरि ही का तब
 क्यों न हो स्वर्ण रपांतर ?
 सांस्कृतिक प्रयोगों की बहु
 मभि पीठ बन सक निर्मम
 जन समग्र सबें मुम कवि के
 जीवन स्वप्नों का आशय ।

हम बना मिथिल छात्रार्थ
 तन मन जीवन कर प्रतिज्ञ
 नव मलय साधना में रज
 हींसी मन ही मन उपरुत्त !
 अरु मिथी में स्वर्णों का
 नरु करें साप युग मूर्ति
 पात्रता हूँ बन में
 होगी रज प्रवृत्ति परीक्षित ।

मुद्रपुर - महा नगर का
 उपरुत्त - निमग्न महाहर
 यह रजन गाति बसि मन की
 साधना भूमि हो उपर ।
 सातृतिर पीठ हा जन रिज
 नव युग ईश्वर की दिन कर
 जनता जीवन मपरो का
 द लह निमग्न दिश्वर ।

बागी न विद्या निर्गि की
 हम मरुत्त मृग का स्थापन
 कर स्वयं पाप्य पात्री में
 जन जीवन मन्म में रज ।
 रोग लक्ष्मणु ! बोधा बसि
 का स्वयं सातृतिर उपरम
 नू पर नव युग बाप्य हो
 दीर्घि हा प्राणा का नम ।

जनता निर्गिन बाप्य पर
 नू लर पर मरुत्त निरिप्य
 गतिरु रीतिर न निर्गिन
 मय - बिर पणरा निरिप्य ।
 मरुत्त ही न पचन में
 सातृतिर स्वयं हरि मन्म
 जीवन - नव नू मन्म में
 लक्ष्मणु मन्म ईश्वर ।

धू	जीवन	मुस्वाकन	हित
सांस्कृतिक		पीठिका	नूतन
शाहिण, -	सुवन	मूर्त्यों	की
आ	हो	प्रतर्मुष	दर्शन ।
जन	धू	पर	धार्मिक
बाहक	हो	स्वयं	प्रकाशित
भावों	की	धू	पर
धानंद	प्रकाश		अपरिमित ।

पत	स्वर्ग	मर्त्य	की	बाई
पाटनी	मनुज	का	अनुक्षण	
सौकिक	प्राध्यात्मिक		में	हो
क्यों	खंडित	जन	धू	जीवन ।
अह	धू	से	पिमय	बिष्णु
सित	सत्य	मेधि	रस	पावन
संशय	न	मुझ -	कैसे	हो
जन	धू	जीवन	अधु	दर्शन ।

वैयक्तिक		मुक्ति		निर्दर्क
बहु	प्राक्तिक	धार्मिक	स्तर	पर,
सामूहिक		गरिमा	में	ही
मूर्तित	बग	जीवन		ईस्वर ।
धानंद		मधुरिमा		मंगल
धू	मानस	शतरस	में	अर
भासोक		प्रीति	शोभा	का
धू	स्वर्ग	रथें	जन	मुखकर ।

कवि	स्वप्नों	से	मुख	पुनक्ति
नत	कहा	सिरी	न	साबर
स्त्री	बना	तिविर	ही	का
क्यों	न	हो	स्वर्भ	रुपांतर ?
सांस्कृतिक		प्रयोगों		की
मधि	पीठ	जन	मद	निर्भय
जन	समाप्त	सकें	युग	कवि
जीवन -	स्वप्नों	का		धामय ।

हम क्या गिरि छात्रों
 उन मन जीवन पर प्रति
 नर मय भाषना में ल
 हीमी मन ही मन उत्तम !
 जड़ मिट्टी में स्वप्नां का
 गड़ करें धार युग मूर्ति
 पात्रना हयें रत में
 होगी रत्न प्रकृति परीक्षित !

मुदरपुर - महा नगर का
 उषाकंठ - निगा मनाहर
 यह रत्न गाति बहि मन की
 गाधना भूमि हो उबर !
 मागृतिर पीठ हा जन लि
 नर युग दीवर की गित कर
 जनता जीवन मणो का
 र स्नह निमग्न नि रबर !

बगी मे बिपा गिरी की
 हम मज्ज भूम का स्वागत
 कर स्वा धाम पात्री की
 जन जीवन मगम मे ल !
 हेम एकमण्डु ! बाना बहि
 या रबर मागृतिर उत्तम
 भू तर नर युग बाण्ड हा
 दीनि हा प्राणा का नर !

जनता बिरिद बाण्ड तर
 भू रबर पत्र मा निरिध
 गाविन परिदित न निर्गित
 मा विन धारा निरिध !
 दीना ही व प्रवर मे
 मागृतिर मर्त हा मबर
 जीवन मय भू मणो मे
 ज्ञानमय मन्त्र मन्त्र ईवर !

इस समारंभ में संभव
 दे नरक स्वर्ग प्राप्तिगन
 कर सकें भवेतन से उठ
 नब भेतन में आरोहण !
 गाँवों के बाह्य नरक में
 धम्मकृत स्वर्ग प्रतर्हित
 नमरों के स्वर्गिक मुख में
 नर रचित नरक ध्वगुणित !

कैसे हा सार्थक जग में
 भू स्वर्ग स्वप्न जीवित बन
 प्रंतर धनुमब से प्रेरित
 करना हमको मुख चिन्तन ।
 सांस्कृतिक भेतना का नब
 भू पर करना भाषाहम
 जो रहे मुझ जीवन पप
 धतिकम कर युग मानव मन !

धार्मिक तार्किक धारोमन
 पीछे जाएँ जब, - सम्मुख
 सांस्कृतिक संवरण धार
 तब उज्जस हो जीवन मुख ।
 नृह धम वस्तु दुर्लभता
 हो भसे धेय पप बाधक
 पप बक्ति सामसा समधिक
 संस्कृत जीवन हित पाठक !

जन बेह प्राण मन को कर
 भू प्रीति मूत में गुणित
 वैयक्तिक दक्षिणों को कर
 सामूहिक रधि में विकसित
 नब विश्व चतना पट में
 हमको करना संबोधित -
 मंगम मपुपय जीवन का
 भू पर हो स्वर्ग प्रतिष्ठित !

प्राप्तन	युग	में	घाप्यारिमक
घारषा	पर	षा	जम घाघित
भौतिक	मूम्या	म	संप्रति
भू	का	जीवन	मषामित ।
जम	मध्य	दुमा	में नैतिर
गरयों	स	ध	घनुप्राणित -
तीनों	का	घतित्रम	कर नर
मांग्नुतिक	बुल	हो	बिचमित ।

प्रापी	वीरग	की	प्रतिनिधि
तप	योग	ज्ञान	में दृढ घन
पश्चिमा		प्रहृति	घन्वर
बिमान		माघमां	में रत -
हा	दाना	पन	ममगित
नर	युग	करता	घामत्रिन
पिद्	नम	की गुप्त	बिमा हा
भू	नृजन	बमं	में मूतिग ।

हमका	घदुर्य	पावर	म
गङ्गी	भू	प्रतिमा	बीदिन
जद	घरा	मानि	हा स्वनिम
घप्यारम	रिमि	ग	गमित ।
जद ? - सुण	बीर	त्रिममे	हा
ग्वारणापुर	त्रिम	प्रराणि	
जद ? - गुप्त	बीर	त्रिमग	हा
नर	रति	नर	त्रिम ।

बीहर	युग	मन	की	घ	पर
रचना	भू	गग			नबागर
मे प्रहृति		उररग			भौतिक
घनगङ्ग	जम	त्रिम			बमा भर ।
गाग	धम	टैमे			बिनर ग
पध	र	गुगा			पर पध घ
मुद	रचन		मूर्ति	बाना	नर -
नर	त्रिम		गग		रचन ।

चिद् बीज हमें बोले चित
 प्रस्तुत न मनोमू उर्बर,
 प्राण्ठावित चुसे किए बह
 गत संस्कारों के पुन बार ।
 रज मोनि स्वर्ण श्रीकृष्णों से
 करमी पावक तस्य स्मित
 हैस उठे तमस प्राणों का
 चेतना रश्मि से गभित ।

मानव प्राणा के तम में
 फिर बुने स्वर्ण बाठावन
 प्रमुदित हों इत्रिम पंकज
 प्राण प्रीतन्य विरण छन ।
 सामूहिक मू जीवन हित
 धाम्यारिमक निधि हो अर्पण —
 मानव । जीवन बरिमा स
 चिद् प्रहसित हो मू प्रापण !

निरखतम ईश्वर मित्रा स
 बाहर निकसे सुखरपुर,
 संस्कृत हो मानव पनु मुब
 विकसित हों मू पर पत सुर ।
 स्वर्गीय प्रेरणाधों से
 प्राणोसित युग कवि अंतर,
 संभाव्य खंस हो जय हित
 नव रचना मंगल का पर ।

मैं नहीं — चाहता मेरी
 हो चुकी कभी की मश्रित
 नव कल्प उतरजा मू पर
 निज कवि को भेकर मिश्रित ।
 हरि, महापुरण प्रभु प्रतिनिधि
 इष्टा से योग न परिधि
 कवि रह मरय जीवन का
 कर जाना गोभा मुक्ति ।

तारुण्य का रस भू प्रांगण
 मुद्रा का पूर नि मंगल
 मानव ही माय द्विधा भय
 वह छाड़ बन मयमय ।
 द्रव्य जीवन स्तर पर ही
 प्रात्मा का स्वर्ग प्रतिष्ठित
 नामूहिक भू पप ग हा
 उपयन मनुष्य का निरिषय ।

लघु धुपा काम क लग घर
 हरि भूम कृत में विर छिद
 भू जीवन निया निगा म
 कुछ बड़ा पटा कुछ उड गिर ।
 धारन प्रम पथा पर
 पब माप प्रबाग निगर
 दाना समप बिकमित बहु
 मुन्दर में बन मदरनर !

हम रहे नाम ही रत्न
 गया नाम मात्र हा ईश्वर,
 प्रभु रूप दयना लमबा
 भय रब जन मू निक मन्दर ।
 हम नाम रूप क गायन
 तान बान में धार
 पर बे ही धार धार में
 रत्ना पर नाम निगर !

पाव कर बिज मलय को प्रा
 बना पागोला रूप धीर
 स्वल्प पागलिया में दे
 लिये गोखो ग मू बिदु लीर ।
 जीर्ण पुग पगाव बन मे तीर
 गुंजा रजत बरत मति मोर
 मरणा बी दी गोख मंग
 मरुत का ति धारुत नर धीर !

मधु स्पर्श

घामो खड़ा सँग बैठे
 युग मनु प्रसार पर सङ्घर,
 यह प्रेम मोक्षदा जो धर
 चमती गिबरो से भू पर ।
 समरक्ष जड़ बेतन के लट
 प्सावित करती जीवन बति
 लीटा लामा मानव को
 यह सबे त्रिपुर की परिणति ।

तुम मन स्वर्ग के त्रिस्वी
 नव कविता बनित्ता के बर,
 फिर भडा कर से नूतन
 बन सोक रचा दिग् सुहर ।
 नव युग छिप घाँस मिश्रीमी
 लो बीस रहा जन मन में
 मधु श्रुतु का शोभा पावक
 सब दीड़ रहा बन बन में ।

मुहु पुन रोह मतपत्र का
 रेशमी परिच्छद कोमल
 मौरम सार्ते स्मित मुख पर
 मिय कनक मरद धमक बन ।
 बहु फिर नवीन जन भू की
 धाकारा का गोपन धन
 प्राणों की इप्सा का रवि
 भू के गोपिन का शोचन !

स्वप्नों का जगि घाता की
 रपहरी ठही पर गोमित -
 बन नब वसंत कबि का उर
 रगता रस ध्यबा मपित नित्र !
 धनुराग - धनि तुमो म
 भू संबर उर पर धरित
 कसिया मव मपटा क हस
 पैनाती दृष्टा मोहित !

मन मम धनिमप नयन धब
 दिव - धी मागम धानिमन
 गजरा प्रिय मुग्धा मी मु
 पीरादत गंध ममीरण !
 ज्वाला बी पैगदार्द से
 जीवन दृष्टा ग विद्रुम
 बूम बटरीमे टमू
 रंगा वा धर जानाहम !

कसियार्द नब मटुमारी
 महे धरव मूडु बट्टम
 बन पूमा बी गथा मे
 मुक्ति ऋतु मागन धयम !
 बग धाम्न मजगी वा मुग
 मघ पीने नीत मप्रप टन
 गाथा रग पावर मे जम
 गाने पागन कबि बायम !

कबनार कनी रंग मीनी
 उपगी निमन जाना पर
 बला बानी बिगिन उर
 मर बीन कवि मयु पावर !
 बीना निमर्ष धवन मे
 उमरा जामा निय कबान
 जन मरवा मे जिना म
 दिवमा कबि मगुन मोन !

वर्षर भू से मामब ने
 किस भाँति किया संवर्षण
 किस भाँति सम्पत्ता संस्कृति
 स्थापित की - समस्त सका मन ।
 किस भाँति अंड भू भीषण
 हो मनुष्य स्वर्ग में परिणत -
 युग स्थितियों से मर्माहत
 रहता वह भव चिन्तन रत ।

जिस भारत भू के सिर पर
 बिन्दु शुभ्र ज्ञान मणि घोषित
 बन भीषण बह्नी युगों से
 जय हुआ गर्त में मञ्जित ।
 भू को हरिह कर प्रभु पर
 आस्था मर सी ऋषिजन ने
 ईस हो उस आस्था का
 उपयोष - सोचता मन में ।

पाँचों की वैश्य निष्ठा में
 भव रहता वह संतापित
 अघरों की रत प्रिय मुरली
 बेंसती पहि ली अभिघापित ।
 पतझर के उर पंजर से
 नव फूट रहा मधु पावक
 निज स्वप्न भीड़ में गाता
 बधि का मन - बन पिष्ट तावक !

शरते मरकत प्रांगन में
 उड़ साय सहस्रों, तब रत
 समता कधि ली सहपाठा
 विधि मृष्टि बन्ना का धँसल ।
 बिछ पाठी नीम तसे बँद
 स्वनिम मर्मर की चारद
 बन तह रेखा छवि बनती
 छन स्वर्ग चाँदनी, भू पर ।

कहता बशी का कबि मम
 खग मही प्रनम नर क्रोमस
 वरसाता मधु रस ज्वासा
 बिजसी वा भाबुक बादस ।
 स्वर्णिम प्रँगार - जिसके स्वर
 फँसा रस सपटाँ के पर
 व्यासे शोभा पापक से
 भुससाठे हृदय दिगंतर ।

कहता बह प्रगि नयन यह
 मधुन्दु शोभा का उपबन
 भव मर्य वेदना रचना
 मू प्रणम पतना प्रांगण ।
 प्रो क्वार पावक के गिरि
 स्वर्णिम ज्वासा से घाबूठ
 तुम मानव क घंतर में
 चलते रहते निस्वर नित !

श्री शक्ति प्रीति रस मुख क
 नव स्वर्ग बूठ तुम निश्चित,
 मू स्वप्न नीड़ बो करते
 नव स्वर्ग रश्मि से दीपित ।
 श्चु वैभव करता उसक
 घंतर जीवन को जापूठ
 सपते तमस्त अङ्ग पतन
 प्रव एक सत्य संभावित ।

मानंद प्रीति शाशायन
 मधु घाग्मा ग उग्मवित
 नव मू जीवन स्वप्नों म
 हा उठता उर उठैवित ।
 तब उस स्वरण हो माना
 निव जम भूमि वा घपस
 नित जल निगम बिभव वा
 बरमा करता मध मंगम ।

बर्बर मू से मानव ने
 किस भाँति किया संवर्धन
 किस भाँति सम्पत्ता संस्कृति
 स्थापित की - संमत्त सका मत्त ।
 किस भाँति बंध मू जीवन
 हो मनुष्य स्वर्ग में परिणत -
 युग स्थितियों से ममहिष्ठ
 एता वह सब चिन्तन रत ।

जिस भारत मू ने सिर पर
 बित् दुःख ज्ञान मयि लोभित
 बन जीवन बही युगों से
 मय दुःख गर्त में मन्वित ।
 मू को वरिष्ठ कर, मधु पर
 भास्वा भर की ऋषिजन ने
 कैसे हो उस भास्वा का
 उपयोग - सोचता मन में ।

पाँचों की ईस्य निष्ठा में
 धन रहुता वह संतापित
 घघरा नी रस प्रिय मुरली
 रेंवती यहि सी अभिज्ञापित ।
 पतझर के उर पंजर से
 नव फूट एता मधु पावक
 मित्र स्वप्न मीड़ में पाता
 कवि का मन - बन पिक सावक ।

लखे मरकत प्रांगन में
 उड़ ताब सहस्रों तब रस
 नगला कवि को सहस्राता
 विधि सृष्टि कला का धंजन ।
 बिछ जाती नीम तसे कैंप
 स्वधिम मर्मर नी बादर,
 बन ता रेखा छवि बनती
 छन स्वर्ष चाँदनी मू पर ।

कहता बंधी का कवि मन
 खग नहीं घनघ नर कायस
 बरसाता मधु रम उवासा
 बिजली का भाबुक बाण !
 स्वर्णिम धौंगार - जिसका स्वर
 फीना रस सपटों के पर
 प्यासे शोभा पायक स
 भुसभाते हृदय निर्गत !

कहता बहु घनि शपन यह
 मधुशुद्धु शोभा का उपवन
 भव मम बहना रचना
 धू प्रथम चतना प्राण !
 धा क्वार पायक क गिरि
 स्वर्णिम उवासा मे धाबुत
 तुम भावक क घंतर में
 जमते रहते निस्वर नित !

धी शक्ति प्रीति रम मुक्त व
 नव स्वग दूग तुम निरिचत
 धू स्वप्न मीड़ का करत
 नव स्वग रवि म दीपित !
 श्रुतु वैभव करता उमक
 घंतर यौवन का जामुत
 मपत समस्त जड चतन
 धव एक नय मंजामिन !

धानंद प्रीति शोभास
 मधु धामा न उमनिन
 नव धू जीवन स्वप्ना मे
 हो उठना उर उद्विग !
 तव उम स्मरण हा धागा
 निव जय मूढि का घंफम
 नित जनी निमप विभव का
 बरसा करता मधु ममन !

वह स्वर्ग का
 वा हरित शुभ्र विक प्रांज
 शोभा की सफरियों सैप
 शीता कवि का प्रिय बचपन ।
 जब स्वप्न ज्वलित हो उठता
 मधु भामन से बन प्रांतर,
 जल रंगों की छावाएँ
 भर गेठी संघ बिबंठर !

बहुता उसके प्राणों म
 संगीत स्वर्ग भू भावन
 साबन्ध लोक कुम पड़ता
 घंटर में सपत्तक लोचन ।
 चिच्छिन्न रोमिस पंखों पर
 उड़ता कसरत संबर में
 गाते घटमुख गिरि बन जब
 बिहणों के बहु रंग स्वर में ।

बिरि कोपल बन भूमों सैप
 वा उठता उर का स्वन
 तन्मय रखता घंटर को
 नीरव निरुप सम्मोहन ।
 बिस्ला उठती बट्टानें
 सीन्दर्य स्वर्ग वा निस्वर,
 कैंपठा रहता सिथिबों पर
 रंग रंग का किसलय मर्मर !

तुमसे कवि कुमुमां के मुख
 जल रंग छटाघो से भर
 हिम पवन दुसाता संबर,
 जलि किरण पुड़ाडी घंटर !
 बिस्मय विमूह रहता वह
 जब पत्तक खोलती शीपम
 पुनकों से नर जागा बन
 के रूप सृजन के हों क्षण !

स्वप्नावस्थित मा सुनता
 वह रस धारा की कस बस,
 जो पुष्प शिराओं में वह
 रंगती पक्षियों के दस !
 मुकुटों व धिसने की ध्वनि
 सुनता उसका समय मन,
 बज उठती स्वप्नित पापस
 उड़ती जब सौरभ नि स्वन ।

भीरो की कुजारे सुन
 रंज उठते कमियों व मुख
 रस भुवनों स पक्षों फल
 गार्ती धम्मरियां उमुख ।
 शरणा व फेनों में हंस
 हिम सड़ियों से मर्गों भर,
 फिरती शिखरा की परियां
 मुरझनु छाया सिपटा कर !

मधुच्छतु दिशि बज पर्वत का
 चेतना पवास से छू कर
 रनों मंघों गूजों का
 रस पर्व मनाठी मुबर !
 पहरा उठत गृहों पर
 सौरभ पराम के केतन
 मुकुटा के मुख परिमल का
 बहना हिम प्रचित गभीरम !

बिडुम इंगुर विमलय व
 घोसते सिनित्र नव सावन
 नीने पीने दीपों में
 जस उठत प्रपन्नः तद बज !
 बहनी मग्गन बाटी में
 मानो की पतिम कस बज
 लागे मुखरित शिखरा ग
 हीरक जस निरंतर उग्रम !

निर्बन्ध	गीतम	डासों	पर
सतरैय	छायापों	में	हम
संभ्या	फहरण		स्वर्षाचम
होटी	क्षितिजों	में	प्रोसन्न !
कैपठे	रूठे	मर्मर	भर
गहरी	छायापों	के	बन
हरियासी	के		सागर से
तद	क्षिपरोँ	की	मन प्रतिक्षण ।

उस	हिम	प्रदम	में	रूठती
मधुच्छदु	साखत		श्री	शोभित
शत	गंध	बर्ष	रस	गुञ्जित
मुकुञ्जित	मृदु	भंग	उर	पुनक्ति ।
सौन्दर्य	स्वर्ग		बहु	उसके
जिम्बु	मानस	में	बा	धक्ति
धानंद	स्वर्ग	को		उसकी
घात्मा	को	करता		प्रेरित ।

निःसीम	नील	पथी	सा
बैठा	सबठा	चौटी	पर,
सतबन्ध	छाया -	बापों	के
उमरे	रूठे	रोमिम	पर ।
बन	रात्रि	भर	गिरि
दिम्	हरित	हृप	रोमाञ्जित
सामग	पशुघों	से	भाटे
बीड़ों	के	तद	बन
			पुञ्जित ।

सिम्हूरी	रुचि	पावक	के
ऊषा	मदि	पट	भर
पाटण	प्रधान	क	निर्भर
गिरि	शृंगों	पर	बरमाही !
उस	नीलारण	किरणों	के
श्री	स्वर्ष	हरित	प्रांतर
मन	स्वप्न	तरी	पर
तिष्ठा	गोत्रा	सागर	में ।

उसके घंटर स्पण सा
 नाभित सम्मुख हिम पर्वत
 स्वर्गो मुख श्रुता उसकी
 उर प्राकीक्षा को प्रबिरत !
 प्रपसक रूठी प्राँवें नित
 उर में प्रवाक भर विस्मय
 उस शुभ्र भाँति सता में
 इबा रूता मन लग्नय ।

जग में न सत्य या बैसा
 शाश्वत प्रसीम ध्रुव प्रलय
 बाँधे हो जा भू नम को
 धानिमन में मंगसमय ।
 हृदिय मन को प्रतिक्रम कर
 वह हो भू का प्रायेहण
 उन स्वर्गिक शृणों में जग
 वह तम हो उठता चेतन !

दुगम प्रसीम प्रसि पप सी
 उठती गिरि भेणी पाठी
 धरती निरबस हिस्मोनिठ
 नम को छूने को जाती !
 उस दिग् विघट्ट गरिमा म
 संस्पशित उसका घंटर
 कर सीन हो गया जाने
 शाश्वत शोभा में निस्वर !

निद्र में नगध्य या उसका
 जीवन - बदि का या घंटर,
 रम गुह्य मूर्ध उर भीतर
 बरमाता स्वर्गिम निर्धार !
 गिरि की प्रपन्नियों के संग
 बीने विमोर बय क राम
 मयु स्वप्नों की छाया में
 शोभा - कर पचड़ या मन ।

वीरनोम्पेप			घनवाने
प्रतिमप		बो	गए मोचन
कब	मधुर	प्रकृति	होमा ने
हर	सिखा	मुग्ध	नारी तन !
कब	चाँद	बन	मया प्रिय मुब
बिरि	बिबर	उरोब	मनोहर,
पुपु	सैम	मास	बंभारै
वी	हृष्टि	तटी	कटि सुंदर !

उबते	हिम	बग	बंभन	दुम
प्रधकुने		मुकुल		परचाघर,
मुख	स्वास	धार्	बन	सौरभ
नब	प्रथम	बचन	पिक	के स्वर !
रब	पीठ	धनिल	धंभन	उड़
करछा	प्राणा	को		पुनकित
पिरि	खोत	रुहने		बनते
स्वनिम	नूपुर	कर		शंभु !

ऊवा	नबशिब	तज्जा	में
सिपटी	धब	गिरि	पर पाठी
संध्या	इमते	मुडु	तम की
रबामस	बेनी		सहृष्टी !
देखा	कबि	न	होमा का
भावाकुल		गीर	सरोवर
मुग्धा	बय	ने	मधु मास
स्वनों	के	कपित	बर बर !

बंपक	धर्मों	की	बंभन
सेटी	हो	सपित	मनावृत
पीबन		प्रवेण	बे बहृती
मधु	स्वप्न	पुलिन	बर प्वाबिठ !
रब	मुपठाँह	सा	कोमल -
तीना		तामध	तरन जत
पुपु	पून	दूम	जबनों स
सरक	ता	सेनिम	धंभन !

उज्ज्वली खबडी सहरोँ का
 ही गुप्त हुँम बज्र स्वस
 कोमल मृमाल की बहि
 उत्कृष्ण कमल मुख मदन !
 नव रक्त पद्म पैवुरी - मे
 मृदु घघर तुहिन मुक्ता स्मित
 खब माता मृच्छति बटि छट
 स्वनिम काँधी म मंहउ !

धति मुख धंग सा जल में
 खब धँबर सातसा बिल्लम
 श्यामम निरधेउन तम के
 शीन मोहित पावक हम !
 बह कूद पदा हउ धेउन
 रम धतम रूप आगर में
 हाता सहरोँ पर उठ गिर
 मधु ज्वाला भर धँतर में !

रति की फूमों की शय्या
 कर नकी म मन को मोहित
 बह स्नेह मृम्य रज तन की
 लख दीन सिखा बी कँपित !
 लख रूप प्रेम हित तुमका
 होना मयूर्ग मयपित
 तुम शशाहीन छाया - मे
 कर नर रह मजन जीवित !

धंशी मोभा प्रमी बा
 मोभा जो घामा बन्धित
 तिमो पट में धामों का
 तम पावक गिरि धरगुठित !
 मृग्या धार्य उयका मन
 रग ज्वाहन में कर मन्धित
 कर विनर गर् छाया की
 रजनों की बीबी में नियन !

फूलों की केंचुम सी स्मृति
 वह उर में छोड़ भयानक
 नापिन सी सरक गई हुत
 गुह्र को बैस उलट भयानक !
 वह नहीं जानता या ठक
 क्या भावों का आकर्षण
 क्यों प्रणयाभ्रुत हलाहल,
 मुहु रूप स्पर्श ग्रहि बंशण !

जीवन की जल जल सरिता
 वह हुई मोड़ पर मोक्षस
 स्थिर प्रेम संधान न पाया
 घोषित इच्छा को बंधन !
 उर में उस प्रथम प्रणय का
 बुझता स्मृति - शन कर धारण
 भीते नम बिरही कवि के
 जाने कितने युग से क्षण !

बेबी भाबी मुन कवि ने
 धू राग चेतना की स्थिति
 बेला बोधा का विष फल,
 स्वर्गीय प्रणम की प्रप इति !
 जग में एकाकी जीवन
 समझा उसने धेयस्कर,
 जब तक न प्रेम का पंजम
 उदरे करम से अमर !

नर नारी दो धुवनों में
 हों बंटे मुह्र विस्र जप में
 भावों के स्वप्न पक्षि की
 इकमा पड़ता पग पद में !
 वह साध न पाता कैसे
 मानव का सोमा प्रिय मन
 चरितार्थ करेदा नू पर
 चित्तप ना धडाड रोहण !

अह	प्रेम	सफरण	धम	तव
बन	सका	न	जग - भू	जीवन
रज	तन	की	दुर्बलता	पर
आश्रित		उमका		मूर्खतावत !
बह	सगता		आहुत	उग्नन
पय	पय	पर	आत्म	प्रताडित
नैतिक		निषेध	बिप	पीडित
सौन्दर्य		प्रेम	हिन	नाशित !

सगता	उमका	तम	बबमित
संकीर्ण	धरा	उर	प्रांगण
भू जीवन		बर्जन	म मृत
जन करते		आत्म	पमायन !
इंद्रिय	कुठित		बपिन मन
पर जीवन		द्वेषी	निश्चिन
मिथ्या		आदर्शों	में रन
गन रुड़ि		रीति	पर मरित !

युग	युग	की	मृत	छायाएँ
प्रेता	सी	जग	में	पूजित
पर निन्दक		घर		निरत मति
सोपे	मूर्खां		में	पोषित !
आवेश	नया		उठ	मन में
भरता		मत		बिद्युत् दहन
धुमड़ा	करता		घंतर	में
मब	मानवता		का	वीरन !

सगता	परि	निज	घंगर	पर
बह	पटक	बधिन	धरा	पर
धर्म	जाणगी		घरनी	कंप
नम	क	मीमर	में	दुम्नर !
या	बह	हट	बन	अबर म
टकरगा		मिर	डंका	बर,
क	जाणगा		नम	का उर
मर्बापिम	प्रवाण		भू	में मर !

बग	स	बिरक्त	उसका	मन
घपने	ही	में	रूठा	सम
निष्ठ	दिबा	स्वप्न	दर्शन	में
भावुक	कबि	रूठा	तम्मम !	
देबा	उसने	बहु	बागूठ	
प्रथ	किसी	प्रतीन्द्रिय	जय में	
बाँदनी		बहु	बरसाती	
सौरभ	भरंद	पम	पग में ।	

हास्य	बसंत	का	ग्रह	बहु
स्वर्गिक	मधु	जस	स	सिधित
मोमा	बरफा		पर	सेटा
प्रानंद	बहु		रस	मोहित !
स्वप्नित	छायाओं		के	बन
मब	भाब	घनों	स	मुबारक
संभ्या	झपाएँ			फिखीं
घामा	घनों		में	मूठित ।

सपीठ	तहरिया		में	उठ
जीवन	घारा		कम	बहुनी
मै	मांस	प्रीति	के	मूठ की -
नौरम	समीर		से	कहती !
हामाएँ	नित्र		प्रथम	में
रदि	मदि	किरमें	कर	गुफिन
परिमम	पराग		मूठों	के
पट	बुलती	जन	मू	क हित !

घंघा	क	पर	फैसा	कर
पुर्ता	क	रंग		घंगडात
मुप	भूम	भूम	मधु	पी घलि
शिम	का	सरोज		सुमाते !
वीवन	मरिजा		के	ठट पर
जीवन	मधु	बग		बजाता
बाँनी	मया		हर	पाती
मारन	मुन	नहीं		पचाता !

द्वित्रय जगत् ॥ १ ॥ ॥ ॥ ॥
 देवत मूर्धन्य जगत् साधन
 किरणों व रंग से किरणित
 पतना पृष्ठ पर माहन ।
 बहु अभिष्यक्ति पाने का
 हा रका श्रय पर नूतन
 अद् रूपों म सुदरतर
 नव उपानि रूप बहु शोभन ।

खग पर खग मुमन मुमन पर
 विभ्रत छायामा विभ्रित
 विधी भगता जग बाह्य
 भीता श्री सुपमा मंडित ।
 बहु प्रीति हृष माभा व
 मधु स्वप्न माक से जीवित -
 गन गरी घाहृतिपा बी
 सुदरता म या परिकृत ।

गाहा प्रकाश भग उमने
 रति रचना रम तमय मन
 रामाशित हा उठते धंग
 मुष्ट तदित् म्पत् म प्रतिग्रण ।
 भरण पावच मधु निमर
 शैवना तन नून मा भर पर,
 नाशय र्भग मुहुनित्र हा
 भर दना प्राय रिमतर !

महमा उमने बना दया -
 पुग भू बी शरण छाया
 पत नीय रक्त बर्गों बी
 फेंकानी मायन माया ।
 इत यक्ष लल मरों मे
 मुग्धाया व शाधा तन
 बापे धूर विजुदर
 शाने जम शिद्द मग्न पन ।

सिंहकारें		ऊप्या		घाँधी —
कैपता	तपता	हृत्	तम	मन
हों	धय	धंम	से	सिपटीं
मर	मन्नि	रज्जुरें		भीयज !
वत	रीढ़	मन्म		इच्छारें
धी	रेंग	रही	कीचड़	में
बैतना		वस	मूच्छि	भी
बिप	फन	की	फेनिम	मड में !

बे	सर्प	रस्खियों	से	बट
बन	गए	भयानक		मखगर,
पो	जग	की	मज	माबक खा
पकड़े		बे	मुज	मव में भर !
धुँबे	महि	ने	कबि	के धेंग
बीचा		बाहर		इन्द्रिय मन
मिज	उमव	पाबक		फन से
प्राणों	में	भर	बिप	बंगान !

उस	मरिह	वश	उबासा	मे
रति	बिह्वस		उसका	घंठर
लोटा	करता		तोमा	की
हरियो	में	वृथित		निरंतर !
उसको	न	जाठ		पा कैने
मुख	की	प्रतृष्टि		पर पा जय
माधुस		पजाति		पविर्नों में
घोने	बह	मन्		का साधव !

दुबम	पा	जन	भू	का मन
जस पाठ		न	बह	सह पाबा
नव	मन्नि	पाठ	पा	दुर्बह
भू	स्वर्ग	उतर	वा	घाया !
रस	ज्योति	प्राप	उम	में धुम
सहृषी		सपटा		में मांसस
पबबैतन		उबासा		गिरि का
बनना	पा	जनन		गीतम !

स्वर्गीय प्रीति का मुख था
 मू पंक्त सना भी बिरहिह
 शोभा बंदी कोने में
 छाया सी पड़ी उपेक्षित !
 उपहास द्वेष साँझ भय
 वासना रूप का परिणय
 प्रबलोक उसे हो धाया
 जग जीवन के प्रति संगय ।

रत्न गंध पंक्त में तन के
 मन पया गुच्छ उसका मन
 इन्द्रिय भाकाँसा मू पर
 बन गकी न पी रम पावन !
 भूमा उमकी पाँवों में
 गत वृत्त प्रेम का भीषण
 भीतां में पुने गए जब
 बहु निम्पराध प्रथमीवन !

नख प्रेम जम जब सेवा
 मू पर, - कहता उसका मन
 स्वयिक भी शोभा हीपित
 जब होगा जग मू प्रीमन ।
 मुंदर होगा मुंदरतर
 नय प्रीति पूर्णतर, निर्मय
 मू मानम धारोहध कर
 धानोचिन हागा निश्चय !

बहु पूर्ण प्रेम शोभा का
 प्रेमी होगा रह लग्नय
 रत्न तन मे नहीं बंधेया
 जन मू का हृदय घनामय ।
 रम भूमि छाड़ पन्ना कधि
 मन के उमर में भीतर
 चिन् गविन घुनी ऐसी ग
 मति ने ब गुल्क जरी सज !

वह पीठा घंतर बग में
 पड़ योन ठंठ पड़ दर्शन
 मानस गूठल्य नास्तों का
 भाया गभीर विस्लेपन ।
 विज्ञान बहिर्बम का तम
 शीफिट करने में था रठ
 बन भू समाज रचना का
 समब था मह्य भविष्यत् ।

मुग स्थितियों का कवि उर को
 धावात तदा था निर्मम
 शीबते घण पर चलते
 बाटिप दुःख भय तम भ्रम ।
 पचराए बत भू मन का
 करना था नब रपातर,
 बीसे हो शोभा मंडित
 मुग मुन का जीवन बंडहर ।

नभीर प्रसन्न था सम्मुख -
 बड़ अम्पासों में रठ बन
 बहु धर्म कर्म में अंडित
 गत नब का करते पूजन ।
 बीने चलते बन भू पर
 मन हो प्रस्तर मुन पाहन
 विज्ञान सुजन के बरमे
 था बना धर्म का माहन ।

शीते कवि को यति तापन
 नीरिक बस्तों में भूषित
 संयम तप के स्तंभों - से
 मुघ बिरस ताति स मस्ति ।
 बटु स्वर्प दूत उतरे धिर
 करणा प्रेरित बन भू पर
 हों महा पुरुष प्रजा सिमत
 केसरी श्वेत नीतादर ।

धन स्वप्न नमीर भ्रम में पा
 स्वर्गिक समीप प्रबाहित
 स्वर्गदिग पीठ हृत्ति तित
 धामाधों मे बिनि मंहित ।
 पावक कपोत से कवि को
 उन स्वर्दुर्गो न छू कर
 दुत उड़ा दिया बिद् नम में
 धामोक जहाँ स्तर पर स्तर ।

बहु शत्रु शांति क पर मा
 तात्त्विक प्रकाश का प्रवर
 विन्मय जीवों मे कुमुमित
 मगता का मोन मनोहर ।
 पद रहित पून स मुदर
 मत्कर्मों के ग्रह मुरमित -
 शीतल का दृष्टा पावक
 पीपुष स्वाद से विरहित ।

पूजा क पुष्पो से से
 शपित बन के धीवन मन
 ईराम्य ज्ञान निधि प्रेरक
 तप रसाग पुष्प पैतृक धन !
 भाषा कवि को प्रज्ञा का
 बहु बीप्य मोरु घंत रिमत
 या जहाँ धगम धामा का
 व्यापक दिन सप्य सधहित ।

निर्दय विरल - मृ पर बहु
 विपरा धर्मय घंत रिमत
 दूम मूर धीव मन भीतर, -
 हॉटिय नृगों पर कुमुमित ।
 साधना निरत रूना नि
 धाम्यवन मनन का जीवन
 धन गिधरों पर करता
 उर अन्ध प्राण धारोहन !

यह ध्यान भूमिमाँ मन की
 कर पार, ज्ञान नभ में सय
 देखाता, मुक्त धात्मा का
 यह शुभ रजत नभ बिगमय ।
 स्थिर, राजहंस सा उड़ता
 सित स्फटिक शक्ति प्रंबर में
 बीजा उसको हिमवत् सा
 शैतन्य सोक प्रंतर में ।

यह बिद् गिरि भी सब जर की
 प्राँवों से हो प्रतर्हित
 प्रविगत अक्षय प्रामा में
 सय होने का वा किचित् ।
 उठने को से पू से पय
 होने को प्राण समाधित
 पामा कबि ने अपने को
 अप्सरियों से अभिनन्दित ।

कब सिद्धि स्वर्न हंसी सी
 या पास हुई दुप प्रोसस
 स्मित अम्बियाँ सुर प्रेरित
 उठती बिद् नभ से उज्वल !
 भी लीला सज्जा सज्जा
 मृदु हाव धाव कर सुखकर
 साकार हुई पुन सम्मुख
 मानस विभूतियाँ तन धर !

रस प्रीति रीति स्थिति प्रामा
 लीला रति धृति स्मृति प्रीड़ा
 लनिजा अंगिमा मयुत्पिना
 करती सदेह मञ्ज श्रीड़ा !
 नयनों में पय सहस्रता
 लीला वा कपित धर सर,
 नाथा - पुट में भर जायी
 शौरभ प्रनाम स्मृति को हर ।

बहुता	सगीत	अबग	में
रसमा	में	स्रोत	अमृतमय
रोमाञ्चित		मुख	स्पर्शों का
भरता	अंतर	में	विस्मय !
देखी	कवि	ने	विषयेन्द्रिय
स्वर्णिम	प्रकाश		स भुपित
भ्रान्त	मुवन	पी	के सब
स्वर्णों	की	बेगी	मोहित !

मधु	छत्र	रसों	की	मादक
प्राप्तों	की	सतत	विकसित	
मणि	द्वार	भाव	सोचों की	
विष्मम	पावक	से	विरहित !	
कोमल		मुहुहित	अर्थों का	
बिम्ब	उठा	उपा	में	मधुवन
सौख्य	के	सँभ	तनु	सुपमा
उड़	सौरभ	सी	भरती	मन !

मादक	अवयव	शोभा	पी
मद	मोहित	हो	जाता मन
मुहु	स्वयं	अपक	छवि बन में
खो	जाते	अस	से सोचन !
अपोस्ना		सा	पल स्वर्गापन
सिपटा	मुहु	वेह	लता पर -
पूतों	के	किञ्चरों	से हो
मर्या	मरंद	रम	निर्भर !

अपमक		चितवन	बिहसती
मव	मीम	कमल	मानस में
स्मिठ	अघर	सिपे	सासी से -
जो	भुमी	अमृत	मधु रम में !
माती	की	तरल	सड़ी सी
बिघरी	कम	हँगी	चितित्र में
रस	हाव	भाव	अभिसिञ्चित
पूटे	अंकुर		सनसिञ्च में !

मृगधा	शोभा	का	जग	बह
इद्रिय	पावक	का	सागर,	-
निस्वस	मांघल	विस्मृति	में	
तन्मय	छटा	कवि	प्रंतर	!
घो	कुसुमित	प्रयो	के	वन
कहवा	उठका	मन	प्रतिभन	
हुम	विष्ट	संसा	के	बह,
निरतित	बिचमे	धू	जन	मन !

देखा	कवि	ने	मृद्	तम	से
छवि	रविम		फूटती	मास्वर,	
सापों	की		केंचुलियो		में
सैमझाती			नारी	सुंदर	!
बासना	गीत		मेकों		में
स्वयिक	धुरधनु		बिक	सबिठ	
प्राणों	के	अग्नि	कमत		में
बैठन्य	भंग		मधु	सहित	!

देखा	कवि	ने	विस्मय	हृत्
धी	इंद्र	बाइ	बुग	सम्मुख
रोहित		पावक	में	सिपटे
मेकों	में	रिमल	बलि	सा
घाबों	के	घालोकी		का
विग्यभि	फिरीट		बा	गिर
संवार	कुगुम		रज	रंजित
तन	उत्तरीप		बृम	सुंदर

प्ररजा	रंजिम	धी	कर	में
पधियानम	का	स्वबिब	रज	
जो	धूम	बोह	सिचरों	की
बिस्तृत	करटा	जन	मन	पव !
स्वगिक	कुनुजों	शी	देची	
ने	पुनोमया	वा	रकुडि	जन
बाह	नित्र	बाए	मुत्र	में
दीए	में	बिघन्	बंरज	!

बोला कवि उत्तेजित हो
 तो यह सुरेन्द्र की माया ?
 रच छाया मृष्टि मनोहर
 जिसने मन को भरमाया !
 जो धरा स्वर्ग क द्वेषी
 संवरण करो निज विभ्रम
 में रम प्रकाश का प्रमी,
 मैं छीम बुद्धा मति रज तम !

मधु काम तुम्हार सहचर
 जो बरसा पूर्वों के मरु,
 बेला करते यदियों के
 चित् मूढम भाव रज धर !
 तम के दुःसह पर्वत का
 मानव निज निज तिर पर धर
 तपता ऊपर उठने को
 तुम जमे पकड़े धू पर !

पचासन बांधे बिस सा
 कृत ध्यान मूष - साधे स्वरु,
 यह दुरासोह चिद् गिरि पर
 चढ़ता तज प्राप्त मन स्तर !
 बिक्र जो धू जन के दोही
 उधरी विमुक्त धारमा पर
 इन्धि लम्भोहल बरमा
 तुम गुण बुद्धि लेने हर !

बोला बासव मुमका कर -
 यह नरप नहीं जो माधक
 मैं नहीं मन्त्र बिदुषी
 या धरा - स्वप हिन बाधक !
 मुनियों की दन रुबा तुम
 निजर शुभ - मे दुहृणने
 धू - जन बनि मन् धमन् को
 तन् कहने नहीं धधाने !

मुझको पुष्प, तुम कवि होकर
 जीवन बर्बन से पीड़ित
 तुम व्यक्ति मुक्ति के प्रेमी
 तम भ्रम रत मून्य समाहित ।
 यह सच मैं मुनियों का मन
 हर मून्य ब्रह्म से बाहर
 भू स्वर्ग बसाने के हित
 भाता प्राणों के स्तर पर ।

मैं दिव्य मगस — इन्द्रिय मन
 प्राणों का सावत ईश्वर,
 मैं धरा स्वर्ग का प्रतिनिधि
 बिह्वेप भूजा से ऊपर ।
 सात्विक विभूति में सिपटा
 धन मुझे उपेन्द्र बनाकर
 कवि मचते मध्य भुगों से —
 जीवन बर्बन से बर्बर !

मैं त्रिगुणातीत — धरा पर
 नभ भी लोभा में मूर्च्छित
 जन जीवन स्वर्ग बसाने
 करता प्रबुद्ध को प्रेरित ।
 कास्पनिक मुक्ति कामी बन
 तुम धारम मून्य में हो तय
 गत भुग क ऋषि मुनियों से
 सोचते प्रकृति पर यह जय ?

जीवन का ध्येय नहीं यह
 मन ब्रह्म रंघ से उड़ कर
 लो जाए रिक्त गगन में
 खप ना झुमता यति के पर ।
 मैं जन वरुणी का प्रेमी
 तुमसे कहूँ धाया कवि
 नित्र प्रतिभा पर पर धाया
 तुम धरा स्वर्ग की नभ छवि !

यन्त्र ऊपर उठ पाए तो
 नीचे भू पर स जाया --
 शिखरों क स्वर्गोत्थ स
 नव मानव लोक बमाप्नो ।
 प्लुत स्वपिम इन्द्रिय पावक
 रम अंतर में सचित कर,
 मार्जित संस्कृत जीवन का
 भू स्वर्ग रचो मोक्षोत्तर ।

पीढ़ी पीढ़ी भू जीवन
 कुसुमित हो नारी नर में --
 विशसित हा नव मानवता
 शिब सत्य रूप सुंदर में ।
 गत मूल्या में गत अद्वित
 प्रत समग्र हा जीवन
 शैतना शिखा बाह्य बन
 भू प्रीति प्रमित हो जन मन !

ऊपर क सूर्पोत्थ स
 नव भू जीवन कर निर्मित
 बहिरंतर संयोजन भर
 तुम गढ़ा मुक्ति जन जन हिन !
 पुन अरुणादय पावक हा
 इन्द्रिय द्वारों में वितरित
 रश्मि संस्कृत जीवन नामा
 रश्मि धया में मघ मुनुमिन !

जन भू विश्राम पथ में फिर --
 धनगढ़ प्रनीठ छाया भर
 भाषी संवन में रक्षित
 जीवन का स्वर्ग मनाहर ।
 तुम चाहो गत इष्टा स
 हा मजन बिन्दु नम में सप
 नव मानो मानवता का
 बह भू पर पार पगत्रय !

मू जीवन के प्रश्नों का
 यदि समाधान वह - मति भ्रम
 वह रिक्त नृपारम्भ उत्तर
 चित् ज्योति नहीं - उबसा तम ।
 मोटो - मड शुभ तिमिर में
 लोपो साधक बन निष्कम्प
 इसको प्रकाश मत समझो -
 वह भाववत गति रचना प्रिय ।

जो मैं तुमको देता नव
 रस पावक स्वर्णिम शतदम
 नव मू मानस इन्द्रिय स्मित
 चित् किरणों का संतस्तन ।
 वह मूढ़ प्रेम ही जग का
 चिर सर्व शक्तिमय ईश्वर
 वह नुम्य मही सर्वाभय
 रस रिक्त न पूर्व परास्पर !

नव मन सितिलज बन भावव
 भाभा में हुए विरोहित
 लोले कवि नै संतर्कन -
 मव सत्य भोक्त में जागृत !
 अपनी कुटीर में बैठा
 वह वा एकाकी उन्मत्त
 मत यौवन की स्मृतिवा से
 उद्वेगित वा मधु में मन ।

उसके नासा पुट में उड़
 पीटी मुगध मू मानन
 फूली भी मधुर करौरी
 महक वे मद भीने बन !
 सहिजन तिरिय घागन में
 घर दुग्ध केन न कुमुभित -
 बहि भी तिरिय कौमलता
 रम बय मड़ मव युम तिन !

नयन	खोजते	कवि	क
भामा	देही	को	नित
शामा	महरी	में	हो
प्रीति	समुद्र	तरंगित ।	
राग	चेतना	भू	भी
हा	विकसित	रस	संस्कृत
नर	नारी	जीवन	हा
मधु	प्राणम	दिष्ट	मुकुमित !

।

1

मध्य बिन्दु

(ज्ञान)

परम ध्योम न बरम रहे अयुत स्वर
माखल नम धारा में राधा रा धा
मुक्त तद्गत प्रंतर मुद्रा बराबर
हृदय मुहा की गिरा अगम्य अगाधा ।

धाराधना निरल जन भू मगम हिन
दिव्य पतना ने जीवन इन माधा
रजन नील में बर उल्टी बंगी ध्वनि-
बिम्ब शक्ति । जन प्रिय हरा भव बाधा ।

बहू हगित स्वरा सब गूँज रहा कल कल में
रूपान्तर कर जन भू मन का गापन में ।
मन्त्रादा धातुल राम - ऊँचि रम मागर
स्वर्गागण किष्णों छुती शायों क स्तर ।

स्वप्नों की धामन बरम रही शोभा भर
धानंद ठडिन् हू गुणग उदा मन का पर ।
अप्यगियों - मी पटना गति किष्णों क पर
म रही प्रेरणाके बराबर उर भीतर !

भावना स्वत भुगा मी भर मति - गुजन
मजन बरना धनर - बँधन क मधु बन
वेजना पतिवा मीर पद्य मा धवन
स्वर्द्धिम हगा का शोभा का बनस्पम !

खोसती पसक प्रथा पंचद्विषा प्रतिपन्न
फैसा धम्म स्वर्णों के मौन रहस्य इस !
बीचनोन्त्सास के कैंप कैंप उठती घर घर
रस सृष्टि प्रेम का पा उगमुक्त धमय घर !

धम खोस स्वप्न के द्वार सत्य धरता पय
सत भूपर्षीह सुरधनुषों में सिपटा जग !
मुख से स्वर्णिम पट उठा रही विष धामा
प्राणों की सरसी में धँस नहाती धामा !

अनिमेष दृष्टि के सम्मुख सरते निस्वर
किरणों के क्षमसई प्रकाश के निर्भर !
घाती स्वर्दूती पितृव्य पार से उड़ कर
उर में धामद मधुरिमा धी नोभा घर !

उपार्थ मखनिख शुभ नाभ सं लोहित-
निच्छल सुवर्णा घाती मित धनसंकुठ !
पारो धमनोदय के पय बीचन मंगल
धामा मंडल के भीतर धामा मंडल !

कल्पना सत्य हो रही पुरा मानव की
मंयनमय हो धम्यात्म पीठिका मय की !
धू पर करते माकार स्वर्ग धम विचरन
मुख बई धार पुनकिठ मामूहिक जीवन !

धंत-धूमों पर प्रतिध्वनित हीरक स्वन
नव धरा स्वर्ग स्तव कवि मुनता उगमय मन !
बहु प्रथम लोह धारण धू जीवन का कवि
दिग् हरित तिमिर महार का स्वर्ग मुकुट रवि !

बहु कोमल उर जस के पावर का रग परि
रचना धारी का रग सनु सुरधनु छवि !
बहु गुण नील ध्वनि का गायक मिठ कोपम
धून बित् के स्वर्णों में धंतन धंतरनम !

धीरिभता धी धामाधों को मतिक्रम कर
निमीम गाति में धनुधानि हो धनर
पा रस स्वर्ग गावदन मता के निस्वर-
धूनना प्रवाह धिमको उमको देता घर !

बंजी का बदन मर्म प्रतीक मधुरतर
साधना निरत रहत कबि प्राण निरंतर ।
रम सर्वत्र स्वर संगति में बँधने त्रिस्वर
खात्र करता बहु शास्त्रत ज्योति दिगंतर !

तपता बहु बिम्ब ध्यया में बसने काश्म
धो राय द्वेष कस्मय का जीवन प्रांगण ! —
भू पर बरसाने रस प्रकाश बहु प्रतिक्षण
अनर्थामी को करता तन मन अर्पण !

भू मन की ईर्ष्या स्पर्धा न हो चाहत
सोपन रखता प्राणा का अंतमुख दात ।
युतिवा संतों सद्ग्रन्था स बुन विभूकण
संभव करता अनाम देवों का भोजन !

नव उम्रिया न रहता कबि धावाहित
स्वर्णम साधना पर राहण करता तिन ।
महित कर गत भू जान मिथु पाबक घन
नव शक्ति सूर्यो का करमा बहु अम्बपण !

दिव पय से करते पुण कृष्टि स्मित सुराण
भारते प्रकाश पंज्रियाँ क मनरेव दाण ।
य मुदम अतनार्थ, धरती जा नव तन
किरणों का रघिर भिराघा में गाता छन !

मित स्वप्न मान देही य भावो मानव
गत वेन जाति बघन बिभुवन युग ममव !
बहु मना अर्थियों बुंग्या से विरहित
गष्टों के भय संगण अर्था न अंधिन !

बिद्विज हा रहा युग युग का निर्मम मन
भू जीवन नव अज्ञा धारणा का प्रांगण !
घा रहे निरत मत्र दग बिन्गों के जन
श्री पुरर निरन्तर मुक्त नाम अहिंसन !

नयु गुरु पुर धामन नाथ पृता नारी नर
सामाजिक नान्य के मे अक्षय गुण
सांस्कृतिक वीरिता पर नव यग की शक्ति
यय मय्य शीघ्र रचना संन में योजिन !

उस पावक से धो कनक काम का आनन
 कर दिया प्रेम ने प्रमूत करों से पावन !
 साधना बोम गैरिक तप प्रथ के मदन
 पायईसाध्य प्रतिष्ठा कर सुख दुख का भग !
 मुनि यत्र हृष सी श्रेयस् के फँसा पर
 निःस्वर गति शक्ति उठती भू मानस पर !
 निःशब्द हिमाद्रि सिद्धर सी बहु प्रथ स्थित
 श्रीरोधि सी चित्त निस्तरंग दिग् बिस्तृत !

नत स्वप्नित मुर बीजा कर उर में शोभत
 धानंद उड़ित् करती प्राणों को पुलकित !
 फिरनों के निर्झर सी हावगत से भर-भर
 लम्पय करती बहु उस धपित कवि प्रंतर !

क्यारों के मुख का सौन्दर्य प्रनामय
 भू स्वर्ग सुबन पावक सा चित्त ज्योतिर्मय
 धवतरित हो रहा पलकों पर, हर भव भम
 चतना जिवर का सा प्रथ सूर्योदय !

धानंद शक्ति श्री गोमा में संयोजित
 पीयूष सिन्धु सा प्रपने ही में मन्थित
 स्वर्गीय प्रेम करता प्रंतर उन्मेषित
 उस तप्त स्वर्न बहु, चित् मरम्भ से सुरभित !

दिग् शीघ्र प्रसारो में फिरता कवि का मन
 माणिक प्रकाश के शर्ये निर्झर प्रतिशब्द !
 वृमुमा के स्फूर्ति मुखों पर मधु रंग विमल
 काकिल स्वर में प्रमूत प्रथ-स्वर मिलते !

भावों के भीतर चुनने भाषा के स्तर
 फिरनों के हां सतरंग छवि मुपन प्रमोचर !
 संशोधि दुग्ध घाघमों की पड़ती तार
 विष्णु सदृशी सी निःस्वर प्रकारें भर !

स्वप्नित रेखाओं में भी मम्मूच प्रकित
 येतना हा रही नव रूपों में विक्रमित !
 रण रता इष्य ममदिग् जीवन में विहरित
 छायाका क जाने भावों में मुष्टित !

देखा कबि न भुस प्राण गुहा के भीतर
पतझर बन भरठा रू रू निर्मम मर्मर ।
नीरास्य ग्नाति बिद्वेष प्रमाथों का पर
बहु भेद बिभेथों से धा भू उर बर्जर ।

उहाम गध से हो उठती मोहित मति
पम पय पर बिस्मृति रुक जाती जीवन गति ।
हा तिमिर बाहरी छिन्नका भू जीवन का
सगता प्रकाश भी छिन्नका अंतर मन का ।

रस तब खोजती कबि की दृष्टि महत्तर
जो हो प्रकाश न भीतर, तम के बाहर ।
मथल रास रखते तम अंतर में स्मित -
धी पूर्व बना मी नई चेतना जायत ।

निश्चेतन तम न जगता जीवन ईश्वर
पन कृप्य नीस तम मदिरारण अभ्यंतर ।
बह तम का पबत स्फुरित तदित् रवि मंडित
धैरिपामी के स्वप्निस प्रकाश का चित्रित ।

नव शक्ति पाठ बह भू के मन मिथर पर
घादोमित सब गुर धमुर मर्जक बराबर ।
मै शक्ति देव बह कहता सुय मधिनायक
मरे कर में सर्वस्व मान धनु सायन ।

धै पोता जीवन ज्वाला पीठिन हामा
मै मृगु गरम चेतित विट्टी का प्याता ।
भाबी मनुष्य के मम्भुष दिग् दारण एण
दूटन मुटुट नन मुटन नृप विहागन ।

भू कंप मनो भू पर घाने का भीषण
भूम्या में पटने को मोनिक परिवणन ।
पन रुद्रि रीति की कारा से बड़ जन मन
नन सुय भू पर करने को मुक्त पशाप ।

मै कान मान मुत्ता जीवन का दृष्टि घप
उदने को निव पप में भू मानव का रूप ।
सुभना कवि-मन भू-अंतर का सुय ममर
मय प्रसव वेदना मधिन या नम गादन ।

कवि युग प्रबुद्ध था, विश्व नियति का ज्ञाता
 इष्टा भू जीवन का धरातल विधाता !
 था ज्ञात विश्व सम्पत्ता कहीं पर धन स्थित
 कैसे होंगी गत संस्कृतियाँ संयोजित ।
 परिधिठ बहु धारा कहीं पर उका मनुज मन
 कैसा उसका संकट उर का गोपन धन ?
 बहु धनवंत था यह भू विकास युग का क्षण
 नव क्षितियाँ में करना मन को धारोहन !
 स्वर्गमि पतत्र गरुड सा क्षपट युगांतर
 दुर्बल जब था बैठा उसक कंधों पर !
 अतर्दीपित बहु बहिर्दिग्ध परिबेष्टित
 प्रापुत था भीतर, मौन प्रगत जग के हित !
 धन धन स्त्री मुक्त के लिए न थाता युग कवि
 थाता बहु मन में मरने प्रभु की नव छवि !
 बेबने प्रेम की धारों से भू धामन
 निज अत सीरध स धरन धन प्रायण ।
 कहता उसका मन प्रेम सृष्टि का ईश्वर
 मौन्दर्व शांति धानद धेम का निरंतर !
 बहु धन उहा था सचि रथ धन भू मन
 अतर्दिग्ध हो रहा चित् प्रकाश का नूतन !
 धानाक स्पर्श उमके हित था जापित बर
 संधर्ष निरंतर धन भू तम से दुस्तर !
 धानाहम उमन क्रिया धतना का नव
 भू मन के मर पर था नव जीवन संभव ।

जागा हे जागा धरा धनने जागो
 युग युग की स्पर्शा कुंठा स्पर्शा त्वापा !
 धन जिगा नाम उद कर था रहे निरंतर
 यह देश प्राणि में बंटन का क्या धनधर ?
 था रहे निरट बहु भू भागा न धनधर
 मन धर्मों गन्तुनिधों का हो मन्मिधन !
 भू मिश्रणे राष्ट्रों की दीमा अतिधम कर
 मानवता भीग धरा धन जीवन धर !

विज्ञान बन जन भू स्वभा का साधन
 प्रब मिटें राजनीतिक धार्मिक सधर्म ।
 युग वैभव का ही जीवन में सम बितरण
 विस्तृत हो बबर, धार्मिक सामंती मन ।
 का प्रतिस्पर्धी विद्विरा में प्रकट धरा जन
 निज सर्वनाश के गढ़ते नित प्रामाज्य ।
 यह वैयक्तिक सामूहिक मूल्या का रण
 नव स्वर्ण चतमा में समक मयोजन ।
 जन भू कुरूप राष्ट्रिय तमिस्रा प्राकृत
 प्रवी प्राप्या प्रस्मिता प्रविष्टा शासित ।
 मन राम इय तम रोम शोक से मर्दित -
 ही मूजन प्राप्त मर सर्व श्रेय हित प्रपित ।

विहमें विमुहसा से मनुजा क प्रामन
 गुंवर मे सुवरतर हा जन जीवन राण ।
 जागो हे भू की राग चतन जागा
 निज काम द्वेष वैषम्य बेरा प्रब त्यागो ।
 छाया कुंजा में मध्य युवा म सोई
 तुमने प्रांभू की मर्दिया तप्त पिरोई ।
 तब बिरह बहल में देह मता कुम्हसाई
 तम गुदित मन तुम ग्ही गात्र परछाई ।
 ज्योत्सना में जोभा राना सो सित सज्जित
 मर्दित स्वप्नी का कर प्रमिसार गर्जकित
 प्रिय को न देख कर हाजी रही विमूर्छित
 तुम रूप गविना मानवनी बन र्दित ।
 फिर पित्रर बड शुकी सी प्रिय प्रिय रटनी
 तुम सौह स्वर्ण शृंगम बंधन में ग्नी
 स्वप्नित उद्दान बर भूम गए गति प्रिय पर, -
 मन शितिक पार गाठा मुनीन में स्वप्न मर ।
 मपु डार बहरी तुम गाजों में बेचन
 भू बनी म स्वर्ण ग्ही बड़ नामम ग्नी
 युग्मा की निमम भीमाया क भीतर
 बड़ गबी न मुर मपु वैग्य घराहर ।

तन - तृप्ति स्वर्ग हा पशु का, - मानव का मन
सौन्दर्य तृप्ति के स्वर्ग खोजता नूतन ।
बहु प्रीति स्वर्ग मानव स्वर्ग अभिसारी
तन की भू पर घंठकैतव्य विभासी ।

सबु व्यक्ति प्रणय वा सित सामाजिक तोरण
नव सितियों पर कर सके मुक्त पारोह्य -
उर में शोभा के बुझे स्वप्न वातायन
बिनस प्रकाश अनुराग किरण भाएँ छन ।

सत अग्नि परीक्षाएँ के सह निर्वासन
अपहरण सोह अपवाद मृत्यु भय लक्षण
तुम जीवन करती रही पंक में भाषन
विकसित न सभी तक भू का संतरबतन ।

बंती व्यक्ति सुन तुम हो उल्टी भी बिस्मृत
बन हरिणी सी स्वर मोहित तम्मय, मूर्च्छित ।
अब प्रकृति पुस्त्य की होना नव संयोजित
लय की प्राणुति में करनी मुम भू निर्मित ।

तुम फिर बियोपिनी नहीं - नित्य संवागिति
सास्वत धर्मत रस की अनन्य संभोगिति ।
बिह्वामल में तप होता प्रेम न खोजित
बहु स्वर्ण मिसन की तम्मपता में पोषित ।

सित काम मुक्ति वैराग्य न बहु तन पीड़न
वतियाँ की कृच्छ्र तपस्या जीवन बर्जित -
बहु राग भावना का सामाजिक बितरण
संतुलन मुठ हो प्राप्तेष्ठा का प्राप्ति ।

सौन्दर्य भोग कर सकेँ मुक्त मन भू बन
ही प्रीति अग्नि रस पावन मानव जीवन ।
स्त्री रस तन छे त्रिपटा छाया मा पर मन -
बहु प्रेम कटी - तृप्ता भुजंग का बंधन ।

पुष्पों व बन्ना पर मँडरात मधुकर
बोधन व स्वप्न करेँ शाभा उर में पर ।
सौन्दर्य बद्धि में निगर - पड़े भू जीवन
प्रकृतिव्य किमोर किमारी मुक्त हृदय मन ।

धर्मिचार्य स्वर्तक बने प्रगयी मारी नर,
 कटु काम द्वय से बग्न न हा जन धंठन !
 भू स्वर्ग सत्य वन विचरे जीवन मुक्ति
 मित स्नेह मुक्त स्त्री पुरुष शील से धर्मित !
 मधु बीप सिधे, कर रोम हर्ष उदीपित
 मामा तंती धानव करा स संकृत
 उर करो मधुरिमा में रस पुस्तक निमग्निवत
 धामा का बैभन हा प्राणों में बितरित !
 धामा विद्युत् पायस झुकुठ कर पापो
 धामा की बंपक ज्वाला में सिपटापो !
 पावक बन सी रस में झर उर नहसापो
 गन सुखनुभों का सम्मोहन बरसापो !

कामना मुक्ति से धन्य न भू जीवन पय
 रज द्वेय मुक्त हो रज प्रीति में परिणत !
 जागा है भू की प्राण धेतने जागा
 जीवन के मधु में मन क पंथ न पागो !
 गठ स्थितिया की कटु सीमाओं स पीड़ित
 बन सजा न भू जीवन सुखमय उर इच्छित !
 जड़ भू तम मे कर्मा वा मानव को रस
 जायत् वा मन पर निहित धंठनधठन !
 धपन ही सुख दुख में रत बिनका धंठर
 वे देय नहीं पाते यह बग प्रभु का बर !
 जीवन विज्ञान क्रम को निज बर में सकर
 मानव को निर्मित बरनी धारी गुमठर !
 गठ बूत व्यक्ति कन्दिव विज्ञान वा भू पर
 हो सजा न भूत धरा पर जीवन ईश्वर !
 कहने पाए सब दान धर्म निरंतर
 यह बिरय ब्रह्म का नीड़ धमर्या का धर !
 कहने पाए सुख बनन काम वा तम हर
 जन रहे मोह ममता लुप्ता से झर !
 मन रचार्य बिन हो सब भूत हित में रज
 यम निजम त्याग पर रोका हा जीवन ब्रह्म !

निरूपय न व्यक्ति कृत्रिम जीवन में संभव
 सब भूतों में आत्मा का करना अनुभव ।
 सामूहिक स्तर पर हा न सका तब स्थापित
 अंतरात्म्य के व्यक्ति मूल्य धाराधित ।
 भव भू संगत हित मानव विधि को स्वीकृत
 अंग में हो नूतन जीवन नूत प्रतिष्ठित ।
 वैज्ञानिक युग को पिता धारण संजीवन
 अंतरात्म्य मानव कर रहा पदार्पण ।
 धार्मिक तात्त्विक सामूहिकता की भू पर
 नव अनुपमत्व अवतरित हो रहा भास्वर ।
 गत युग की वैदिक सीमाएँ कर निस्तृत
 धारा सामाजिक मानव अंतरात्म्यधित ।
 सामूहिकता का भीतिक अङ्ग युग वर्तन
 गङ्गा रहा नदी पीठिका - तात हो युग रत्न ।
 धृ अंतरात्म्य की पारस्य मणि से पावन
 अङ्ग मोह को भव करना सुदमित कांचन ।

फूलों की रेखा व तन्मय जीवन दण
 रोको न अनुभव को शुभ को धरने हो मन ।
 व अन्व नम्र जो सहज प्रकृति के सहचर
 धन भू प्रिय प्रभु इच्छा से मुक्त निरंतर ।
 भू मन को ब्रह्मा अंतरात्म्य दर्शन
 विस्मित हो जिसने तब ईश्वर का ध्यान ।
 धारा आगे जन अंतरात्म्य आगे
 देवी मुङ्ग अंतरात्म्य यह विधि मत धारो ।
 तुम शक्तिता के नूतन उमस में धर्म कर
 मत गिरा नूतनने अन्त गण में दुस्तर ।
 अङ्ग अहिर्मुखा विज्ञान माय धार्मिक धर,
 तूतन मत्स्य का स्वयं गृह्य अन्वतर ।
 कहते समस्त इष्टा कवि का भी अनुभव
 मन धारो ले पर नियत तत्त्व धर धर्मिक ।
 छु पात्रा उसका नहीं ठरक विरमपत्र
 तन्मय जीवन-धन की स्थिति उमरा वर्तन ।

इंद्रिय-मन करता बाह्य उपकरण संचित
 बस छाया-पट सा जो प्रतिपन्न परिवर्तित-
 मति कळी मानस-ऊर्ग व्यबस्थित, गुंफित
 बहु घंतमूर्त मुड हो उठती जिहीपित ।
 ध्यानंद सूर्य रे मीतर स्वयं प्रकाशित
 मंगलमय हास्वत एकाकी, धातमस्थित ।
 धनुषम धनंत, शोभा-समुद्र घतरंगित
 धयचित स्वर्गों में सजित एक धवंडित ।
 छई हिरण्यमय ज्योति, रत्न रज भास्वर,
 निज स्वर्ण पंख छापाएँ बरसा भू पर ।
 जन भू की धमय संपद् बिब में पुंजित
 जिसको जीवन में होना विकसित मूर्तित ।

बित् स्वर्ग प्रतीला रत्न बहु भू पर बिबरे,
 मानव धपने घंत-प्रकाश में निबरे ।
 जानो, भू की धम्यात्म जेतन जागो
 मठ संस्कारों धर्मों के गुंठन त्यागो ।
 तुमको बुबोंछ रक्ष्यों में त्रिपटा कर
 दुर्मम कर दिया बुर्मों ने जन हित दुस्तर ।
 उठरो धव घीरे बिसृठ भू पर पग धर
 बिबरो बीपित कर तन मन प्राणों के स्तर ।
 इस मरकत भू से बिसद कौन सा मंदिर
 घट रश्मि स्फुरित स्वर्णम नील जिसका सिर ।
 त्रिमया प्रापण सौन्दर्य प्रेम स पावन
 प्रभु जहाँ जम सते उबैर रज में सन ।
 जिस पर चैतन्य बिबरता घनमुद्य कर पर
 मुर-बर हृत्कार्य होउे पा मानव का पद ।
 जिसने धानन स घो मठ पुग क सांछन
 जन मन को बनना स्वच्छ मुपर-प्रभु दर्शन ।
 मर जाती से बड़ घौर कौन स्वयिक घन
 जप्रमन शीन निड त्रिनका धारकतन ।
 जनगन मंगल हिन धम पूजन कर धरन
 भडा में प्राण प्रतिष्ठा कर्नी मृतन !

तप त्याग तपस्या अर्पित कर जन भू हित
मानव जीवन करना तुमको नव निर्मित !
बेबोयी तुम साकार ब्रह्म दिव्य मुकुमित,
ईश्वर की सत्ता एकमेव सब में स्थित !

आत्मिक स्तर पर कर एकांगी प्रभु बर्षान
तुम क्या न पाई भू की भयबद्ध प्रांगण !
प्रस्तर में कर विस्मय को प्राण प्रतिच्छिन्न
मति देख न पाई मानव ईश्वर भीषित !

ईश्वर की प्रतिमा धाम्य कहीं क्या संभव ?
जन धरणी के अतिरिक्त मूर्त बिद्दु वैभव !
सञ्चित ईश्वर भव, युग युग में हो विकसित
प्रभु की करता अभिषिक्त - हृदय में जो स्थित !

भू रचना धम से श्रेष्ठ कील स्तव पूजन ?
सचराचर का बिसर्ग श्रेयस् संवर्धन !
भू जन का उन्नत भावों से हो पोषण
वे प्राप्त-काम प्रभु के प्रतिनिधि हों प्रतिधन !

जन भू की छोड़ न स्वर्ग कहीं है उन्नत
धार्मिक मधुरिमा संवत्त का जन हो वर !
बहिरंतर सामूहिक जीवन कर निर्मित
भू पर हो सक्ती मुक्ति सर्व हित अर्पित !

गठ रिक्त मुक्ति आदर्श मृत्यु वा जन हित
परलोक मुखी जीवन निवेश विष पीडित !
वास्तविक मुक्ति वह जब जन भू का प्रांगण
हो मुन्न शक्ति गुण स्वयं सृजन धम एत मन !

हम नयी पीढ़ियों के बाहक जन भू पर,
उनके हित जीवन स्वर्ग एवं श्री सुखकर !
हों राम त्याग अरिगर्भ सुप्त हों सुर वर,
जो मानव संगत धाम बने भू सुंदर !

जीवन की ही है पूर्ण चेतना ईश्वर
जो व्याप्त विविध जीवों में - नारदत निर्दर, -
समस्त मृत्यु पाने में धूस निर्दर
तेजा नव यम ध्याप विदु छित धर !

मन बाँधी से जा परे, परात्पर, अभिरिक्त,
 बहु रका धरा जीवन में होने मूर्च्छित !
 जीवन हृदय से ही बहु सुप्तम न संक्षय
 जो अज्ञान मनस गोचर, अभ्यक्त अनामय !
 स्थितियों में स्वर मुखरित चिदि बनती दर्शन
 तुमको नव युग जीवन का बनना दर्शन !
 उपनिषदों में तुम ज्योति प्ररोहों में जग
 दीपित कर पाई गुहा - न भू जीवन मम !

भुक्ति ऊर्ध्व अयोधर बंधन से धामोचित
 आत्मा की पौरव गाथा से चिन् मुखरित !
 अज्ञेय सत्य का कर प्रत्यक्ष निरूपण
 के दीपित करती अंतःसत्ता गोपन !
 शाश्वत प्रकाश की भी प्रकाश नि संक्षय
 भावी संस्कृति की नींव बनें के अक्षय !
 के मानव की जिज्ञासा शुभ अनात्म-
 जिन पर आस्था रख परम शांति पाता मम !
 उनमें प्रसार आत्मा क सिद्धियों का स्थित
 अंतर्दर्शन ऐश्वर्य, रहस्य अनात्म !
 शाश्वत मुग्ध का सौन्दर्य, प्रहर्ष चिरंतन
 जिसको बनना भावी में जन-भू जीवन !
 मैं देख रहा हूँ शुभ ज्योति दिग् तोरण -
 अंतर के स्वर्ण कपाट खुल रहे अनुदान !
 लो बरछ रहा भागिक प्रकाश का प्लावन
 आनंद मधुरिमा शोभा अग्निजल भू-मन !
 जब यह मानस का करता सिंहालीवन
 में पाता सीमित अज्ञ अज्ञान का वितरण !
 जिस महत् मलय का मुकुट रहा अक्षिरंगन
 अनामित उम न कर पाया भू जीवन !
 धर्मों से विधि नियमों में कर अक्षुण्ण
 अज्ञ को दुःख कर दिया अयम्य विरोहित !
 बहु अज्ञ तंत्र बार्दों - पंथा में अक्षिप्त
 मानव मानव के निकट न आया चिदि !

बोधी भास्वाधों विस्वाधों से बुद्धि
जन जीवन ईपत् हुषा न विकसित, सस्कृत,
बिचरे बहु इष्टा, साधक संत अरु पर
बो छोर विभक्त रहे जग के—नर, ईश्वर !

उद्देश्य न भू जीवन का वा संवर्धन
परलोक पुनर्जीवन में भटका जन मन ।
गठ कर्मों का फल सौह मियति का बंधन,—
जग बना धर्मिणा स्वस भुग तुष्णा प्रांगण ।

बुध भूम विश्वमय ईश्वर को निःसंघम
व्यक्ति से परात्पर भाभा में हो तन्मय—
माया कह बहिर्जपत को—रहे प्रबंधित
बाह्यिष तपस में जन भू को कर मज्जित !

इंद्रिय मन प्राणों के बीज से बंधित
चिति विनत कल्प में रही मात्र धारमस्थित ।
धर जन जीवन में बहिरंतर संयोजित
उसको समग्रता में मित्र होना विकसित ।

घान्द भर्षट तुजन गति जय में शब्दित —
रचना भंगल से उग्मेयित गित सत् चित् ।
भू के प्रति धार्मि मूढ अघर में स्थित मन
पा सकते सत्य न ज्ञान धंध उपरत जन ।

धपवर्ग स्वर्ग परलोक ध्येव से प्रेरित
मन चतुर्वर्ग में रहे न मूढ़ विभाजित
हों सर्व मुक्ति से धर्म काम अनुप्राजित
ईश्वर न स्वर्ग में, जन भू पर हो स्थापित ।

त्रिष जम में जन को मूलम न स्तह समाहर
पगु इमि से विषय वही रेंगा करते नर,
कैसे हो वही मनुजता का संवर्धन
बाहिए धध को मन संगलन नूतन ।

जीवन इन्द्रिय हो विकसित धारम प्रकाशित
मन प्राण बुद्धि हों त्रिषकी तित शब्दापित ।
चित् हरित शक्ति से हो भू जीवन निमित्त
घान्द भीम में मानव मन संतःस्थित ।

क्या सत्य ? प्रश्न प्रति गूढ़, व्यक्ति मन से पर,
बहु मूल्य न सूक्ष्मीकरण न उद्गृत संतर—
प्राणों से स्पर्धित वह पितृ जीवन भास्वर—
सौन्दर्य प्रेम धारण सुजन रस निर्झर !

बहु भंगुर के गुंजन में निरय पिरंतन
साक्षित बिससे जयम जीवन नम अनुक्षण !
श्रुत स्वर्ण गुंठना में गुंफित मति स्थिति सय
यह विरह व्यवस्थित पूर्ण, सत्य महावाच्य !

बहु स्वतः सिद्ध जीवन में सतत प्रतीक्षित
संभाव्य सत्य सब के ही सहज निकट स्थित !
बहु सर्व विरह का सार, बुद्धि से प्रतिक्षय
विर साध्य सिद्धि जिसकी जय हित मंपत्तमय !

स्वर्ष स्मित पावक धारम प्रग्भसित प्रोम्बस,
जिसके रहस्य संकुर से ज्योतिर उडु दस !
धनुमुत्त प्रकाश से धपसक धंतसोपन,
सुनते प्रसन्न स्वर रोम रूप हूँत प्रतिक्षण !

बहु सत्य सूर्य ही परम साध्य सित साधन
मन प्राणों में भरना उसका चितृ जीवन !
जन धू स्तर पर ही हो सकता श्रुत मूर्धित
ज्यों दीप दीप से रे समय धालोम्भित !

बहु चिदुग्मेय करता जीवन उद्भासित
प्राणोग्वाल हो ज्यों भगवत् श्वास प्रवाहित !
बहु मात्र प्रबोध न धमुत्त स्पर्ष प्रति धीबित
गिन उडता बहिरंतर प्रमून सा प्रहसित !

इंगित से उलके रस प्रहर्ष पड़ता सार,
रोमाञ्चित सोमा मूर्ध-कन मठी धर !
बहु ज्योति ज्योतिषी की जिससे जय भास्वर
बहु महत् सृष्टि प्राणय धू स्वर्ष निष्ठावर !

धंतर पय से कर व्यक्ति ऊर्ध्व धारोहन
जय परम सत्य के पय पर करने विवरण
जो बहिरंतर हा धू जीवन मंदोन्न
बन सके धर उम पूर्ण सत्य का प्राण !

तप त्याग यज्ञ ही सत्य सिद्धि के साधन,
जन मंगल हित जो हो यम तप प्राबाह्य,
तो भोक्त यज्ञ सार्यक हो युक्त धरा पर
सर्वात्म श्रेय ही भू मानव का ईश्वर ।

बह स्वयं प्रकाश हिरण्यमय घृति से प्राबुत
मित्र घाघिर्बन्ध यति में रहता भंतहित ।
जन को हिरण्य किरणों के पट में वृद्धि
सविता को यम में करना प्राण प्रतिष्ठित ।

भगवत् मुक्त का धारण विमुक्त कर मन को
भय संबर्धन से विरक्त बनाता जन को ।
लगता अपूर्ण दुःस्वप्न जगत् जीवन भ्रम
यह धरा भरक ही सुधम स्वयं का उपक्रम ।

भौतिक धार्म्यात्मिक का विरोध—दुःख कारण
भगवत् प्रकाश से दीप्त न जीवन प्रायण ।
वैराग्य नहीं भय दुःख विनाश का साधन
मनुराय मूर्त हो सामूहिक जन जीवन ।

विधि सत्यमध्यात्मिक गृहि मात्र — यम संयम —
मन के संघ भू प्रायण का भी हरता तम ।
जन जीवन ही में संभव ईश्वर दर्शन
सुंदर से सुदृष्टार हो जन भू प्रांगण ।

साधक का वा धारण स्वयं मानव मन
क्षण इच्छिम मुक्त धविष्म कर जन नव चेतन
शीमार्य बहिर्भवत की कर चिन्मन्त्रित
भंतर्भंग में पाया रस भुवन विरोहित ।

धारणा जिसको पुनर्जी देती घसाम कर
मनु का प्रसाद बड़ मुष्ट हो उठता मास्कर ।
धनुमूति धारण वैज्ञानिक की — चिद्बैभव
भू जीवन संयम में परिणत हो धमिमर ।

मन तबाकार बन करता जिसके दर्शन
दृष्टों में घंटता उठका पृष्ट न भजन ।
यह धंताचेतन नव वा सत्य निरुपण—
भू स्वयं गढ़े विज्ञान — मूर्त कर चिद् मन ।

मि-सीम प्रेम पग पग पर पूष अर्द्धित !
सोपान विरह, - स्थिति-शोभा प्रति श्रेणी पर
सर्वाप पूर्ण - बहु पूर्ण पूर्ण के भीतर ।

बिच कासातीत असधि में कास निमग्निवत
प्यो लक्षण सिन्धु में - बिच कास करतम स्थित !
बहु प्रेम तत्व ! बहु एक - बुद्धि मन कल्पित
सीमा असीम शारवत अनित्य तमय नित ।

भू सामूहिक-जीवन की हो यत्नरपस
बंधन विमुक्त हो अपित कर्मों का फल
तो सर्व भूतगत धार्मिक अनुभव उग्वस
चरितार्थ धरा पर हो जन जीवन मंगल ।

यदि ब्रह्म सत्य तो जग भी सत्य असंख्य
मिथ्या से मिल सकता न सत्य का परिचय !
भव प्रगतिशील चित् सत्य प्रथ ही का स्तर,
प्रभु का मुख निश्चित देखना जग कर नर !

सामूहिक जीवन की विमुक्ति कर निमित्त
आत्मा के लक्ष में बिचर व्यक्ति ध्यानस्थित
घंट-प्रकाश में हो सकता रस मग्निवत
आनंद स्पर्श से शारवत के रोमाहित !

सर्वात्म भाव कर जन समाज में मूर्तित
जग हों इदम सर्वम नियोय से मुचित !
दृष्टाएँ पाश न रह जन स्वनिम तोरम
हों सामाजिक जीवन वैभव की चाहन !

भू मंगल को हा जो जीवन धम अपित
जीवन का क्षेत्र बन तब ईश्वर निश्चित !
प्रभु में सामूहिक मुक्ति सहज हो सकिय
ईश्वर से जग में जगम - स्वयं सर्वत्र प्रिय !

हा दुःख स्वार्थ गत व्यक्ति यह उन्मुक्त
सामूहिक परिभा में हो अंतर केन्द्रित !
आत्मा सामाजिक सीमार्थ धतिक्रम कर
सन्निवृत्तानंद बन बन बगमे जन भू पर !

निश्चय न व्यक्ति कृत्रिम जीवन में
 सब मूर्तों में धारणा का करमा प्र
 सामूहिक स्तर पर हो न सका तब स
 अंतर्भव के व्यक्ति मुख्य धारणा
 प्रथम मूल्य हित मानव विधि को स
 जय में ही नूतन जीवन नूतन प्रतिष्ठा
 वैज्ञानिक युग को पिता भारत स
 अंतर्भवतः मानव कर रहा परार्पण
 धार्मिक तात्त्विक सामूहिकता की मू
 नव मनुष्यत्व अन्तर्हित हो रहा भास्वर
 गत युग की वैदिक सीमाएँ कर विस्तृ
 धारा सामाजिक मानव अंतर्विकसित
 सामूहिकता का भौतिक अर्थ युग दर्शन
 गढ़ रहा मोह पीठिका - शात हो युग रत्न !
 हूँ अंतर्भव की पारस मणि से पावन
 अर्थ मोहों को प्रथम करमा सुरभित काचन !

मूर्तों को देखा के तन्मय जीवन अथ
 राज्ञो न धनुष को नुम को भरने दो मन !
 व अथ नम्र जो सहन प्रकृति के सहचर,
 जन मू मिय प्रभु इच्छा से पुनः निरंतर !
 मू मन को बनना अंतर्भवतः दर्शन
 विम्बित हो जिसमें नव ईश्वर का ध्यान !
 जागा जाया जन मनश्चेतने जागो
 दयो मुझ अंतर्मुख यह विधि यह भागो !
 नुम बोद्धिकता के नुम समस्त म फल कर
 मन गिरो नुनद्वय स्वयं गत में दुस्तर !
 अर्थ अर्द्धिर्मुग्धी विज्ञान मध्य धार्मिक पर,
 सपूर्ण गाय का अथय मुझ अन्तर्गत !
 नरुण समस्त इच्छा यदि वा भी धनुषव
 मन बाणी से पर नियम तत्त्व विर धर्मिण !
 उ जागा अमरा मरी

इन्द्रिय-मग्न करता बाह्य उपकरण संचित,
 बल छाया पट सा जो प्रतिपन्न परिवर्तित—
 मति करती मानस-ऊर्ज व्यबस्थित, गुप्ति
 वह घंठमुख मुड़ हो उठती पिहीपित !
 आनंद सूर्य रे भीतर स्वयं प्रकाशित
 मंगलमय सास्वत एकाकी धात्मस्थित !
 अनुपम, धर्मत शोभा-समुद्र घतरंगित
 प्रपणित स्वर्णों में सजित एक अचरित !
 छार्द हिरण्यमय ज्योति रत्न रत्न भास्वर,
 निज स्वर्ण पंख छापाएँ बरसा भू पर !
 बल भू की धराम संपद् दिव में पुजित
 जिसको जीवन में होना निकसित मूर्तित !

पितृ स्वर्ग प्रतीक्षा रत वह भू पर बिचरे,
 मानव धरने घंठ-प्रकाश में निखरे !
 जापो, भू की अघ्यात्म धेतन जाया
 मत संस्कारों धर्मों के गुंठन त्यापो !
 तुमको दुर्बोध रहस्यों में लिपटा कर
 दुर्मम कर दिया बुधों ने जन हित दुस्तर !
 उठरो धम धीरे बिस्तृत भू पर पग धर
 बिचरो दीपित कर तन मन प्राणों के स्तर !
 इस मरकत भू से बिजद कौन सा मंदिर
 गत रश्मि सृष्टि स्वर्णम मीन जिसका सिर !
 त्रिमका प्रांगण सोन्दर्य प्रेम से पावन
 प्रभु जहाँ जन्म सेते उर्बर रत्न में सन !
 त्रिध पर धैर्य बिचरता मनमुख कर पर
 मुर-वर वृत्तार्थ हाते पा मानव का पद !
 जिसके ध्यान से घो गत युग के सांछन
 जन मन का बनना स्वच्छ मुपर प्रभु दर्शन !
 नर नारी मे बड़ धीर कौन स्वर्गिक धन
 उग्रमन गीम निज त्रिनरा घंठ-बतन !
 जगता मंगल हित धम पूजन कर धर्म
 भद्रा में प्राण प्रतिष्ठा करनी नूतन !

तप त्याग तपस्या अर्पित कर जन भू हित
मानव जीवन करता तुमको भव निर्मित ।
देखोपी तुम साकार ब्रह्म दिख मुकुमित
ईश्वर की सत्ता एकमेव सब में स्थित ।

भारिमक स्तर पर कर एकापी प्रभु दर्शन
तुम बना न पाई नू जो भववत् प्राणध ।
प्रस्तर में कर विस्मय को प्राण प्रतिच्छित
मति देख न पाई मानव ईश्वर जीवित ।

ईश्वर की प्रतिमा भव्य कहीं क्या संभव ?
जन्म धरणी के अतिरिक्त मूर्त बिद्दु वैभव ।
सजित ईश्वर भव मुग मुग में हो विकसित
प्रभुको कष्टा अभिभक्त - हृदय में जो स्थित ।

भू रचना भव स धेष्ठ कौन स्तव पूजन ?
सबराज्य का प्रिसमें भेदस् संवर्धन ।
भू जन का उपरत भावों से हो पोषण
वे धान्य-काम प्रभु के प्रतिनिधि हों प्रतिक्षण ।

जन भू को छोड़ न स्वर्ग कहीं रे ऊपर
धामंद मयुरिमा मंगल का जग हो चर ।
बहिरंतर सामूहिक जीवन कर निर्मित
भू पर हो सक्ती मुक्ति सर्व हित अजित ।

गत रिक्त मुक्ति धारण मृत्यु वा जन हित
परमोरु मृगी जीवन निवेद्य विव पीड़ित ।
वास्तविक मुक्ति बह, जब जन भू का प्राणध
हो भूम ज्ञाति गुण स्वर्ग सुखम भव एत मन ।

हम नदी पीड़ियों के बाहक जन भू पर,
जन्मे हित जीवन स्वर्ग रवे भी सुखकर ।
हों दान त्याग अर्पितार्थ तृप्त हों सुर बर,
जो मानव मंगल धाम बने भू सुंदर !

जीवन की ही रे पूर्ण चेतना ईश्वर
जो ध्यात निधिय जीवों में - नाशक निर्जर -
धरणा भूतु पनने में भूज निरंतर
मेता नव जग धनाग विज तिता धरर ।

मन बाणी से जो पदे, परात्पर, प्रबिम्बित
 वह एका घटा जीवन में होने मूर्तित !
 जीवन ईश्वर से ही वह सुखम न संशय
 जो प्रबाह मनस गोचर, अभ्यक्त प्रनामय !
 स्थितियों में स्वर-मुखरित चिन्त बनती दर्शन
 तुमको नव युग जीवन का बनना दर्शन !
 उपनिषदों में तुम ज्योति प्ररोहों में जप
 दीपित कर पाई गुहा - न भू जीवन मय !

श्रुति ऊर्ध्वं अगोचर बंधन से प्राप्तोक्ति
 आत्मा की पौरव गाथा से धिन् मुखरित !
 अज्ञेय सत्य का कर प्रत्यक्ष निरूपण
 वे दीपित करती अंतःसत्ता गोपन !
 शाश्वत प्रकाश की भी प्रकाश निःसंशय
 भावी संसृति की नींव बनें वे अदाय !
 वे मानव की जिज्ञासा मुझ अनात्म-
 चिन्त पर आस्था रख परम शांति पाता मन !
 जन्में प्रसार आत्मा क मित्रों का स्मित
 अंतर्दर्शन ऐश्वर्य, एतस्य अनादृत !
 शाश्वत मुख का सौन्दर्य, प्रहर्ष विरतन
 जिसको बनना भावी में जन-भू जीवन !
 मैं देख रहा हूँ मुझ ज्योति दिग्गोरव -
 अंतर के स्वर्ण कपाट धुल रहे अनुदान !
 जो बरस रहा माणिक प्रकाश का प्यासन
 धानंद मयुरिमा शोभा मग्निष्ठ भू मन !
 जब पठ मानस का करुण निहासोक्त
 मैं पाता क्षीयित जट अतन का वितरण !
 जिन मट्ठ मय का मुकुर रहा अधिदशन
 स्थापित उमे न कर पाया भू जीवन !
 तपों ने विधि नियमों में कर अशुद्धि
 प्रभु को दुःख कर दिया अगम्य तिरोहित !
 बहु मंत्र मंत्र बारी बारी में यदित
 मानव मानव के निरट न आया विधिन् !

बोयी आस्थाओं विश्वासों से कुठ्वि
जन जीवन ईषत् हृषा न विकसित, संस्कृत,
विचरे बहु इष्टा चापक संत वरा पर
हो छोर विभक्त रहे पग के - मर, ईश्वर ।

उद्वेग न भू जीवन का वा संवर्धन
परमोक पुनर्जीवन में मटका जन मन ।
मठ कर्मों का पल नौह नियति का बंधन -
पग बना प्रविष्टा स्वस भूग वृष्णा प्रांगम ।

बुध भूम विश्वमय ईश्वर को निःसहय
व्यक्ति से परात्पर भाषा में हो तन्मय -
माया कह बहिर्जपठ को - रहे प्रबंधित
दाखिय तमस में जन भू को कर मञ्जित ।

इंद्रिय मन प्राणों के वैभव से बंधित
चिति विपठ कल्प में रही मात्र आत्मस्थित ।
धर जन जीवन में बहिर्द्वार संयोजित
उसको समपत्ता में निज होना विकसित ।

घानंद घर्षड भुवन गति सय में शब्धित -
रचना मंगल से उन्मेषित मिठ सत् चित् ।
भू के प्रति धारों मूर्ध घघर में स्थित मम
वा सक्ते सत्य न ज्ञान धंघ उपरत जन ।

धपधर्य स्वयं परमोक ध्येय से प्रसिद्ध
मन चतुर्धर्य में रहे न मुड़ विभाजित
हों सर्व मुक्ति से धर्य काम अनुधापित
ईश्वर न रधर्य में जन भू पर हो स्थापित ।

जिस पय में जन को मुसम न स्नेह समाहर
पयु हनि से विवग बहौ रंगा करते नर,
ईसे हो बहौ मनुजता का संवर्धन
बाहिए धय को मन संगलन भुवन ।

जीवन इन्द्रिय हो विद्यमित आत्म प्रकाशित
मन प्राय बुद्धि हों विमको मिठ यदापिन ।
चिन् हरित कनिष्ठ से हो भू जीवन निर्दिन
घानंद पीस में मानव मन धंघःमित ।

क्या सत्य ? प्रकृत प्रति मूढ़ व्यक्ति मन से पर,
बहु शून्य न सूक्ष्मीकरण न तदुपल संतर—
प्राणों से स्थित बहु बिद् जीवन मास्वर—
सौन्दर्य प्रेम धामंद सूजन रस निर्भर !

बहु भंगुर के मुंठन में निरय चिरंतन
शासित जिससे जंगम जीवन क्रम अनुक्षण !
श्रुत स्वयं गृहणा में गुणित मति स्थिति मय
बहु विरव व्यवस्थित पूष सत्य महानाय !

बहु स्वतः सिद्ध जीवन में सतत प्रतीक्षित
संभाव्य सत्य सब के ही सहज निकट स्थित !
बहु सर्व विरव वा सार, बुद्धि से प्रतिशय
बिह साम्य सिद्धि जिसकी जग हित मंगलमय !

स्वर्ग स्थित पावक धाम प्रगुणित प्रोज्ज्वल,
जिसके रहस्य भंडुर से ज्योतिष उद्गु दस !
मद्मुक्त प्रकाश से अपसक संतर्षोषन
मुनते मगध्द स्वर रोम रूप हंस प्रतिक्षण !

बहु सत्य सूर्य ही परम साम्य सिद्ध साधन
मन प्राणों में भरना उसका बिद् जीवन !
जग मू स्तर पर ही ही सकता श्रुत मूर्धित,
ज्यों दीप दीप से रे समग्र धातोमिष्ट !

बहु बिदुमेय कृष्णा जीवन उद्भासित
प्राणोद्भव ही ज्यों मगध्द श्वास प्रवाहित !
बहु मात्र प्रबोध न समुत् स्पष्ट प्रति जीवित
त्रिम उच्छा बहिर्तर प्रमून ना प्रहसित !

ईगित मे उसके रम प्रहर्ष पड़ता सर,
रोमाञ्जित जोभा मूर्त-रूप सती घर !
बहु ज्योति ज्योतिषों की त्रिमसे जय मास्वर
बहु महत् सृष्टि प्राणय मू स्वर्ग निष्ठावर !

संतर पय मे कर व्यक्ति उर्ध्व धारोहन
जम परम सत्य के पय पर करने विवरण
जो बहिर्तर हा मू जीवन संयोजन
बन मने घटा जम पूर्ण गाय वा प्रायन !

बीबी आत्माओं दिशाओं से कुण्डित
बन जीवन ईश्वर हुआ न विकसित संस्कृत
विचारे बहु इष्टा साधक संत धरा पर
यो छोर विभक्त रहे जन के - नर, ईश्वर !

उद्देश्य न पू जीवन का या संघर्ष
परलोक पुनर्जीवन में भटका बन मन !
गठ कर्मों का फल लीह नियति का बंधन -
जग बना अधिष्ठा स्वतः भूय तृप्ता प्रीति !

बुध पूष विश्वमय ईश्वर को मिश्रण
व्यक्ति से परात्पर प्रामा में हो तन्मय -
माया कह कहिर्नगठ को - रहे प्रबंधित
दाखिय समस्त में बन भू को कर मञ्जित !

इंद्रिय मन प्राणों के बीज से बंधित
विधि विधत कल्प में रही मात्र धारमस्थित !
यद बन जीवन में बहिरंतर संयोजित
ससको समग्रता में निर होना विकसित !

धार्मिक मंडल जीवन बधि तप में शब्धित -
रचना मंगल से सम्बंधित निर सत् चित् !
भू के प्रति धार्मिक भूष धधर में स्मित मन
या एकटे सत्य न ज्ञान धर्म उपरत जन !

धर्मधर्म स्वर्ग परलोक ध्येय से प्रेरित
मन चतुर्धर्म में रहे न भूष विभावित
हैं धर्म मुक्ति से धर्म काम अनुप्राणित
ईश्वर न स्वर्ग में जन भू पर हो स्थापित !

विश्व धरा में जन को सुखध न स्नेह समावर
पशु इमि से विभक्त जहाँ रंगा करते नर,
कैसे हो जहाँ मनुष्यता का संघर्ष
बाहिए धरा को मन संघटन नूतन !

जीवन इंद्रिय हो विकसित धारम प्रकाशित
मन प्राण बुद्धि हों जिसको सित भद्राश्रित !
चित् हृदि व्यक्त है हो भू जीवन निमित्त
धार्मिक नीम में मानव मन संत-स्थित !

क्या सत्य ? प्रश्न प्रति पूर, व्यक्ति मन से पर,
बहु शून्य न सुखीकरण न तदुपत प्रंतर—
प्राणों से स्वचित बहु बिपु जीवन मास्वर—
सौन्दर्य प्रेम धानंद सुजन रस निर्भर !

बहु मंथुर के मुंठन में नित्य चिरंतन
शासित जिससे जंगम जीवन कम अनुसण !
श्रुत स्वयं गूढता में गुंफित मति स्थिति सय
बहु बिबब व्यवस्थित पूर्ण सत्य महत्ताय ।

बहु स्वतः सिद्ध जीवन में सतत प्रतीक्षित
संभाव्य सत्य सब के ही सहज निकट स्थित !
बहु सब बिबब का सार, बुद्धि से प्रतिगत
बिबब साम्य सिद्धि जिसकी जग हित मंगलमय ।

स्वर्ग-स्मित पावक, धाम्य प्रज्वलित प्रोज्जल,
जिसके रहस्य मंथुर से ज्योतिष उद्गु दम !
मधुमूत प्रकाश से धपसक प्रतर्लोकन
मुनते धगब्द स्वर रोम रूप हंस प्रतिधम ।

बहु सत्य सूर्य ही परम साम्य सित साधन,
मन प्राणों में भरना उसका पितृ जीवन !
जम मू म्थर पर ही हो सकता श्रुत मूर्धित,
ज्यों दीप दीप से रे समग्र धातोष्ठित !

बहु बिदुग्मेव करता जीवन उद्गुमाधित
प्राचोर्गत हो ज्यों मगबत् रबास प्रबाहित !
बहु मात्र प्रबोध न धमूत स्वग प्रति जीवित
गिम उठना बहिरंतर प्रमून मा प्रतनित ।

ईगित से उसके रम प्रहं पड़ता सर,
रोमाधित सोमा मूर्त रूप सेत्री घर !
बहु ज्योतिष ज्योतिषों की जिसमे जग मास्वर
बहु महत् सृष्टि धाम्य मू स्वर्ग निचावर ।

धंतर-पय से कर व्यक्ति ऊर्ध्व धारोहन
जम परम सत्य के पय पर बरते विवरण
जो बहिरंतर हो मू जीवन मयोजन
बन मते धरा जम पूर्ण सत्य का प्रापण !

तप त्याग यज्ञ ही सत्य सिद्धि के साधन
जब मनस हित जो हो जब तप धावाहन
तो लोक मज्ज धार्यक हो मुक्त घरा पर
सर्वरिभ श्रेय ही भू मानव का ईश्वर !

बह स्वयं प्रकाश हिरण्य सृष्टि से धानुत
निज भाषिबैरव नति में रहता संतर्हित !
जब को हिरण्य किरणों के पट में सृष्टि
सबिता को जब में करना प्राण प्रतिष्ठित !

मनसत् मुख का धारण विमुक्त कर मन को
भव संवर्षण से विरक्त बनाता जब को !
सगता धपूर्ण दुःस्वप्न जगत् जीवन भ्रम
यह घरा नरक ही सुवन स्वयं का उपक्रम !

भौतिक धार्मिक का विरोध — दुःख कारण
भगवत् प्रकाश से बीप्य न जीवन प्रायण !
वैरव्य मही भव दुःख विनाश का साधन
भनुपप मूर्त ही सामूहिक जग जीवन !

विधि सवयन धारिक बुद्धिमात — यमसंयम —
मन के संय भू प्रायण का भी हूरना तम !
जब जीवन ही में संघन ईश्वर सर्वम
सुदर से सुंदर हो जब भू प्रायण !

धावत का पा धारण स्पर्श मानव मन
सम इदिय मुख प्रतिक्रम कर जब नव चेतन
सीमारै बहिर्जगत की कर चिन्मन्जित
संतर्जग में पाठा रस भुवन तिरोहित !

धात्मा जिसको चुनती बेठी मध्य पर,
प्रभु का प्रसाद बड़ मुख हो उठता नास्वर !
भनुपुति धात्म वैज्ञानिक की — चिद्बैरव
भू जीवन संवत् में परिणत हो अभिगत !

मन तवाकार बन करता जिसके दर्शन
सर्वों में चैतना उसका गुह्य न वर्षण !
यह संतर्केतन पय का सत्य निरूपण —
भू स्वर्ग गढ़े विज्ञान — मूर्त कर चिद् पन !

भव प्रकृति न संप्रति में भविष्य में सीमित
निःसीम प्रेम पग पग पर पूष अक्षरित !
सोपान विश्व - स्थिति-शोभा प्रति खेची पर,
सर्वांग पूर्ण - बहु पूर्ण पूर्ण के भीतर !

बिच कासाहीत जसधि में बाल निमज्जित
ज्यों सबग सिन्धु में, - निरब बाल करतम स्थित !
बहु प्रेम तत्व ! बहु एव - बुद्धि मम कस्थित
सीमा असीम शाश्वत अनित्य तन्मय नित !

मू सामूहिक-जीवन की हो यज्ञस्थल
बंधन विमुक्त हा अपित कर्मों का पल
तो सर्व भूतयत आत्मिक अनुभव उग्रम
परित्याग घटा पर हो जन जीवन मंगल !

यदि बह्य सत्य तो जग भी सत्य असाय
मिथ्या स मिस सजता न सत्य का परिचय !
भव प्रकृति-ल पित् सत्य प्रंत ही का स्तर,
प्रभु का मुख निश्चित देखेगा जग कर नर !

सामूहिक जीवन की विमुक्ति कर निर्मित
आत्मा क नम में बिचर व्यक्ति ध्यानस्थित
अंतःप्रकाश में हो सजता रस मज्जित
आनंद स्वर्ग से शाश्वत के रोमांचित !

सर्वांग भाव का जन समाज में मूर्तित
जन हों इत्थिम बर्जन निषेध से मुचित !
इच्छाएँ पाग न रह बन स्वर्णिम तारण
हों सामाजिक जीवन बीभव की बाहन !

मू मंगल को हा जो जीवन अम अपित
जीवन का केन्द्र बने तब ईश्वर निश्चित !
प्रभु में सामूहिक मुक्ति नहज हो सकिय
ईश्वर सजग में जग - स्वर्ग सर्वत्र त्रिय !

हा दुःख, स्वायं रत व्यक्ति यह उम्मीत
सामूहिक परिभा में हो अंतर केन्द्रित !
आत्मा सामाजिक सीमाएँ अतिथम कर
सन्निधानंर बन बन बरते जन मू पर !

ध्यान प्रथम चिन्ता के सर्वोच्च प्रथम स्तर परस्पर।
धर्मस्व प्रेम युग में जो बँधे परस्पर।
मन प्राप्त देह का सुजन यंत्र कर निमित्त
जीवन विकास क्रम में धातना प्रंत स्थित।

मनु व्यक्ति केतना कोष बड़ा पू मानव
अपने को साथ करे विकास क्रम संभव।
हो विश्व मनस् से व्यक्ति मनस् संभावित
आत्मा से जीवन जीवन से मन साक्षित।
जब पू मंगल ही धर्म लोक मन पूजन
यत्र प्रथम समस्त से कर्क मुक्त हो जम मन।
ध्यानस्व सत्य सम्मुख स्थित देखें युग मन
बहिरंतर मन सन्निधानद का प्राप्य।
स्थिर, निश्चर्य स्थित दुग्ध सिन्धु सा प्रंतर
आत्मत स्थिति की निःसीम ज्योति से आस्वर -
कर देता उर मिश्रित - ब्रह्माता निःस्वर
बड़ जीवन मन का सत्य एक ही ईश्वर।
प्रति पुरा काम में देह यत्र विधि बंधन
विज्ञाता मंत्रित हुआ कार्य मन का मन।
अवशों में श्रुतियाँ जगी ज्ञान कह गोपन
ब्रह्म मनो दुर्गों में उच्छिद् स्फुरित प्रति केतन।
विज्ञान मौख धर बोध सृष्टि संबंधित
मौलिक कारण का ज्ञान ज्ञान रे निश्चित।
बड़ जब हो फिर से विश्व चिद् सक्रिय समन्वित
विज्ञान समस्त जो ज्ञान उन्मि हो दीपित।

बह आदि हेतु ही अपने को कर सीमित
स्थित स्वर्ण धर्म में हुआ स्वयं ही शक्ति।
मेदा का स्त्री या अस्तु प्रथम दुःख पीड़ित
दार्ढ्य देताए, - उपस्थेय से पणित।

उद्भव कारण का काम - अनंत उपोन्नत
सोमा का नीचे अग्रक्रेत जन निरक्षर।
धर्मियेव देवता का साक्षीयद् ईश्वर,
सौपता सम्भवत अस्तु धारण सा कर कर।

बहु स्वनिम विन्म हिरण्य गर्भ ही बेटकर
बन गया स्वर्ग भू-मूल्म स्पूस-मुर-बरमर ।
पहु बिश्वात्मा रे स्वर्ग रश्मि से धाबुत
परमेश्वर का सित मुकुट, स्वरूप प्रकाशित ।

बहु परब्रह्म ईश्वर निःसीम परब्रह्म
नव संभावित संगतियों में नित विकसित ।
निज सृजन मुक्ति में रचना एत जयवीरवर
शिब शक्ति प्रथित प्रज्ञान मेघ बहु भास्वर ।

इस भाति परम ईश्वर, हिरण्य धात्मा भव,
प्राप्तोक्त श्रेणियाँ ब्रह्म योनि की संभव ।
धात्मा जीवन श्वासा, बिराट् में प्रसरित
भव का विकास श्रम करती जो संचालित ।

जब धादि भाति में मूल प्रकृति रूही मय
तब तार ब्रह्म बंधी में स्वर भर तन्मय-
रपता धनंत में वास हीन रस तांडव
धानंद स्फुरित शय सरते मयें धमर भव ।

प्रभु सृष्टि न रखते स्वयं सृष्टि बन जाते,
निज से ही निज में धमिम्यक्ति बहु पाते ।
बहु उधर परात्पर, व्याप्त इधर धग जग में
धानंद महन् ही भव विकाम रे मय में ।

भव-प्रकृति परम चेतन का वंश प्रसंग्य
परिवर्तन ध्यय न लिए गुड़ महशामय । -
नाशबत ही मे भंगुर पराव्य वा उद्भव
संप्रति में गुठित मुख भविष्य का बिच नव ।

विरचित धास्य सोपान उष्य श्रेणी हिन
सीमा निज सीमा धतिभ्रम करती निरिचत ।
सत्रिय धग जग में पूर्ण चेतना धरिगत
बाधा बनती पय, मल्प मिडि धनागत ।

जय भगवन् सृजन कमा, धसीम गुण प्रेरित
राव कुछ प्रतिगत होता रहता परिवर्जित ।
भव इन्द्र विरोधों में हाज निज विरमित
रश्मिक संप्रति मे सनिम-प्रलय धनि मुक्तिन ।

मू - स्वर्ग पीठ प्रभु के चरणों की प्रसाय
 तन्नों का संवर्षण न धिरंतन निष्कय ।
 बड़ चिद्, मू, स्वर्ग - परमही सब का उद्भव
 मू का सुवर्ष क्पांतर विरचित विधि कम ।
 बड़ में वेतन ही स्वप्न प्रमित धविनावर,
 चालेगा वह प्रभु की इच्छा धार्थक कर ।
 धम बाग सूतात्मा प्रेम स्वर्षमू ईश्वर,
 चिद् बीबों का भव सक, वह सुत परत्पर ।
 मिथ्या न धावत्, वह ईश्वर का चर धागिन
 क्षण के समु पय धर करता शासन विचरण ।
 धार्थक धम कम होता क्पोति प्ररोहित
 सीमा धसीम के पर्वों पर उड़ती निठ ।
 निठ व्यक्ति विस्व से पूर्ण - मनुज निब भीतर,
 वह निब धसीम में मुक्त प्राण मन से पर,
 पय स्वर संवर्ष का भी वह मीन मुबर स्वर
 निब चर धीरध से मनुज विस्व रेया धर ।
 विस्वात्मा सत्य जगद् विकास के पय पर
 धीरधेताग धमिध्वनि सत्य धविनावर ।
 ईश्वर भव मुब कुछ चहुवा सब के भीतर,
 उसका ही सीमा धाम बनेगा धंतर ।

वह परम न जीवन सूर्य - धर्षक परत्पर,
 भव जीवन का न विनास क्मिक क्पांतर ।
 वह जीवन का जीवन धार्थक धमूत कम
 सत्थों का सत्य धकारण जय का कारण ।
 उध परम सत्य के पत्तने में पालिठ जय
 वह धमूत प्रसव उद्भव विकास धधित जय ।
 कुछ भी न विस्व में जो न ईश से भास्वर,
 बड़ धी र्क्ष्य कहते उसका धृ धंतर ।
 यह जगद् सत्य रे मित्य बहू धवर्षित
 धपने में मिथ्या बाह्य इन्द्र से मंथित ।
 ईश्वर धर्मत जीवन कवि चिद् उध प्रेरित
 भव दिव्य काव्य धिर धुनन हर्ष में धरित ।

भव प्रतिपन्न सृजन प्रसय संतुमित निरंतर,
शाश्वत, विकास पय में - निश्चित स्थांतर !
बहु प्रेम हर्ष से सृजन भुवन पकटे सर
मुम्पूरणी में बहु भरता बिद् पाबक स्वर !
शोकता धरूप धरिप्त रूपों में गुठित
मामों में बहु गुण एक सत्य ही के स्थित !
निःसीम - धरूप धनाम - न भव में सीमित
पद पुनिन चेतना करती रहती मञ्जित !

पग ईस्वर पर सापेस परम पर धायुत
वे स्वयं न निज कारण प्रतिवृत्ति भर निश्चित !
फिर बड़ा बीज से बिबब चेतना यमित
नव धरूप सपरण में होती नव सञ्चित !

बहु जीव, साँस क सूत्रों से जो गुठित
सित पुश्य हृदय पुर के लतदस में निबसित !
प्राणों से उपचेतन जीवन निर्धारित
मम चेतन गतियों को करता संवासित !

ध्रुव पंच तत्व निमित्त मानव - प्रभु का बर,
धार्मिक धर्म विज्ञान प्राण मन धाकर !
मन प्राण सूक्ष्म तन धर्म प्राण पुषु पद तन
विज्ञान करन धार्मिक महत् बिबबारमन् !

विज्ञान (बुद्धि) सत् का बिपयाधित दर्शन
मित पुण्य धर्तीन्द्रिय ज्योति धारमपत सोधन !
निज को धर्तिक्रम कर सचता जीव सनातन
बहु बिबब चेतना धात्मा का पाबक कण !

नामूहिक जीवन यदि न पूर्य संयोजित
धात्मा बिबबारमा मे रह जाती बन्धित !
तत्पत एव न, पुषव गुठित संक्रम में
फिर उभय मुक्त हां बिबब एक्य उपक्रम में !

यह मानव का दायित्व जीव बहु बिबमित
भू पर हो मौलिक दिव्य एकता स्थापित !
नकर, रामानुज मध्व धादि मुण्य - बरिपिन
एकता चरचर की करनी भव सञ्चित !

प्रभु विश्व प्रकृति के मध्य पंच रे मानव
 जीवन विकास कम विचके कर से संभव ।
 मय दुःख भूम हर, सत्य मूल कर विधित
 उसको प्रज्ञान निशा करनी प्राप्तोक्ति ।
 हम विश्व वेतना के सबस्य भविनम्बर
 प्रज्ञान पशु प्रकृति - पाप मनुष्य हित पुस्तर ।
 मू हमें संबोनी भात्म हीप बन भास्वर,
 मूष्मय ही रे चिन्मय का ज्योतिर्मय कर ।
 भात्मस्य सत्य से ही विछोह - दुःख तम प्रम
 मय पुनर्मिसन हो घर स्वर्ग का उपक्रम ।
 शुर वास पय सा कृष्ण व्यक्ति भारोहण
 मयु सिन्दु संतरण सामुहिक समोजन ।
 इस विश्व चक्र को कर कक्षपायस्य भविद्वय
 शास्त्र का ध्येय जयद् में होना विकसित ।
 होने ही को आत्मा बहाते बुध बन
 प्रभु ज्ञान न तर्क (जयन्मय प्रभु !) बहु वर्जन ।

युगहमे जयम में गूँज रहे समुत स्वर
 बहु पूर्ण पूर्ण मय, - पूर्ण पूर्ण से लेकर
 मयसेव पूर्ण ही पूर्ण पूर्ण का धाकर ।
 ईश्वर भयंठ बीपों का दीपक भास्वर ।
 जय में जो कुछ सब में व्यापक ईश्वर स्थित
 सोपो जय को निज को कर प्रभु को धरित ।
 मय उसे बाट सोचो मेरा सेरा धन
 ईश्वर, जय तुम जब एक - न कर्म प्रसित मन ।
 बहु जग भसूर्व तम भुवन बहाँ बरित मन
 भात्महन् मनुज रहते कर बुद्धि विभाजन ।
 सब घूर्तों का एकत्र बहाँ संपीड्य
 उस मू के बन मय मोह मोह से बरित ।
 बहु शक्ति प्राप समोजन से धरि पति मय
 बहु दूर निकट बाहर भीतर, पति स्थिति मय -
 प्राधिक संपति जस सतित बुद्धि से धरिमय
 निज भास्वरिब करुता उसमें जस संभव ।

यन प्रथम तमस में गिच्छे विद्या रत मन
उससे यन तम में बाह्य प्रविद्या रत मन !
विद्याप्रविद्या बहु एक—मुक्त प्रभु में वर
अमरत्व प्राप्त जन करें मृत्यु सागर तर !

प्रो सत्य सूर्य निज उरिम समूह हटाप्रो
मुमको प्रपना कस्याम स्वल्प दिवाप्रो !
अग जग में बहुमुख ब्याप्त एक जा माम्बर
मै ही धारित्य पुरप बहु अग्य नही पर !

हे अग्नि सत्य पावक सत्यय बतसाभा
जड़ भेद भस्म कर, धिन् प्रकाम बरसाभा !
तुम ज्ञान कर्म माता प्रजन्म स्व प्रकाशित
बहुमुख प्रवीप हा एक ज्योति स दीपित !

जिसकी इच्छा मे प्राण बुद्धि मन प्ररित
जिससे नित बापी श्रोत्र बहु उग्मेपित -
बहु मन का मन इन्द्रिय की इन्द्रिय प्रविहित
उम अमृत तत्व मे जीवन मन संपोपित !

जा पाते वहाँ न श्रोत्र बहु बापी मन
बहु परे विरित प्रविहित से शक्य न वर्धन !
जीवन इन्द्रिय से सार्थक उसके दर्शन
मूर्ति हो बहु भू पर, कृतार्थ हो जीवन !

यन प्राण मात्र बापी से जो न प्रकाशित
जिससे मन बापी घाम मात्र अनुप्राणित !
बहु मत्प - न जो इन्द्रिय मे त्रिय उपाशित
उम मूल सत्य से ही जीवन संपोषित !

बहु अविज्ञात पूर्णतः, मात भर विधिन्
बहु ज्ञात जिन्हें उनको न ज्ञात यह मुबिन्दि !
बहु बिद् विज्ञान सोनान—अर्घ्य अपरिमित
भू जीवन में हाता गायन को विरसित !

जड़ प्रवृत्ति यत का वृण रे, जिनका भीतर
अपनी अज्ञेय गरिमा में गुंथि रीपर !
दिर अग्नि बानु मा बाह्य बोध विजयी भर
मोक्षता रने मे मत्प वहाँ जड़ क पर ?

प्रभु विश्व प्रकृति के मात्र पंच रे मानव,
 बीचम विकास कम बिठके कर से संभव ।
 मय कुछ नून हट, सरब मून कर सिचित
 उसको प्रज्ञान निष्ठा करनी प्रासोकिठ ।
 हम विश्व चठना के सवस्य परिनास्वर
 प्रज्ञान पशु प्रकृति - पाप मनुष्य हित दुस्तर ।
 मू हमें सँबोली आत्म दीप कम मास्वर,
 मूमय ही रे बिम्ब का ज्योतिर्मय कर ।
 आत्मस्व सत्य से ही बिछोह - बुद्ध धम भ्रम,
 नव पुनर्मिलन हो परा स्वर्ग का उपक्रम ।
 सूर धारा पत्र सा छच्छु स्वस्ति धारीहम
 मधु किन्दु संतरम सामुहिक संभोजन ।
 इस विश्व ब्रह्म को कर कल्पमात्र अधिदुष्ट
 मास्वर का श्रेय पमत् में होना विकसित ।
 होने ही को जानना बताते कुछ पत्र
 प्रभु ज्ञान म तर्क (अममय प्रभु !) बहु बर्जन ।

सुनहसे जवन में नून रहे समूत स्वर
 वह पूर्ण पूर्ण मह, - पूर्ण पूर्ण से सकर
 पत्रसेय पूर्ण ही पूर्ण पूर्ण का धाकर ।
 ईश्वर पत्रंज दीपों का दीपक मास्वर ।
 पत्र में जो कुछ सब में व्यापक ईश्वर सिचित
 धोपो पत्र को निज को कर प्रभु को धरित ।
 मय उसे बाट सोचो मेरा तेरा पत्र
 ईश्वर, पत्र तुम सब एक - न कर्म बसित मत्र ।
 वह पत्र धनुर्व तत्र मूयन जहाँ बंधित मत्र
 धमपहनु मनुष्य छूटे कर बुद्धि विभाजन ।
 सब मूर्खों का एकत्र जहाँ धंधीछठ
 पत्र मू के जन पत्र सोह लोक से बंधित ।
 वह ईश्वर प्राय मनोजब से धरि पति मय
 वह दूर निकट बाहर भीतर, पति स्विति मत्र -
 प्राणिक संघटि पत्र धमिज बुद्धि से धरिधय
 निज पाठरिष्य करता उसमें पत्र संभव ।

अणु से अणुतर, महलों से अधिक महतर,
आत्मा फिर जाग्रत हृदय गुहा के भीतर !
बहु साक्षी ही न रहे सक्रिय हो मू पर,
निज स्वर्ग धरोहर पहचाने जन अंतर !

बहु प्रबचन से मेघा या अक्षय मनन से
कुलम, बहु सुसम अतबल आत्म बरण से !
बहु विरज अक्षर्या अविषय - कहते प्राक्तरन
बहु सरज सृजन रसधन - गाताम्य कविमन !

यह आत्मा अमर रही नर तन जीवन रय
सारथि सवृद्धि मनसु प्रग्रह मू अक्षि पत्र -
जिनके इन्द्रिय हय सत्सारथि संभावित
वे प्राप्त काम - भव रूप मन दुर्मति नित !

अतबिद् बतसाते बुद्धि गुहा के भीतर
छायातपबत् रहते दो तत्व निरंतर !
वे आत्मा जीव अमिन्न प्रीति अतिगित
रचते मिल रसधन - पूषण ज्योति तम सीमित !

इन्द्रिय से पर नित विषय विषय से पर मन
मन से पर बुद्धि परे उससे आत्मा बन !
आत्मा से पर अक्षयत पुष्प अति परतर,
मूदमाति मूदम काष्ठा अंतिम गति - दुस्तर !

अस्पृश अक्षय अक्षय अक्षय अक्षय नित
आहत रहित आत्मा अक्षयतर निश्चित !
बहु शुभ्र पुष्प-पट अक्षय पर अक्षय अक्षय
नव - जगम मरण छायातप संगति अक्षय !

अक्षयमें रे होता जग्य अक्षय आक्षय नित
जगस न अक्षय - सब देव उसी के अक्षय !
जो उसके बहुमुख अक्षय से ही अक्षय
बहु मूतक - एकता आता ही मूयुजिन् !

अक्षय मात्र निर्धूम ज्योतिबत् बहु अक्षय
जग शुभ्र पुरा से देह प्राण मन आक्षय !
बहु अक्षय, मूत अक्षय मय का अक्षय
अक्षय अक्षय मे दीपिन आक्षय अक्षय !

तुमको पुकारते भाव भवज विद्या सज
टेरते मीन उत्कण्ठित भू रज के कज -
बावे तुम में जग जीवन बन भू ईश्वर,
बदसे मर, - बीना संघ यह एत बरबर !

बन घाव रहें मित साव बड़ें संपन्नित
सज घाव पलें खेने कूर्ते हों निमित्त !
विद्वेष रहित हो मन तेजस्वी संतुष्ट
निमित्त हो नभ भू मानवता दिक् कुमुभित !

हम सुनें भवज से धर लोक संयत स्वर,
नयनों से देखें बन भू आनन सुंदर !
हो धर्म श्रेय हित जनगण का भव धर्मित
भू पर विचरें पुर, विधि हों वैभव मर्मित !

पुन श्रेय प्रेय कर फिर मुख प्रकट उपस्थित
बन भू की नभल समूहीकरण अपेक्षित !
स्त्री पुत्र बिल का मोह, मनोगति निम्नित
भयबद्ध संपद् हो लोक श्रेय हित धर्मित !

जो धर्मशास्त्र से स्फीत धर्मिणा एत जन
धति धारम विद्व तात्त्विक मति रेमे बहुर मन
भव सम में मिर वे मटका करके प्रतिज्ञम
संधा संघों का करण मार्ग प्रदर्शन !

जो सुलभ न सज को सुनकर भी विद्वको जन
कर सकते प्रहस न - पाते विरस सरल मन !
उसके ज्ञाता बन्ता रे भवभूत निरक्षय
मह नभ बसमें ही वह इस भव में तन्मय !

दुर्वर्त पुहा बहुर में पा पुद् - स्थित
धम्मार्म योय से उसको - मीन विपक्षित !
वे हर्ष लोक से परे, नित्य धारमिष्ठ -
करते ईश्वर पर ही भव जीवन साधुत !

रे उसे जानना सरय ज्ञान का धर्मन
उसको न जानना महामाज का कारण !
भूतों में स्वनिम ऐक्य श्रेय कर धर्मित
जह भू पर सास्त्रत जीवन करण निमित्त !

मनु से मनुष्य, महर्षी से प्रबिक महत्तर,
आत्मा बिर जाग्रत् हृदय गुहा के भीतर ।
बह साक्षी ही न रहे सक्रिय हो मू पर,
निद्र स्वर्ग प्ररोहर पहचाने जन घंटर ।

बह प्रबचन से मेघा या भव्य मनन से
तुलन बह सुलभ मनबल्ल आत्म बरण से ।
बह बिरज प्रकृती प्रविषय - कहते प्राक्तन
बह सख मूजन रस बन - गाथा युग कवि मन ।

यह आत्मा धर रथी नर तन जीवन रथ
सारथि सद्बुद्धि मनम् प्रग्रह मू प्रसि पय -
जिनके इन्द्रिय हय सत्साधन संशामित
के प्राप्त काम - भव रूप मन्नुर्मति नित ।

अतर्क बतलाते बुद्धि गुहा के भीतर
छायातपबत् रहते दो तत्व निरंतर !
के आत्मा जीव प्रभिन्न प्रीति प्रामित
रचते मिल रस बन - पूषक ज्योति तम सीमित ।

इन्द्रिय से पर नित विषय विषय से पर मन
मन से पर बुद्धि परे उससे आत्मा बन !
आत्मा से पर प्रसक्त पुरुष प्रति परतर,
मूमाति मूकम वाप्य प्रतिम गति - दुस्तर ।

प्रत्यक्ष प्रसन्न प्ररूप प्ररम प्रस्य नित
प्रार्थन रहित आत्मा प्ररतमर निरिचत !
बह गुण पुष्ट पट त्रिम पर सतरैय चित्रित
भव - जन्म मरण छायातप संवति विरचित ।

चित्तमें रे होता उदय प्रसन्न प्राम्कर नित
जगत् न प्रस्य - सब देव उती के प्रामित !
जो जगत् बहुमुख रूपों से ही परिचित
बह मूक - एवजा माता ही मूषुंजिन् ।

संपुत्र मात्र निर्धूम ज्योतिबन् बह वि
उन गुण पुरय से देह प्रान मन प्रामित
बह प्रतर मूक प्रविष्य मय वा ई
जिनके प्रकाश के दीपिन वातर प्री

पर्वत जस होता निम्न स्वप्नों में संचित
बहुवर्षी बहुस्पर्शों में बहु विधि संचित ।
एकत्व बोध से बनती धात्मा उग्रम
स्पर्शों मुद सरोवर में मिलकर संवृत्ति जल ।

एकादश स्वर्गिण द्वार, — दिव्य अक्ष का पुर,
धाते धाते गोपन अंत पथ से सुर ।
बढ़ उतर सूक्ष्म सर्शों के सोपानों पर
सीमा असीम मिल होते सीम निर्द्वार ।

एक ही धम्मि या वायु — धुनन में विरहित
स्पर्शों के ही धनुस्पर्श रूप धरती निव ।
स्पर्शों एक सर्वगत भूतात्मा अंतर्हित
स्पर्शों में पा बहु रूप बाह्य रहता स्थित ।

स्पर्शों भोक जसु रवि जसु योप से विरहित
धारमा न लिप्य भव बुद्ध में — बाह्य प्रतिष्ठित ।
बह विरव जसधि का मुह्य अटल स्तर निरिचत
बिससे प्रहर्ष सीमा तरय जग प्रेरित ।

बह एक अंतररमा सब को कर अधिष्ठ
बहुस बन करटा सर्व कामना पूरित ।
बह नित्य अनित्यों में चेतन में चेतन
उसको पा शास्त्रत सिन्धु शांति पाता मम ।

बह धनिर्वाच्य मुह्य धात्मा का सञ्चिद् बन
ज्योतिष हो उससे बन भू मन का प्राणन ।
जलते न वहाँ रवि जसि विद्युत्, तारागण
सब का प्रकाश उसके प्रकाश ही का कण ।

रे ऊर्ध्व मूम अस्वल्प अक्ष शाब्दा तन
बह मुक्त धमूत ज्योतिर्मय ब्रह्म अनाठन ।
संपूर्ण जगत् मह प्राण ब्रह्म के धामित
रवि धम्मि ईद माह्य यम भव से साधित ।

उस अवाद् मनसगोचर अरूप धात्मा पर
दुःख धात्मा की उपलब्धि परम धैर्यकर ।
हो तत्त्व भाव धीरे धात्मा के धमिमुक्त
बह प्रिय छेद नर को देता अक्षय मुक्त ।

ज्यों ऊर्ध्वमात्र रथता प्रिय प्राणा-बंधन,
तु प्रोपधि बनती रोम रात्रि बनता तन
प्रसर ही शर बन करता जग में विचरण
बहु नाम रूप, मन भ्रम प्राण हर धारण !

प्रज्वलित प्रमि स उठ तडत पावक कण
जड़ कर ज्यों होते लीन उठी में तल्लग
एकारमा ही आत्माओं की महत्वात्तय
तब व्यक्ति मुक्ति का प्रश्न मात्र भ्रम निश्चय !

पावक मूर्छा विधि यत्र सूर्य सति दुयवत्
बाह्य ज्ञान विषय उर प्राय वायु, पृथ्वी पत् -
दिग् भास्वर संतर आत्मा हृदय गुहाहर
व्यापक स्थित ऊपर नीचे भीतर बाहर !

संपुन विरह चिर ज्ञान कर्म इच्छा रत
हृदयस्य पुरुष चिर प्रमूत रूप भुम शारवत
बहु छेद प्रविष्टा प्रवि भेद मति बंधन
तु पर चमता घर नव विकास पय प्रतिक्षण !

सित् विरह बोध चित् धनुष शुभ्र आत्मा शर
शारवत प्रुष सत्य प्रकाम प्रीति मीर्ची हर,
तद्गत हो शर सा बनुते रूना धनुषाण
सद्गति में स्थिति ही परम सत्य का बोधन !

बो पत्नी रहत एक बुरा पर शारवत
कण्ठता पीपल फल एक स्वा रम में रत !
भूमरा बैद्यता भोग मुक्त मन धनधान
जीव ही ईश जो भव हित प्रमु प्रपित मन !

मित्र गत्य ज्ञान धम तप मे आत्मा प्रवित्र
मय ही प्रवी जग में न धनुष - यह निश्चयन !
जो सर्व भोग पय देवपान बह विम्लुन
हाना समपण ही जग जीवन विवर्तित !

बनहीन प्रमाद प्रमित का आत्मा दुमन
धम रहित ज्ञान - म्या मूर्धे र्गिम बधिन मन !
आत्मा का पा हाहाय गुष्ट होना मन
बह ध्यान सर्व में जग जीवन ही जीवन !

पर्वत जल होता निम्न स्तरों में संचित
बहुदली बहुस्तरों में बहु विधि संचित !
एकत्र बोध से बगती धारणा उज्ज्वल
स्वों शृङ्खला शरीर में मिलकर संज्ञित जल !

एकादश स्वर्णम द्वार, - विष्व भव का पुर,
घाते घाते जोपन अंत पत्र से सुर !
बढ़ उतर सुदम शीतों के सोपानों पर
सीमा असीम मिल होते सीम निरंतर !

एक ही धर्म या वायु - भुवन में विरहित
स्वों के ही अनुस्यू रूप धरती नित !
स्वों एक सर्वगत भूवात्मा अंतर्हित
स्वों में या बहु रूप बाह्य रहता स्थित !

स्वों शोक जसु रवि जसु बोध से विरहित
धारणा न लिप्त भव बुद्ध में - बाह्य प्रतिष्ठित !
बहु विश्व जलधि का गुह्य अतमस्तरनिश्चित
विषसे प्रहृष्य सीमा तरंग भव प्रेरित !

बहु एक अंतःरत्ना सब को कर अधिष्ठित
बहुधा बन करता सर्व कामना पूरित !
बहु नित्य धर्मियों में भेदन में भेदन
उसको या शास्त्र सिन्धु शांति पाता मन !

बहु धर्मिर्वाच्य सुख धारणा का अधिष्ठित
ज्योतिर्य ह्यो उतसे जल धू मन का प्रायण !
जलते न बह्नी रवि जलधि विद्युत् तापन
सब का प्रकाश उसके प्रकाश ही का कन !

रे ऊर्ध्व मूल अस्वत्थ अथ जलाना तन
बहु मुक्त, समुत् ज्योतिर्मय ब्रह्म सनातन !
संपूर्ण जगत् यह प्राण ब्रह्म के अधिष्ठित
रवि धर्मि ब्रह्म मास्त यम भय से साधित !

उस अथाह मनसोचर अरूप धारणा पर
बहु धारणा की उपलब्धि परम श्रेयस्कर !
हो तत्त्व भाव धीरे धारणा क अधिष्ठित
बहु रवि छेद नर को वैरा अलाय मुक्त !

ज्यों ऊर्जनाम रचता प्रिय प्राणा बंधन
मू प्रोपधि बगती रोम राजि बनता तन,
मदार ही धर बन करता जय में विचरन
बहु नाम रूप, मन मग्न प्राण कर धारण !

प्रखलित प्रानि छ उठ तड्डू पावक कम
उठ कर ज्यों होते भीन उसी में तत्त्व
एकारमा ही आत्माओं की महवालय
तब व्यक्ति मुक्ति का प्रश्न मात्र भ्रम निश्चय !

पावक मूर्धा बिशि भवण, सूर्य तसि दुगुणद,
नाक ज्ञान बिच उर प्राण वायु, पृथ्वी पदु—
विणु भास्वर अंतर आत्मा हृदय मुहावर
ध्यापक स्थित ऊपर नीचे भीतर बाहर !

संपूर्ण बिच बिच ज्ञान कम इच्छर रत
हृदयस्य पुर्य बिच समुत रूप कुम, तावत
बह छेद धविद्या संधि भेद मति बंधन
मू पर बसता धर नब बिवास पग प्रतिघण !

सित् बिच बोध बिद् धनुष मुग्न आत्मा कर
शावत ध्रुव सद्य धकाम प्रीति मौर्वी बर,
तदुपत हो कर सा बढ़ते रहना धनुष
मद्गति में स्थिति ही परम सद्य का भेषन !

हो पदी रहते एक बुद्ध पर तास्वत
पश्यता पीपल छन एक स्वाद रस में रत !
डूमरा देयता भोग-मुक्त मन धनदन
बीब ही रंग जो सब हित प्रमु-धमिजन !

नित्र नाय ज्ञान धम तप न आत्मा धमि
मत्य ही जयी जम में न धनुष — यह निश्चिन !
जा सर्व श्रेय पय देवपान बह रिक्त
हाता समग्र ही जय बीबन विरक्ति !

बनहीन प्रमाण धमि का आत्मा पुंन
धम रहिन ज्ञान — ज्यों सूर्य रमि बरिजन !
आत्मा का पा इन्द्रिय नूट होन न
बह ध्याय सर्व में जय बीबन बीबन !

नदियाँ ज्यों सागर में बह होतीं अवशित
त्यों मुक्त पुरप भी नाम रूप रज विरहित—
उस दिव्य परात्पर सृति में बह होता मय
भक्त रूप विकास में सुखता जिसका भाव्य ।

यह प्राण अमृत जन जिसके रस से सिंचित
इंद्रिय तन्मात्राएँ, — धानव प्ररोहित !
ज्यों बिह्व बसेरा जेते तह पर, निश्चित
आत्मा के छाया हीन कुक्ष परजन स्थित ।

पति स्त्री के हित पति स्त्री प्रिय मही — असंख्य
धन जन सुत देव न उनके हित प्रिय निरख्य !
आत्मा के हित प्रिय सर्व — स्वयं हो भूतल
आत्मा ही दर्शन मनम योम्य परमोज्वल ।

जय जीवन विरहित ब्रह्म निरर्पक कृष्ण स्वर,
बह रिक्त ज्योति जिसमें न सप्त रंग के स्तर ।
जो सर्व कृप्य सत्ता में उर करछे मय
वे वीच शसभ शास्त्रत बंधित होते क्षय ।

धन ही ब्रह्म अप्रज पीकों का धाम्य
सर्वोपधि — इसमें ही उद्भव्य पासन लय !
धिर प्राण शक्ति से घेरे प्रोत इसका तन
सर्वावुप — अनुप्राणित जिससे मय जीवन ।

इस प्राण कोप में व्याप्त प्रकाश मनोमय
विज्ञान रूप जिसकी चित आत्मा निरख्य ।
सत्कर्म बुद्धि को करता जो संभावित
जिसके भीतर धानव ब्रह्म अंतहित ।

जय असत् ब्रह्म से नाम रूप — सद् भाषा
बह सुष्ठु रसो वै स सर्वत्र समाया ।
इच्छा जन से ही एक बिबिध में बितरित
धानंद उसे करछा प्रेरित संवशित ।

मन बाधी लौट नहीं से घाते निरख्य —
धानंद बहुविद् को न सताते दुख मय ! —
बह पाप पुण्य बिस्ता से रहता विरहित
होनों ही उसके आत्म रूप में मज्जित !

धर्म ही ब्रह्म जिसमें सब उद्भव स्थिति सब
प्राण ही ब्रह्म का महत् धर्म का धाम्य ।
मन ब्रह्म - उमय ही धर्म प्राण का धाम्य
बिज्ञान ब्रह्म का इन सब का महदाधय ।

धर्म ब्रह्म - धाम्य निखिल सब उद्भव
धाम्य विश्व स्थिति उमय ही मय समब ।
निन्दित न धर्म यह जगत् धर्म ही में स्थित
हा धर्म प्राण बिज्ञान मनम प्रथम धर्मित ।

केबुमी भाग्य ज्या मय निरमता याह
गन का धर्मिकम कर प्रगतिहीम शायुग नर ।
जा नहीं मनुज प्रेमी रचना धर्म माधव
बह मया मनुष्य नहीं - बिज्ञान पथ बाधक ।

बुध ज्ञान काय न मुक्ताबमि सिद्ध भास्वर
कवि ने म्या जन भाषा हित धर्मिक म भग -
मानव ईश्वर का धर्मिकी - बह माधव
प्रथम धर्म स्वयं में हा धर्म मन निरम

नेत्रा यग कवि ने सबम कम धाम्यामिक
पथी पर ज्ञान प्रमू भाग्य म धर्म धिब ।।
बह मय वीरु जीवन मन की जट गंधहर
मानाध रूप तम मे निमान रम र्वर ।।

धावाहन उमने बिद्या माधु जन माधन
पियम बह ध्यविता धर्म बुद्धि मानव मन ।
हा बिजन प्राप्त उमन पर धर्मिकन जनम
नब धाम्या दीपित मन शुभ प्रगति जीवन ।

जाया जाया जन सबन बनने जाया
नित्र जगममब - धनुगाग धर्मिकनुम मागा ।
मौग्य प्रेम का म पर कर धाराधन
धाम्य नील नुम बह जनों न मन मन ।

प्रिय हा मानव प्रिय मु प्रिय गति गु धर्म
प्रिय पथ बिहय, प्रिय कनु प्रिय गति धर्म मानव ।
प्रिय जिज्ञासों के मृग प्रिय हा मनी गंधर
धर्मिक न मानव हा धर्मिकी व प्रति धर्म ।

नविषीं ज्यों सागर में बह होती प्रबलित
त्यों मुक्त पुष्प भी नाम रूप रज विरहित—
उस दिव्य परत्पर श्रुति में बह होता धम
मम कम विकास में सुनता जिसका आशय !

मह प्राण अमृत मम जिसके रस से सिंचित
इंद्रिय तन्मात्राएँ, — धारण प्ररोहित !
ज्यों बिहय बसेरा सेते तट पर, निश्चित
आत्मा के छाया हीन बुझ परजप स्थित !

पति स्त्री के हित पति स्त्री प्रिय नहीं — असंख्य
धन जन सुत बेब न सगके हित प्रिय निश्चय !
आत्मा के हित प्रिय सर्व — स्वर्ग हो मृतम
आत्मा ही दर्शन मगन योग्य परमोच्चम !

जग जीवन विरहित ब्रह्म निरबंक शुक स्वर,
मह रिक्त ज्योति जिसमें न सप्त रंगके स्तर !
जो सर्व शून्य सत्ता में उर करते लम
वे दीप जलध शास्त्रत बंधित होते क्षय !

धन ही ब्रह्म धनम जीवों का आशय
सर्वोपधि — इसमें ही सद्मम पामन मम !
धिर प्राण शक्ति से घोर प्रोठ इसका तन
सर्वायुष — अनुप्राणित जिससे धम जीवन !

इस प्राण कोप में व्याप्त प्रकाश मनोमय
विज्ञान रूप जिसकी चित आत्मा निश्चय !
सत्कर्म श्रुति को करता जो संज्ञाहित
जिसके भीतर धारण ब्रह्म संतर्हित !

उस असत् ब्रह्म से नाम रूप — सद् धाया
बह सुकृत रसो वै स, सर्वत्र समाया !
इच्छा मन से ही एक बिबिध में वितरित
धारण उसे करता प्रेरित संबंधित !

मन बाजी लीट वही से धाते निश्चय —
धारण ब्रह्मविद् को न सताते सुख धम ! —
बह पाप पुष्प बिन्ता से चूता विरहित
दोनों ही उच्छे आत्म रूप में मग्निध !

प्रप ही ब्रह्म जिममें सब उद्भव स्थिति सप
प्राण ही ब्रह्म जा महत् प्रप का साध्य ।
मन ब्रह्म - उभय ही प्रप प्राण का साम्य
बिज्ञान ब्रह्म जो हम सब का महदात्म्य ।

मानव ब्रह्म - धानद निद्रिम सब उद्भव
धानद बिम्ब स्थिति उगमें ही सय समब ।
निद्रित न प्रप यह जगत् प्रप ही में स्थित
हा प्रप प्राण बिज्ञान मनम् प्रम प्रपित ।

कैपुसी भाट्ट ज्या सप निवमना बाहर
गन का घतिकम कर प्रमतिगौन हा युग नर ।
जा नही मनुज प्रेमी रचना धम साधक
बह नया मनुष्य नही - बिकाम पैव बाधक ।
धम ज्ञान काय स मकनाबमि बिद् भारत
कवि ने ज्या जन भावी हित प्रजमि स भर -
मानव ईश्वर का प्रपित की - कर गादर
प्रम धम स्वम में हा धम मन निरतर ।

रेखा युग कवि ने सबम धम साध्यामिर
पथी परज्ञान प्रमू भागत भ प्रब धिब ।।
बह प्रम रीक जीवन मन की जट रूडर
मानाध कय तम में निममम रम ईश्वर ।।

साक्षात् उमने किया साधु जय साधन
गियने कः स्थिति यह बुट्टि मानव मन ।
हा बिना प्राण उग्रत पग इमिवन् जनगम
नव धाम्या हीपिन मन शुभ प्रेरित जीवन ।

जागा जाया जन मजन बनने जागा
निज जग्ममय - धनगम मुक्ति शुभ मौमा ।
मौग्य प्रेम का स पर कर धाराधन
सानंद हीन शुभ बग जनों र मन मन ।

प्रिय हो मानव प्रिय भू प्रिय गति यूर धर
प्रिय धन बिना प्रिय नून प्रिय निद्रि मरि मागर ।
प्रिय गितधों के मुग प्रिय हों स्नेही मन्धर
धनगम सागर हा ब्रह्मा व प्रति धनर ।

जब जीवन के प्रति हो धन्य आकर्षण
मानवता प्रेमी मंगल कामी हो मन !
तुम कर्म चेतना - हों कृतार्थ जीवन क्षण
भू रचना जीवी हों प्रजस्य धम रत जन !

सांसारिक जीवन ही भयवत् वैभव घन
निष्ठ व्यक्ति सिद्धियाँ संभव जिसमें मृतन !
जब विन्दु सिन्धु में बत आता दिम् विस्तृत
भव यान पार समता जिसमें नभ भूविठ !

धा लयी पीड़ियाँ मुझ से जीवन मानन
जब भू पर करे बरे कुसुमित विक्रमप्रामन !
भोर्मे जीवनम मधु उचार मुझक मुवटी गम
रम सस्कृत हों मन सोमा धमिमिय लावन !

नभ हूवय जगम जे रिक्त मगुज जे भीतर -
नभ मनुष्यत्व का धमृत भुवन रत सहर !
जिसके स्वर्णिम अतबल म उतरे ईश्वर
नभ रचना मंगल का दे जन भू की बर !

सांस्कृतिक क्रांति हो जीवन में बहिरंतर
चित्पावन सामर मे न्हाएँ नागी नर !
नभ जीवन स्वप्नों से हों बीप्य विपत्य
मानव मानव के भाए धीर निकटतर !

फिर अजरतम समीत लोक हो महन्त
बरस धानन धमृत जन भ हो जामृत !
यति कलक सौध - विज्ञान करा से निमित्त
मानव आत्मा की महिमा से हो मचित !

खाल उपाएँ नए स्वर्ग बतावन
आध्यात्मिक वैभव से कुसुमित हाचितिजन !
दर्शे जन अंतर अंतरिक में जब कर
दिब मोक्ष - धमित शास्त्रत प्रकार मे भास्वर !

सामग्री सीमासा से मुक्त धरा जन
भौतिक निजीव में घटक रहे प्रब भीषण !
पठ धार्मिक भाषा अन्त हृदय प्रामथ में
मय तनबाद मरेह गरजने मन में !

बौद्धिक विकास से दिग् बिस्तृत जन घंटर, -
पुट रहा हृदय - आस्था हूँ निर्मम पर्यर !
भौतिक प्राणिक दर्शन से पा उद्दीपन
अवचेतन कर्म में घँसता भू पीषन !

उर की आभा बासना गर्त में मज्जित
भावों की शोभा मलिन - इन्द्र भू सुच्छि !
घंटाघेठन धानंद ज्योति का घंवर
घुमों से छारित शुभ्र प्रीति का घंटर !

अनिवार्य अतः नव राग बाधना बन कर
उठरो तुम बिचर जीवन स्वर्ग घरा पर !
श्री शोभा प्रीति प्रतीति किंठर निःस्वर
मानव घंटर में घुमों ज्योति रत्न घंवर !

मत्त संप्रदाय घमों बमों के उपर
मानवता का भू स्वर्ग रचें नारी नर !
त्रिघने उर में हा सुजन हर्य रत्न ईश्वर
बाहर पीषन शोभा जन मंगल का नर !

बाइबिल कुरान में भुति पुण्य में निरख्य
एक ही भोत - ईश्वर मंगल - ज्योतिर्मय !
भुति त्रिघनों का जा जग प्रकाश की शबासा,
ईसा के दिव्य हृदय में उगवा बासा !

अपनिपद् ज्योम से भर किरणों के निरर
बाइबिल में हों बन गए अमृत दिग् न्य सर !
बह प्राणों का पावक कुरान में आम्बर
जलता अघंठ घाम्बा का बन तुर्य स्वर !

नव स्वर्न खतने निघरा भू पर पावन
हो निगा अरठ घाम्बर गबाग बनें दाप !
यह सामूहिक दिग् उप संवरण मुनन
अब प्रथम बार करला जन भू पर बिचरण !

इतिहास जानता कर्म न हमला मोदन -
गाण्डविज वृत्त से रहा जगम नव बनन !
महनी होंदी गुमबो बापाएँ निर्मम
बट घुमा देन अर बाप जोगा मति घम !

परजेषा पित्रर तुष्ट मनुज पशु प्रतिक्षण,
 उठने हंगे संस्कार न कूर पुरातन ।
 मधु यत्न स्माप्य मत करो मुकुट की धासा
 मू पर कृतार्थ होयी प्रभु की धमिलासा ।
 पय शूल पूस हों बंधन बने न धाया
 नास्वत जीवन की नहीं धम्य परिधाया ।
 धीरे मत की सीमा धतिक्म कर जीवन
 धात्मा का क्षेत्र बनेया - ज्योतिष प्राणम ।
 धनुभूति धावना मात्र मही परमेस्वर
 उसको यकार्य स्तर पर होना पुम् जोषर ।
 धम्यतर ही में नहीं बहिर्जग में भी
 हो नाम बृत् पर मूर्त रूप रस पुष्कर ।

संगीत नया से रहा ब्रह्म धोपम में
 धरता धराध्य लिखरों से मानव मत में ।
 रस रहा धावना में मधु धमूत प्रतिक्षण
 सुम रहे नए स्वर मलय हृदय नव स्पंदन ।
 बहु यत्न बल रहे नेतम उपनेतम में
 हो सके मूर्त दिवसीत धरा जीवन में !
 विज्ञान बहिर्जग प्राणन करणा निमित्त
 धरती का रूप सँजो मुख कर दिक् धोमित ।
 बल महए मए युग में कर रहे परार्पण
 बड़ रीत्य प्रकृति से मानव मुठ समापन ।
 पर्वताकार तम का शानव जो धीतर
 उससे सोहा से धात्म बयी हो युग नर ।
 धव नवी सुमहमी प्रीति हृदय धंवर में
 हो चुकी उदय - धामा धति से धंतर में
 बूधती कूर दानव तम से जो निर्भय
 मन धावी का रूप क्षेत्र मनुज का दुर्जय ।
 धाशोमित नव युग शोल ब्रूतठा निःस्वर
 नव मानव लिखु जिघर्षे - धस्तुट धघरों पर
 सँदरता नव संगीत जिघे स्वर रेकर
 धरती को स्वर्ग बनारंभे बन मुष्कर ।

मैं देख रहा हूँ उठते फूसों के क्षण
नाचते रजत मूपुर झंझट कर उड़ुगण !
गाता घोषित कर सिरा पास में गर्जन
स्वप्न अस्थि मांस आनंद ज्योति के बाहन !

मैं अमृत सृष्टि गढ़ रहा—प्रेयसी नूतन
शोभा पावक तन स्वग प्रीति क्षीपित मन !
जिसके स्वप्नों में नव प्रकाश अबमाहन
आनंद उपस्थिति से भरता नित पावन !

दुर्बल स्तन धोणी भार नडा गत नाटी
तारामों जड़ी रहस्यमयी धौधियारी—
अब स्वप्न रश्मि मधु गंध शरद ज्योत्स्ना बन
सौन्दर्य प्रीति आनंद-ज्योति हरती मन !

कामिन्व महत् मावी रामा के ऊपर
हो स्वर्ग मूर्त शोभा बेही में भू पर !
बह हो स्वर्णिम पतञ्जला की बाहक
अन मन में मुसगो आत्मा का रस पावक !

देखा यदि ने सीता को सित आभा तन
पाठाम पैठ जो निघरी थी पया बन !
अन-भू छायाभा में अब सुपना मंडित
अन स्वप्न चतना काली जड़ मुद्य क्षीपित !

कविने चिन् स्वर्णिम प्रकाश क धन का
जग धीबल में कटो रिमंत प्रराहित,
आत्मा का शत त्रिगु अथर पावक कण
रहे न अंतर मम ही में अंतर्नि !

घरा उदर में जान नपा मुनडा मैं
अन मे-रहे-नए स्वर्ग की अमर,
प्रसन्न अथा क प्रसन्न शक्ति स निघर
अमृत पुरण का स्वप्न मुबन रम आरधन !

मरवेया पिबर तुष्ट मनुष्य पशु प्रतिक्षण,
 उठने सेवे संस्कार न कूर पुण्यतन !
 सधु मत्त रसाध्य मत करो मुकुट की धासा
 धु पर कृतार्थ होगी प्रभु की धमिभाषा ।
 पद्म मूढ फूल हों बंधन बने न भाषा
 शाश्वत जीवन की नहीं धम्य परिभाषा ।
 धीरे मन की सीमा धतिक्रम कर जीवन
 धारमा का क्षेत्र बनेगा - ज्योतिष्ठ प्राणध ।
 धनुषूति धावमा मात्र नहीं परमेस्वर
 उचको यथार्थ स्तर पर होमा दृग् गोचर ।
 धम्यंतर ही में तहीं बहिर्जय में धी
 हो नाम-बुठ पर मूर्त रूप रस पुष्कर !

संपीठ गया से रहा जगम घोषण में
 झरता धसब्ध सिद्धियों से मानव मन में !
 रस रहा भावना में मधु धनुष प्रतिक्षण
 गुण रहे मए स्वर धम्य हृदय नभ स्वदन !
 बहु मत्त जल रहे चेतन उपचेतन में
 हो सके मूर्त विवगीत धरा जीवन में ।
 विज्ञान बहिर्जय प्राणध करता निर्मित
 धरती का रूप धँवो मुख कर विद् बोधित !
 जन महत् नए युग में कर रहे पदार्पण
 बड़ रीत्य प्रकृति से मानव मुख समापन !
 पर्वताकार तम का धानव जो धीतर
 उचछे भोहा से धारम जनी हो मुम नर !
 धम नधी धुमहसी प्रीति हृदय धंवर में
 हो बुकी उचय - धामा धसि से धंवर में
 पूसती कूर धानव तम से जो निर्धय
 मन धारी का रूप क्षेत्र मनुष्य का दुर्जय !

धाधोमित नभ मुष बोध मूलता निःस्वर
 नभ मानव धिनु धिसमें - धस्पूट धधरें पर
 मँडरता नभ संपीठ धिते स्वर बेकर
 धरती की स्वर्ग बनाएँवे जन मुखकर !

मैं देख रहा हूँ उल्टे फूलों के खग,
मापते रजत नूपुर संकृत कर उद्गम !
माता लोहित, कर शिरा पास में नतन
एक अस्थि मांस धारण ज्योति के बाह्य !

मैं अमृत सृष्टि गढ़ रहा—प्रेयसी नृतन,
शोभा पावक तन स्वर्ग प्रीति वीर्यित मन !
जिसके स्पर्शों में तब प्रकाश प्रबमाह्वन
धारण उपस्थिति से भरता निरु पावन !

दुर्बह स्तन धोनी भार नवा मत नारी
तापमों षड़ी रहस्यमयी धौंधिपारी—
प्रब स्वग रश्मि मधु रंघ भरद ज्योत्स्ना बन
सीन्धर्य प्रीति धारण ज्योति, हृत्ती मन !

दामित्व महत् मावी रामा के ऊपर
हो स्वग मूर्त शोभा देही में मू पर !
बह हो स्वनिम अंतःप्रकाश की बहू
जन मन में मुनये धारणा का रम पावक !

देखा कवि ने चीता को सिंग घामा ठन
पाताल पीठ वा निघरी थी रामा बन !
जन मू छायाभा में प्रब मुनया मूर्ति
बन स्वग पतना करती प्रद मुख दीप्ति !

कविते पितृ स्वनिम प्रकाश के धन का
जय जीवन में करो निरु प्रकाशित,
धारणा का शत विह्व अमर पावक बन
रहे न अंतर तम ही में अंशित !

घरा उदर में काग मया कुनग मैं
जन्म-से रहे-नए स्वर्ग की मय,
प्रमय म्यया के प्रमय शरि व निरु
अमृत पुरण का स्वग नृतन तप धारण !

गरजेया पिबर तुष्ट मनुष पशु प्रतिक्षण,
 उठने हेंवे संस्कार म कूर पुण्यतन !
 मधु मल स्नाय्य मत करो मुकुट की धासा
 मू पर कृपार्थ होसी प्रभु की अभिभाषा ।
 पशु कृत पूत हों बंधन बने न भाषा
 शास्त्रत जीवन की नहीं धर्म परिभाषा ।
 धीरे मन की सीमा प्रतिष्ठा कर जीवन
 धारणा का क्षेत्र बनेया - ज्योतिष प्राणध ।
 धनुभूति भाषना मात्र नहीं परमेस्वर
 उचको यथार्थ स्तर पर होना बुद्ध गोचर !
 धर्म्यतर ही में नहीं बहिर्जग में भी
 हो माम बुध पर मूर्त रूप रस पुष्कर !

संघीत नया से रहा जग योपन में
 सरता धस्यद बिबरों से मानव मन में ।
 रस रहा भाषना में मधु धनुष प्रतिक्षण
 सुन रहे नए स्वर शबन हृदय नव स्वयन !
 बहु मल बस रहे चेतन रूपभेदन में
 हो सके मूर्त विवधीत घट जीवन में !
 विज्ञान बहिर्जग प्राणध करता निमित्त
 धरती का रूप सँजो मुख कर बिष् सोपित !
 जग मह्य नए युग में कर रहे पदार्थध
 जड़ रीत्य प्रकृति से मानव युद्ध समापन ।
 पर्वताकार तम का बानध जो भीतर
 उससे लोहा से धारम जयी हो युग नर ।
 धन मयी सुनहसी प्रीति हृदय धंवर में
 हो बुद्धी उदय - धासा धसि से धंतर में
 बुझती कूर बानध तम से जो निर्धय
 मन भाबी का रस क्षेत्र मनुष का बुर्जय !

धादोसित नव मुय दोल श्रुमता निस्वर
 नव मानव विष् जितमें - धस्युष्ट धधरों पर
 मँडपता नव संतीत जिसे स्वर बेकर
 धरती को स्वर्ग बनाएये जन मुष्कर ।

मैं देख रहा, हंस उठ्ये पूरों के लज
नाचते रजत नूपुर झंझट कर उडुगध !
गाता शोणित कर त्रिप जाम में मर्तन
त्वज धन्वि मांस धानंद ज्योति के बाहन !

मैं धमुत सृष्टि गढ़ रहा—प्रेयसी नूतन
शोभा पावक तन स्वग प्रीति बीयित मन !
त्रिसके स्वप्नों में नव प्रकाश भवमाहन
धानं उपस्थिति से भरता निठ पावन !

बुर्बह स्तन शोणी भार गता गत नारी
तारामों जड़ी रहस्यमयी घोंघियारी—
धव स्वर्ण रश्मि मधु गंध शरद ज्योत्स्ना बन
सौन्दर्य प्रीति धानंद-ज्योति हूखी मन !

बामित्व महत् भाबी रामा के ऊपर
हो स्वर्ण मूर्त शोभा बेही में भू पर !
बहु हो स्वप्नित धंतप्रकाश की वाहक
जन मन में मुक्तगे धारमा का रस पावक !

देखा कबि ने सीता को सित धामा तन
पाताम पैठ जो त्रिपरी भी राधा बन !
जन भू छामामा में धय गुणमा मंदित
बन स्वग धतना करती जड़ मूय दीयित !

कबित चित् स्वप्नित प्रकाश के धन को
जय जीवम में करा विगत प्रराहित
धारमा का शत त्रिपु धमर पावक कण
रहे न धंतर नम ही में धंतहित !

धरा उर में जान लगा मुक्ता मैं
जम ने रहे—मए स्वर्ण की मधेर
प्रधय ध्यया न प्रमेय बारि स निशर
धमुत पुरण का स्वर्ण मुबन रस मातर !

परजेया पिबर तुष्ट मनुज पनु प्रतिज्ञा
 उठने ह्ये संस्कार न कूर पुपतन ।
 मधु यत्न यताप्य मठ करो मुकुट की धाया
 मू पर इत्थार्थ होयी प्रभु की अधिभाया ।
 पब सुत फूल हों बंधन बने न धाया
 क्षारवत जीवन की मही धम्य परिभाया ।
 धीरे मन की सीमा पठिक्म कर जीवन
 धात्मा का लोत बनेगा - ज्योतिष प्रांगण ।
 मनुमूर्ति भावना मात्र मही परमेश्वर,
 उसको यथार्थ स्तर पर होना युग् गोबर ।
 धर्म्यतर ही में नहीं बहिर्जन में भी
 हो नाम बुठ पर मूर्ठ रूप रघ पुष्कर ।

संगीत नमा ले रहा जन्म गोपन में
 क्षरता धम्य सिद्धों से धानन मन में ।
 रघ रहा भावना में मधु धमूठ प्रतिज्ञा
 सुन रहे नए स्वर मवन हृदय मय स्पंदन ।
 बहु यत्न बन रहे चेतन उपचेतन में
 हो सके मूर्ठ दिवनीत घट जीवन में ।
 विज्ञान बहिर्जन प्रापन करता निर्मित
 धरती का ह्य सौंजे मुक्त कर विद् सोमित ।
 जन महत् नए युग में कर रहे पदार्पण
 बड़ दैत्य प्रकृति से मानन मुठ समापन ।
 परंताकार तम का शानन जो भीतर
 उगसे लोहा से धात्न जयी हो युग नर ।
 धव नयी सुनहरी प्रीति हृदय धंवर में
 हो चुकी उदय - धाया पथि से धंतर में
 जूझती कूर शानन तम से जो निर्धय
 मन भावी का रण दोष मनुज का दुर्जय ।

प्रादोक्षित नव युग बीज क्षुभता निस्वर
 नव मानन धिनु जितमें - धस्कुट धघटों पर
 मंडपता नव संगीत जिसे स्वर बेकर
 धरती को स्वर्ग बनार्ये जन मुवकर ।

द्वितीय खण्ड
अवचेतन्य

कला द्वार

१ संस्थान

२ इन्द्र

३ विज्ञान

सत्त्यों में ही मनुज सत्य बिजयी
जयी शक्तियों में ही अंतर्बल
संस्कारों में जग-भू रचना ब्रत,
अथ संकष्ट में मनुज प्रेक्ष्य संवस ।

सस्यान

प्रगत, मुग्ध बन्धु का मम
 प्रभु के प्रिय प्रतिनिधि पर,
 मंगलमय हो तुमको
 नव मू बीजन का बर !
 पाप पुष्प से ऊपर
 तू प्रमत्त बिन्दु भास्वर,
 निष्कर रहा युग तम मे
 नव मानव मू शिवर !

अमर जित्सी तू कसे प्रवीण
 मुक्त शारवत का से आह्लाद
 अतमा की दे गहरी नीब
 पुन गङ्ग नव जन मू प्रासाद !
 शून्य तर्की स्वर तार बिहीन
 गूँजती भर अशब्द सकार,
 बरसता निराकार सौन्दर्य
 मूजन स्वप्नों व संघ पमार !

गिरे रथ शुद्ध भावना मेनु
 सौध मू मन ममुद्र - उम पार
 उतरती रस सिद्ध पिग्मय ज्योति
 मार्ग तम को जो कात्री प्यार !
 कथा व विष कथा का राग
 बन्द बन्धु यानी का अविचार
 लोह जीवन के भीतर बैठ
 स्वर्ग गाथा व उमे सेवार !

बर्ष दश हरि ने कबि उर स्वप्न
 किया भू पमकों पर साकार,
 दिया सांस्कृतिक ब्रुत को रूप
 जोड़ बन कसा तित्प संभार ।
 निमूत गंगा तट, जनपद प्रांत
 प्रहृत जन मन को परख संवार,
 निवारी नयी भावना भूमि
 संजा जीवन मूस्यो का सार ।

प्राप्त कर बृहद् रम्य भू भाग
 बुद्ध राजा ठाकुर म शान
 रचा जन कला साठ प्रासाद
 ताम कति मंडप बेति बितान ।
 मसिन बिभी पाबों की भूमि
 उठा जीवन होमा संस्थान -
 कठिन मिट्टी धम जल में मूष
 हृदय शीरम धारमा का पान ।

मानसिक भौतिक पुष्प संपत्ति
 गुलम पांक्तिक बस युग क पास,
 ज्ञान विज्ञान संगठन सक्रिय
 प्राविधिक कौशल कर्म प्रयास ।
 न भीतर शक्ति न बाहर श्रेय
 जयत हित युव संकट राज पार,
 उच्च बेतना बिना प्रतिवार्य
 न संवोजन गंधर्ब मब शीर !

बनना मात्र न धार्मिक स्वोक्ति
 प्राण इन्द्रिय मन के उम पार -
 इन्हें प्रतिजम कर बहु प्रविचार
 मुक्त बहती ममस रम पार ।
 देह मन प्राग्मा में बहु ध्यात
 देग राष्ट्रों में बटु धर्मिका
 भूत मघ., प्रविष्य ने युवत -
 पूर्व नू जीवन में हो मरता !

स्त्रीस प्रस्त्रीस मूस्य वो हास,
 प्रसुंदर सुंदर मुम स्थिति पाव
 वन्द्य प्रतिभ्य कर, रस कस्यापि
 सरय सिबमय मू बोभा गात ।
 सूक्ष्म रस सृष्टि तुमि का व्येय
 लोक मंगल सुख प्रेरित माव -
 संत ऋषि पोमी भी भक्तार्थ
 कसा के यदि न तत्र वे छाव ।

सद्य कवि का न मात्र ध्यानव
 न रस ही उसकी प्रतिम सिद्धि
 उभय अनुभूति जनिव परिणाम
 मर्ष गौरव की करते वृद्धि ।
 काव्य का तत्व अनिर्वचनीय
 हृदय प्रज्ञा से संभव धीम
 व्यक्त करता संत शीर्ष्य
 भावना तन्मय कवि का योग ।

रूपने कर्षों को वे पंख
 बदलता मुन पट बूस्य महान्
 उड़ रहे पक्ष मास ऋतु वर्ष
 उड़ रही क्षतियाँ दिशि समयमान ।
 बदलता रमस वेप से विश्व
 मनुज के तन मन जीवन प्राण
 महत् युग चित्रपटी में वेव
 वेतना का अजेय आक्यान !

न माने मन यदि सत्य प्रकाश
 स्वल्प मति समझे कसा बिलास
 वरण कर तब विकास के तत्व
 हरेँ सहृदय जन मू तन सास ।
 जीर्ण जीवन के बस्त उठार
 प्राण नर दोर्ले अंतर द्वार, -
 प्राण मन (बहू मू संस्कृति पीठ ।)
 वेह से निघर करें धमिनार !

बप बरु हरि ने कवि उर स्वप्न
 किया मू पसकों पर साकार,
 दिया सांस्कृतिक बूत को रूप
 जोड़ जन कसा गिस्व संभार !
 निमूत गंगा तट, जनपद प्रांत
 प्रकृत जन मन को परख सेंभार,
 निचारी नयी भावना भूमि
 संजा जीवन मूस्या का सार !

प्राप्त कर बृहद् रम्य मू भाव
 बूद राजा ठाकुर म दान
 रखा जन कसा लोक प्रासाद
 तान कसि मंडप बेलि बितान !
 मलिन बिभी गाँवों की भूमि
 उठा जीवन शोभा संस्थान -
 कठिन मिट्टी भ्रम पस में गुँप
 हृदय सौरभ प्रारमा वा गान !

मानसिक मौखिक पुषु संपत्ति
 मुसम यात्रिक बस युग क पान
 ज्ञान विज्ञान संपत्तन शक्ति
 प्राविधिब कोशल कर्म प्रयास !
 न भीतर जाति न बाहर श्रेय
 जपत्र हित युग संकट दास पार
 उच्च बेतना बिना अनिचार्य
 न संपोत्रन नमब गद घोर !

बेतना मात्र न प्राग्मिक ग्योति
 प्राप्त इन्द्रिय मन के उम पार -
 इन्हें घटित्रम कर बहु प्रबिकार
 मुक्त बहती ममघ रम धार !
 दह मन प्राग्मा में बह घ्याप्त
 देग राष्ट्रों में बह घबिमका
 मून गघ, प्रबिष्य म मुक्त -
 पुर्ष मू जीवन में हो पार !

शरीर अस्सील मूख्य हो हाथ
 प्रसूंदर सुंदर मुन स्थिति पाव
 इन्द्र अठिक्रम कर, रच कस्यापि
 सत्य तिवमय भू सोमा मात्र ।
 सूक्ष्म रस सृष्टि तूति का ध्येय
 लोक मंगल सुख प्रेरित मात्र -
 संत ऋषि योगी भी अह्वार्य
 कृता के यदि न मत्र के छात्र !

मक्य कवि का न मात्र आनंद
 न रस ही उचकी अंतिम सिद्धि
 उभय अनुभूति बनित परिणाम
 अर्प गौरव की करते वृद्धि !
 काव्य का तत्व अनिर्वचनीय
 हृदय प्रज्ञा से संभव भोग
 व्यक्त करता अंत सौन्दर्य
 भावना तन्मय कवि का योग ।

कल्पने शब्दों को दे पक्ष
 बदलता घुम पट दुःख महामु,
 उड़ रहे पक्ष मास ऋतु वर्ष
 उड़ रही शक्तियाँ विनि समयमान ।
 बदलता रभस बेय से विश्व
 मनुज के तन मन जीवन प्राण
 महर्षि मुक्त चित्तपटी में बेय
 बेतना का अज्ञेय आख्यात ।

न माने मन यदि सत्य प्रकाश
 स्वल्प मति समझे कृता जिलास
 बरण कर नव विकास के तत्व
 हरे सहृदय जन भू तम वास ।
 भीर्ष जीवन के बस्त उदार
 प्राण नर खोलें अंतर द्वार -
 प्राण मन (बहु भू संसृति पीठ ।)
 देह से मिथर करें अमिमार ।

बप बस हरि ने कवि उर स्वप्न
 किया भू पसकों पर साकार,
 दिया सांस्कृतिक वृत्त को रूप
 जोड़ जन कसा शिल्प संसार !
 निमृत्त गंगा तट, जमपद प्रोत
 प्रकृत जन मन को परछ सेवार
 निवारी नयी भावना मूमि
 संज्ञा जीवन मृत्या का सार !

प्राप्त कर बृहद् रम्य भू भाग
 बुद्ध राजा ठाकुर म बाग
 रक्षा जन कसा साक प्रासाद
 शान कर्मि मंडप बेसि बितान !
 मसिन बिधी पाँबां की भूमि
 उठा जीवन लोमा संव्यान -
 कठिन मिट्टी क्षम जस में पूँप
 हृदय शीरम आत्मा का गान !

मानसिक भौतिक पुत्र मंपसि
 सुपभ पारिक बस युग क पाम
 ज्ञान बिज्ञान संघटन मक्ति
 प्राविधि बोरस बर्म प्रपाम !
 न भीतर शांति न बाहर श्रेय
 जगत हित युग संघट लस घोर
 उच्च चेतना बिना अनिवार्य
 न संयोजन संभव सब घोर !

चेतना मात्र न प्राग्मिक ग्याति
 प्राप्त इन्द्रिय मन क उम पार -
 इच्छे अनिबन्ध का बह परिवार
 मुक्त बहनी ममय रम धार !
 देह मन प्राग्मा में बर ध्यान
 देह पदों में का अधिभक्त
 भूत मय- भविष्य में मुक्त -
 पूर्व भू जीवन में हा धन !

सभ्यता को हृत् मानव बुद्धि
 चरम शिव् विभव कर चुकी शान
 विश्व का हस्तामलक समान
 विजित दिक्, - अंतरिक्ष अभियान !
 शुष्क जड़ तन्म्यों के मद बीच
 भटकते मृग जल में जल प्राप्त
 खोजता नवी भावना धूमि
 मनुष्य का रिक्त हृदय धनजान ।

पाँच वर्षों में जल ने जूझ
 बाह्य संघर्ष किया निर्माण
 बुगाए कला भवन के हेतु
 वस्तु साधन उपकरण विधान !
 सँभारे लसित कला के कल
 बुला गायक बादक स्वरकार,
 छात्र छात्रार्थ, शिक्षक सुब
 इन्टीजन नर्तक गट छविकार ।

समा संरक्षक धर्म सभ्य
 बड़ाई शिबिर शक्ति निधि कोष
 रूप रेखा विकसित कर स्तुल
 मिसा हरि उर को धम संतोष ।
 मोक्ष गृह, स्वास्थ्य शिबिर एकांत
 स्नान घर, सीकर, शाहल तस्य
 रंग धृ, कीड़ा बम उद्यान
 सठा गृह, तब पत्र मूल्य धनस्य ।

सँभार मानवीय परिवेष
 घर को उर शोभा में डाल
 बड़ी जिज्ञासा जन में मूक
 शिबिर का सौष्ठव देख विद्यास !
 कील वह अंतर्जीवन सत्य
 लोक मू का विद्यमै मुख ध्येय ?
 मधुर कवि उर का शोभा - स्वप्न
 मूक हरि प्रिया का प्रिय ध्येय ?

ज्ञात या नहीं किसी को मर्या,
 समस्त उसको हरि का आवेस
 गूजन भ्रम में रहूँ सब मन
 समर्पित हरि के लिए प्रहोप ।
 मदायीय या हरि का व्यक्तित्व
 कर्ममय उसके भ्रष्टा त्याग
 सभी प्रार्थित उसकी ओर
 इस सब पर या सम अनुसम ।

शिबिर या केन्द्र बिन्दु पर स्वल्प
 निद्रित जन कम क्षेत्र या यौव
 प्रकल्पित रचना भ्रम की शक्ति
 जनों पर पड़ा प्रदुष्य प्रभाव ।
 प्रथम शिक्षा - हरि कहता बाह्य
 कर्म पर हो निष्ठा विश्वास
 कर्म का प्राप त्याग या गुड
 जना का संभव मनोविक्रम ।

कर्म-प्रेरणा करें जन प्राप्त
 रिक्त जीवन बर्जन से मुक्त -
 कर्म प्रेरणा शक्ति का स्रोत
 जनों को करे लोह संयुक्त ।
 भाष्य भ्रम पर बीटे निरुपाय
 पूर्ववृत्त पापों के प्रमित्युक्त -
 जने छाया जीवन शैतन्य
 कर्म ईश्वर, जन हों न विमुक्त ।

धीर भी पाष वय में कष्ट
 या सवा स्वप्न मूर्त प्रान्त
 जया जन जन में स्पंदन रूढ
 धरा जीवन में गति संपात ।
 मोक्ष पर बाण करने बाण
 बड़ा नर मारी उर में बाण
 नरक के प्रति धारण विषय
 धरा जन या प्राचीन ग्रन्थार ।

बाह्य वैभव संपन्न ही मात्र
 रोग का होता यदि उपचार,
 न होते सबसे अधिक सुघात
 घट के घनपति - जन भू भार !
 महत् के प्रति क्यों नहीं बिभाव
 सोरुं मन में ? - हरि की या ज्ञात
 जगत धार्मिक मह जन को लभ्य
 बैठना में होगा मधु स्नात !

केन्द्र के पीछे बंधी पुष्ट
 प्रेरणा का परम्य या लोठ
 उपस्थिति स विरुद्धी अछिन्न
 लोक जीवन या मोठ प्रोत्त !
 जानता वह भू मन में दीप्त
 उस बोली विद् नम की धाम
 ज्योति पस्तक स्वप्नों के बीच
 ज्ञान पंखी जीवन धनुराप !

नम या कवि असंग आत्मस्य
 बहिर्जीवन तटस्थ घति मत्स्य
 भाव उमेपित रूठा चित्त
 प्राण मन्त मोमा के तस्य !
 समपित जीवन या एकाग्र
 प्रकृत छाया वह, प्रेम प्रकाश
 घट पर रचने जीवन स्वर्ग
 बैठना करती पूजन विनास !

अघर पर घर मुग कवि मधु बेपु
 हृदय में भरता रस संकार
 भावना में स्वर संवति फूंक
 दृष्टि पय में मह स्वप्न सौभार !
 अभेतन यज्ञर में आत्मक
 जमाता प्राणों में आह्वार
 विभा जीवन मुख पर सौन्दर्य
 मिटा ननु अवचेतन धवसाद !

बर्ष बस ही में हुआ इत्यार्थ
 पक्ष दश बर्षों का विस्तार,
 प्रभीष्मा भी युग मन में तीव्र
 घण उर में उत्कंठ पुकार !
 समापन प्राय पुरातन वृत्त
 उदित नव भाषा का संसार
 विरह संसय भय वा तम पीर
 ननी पुनता प्रकाश का द्वार !

भाव श्वेतमा हो सके मुक्त
 बाहिए दुःख नीतिक भाषार, -
 कहा बंसी ने - हृदि वा इष्ट
 तुम्हें जन मू हा स्वर्ग विहार !
 प्रस्थि पंजर वा म प्रबसंब
 देह व मांसम रग उमार
 प्रथ सीष्टव बरत शरितार्थ -
 साधना ही जीवन शृंगार !

नही मानसिक संयमन माय
 कृष्ण पवित्र नीतिक भाषार,
 परिस्थितियों रथ बधि धनुष्म
 तुम्हें गङ्गा मू ससृष्टि द्वार !
 संघटित हा जा बाह्य समाज
 स्वतः हा मुनम धारम संस्कार,
 नर्माबज मू जीवन की पीठ
 व्यभिच उर देगी रथ संवार !

बन मर जन मन वा उन्नीन
 स्वग जने बमुधा पर बाम्य
 विरह मू जीवन स्थितियों बीच
 साधना तुमको व्यापा गाम्य !
 बरो मू जीवन मन के रंघ
 एतना ही जीवन नव घोर,
 तग मागर - मेग मूर दाव
 पग पर ने रम मूघ हिनो !

जाति बगों के बेपठन खोस
 छिन्न कर खण रुढ़ि के पास
 मृषित धर्मों द्वेष भय मुक्त,
 मनुजता को धाना धर पास !
 देश राष्ट्रों की सीमा नाप
 बढ़ा धातर धारान प्रदान
 बांध नारी मर के सित प्राण
 स्वर्ग को देना सब धाहान !

राजनीतिक धार्मिक धररोध
 किए मू जीवन को म्रियमाण
 मिटा राष्ट्रों का स्वर्ग द्वेष
 धरा मन का करना निर्माण !
 केन्द्र रचना का तात्त्विक धर्म
 देश मर का मुगपद् उत्पाण
 मूर्ख धंतरधेतन यह बुत
 इसी में जन मू का कल्याण !

कूर गठ मू स्थितियों से रुद्ध
 पूर्ण हो सका न मनोविकास
 बिचरणा बीना क्षुद्र मनुष्य
 मनुजता का मू पर उपहास !
 जगम सेता , धर सब वैतन्य
 विश्व मानस में - बुत महान्
 मूर्ख मू धर्म तिमिर को धीर
 बिहँसता कल्प - मूर्ध धम्मान !

धर सांस्कृतिक कन्द्र को मूर्त
 धमज मू जीवन का सित कथ
 धेर मूर्ख जन मन क खोल
 मूर्ख को करो रूप प्रत्यक्ष !
 विरोधों को संनति में बांध
 धरो जन मन में रुचि संस्कार,
 मनुज हो एक भाव स्तर उच्च
 धर्म धर खोजी सोच विचार !

सारपाही थी हरि की बुद्धि,
 उतर घाया मन में तत्काल
 अंतर्दर्शी कवि उर का सत्य
 विश्व मंगल का स्वप्न विशाल ।
 शिबिर का भीषणेश कर शीघ्र
 केन्द्र का सम्राट् स्वयिम ध्येय
 किया हरि ने सब का उद्बुद्ध
 जया मन में सकल्प प्रयेय ।

शीघ्र जन जीवन का या पथ
 लोक स्तर पर सब सत्य प्रयोग
 तपस्यों में अपूर्व उल्लाह
 जनों में था सक्रिय सहयोग ।
 ज्योति का अंतरित उन्मुक्त
 खुला हा बय गम्भुज अनिमेष
 नयी मू पर स्थित थे सब पैर,
 प्राण मन में जीवन - उन्मेष ।

बग्न स अभिप्रेरित गया सिन्धु
 केन्द्र से अनुप्राणित था प्राण
 ज्वार भाग सा घट बड़ निरप
 निररता जीवन तारक ममाम ।
 मुक्त भावना म मृपा स्वभाव
 कर्म रम तन्मय रहते छात्र
 प्रेरणा पुनर्बित रहते प्राण
 पृथक् युवनी बन संवृत्त पाव ।

प्रकृतिगत दोषों व प्रति दृष्टि
 केन्द्र की थी निर्मीक उदार,
 अपियाँ जन मृ मन की घात
 विद्विनी सेनी थी महत् संभार ।
 घसा को कर ममप्र स्वीकार
 उसे देना था मामंग्यार,
 पाव हो मात्र पुष्य सार निम्न
 विवमना वा हस्ता या भार ।

सिन्धु विप्लव में धतम निमग्न
बया हो भू का श्यामल कूस
उगा खोभा ग्रह बन, जन केन्द्र
काल मति थी जीवन धनुशूल !
रेश भर में छाई कृति गद्य
नागरिक धाएँ लिए उमंग
रेख भू टर का स्वयं प्रकाश
बने नव मानवता के ध्वज !

पीर जन का पा प्रिय सहयोग
सिबिर का हुमा धभीष्ट विकास
धर्म का दे संस्कृति को स्वाभ
कृदि विधि से कर मुक्त प्रकाश !
विश्व मानवता का धारण
लोक समता में हो साकार,
बहिर्बग हो ईश्वर का रूप -
केन्द्र ने किया ज्योय स्वीकार !

सहित तट पर जन लोक विश्वास
पतुदिक विस्तृत मन से द्वार
बेतना गंधी रजत समीर
स्वस्व पीषन करती संचार !
स्वच्छता जन भू का धारण
स्वच्छ सब हाट बाट पुर धाम
सुबन सुब का हारिक परिवेष्ट
स्नायुधों को मिलता विश्राम !

प्रथित वा हरि का मुद् भू प्रेम
हरी धरती हो सुपर सुरूप
सुरंग फूलों में लिपटें ध्वज
स्वयं स्मिति थी मुख पर प्रिय धूप !
बूझते पुर पथ में जब लोग
कहीं लपटा उसको धावाठ
सोपता - होता वह मधु मेघ
दूब से धोता भू का पाठ !

धभी प्रावस्था में विज्ञान
 पटरियाँ पेंच कोयला धूम
 किए भू पंजर नमन कुस्प
 देख करकट मिर जाटा धूम ।
 भाप की मीटी कर शीत्कार
 कान क परदे इती फाइ
 मोह डग भाग रूहा युग दैत्य
 बन्ध पगु मी भर हिंस दहाड !

पीर जन देखा करन स्तब्ध -
 शानि स्थित हा मू पर माकार
 ममी घत कन्द्रित मन प्राण
 साधते नियत कम व्यापार ।
 हृदय में हा पत्रय रम त्याग
 दुर्गा में घाटा का ममार,
 प्राण जीबन रचना में मोन -
 श्रेय सबधन हा मुत्र मार ।

कला प्रांगम म स्थापित उच्च
 चतुर्मुख युग ब्रह्मा को मूर्ति -
 गम सैव बुद्ध मुहम्मद पीग
 बिबिध रणा वा करते पूति ।
 चतुर्मुख नील पद्य क मध्य
 काग का बान हीन गिन हाप
 निष्ठ नय उपाति गिद्या पा ऊष् -
 मग्य का युग प्रतीक हा गाप ।

भिन्न धर्मों क लाया पात्र
 बिभन्न युग क निगरे घबगर
 प्रेरणा करन धर्मिनर प्राण
 देख युग प्रतिमा का धनिमय ।
 तब गत् विन् घानद प्रकाम
 निधिनि धम जग जीवन में धरत -
 ऊँ गगाता - उमर ही धन
 पपर युग पुरया में धर्मिनर !

स्वयं कर नर नारी नम
 मुक्त कर यज्ञा विस्त विचार
 लोक जीवन प्रास्था बत गूढ
 सत्य प्रास्था सेठी प्राकार ! -
 धन्य ह भय बम के कर्तार
 तुम्हारे हगी मूर्त प्राकार
 तुम्हें काफी दे मन बच कर्म
 प्रपति का बहन करें जम भार !

पुत्र तन्मय हा तुमसे प्रेम
 बनें हम सब बिकास क प्रिय
 सुभ मठा हा सारबि सुभ
 बुद्धि यति रोष तमस हो भय !
 मुझ मति व्यक्ति भाई में कीर्ण
 साक जीवन बत, रत्नच्छाम
 सेजो मू प्रीति रतिम सुरवाप
 सेजामे मुम मानव का वाय !

जगद् जीवन में हा तुम मूर्त
 घटा पर करे स्वयं अभिचार,
 एकठा का रच स्वजिम सेतु
 मनुजता हो भय सामर पार !
 वेष्ट राष्ट्रो को कर मू मुक्त
 खोल निर्मम जन संतर द्वार
 जाति प्रमो स बंधन मुक्त
 बने मानवता मू श्रुमार !

करो तुम मांम सौष्ठ में लाल
 मरे संतर में सिठ धानव
 प्रीति संबिठ हा संबिठ प्राण
 जमठ जीवन हो शायिक छन्द !
 ममपित तुमका सब भय कर्म
 तुम्हें देखें मू पर साकार
 तेम की ही सब जम संतान
 नदिस मू हा मानव परिवार !

बसो पसकों में बन युग स्वप्न,
 हृदय में जन भू संयस नित्य
 बुद्धि में लोक कम संकल्प
 घटा जीवन हा फिर इतइत्य !
 बरे शोभा में तुमको देह,
 मुजन मुख में भ जन के प्राय
 प्रीति में मर मारी रम शुभ्र
 शांति में महत् लोक निर्माण !

प्रकृति प्रकृत या प्राय उपांत
 प्रांतिक वा स्वनिम एकांत
 नील नम प्राण हरित बन प्रांत
 रजत दपन गगा ठट शांत !
 मधुर बन मर्मर प्रेरित मंद
 मार मंधी जन नाम समीर,
 रंग पंखों की कर बस बुद्धि
 पहकते घग - चातप पिक कीर !

उपा के बस स्पय पर जाग
 बिहंसुता प्रात रवि मामार
 बिब के भीतर ज्योतिबिरब
 घासता नि रबर पतर्गार !
 प्रकृति संपद् मै हो उर युवन
 पहमिका का घोडा कटु मार
 बल्लुपों का मुख गुंजन घोन
 देखती प्रकृति - शक्ति माभार !

बहिर्मुख जियर मन का क्वांत
 शीब भीतर निमग एकांत
 कर जीवन मपपंश दुष्ट
 बित्त को करना निर्मम शांत !
 गुण के बिरबाग्ना मन में पैट
 नील हो बनना उर वा घनवान
 गमन के में मगन भय भेद
 के में तद्गत प्राण !

नित्य कर्मों से हो बुद्ध मुक्त
 गाँव में करते छात्र प्रवेश
 लोक भ्रम पहिले तब निज बुद्धि—
 यही जा हरि का छुन पावेत् ।
 व्यर्थ वह तुच्छ आत्म-संस्कार
 असंस्कृत जो भू पृष्ठ परीप
 सर्व से होते जो न विमुक्त
 न शक्ति होते भू के वेत् ।

विश्व स्थिति निर्मित कर ही व्यक्ति
 फूस फसला - मिथ्या संदेह,
 संगठित हो जो जीवन शक्ति
 सुरक्षित हो सोमा भू नेह !
 आत्म अभिप्रेत महत् जन शक्ति
 ऊर्ध्व विस्तृत हो जीवन बुद्धि
 व्यक्ति मन अतिक्रम कर, कृतकाम
 विश्व मन पर मोहित हो सृष्टि ।

धनिक धनिकों में बर्ष विभक्त
 घरा जीवन का दुःखद बुद्ध
 बँटे अंतर्मुखों में सौग
 बाह्य वैपश्य न मूल निमित्त ।
 न अधिमन स्तर पर जब तक विश्व
 संवर्धित होगा - जीवन पार ।
 बुलेनी रद सुई की भाँक
 छेद वैभव सँग होगा पार ।

युगों से रच वह सत्ता तब
 सम्पत्ता ने बहु किए प्रयोग
 महत् मानव गरिमा के योग्य
 सफल हो सके न गत उद्योग ।
 उद्यम बढ़ना धन नव आधार
 विपमता कर अहिरंतर ऊर्ध्व
 ऊर्ध्व समदिक सँग व्यक्ति समाज
 समन्वित हो विश्वमें तंपूर्ण ।

सिखात ब जन को सह्याग
 व्यक्ति मन का हर स्वर्धा द्वेष
 बृहत् सामाजिकता का स्वप्न
 हृदय में भरता नव उन्मेष ।
 पत्नों में जन क प्रति सहजात
 सहज भाकर्यण हो क्यों रट ?
 स्फुटियों को बनना संयुक्त
 साक मध पावक कृद प्रबुद्ध !

ग्राम स्तर पर दुग न्यति धनुस्व
 नियत कर धय काम का स्थान
 छात्र सहस्रम जे करते सिद्ध
 साक जीवन का मव उत्पात ।
 मनुज मन क धम धा दुष दग्ध
 चेतना करते नव सभार
 मिटाते बहिरंतर जन ईम्य
 धरा जीवन मुध पौछ निधार ।

मया मभव जनप का रूप
 क्रिया लोयों ने नव निर्माण
 पूम धपरमें पटी कुटीर
 बनी बिबरो म जन संम्पान !
 स्वच्छ गुले बुद्धों क रूप
 पंच प्रच्छाय कृटे बिस्तीषं
 स्वारस्य गृह धतिधि काम पय धाग -
 मध मुमुनित हो पनार जीर्ण !

तेन बिजमी म जमन यंय
 बडे पारि में मपु उद्योप
 पूर्व पद बिना बग्द ने मगध
 माधनों का मव क्रिया प्रवाण ।
 दय दुः जन मन एका त्याग
 शिया गामन ने जन पर ध्यान
 दग विदु ने ममम बिचन्द
 बना मु रोजन जीवन गन !

मनुज का मुख्य प्रेरणा स्रोत
 नहीं भौतिक ऐश्वर्य विज्ञान -
 प्रेम सौन्दर्य सुखत आनन्द
 हृदय में पाएँ जन के स्वान !
 मूसगत सरय न वस्तु समृद्धि -
 सुभ्र अंतर आस्था चिद् वृष्टि -
 सुरम एकत्रता सूत में बद्ध
 मिश्रित सचराचरमय यह सृष्टि !

लोक भ्रम ही सपद् - सिद्धांत
 जयावा कर्म प्रेरणा सिद्धि
 घरा जन भ्रम जन से अभिचिन्त
 सगसठी रज से स्वर्ण समृद्धि !
 मनुज के घू कुंठित उर छार
 जमाना वा वैतन्य मधीन
 उसे भीतर से बाहर लीज
 घरा पर करना वा घासीन !

विविध वैज्ञानिक संशोधन
 श्रेय मुख के साधन प्रतिवार्य
 वाप्य विद्युत् का हो वाचित्त
 मनुज कर पद कट्टे जो कार्य !
 सफल हो सहकृपि जन सहकार,
 सफल हो एक घरा परिचार,
 बड़े बाहुर संमुक्त प्रयत्न
 कुर्से भीतर निरुद्ध उर द्वार !

सरल निरुद्ध हो मानव बुद्धि
 गमन ज्ञान रहे स्वयंप्रम बुद्धि
 बहिर्जीवन संलय हो स्वल्प
 महत् चिद् संपद् अंत बुद्धि !
 मुक्त मन धाव दीप्त धाकास
 सुसम हो - न हो दिनंतर बाह्य -
 ऊर्ध्व मुख मनुष्यत्व ही सीम्य
 बहिर्मुख जन घू सीप्यन प्राह्य !

युवाओं का दिशि पप का मान
 प्रौढ़ धीरों को कम विराम
 बाहिए संरक्षण या बड़
 स्त्रियों को शान्त शील समाम !
 जहाँ शिशुओं का हा संस्कार
 राष्ट्र की जो भावी संपत्ति
 सगठित बहिर्यर या देश
 न उस पर घाती कभी विपत्ति !

तिरस्कृत बन्धित जहाँ ममात्र
 स्वार्थ रत धारम-निष्ठ सब साग,
 धर्म हो शासन दाकू चोर
 उस पीड़ित रखते बहु रोग !
 महामारी दारिद्र्य दुःकास
 प्रमाणी भू का करते भाग
 बहिर्बिन्दु बिहीन यन्नि देह
 ध्यर्ष सब अप तप साधन योग !

उभय जीवन मुद्रा के परा -
 बस्तुगत - धन बस्त्र धाराम -
 स्वच्छता सुंदरता पाबिध्य
 मत्स्यगत मुख - धडा बिगवास !
 समन्वित कर शान्त ही रूप
 मनुष्य का समब पूर्ण विनाम
 बस्तु मुख ईश्वर का बहिरंग
 भाव मुख भयवद् हृदय प्रराम !

उभय में धनभूषण ही अष्ट
 हृत्प का करना या संस्कार
 विना संस्कृत मन व धु-भाग
 अगत में मूर्त गरक का द्वार !
 प्रेरणा धर्म शक्ति का शान्त
 शानि भू ऐश्वर्य सोर बन्धाम -
 बेजबा मनुष्याव का नार
 धैर्यना बन्धु अगत का प्राम !

उपेक्षित वा हूँ बधूँ समाज
 प्रसोभा की मत्त मंदिर देह
 बिरस जीवन बंबर उर प्रांत
 बरसती छात्रा बन रस मेह !
 भांत भू पृथ्वी में नव ज्योति
 जया उर में सर उर का स्नेह,
 सिखाती बोधा सुग्धा बोध
 सँबो धो वे मध्यम तृण मेह !

भान ईश्वरों के बँडहर देख
 सुरियों के छातर कुल पाठ
 क्या ममता के धाँसू रोक
 शक्तिमें से कर मीठी बात —
 कमा मुकती जब उन्हें सँभाम
 बँटाती काम काज में हाथ
 रोमियो को वे इतुस पथ्य
 बृशियों का सुख दुख में साथ !

शैवं वे बेती उन्हें प्रबोध —
 धा रहा सत् युग स्वर्ण प्रभात
 मनुष्य जीवन जब घर नव रूप
 संगठित होमा भू पर, मात !
 ईश्वर धन जस के धन दुख इन्द्र
 नहीं रह जाएँगे प्रतिवार्य
 शक्ति साहस सँह जीवन मुकत
 वर पर नर होया कृतकार्ये !

जनों को हरि भाकर प्रति बार
 सिखाता संतति निग्रह मंत्र
 निमोक्षित यदि न मनुष्य परिवार
 न संभव पूर्ण काम जब संव !
 अधिष्ठित निर्धन रत्न धर्मांध
 बढ़ाते स्वर्ण कदम भू मार,
 नरक क्यों बने न जन भू स्वर्ण
 नहीं जब प्रजनन पर अधिकार !

विषय मुझ नब यावन का सख
 महान् तन से हृदया का प्यार,
 मत बह, क्षम मदिरा प्रायेज
 नित्य मह मधुर मुघा रस धार ।
 बाह्य माधन से यमं निरोध
 बुद्धि सपत्त - कुमुमास्त्र प्रवेप
 मुझ तर गारी उर का प्रेम
 जयी हा स्मर पर - जीवन ध्येय !

यहन बन म छन ज्यों रबि रसिम
 बीजत करती सखु बन मू भाग
 हृदय में मर जन के उम्मा
 ज्योतिषाता की उठती जाग !
 प्रेम ही मानव जीवन सार,
 प्रेम हरि बहता सब समर्थ
 प्रेम के बिना न जीवन मूल्य
 तपसता मन, न सृष्टि का धर्म !

युग मूल्या का बितरण जीन
 धार रात जन माव बिवास
 बड संकीर्ण परिधि में ध्येय
 राम गयी बतना प्रयास !
 नये सांस्कृतिक बूत को जन्म
 प्राय कम द्ये - मह बिधि धार
 माव जीवी स्त्री पुरन वृत्रार्थ
 गंये गोमादूही समाज !

बन सब जन जीवन स्तर उच्च
 राग्य को भी मरना निव दान
 नर्पट्टि हो जो जन मू रसि
 ताठ जीवन न रहे प्रयहाय !
 पनों के दुबड़े या पाठन
 रद बिच नरक गामद यमं
 जयाना हाता गुड बिदेव
 जना वा कर जीवन उन्मदे !

ऐक्य मणि सेतु सांस्कृतिक वृत्त -
 न शासक साहित्य इसमें भिन्न
 विकर्तन स वाञ्छित अभिवृद्धि
 वैश्य दुःख बहान हों विच्छिन्न !
 मातृ पत् सुख सुविधा में मम्म
 न जन प्रतिनिधि हों ओक विरक्त
 मिटे कृत्स्न कृष्ण मू कित
 मनुज जीवन मत हो अभिमक्त !

कति भी संभव विन्न विकर्त -
 मनुज मन हो जो धात्म प्रबुद्ध
 राजनीतिक धार्मिक सवर्ष
 मिटे मू से विध्वंसक युद्ध !
 सांस्कृतिक मुक्ति जगत की धार
 किए बौने (धर्म) नेता रुद्ध
 बहिर्मुख धर्म प्रगति न उपाय
 अपेक्षित जग हो धर्म युद्ध !

होपहर में कर धरिया स्नान
 छास सेते हो मड़ी विराम
 तीसरे पहर, अभ्ययन मम्म
 सोमते मन का मुक्त लसाम !
 जोजते कहीं सभ्यता याग ?
 मनुज जीवन का क्या धारक ?
 कहीं असफल समरिष् इतिहास
 कहीं अधिराज्य का उत्कर्ष !

विजित क्या बहिर्मुखी विज्ञान ?
 ज्ञान क्यों अपने में अतमर्ष ?
 उमय का हो क्या सामिक रूप
 यत्र पति धार्मिक मति क्या व्यर्थ ?
 धाचते बैठे हो धरितार्थ
 मनुज स्तर पर बड़ मूर्च्छि विकास
 करें जन जो समग्र निर्माण
 स्वयं मुख म पर करे विज्ञान !

मनुज ही सब दुखों का मूल
 प्रगति की बागडार से हाव
 बड़े बड़े गत भय संगय मूल
 धम्ममुदय संभव सबका साथ ।
 मनुज मू हा प्रति पीढ़ी स्वयं
 मत्स्य में छिपा प्रमाण प्रजाम
 त्याग ही से सब सब भाग
 त्याग बंभित मू नरक ममान ।

भरा क धार छोर सब धार
 बंधेरे में दूबे प्रसहाय
 दैन्य दुख दुखिया एक निमज्ज
 भय मन जन रहते निरपाय ।
 विपमता - उधर बिच्य सपत्ति
 बमाती मू धंसब धनु धस्त
 उधर जन कुमि महस्य पग दीर्घ
 रंगता बिना धन पर वस्त ।

जन रही रुढ़ि रीतियां प्रथ
 मूतक छापाई मू पर धार
 बिबर युग युग क कुत्मित प्रेत
 माघते मूत निगा में कार !
 मूल निब धात्मा - शतमुख भक्त
 जाति धर्मों क मुट्ठन दाता
 मता क मुग्धे पहन पूरण -
 मनुजता हा महस्य पत्र ध्यात !

ईट गाडम पर लज्जा छत्र
 पीरत छबियां गा गान
 गाव क मगर नेत्र क प्रभ
 गत धारिण कन्ते ध्यात !
 ममग्यां जग की शरीर
 मपित बगती मिय उतर प्राण -
 बिच्य ही पूरा धमि में पत्य
 मनुज वा बरने ब निर्माण !

नए युग में भौतिक विज्ञान
 बदल सब रहा बाह्य परिवेश
 मनुज अंतविरोध हों पूर्ण
 जमाना अम में सब उन्मेष ।
 कमा से भावी मानव स्व
 व्यक्त करने का कर प्रयास -
 धाँकते के अंत शौन्दर्य
 सूक्ष्म में भर रैग रेख प्रकाश !

पूछते समदर्शी अध्यात्म
 हर सका क्यों न विश्व सत्ताप ?
 अमर शास्त्रत सुख का पा स्पर्ध
 मिटा वह सका न भू अभिघात ।
 धीरे बहुवर्ती जड़ विज्ञान
 प्रकृति का पा अक्षेप बरबात
 मूढ़ भस्मासुर छा उन्मत्त
 प्रसय को बेता सब धाँहान ।

अंध जड़ प्रकृति तब को प्राप्त
 पुष्ट्य का हो जो दृष्टि प्रकाश
 पयु आत्मा का पकड़े हुए
 प्रकृति जो हो अरिष्ठार्थ विकास ।
 समन्वित हो जड़ अंततः अस्ति
 ज्ञान सारथि हो रच विज्ञान
 प्रगति हो जीवन की सर्वांग
 ऐक्य ही में समष्टि अस्त्याग ।

बूढ़ बुरबुर के बिद्या अशु
 जिन्हें हो प्राप्त न अतर्पुष्टि
 अंध अतः आरबाह, दिव्य अंत
 ज्ञान उमका अंतर की दृष्टि ।
 न वह पादित्य अस्तन मात्र
 नहीं जिसका अतः हित उपयोग
 न जो युग को है नव अति ज्योति
 अर्थ बहु अवित्र अर्बब राग ।

धसा उस मिशा का क्या मूस्य
 कर्म फल कर न भू हिय धान ?
 रिक्त जा पंघ कुमुम भयु हीन
 बुद्धि का दे मिथ्या अभिमान !
 प्रकाशित कर जीवन तम तोम
 पार कर सक नहीं भव यान
 भिन्न विपयावर्तों में सीन -
 समन्वित सागर जा न महान् !

बही शिशा जा धाँधें घास
 मनुज सीमाओं का द मान
 कही धन मानव-जीवन बुस
 सम्पत्ता संस्कृति का अभिमान ?
 कही जन भू बिनात धवरु
 प्रकाशित हाँ कैस मन प्राण ?
 प्राप्त हों नव भू जीवन मूस्य
 मनुजता का हो पुनरुत्थान !

साय मय में करत बास
 गोजते दण ही का उपचार,
 इसी से धाविक तात्रिक धय
 मविन समूठ पाते सत्कार !
 विपन्नित धाँधर म' मूस्य
 निरोहित कास धुंध में मौन
 माक भू मयन हित धनिवार्य
 सांस्कृतिक ज्योति दिगाए कोन ?

भेद मति में क' स्वार्थ विमस्त
 व्यक्ति भू राज्य बिना के दग
 पणा ईर्ष्या स्वार्थ बिद दण -
 न मन में मान् कम उम्भर !
 कुभ नगरज गता का साय
 सर्वज्ञ धात्म ऐश्व का बोध
 न हृदयों में धर्मत का ए
 बिना कम में धमप्य धति रोध !

हृदय के बव भी बुझे कपाट
 घटा पर बिबरत जीवन स्वर्ण
 एक बेतना सिग्धु में सीम
 हुए बहु धर्म जाति मठ बर्ण ।
 बिस्व संकट उर के पट बद
 स्वर्ण कृषिका मनुज के हाथ -
 पटित हो बिबरत मिमन का पर्व
 जाति सुख भोमें पू जन साप ।

खड युग सीमारें कर छिन्न
 हो सके मानव पू संपुक्त
 मुक्त कर रुढ़ि रुद्ध उर द्वार
 मनुज गरिया के बन उपयुक्त ।
 खतना में पा ज्योति प्रवेक
 प्रहृता के जड़ ठोड़ कपाट -
 मोक संस्कृति का स्वधिम ध्येय
 एक हो मानव बिबरत बिपद् ।

बोस धारमा का तोरण दीप्त
 मुझ बिद् बोभा का पा स्पर्श
 बहन कर सके घटा की घोर
 मनुज प्रतर्जग का सिठ हर्ष । -
 सुना संस्कृति का शुभ संदेश
 बचाठा हरि छात्रों को लक्ष्य
 पास समदिक पू के कर बुर्ण
 उर्ध्व निधि हो जीवन प्रत्यक्ष ।

प्रतापम - स्मित कुविम सौन्दर्य
 मात मुंदरता का उपहास
 दीप्त करने बोभा का बीप
 मनुज जाए तिसर्य के पास ।
 उपा संघ्या सुपमा धनिमैप
 निहारे ताउ पय धाकाश
 पून हिम महर किरन धय नीठ
 बद्रिका का पीए उस्मास ।

मनुष्य सहृदयता का सौन्दर्य,
 क्षमा कृपा, समता, सित रयाग
 और सर्वोपरि ईश्वर प्रेम
 अभीप्सा की धतर में धाग ! -
 मृणा स्पर्धा के मुम में धार
 जहाँ छाया भौतिक उम्माद
 मनुष्य प्राथरिक मुषों स हूनि
 नष्ट हाने को - यह धरिवाद !

इन्द्रियों व मधु रस म पूज
 समन्वित हो मानम शैतस्य
 प्रस्पष्टित पद्दस पद्य समान -
 प्रीति शौरम से हो भू धय !
 इन्द्रियों से धात्मा तक मुध्र
 एक हा स्वर्णिम रस सापान
 न गत्र जीवन निपेद्य से मुष्क
 धस्वि पंजरवद् हा मद्रुजान !

मनुष्य मरुति का जीवन मुक्त
 उठाना भू पर सौध नवीन
 धधेउन तन पर धर दूइ मीध
 धमर शियरों की शाभा छोन -
 सधहित धोल मुध्र के द्वार
 पुरप रत्री का ग्य प्रीति धधीन
 धनप धात्मर मुध्र में स्थित धित
 धरा रचना में तन मन मीन !

धाम का ऊम्य मोन धिन् भुंग
 णिा का मुध्र हरिण रिम्भार
 धात्रिण रपम मृत्र में बाध
 बाध धय धधिरा का मार,
 धान मन धात्मा का धधन
 नाध जीवन में धर गाधार
 मनुष्य मरुति का मित्र धात्रिण
 धय पर धर स्वर्ग धधिमार !

सीबते चित्त मूल्य संगीत
 शब्द बर्णों के नव स्वरकार,
 प्राकृती तूमि भाव का रूप
 शोक भू का करने शृंगार ।
 मूर्त करते अमूर्त युग स्वप्न
 सूक्ष्म में भर जीवन संकार,
 शिष्य का करते वे उपयोग
 शय जीवन सौन्दर्य निवार ।

कसा क्या ? कहुता हरि सोमेष
 प्रसंगति में संगति भर नव्य
 असुंदर में सुंदर को खोज
 रूप यइमा बम भू का भव्य ।
 खंड कुंठित को सय रस पूर्ण
 गूँड़ शृत स्वर को कर शब्द
 हटाना शग मुख का कट्ट धूम
 प्राक उर में स्वगिक भविष्य ।

ध्वनिष्ठ कर मुहा निहित चित्त सत्य
 शेष को सोमाचल में बाँध
 शय प्राणों का उग्मद छंद
 शोक हित स्वर मंगल में साध
 प्रचेतन तम का मुख मद धूम
 कसा को करमा रस संस्कार
 मरक को जगा स्वर्ग में - कर्ष
 निवार में भर समदिक विस्तार ।

बाह भावों के प्रबियत स्वर्ग
 उन्हें जम मन में पहन उठार,
 उच्च सुपमा पावनता शांति
 प्रीति से भू संवर्ष संवार, -
 सत्य से प्राक महत्तर सत्य
 कसा को रचना नव संघार,
 प्रमद शोभा के कर स खोस
 शोक जीवन मंगल क द्वार ।

घात की कसा किस सवेह ?
 हास युग की निर्जीव प्रतीक
 न स्वर में संपत्ति मौल्य्य सार
 मात्र धपरूप धपूरत धमीक !
 गलस्तन गगन कुमुम शश शृंग
 न जन भू पीयन हित उपमाय
 भाव रस की न रूप से पुष्टि
 रेण रेण रधि वा रिक्त प्रयाण !

न बहु सन्दिग्ध न त्रिसमें सत्य
 प्याति छाया का माया जान
 न बहु सत्य ही न जा गिय रूप
 शान की भसे निकामे घात !
 धवेतन उपवेतन क बित्र
 मात्र धति धैयस्तिव उष्ट्रवाम
 रोगी कसा पंक इमि तुल्य -
 धधामुध बुमित बुद्धि विनाम !

हाथ समक्ष जीवन की धाति -
 ऊर्ध्वमुख दृष्टि न उमके पान
 न उर धतत्रबिन से युक्त
 न मन में निष्ठा मिल बिश्राम !
 धनास्था ध दशन न दध -
 निराशा संशय भय धवमा
 निण धूमा मे टगे विपुत्रा -
 म्नायु पंजर नर नर धनवा !

कना का धंत भगति याद
 जगत् जीवन का गूना न
 तरगित हो पितृ गोमा निष्पु
 शिण रनी विमर। तप हू !
 मुदर मुद्र-दाध धनी मुद्र धूम
 मरु धामर करे धपती
 मुद्र गोमा न ह। नग धति
 निव्य पीरन पाण ध जीन !

लोक व्यापक मर संस्कृति वृत्त
 न उद्यमों बलिष्ठ भय बल योग
 सुदुर्घ घनुशासन से ही लम्ब
 हृत्पू पू जीवन का सुख भोग ।
 श्रेय यदि शुभ शुभ यदि परिणाम
 सफल तब सहृदय शक्ति प्रयोग
 विविधता से समाज बल क्षीय
 असंयम गोपन मामल रोग !

कर्मात्मक सित संयम कर प्राप्त
 मुक्त छिछरे मिम छात्रा छात्र
 भोगते भाव स्वर्ग ऐश्वर्य
 बैठना के संस्कृत रस पात्र !
 रूढ़ मर नारी उर की प्रीति
 सुखर पाठी जीवन अभिष्पक्ति
 विशद सामाजिक तप में बद्ध
 मुक्त बतती विदेह घनुरक्ति ।

बना पतरब का निर्मम सदय
 युवक मुबती जन का सहचार
 पुरातन पंथी बुड़े सोम
 नया सब बिनको मिष्प्याचार -
 रसिक बल दुस्वरिय स्त्री मुड़
 कथा मड़ करते मूपा प्रचार,
 धौर जा काम द्वेष विष बख
 घुना निम्बा जिनका धाहार !

सीखते गीत मूल्य पदचार
 माव मुद्राघों की बन मूठि
 शतरज कर पद नूपुर शंकार
 नृत्य प्रिय पू उर में भर स्फूर्ति ! -
 संय संवासन धीमा भग
 बेह में भरते संमति स्वल्प
 हाव पाषों की मय में मज
 छात्र छात्रा सगते चित्रम्ब !

प्याति पिहों क जग क मुड़
 सुजन धानंद छ में तीन
 हृदय रहता तमय - उगमुक्त
 प्रेरणा पंथों में उठीन !
 भाव सय में बंध सध मुडु देह
 मूढ्य पटु माधव करती प्राण
 उमड़ प्राणों का रघ समीत
 धन जीवन में धृता प्याठ !

धर्मुनिया स धर्मुनिया मूढम
 सनित धर्मों स बड़ मित धंग
 सहज करने जन मन को स्पशं
 बांध उर सचराचर के संग !
 मनुज उन का नाभा पाबिध्य
 धताकृत कर ईश्वर की मुष्टि
 रोम रूपों में भर धानं
 मनोमू में करता रम बृष्टि ।

सारु जीवन क विषय संवार
 नृप रचना कर भाव प्रचार
 विविध धर्मों की करण पूति
 धनना कर जन में सधार !
 नाचनी पति सय में हिप्पान
 राज नुपुरमय मुग्धर ममीर,
 नाचती रवि किरणें छवि बीन
 पठ मन क बिना को चीर !

नृप में तमय शान्द देह
 करे धाम्ना की धामा वरुण
 छ में जीवन क मान्नाम
 ना उठे हृन्नि गि में रका -
 बाल मुण - धनना धग्द -
 धान्क तर बृष्टु माद मति रीणि
 मुका शरवत का करता रवा
 नृप मुन में भर सन्नीत !

विपमताएँ कर जम की पूर्ण
 कुछ मू मम तांडव को व्यग्र
 अपेक्षित जम को जीवन मुक्ति
 नोक संयोजित भू न समग्र !
 खोस प्राणों के उवासा पंख
 जमें पावक के सुप्त स्फुटिय
 सभी सँग बड़े तास मय बह
 बमें समतम धबरोघक शृंग ।

सृष्टि मुद्रा रच सुबर पत्र
 लोकप्रिय भाव पूर्ण कर साध
 मुकुस रच प्रमद, हंस प्रिय शंख
 व्यथा मुद्रित कर व्यक्ति विकास ।
 मुबक मुबती जम रचते रास
 भुग कमिका से मनु पद धार,
 तरंगित कर भावों का सिग्धु
 खोस गोपन प्रंतस् रच द्वार ।

घरा हो जन भगा का पर्व
 बेह में हो भातमा परिहार्य
 रूप में पूर्ण प्रस्फुटित भाव
 मर्थ्य जीवन में स्वर्ण इत्यार्थ ।
 अप्पराधा सी बिधमें नित्य
 मुग्ध पद् भूतुएँ करती नृत्य
 सृष्टि के सखी छंद में बह
 जयत जन जीवन हो इतकृत्य ।

मोक नृत्यों से से पद न्यास
 बेस भूपा स्वर जम बिन्यास
 छात्र रचते मोहक सह नृत्य
 बड़ मन में भर भाव हुसास ।
 सीखती धाम स्त्रियाँ धमाम
 रंस मैत्री सग्धा शृंगार
 र्ग सौष्ट्य जीवन उस्तास
 कमा इधि शीस सुपर धाधार !

बाघ बूदों की ध्वनि पंभीर
 पञ्चेतन भू तम देती शीर,
 मंत्र गुह मुन मूर्धम की पाप
 काप उठता दिष्ट मौन अघीर !
 बाघ भैत्री की तरल तरंग
 मिटाती अत मन का प्रोशास्य
 गुंजता गगन माव स्वर मत्त
 ग्राम भू रचनी जब रग सास्य !

मधुर बीणा करती शंकार
 शूम मधुवन भरता गुंजार,
 बाँसुरी की सुन स्वप्नित डेर
 काम का हटता मन ग धार !
 छत्रक उठय मञ्जीर अमय
 तास देते तमय तुण पय
 टनफत्र बाँस्य गमरते हास
 नाद का यत्नता नम में छत्र !

सुषिर तत्र क संग पन आनन्द
 पूरने जब मन में सब प्राण
 गिरर उठता भू गुहा विपा
 जाग उठती रत भू प्रियमात !
 निगाओं स धा प्रतिष्पनि गूढ
 विचित्र धरुणों में बहनी भेद—
 ना ही जीवन का उमेर
 ना ही सृष्टि नाद ही व !

ताँत रुद्ध पग मुग्ध बन मग
 हृत्त में भरत मुक्त उनप
 पित्रवत मजिहा म तत्र संग
 दुसुरत प बन मय तरल !
 तास महरा का हा गप साम
 तामरत छूटत क रग
 मांगूनिज र्व बनती धूमि
 धीन समरमता बरने भग !

मधुर सारंगी मुष्कर सिंघार,
 श्रुंम मेरी जस काण्ट तरंग
 बिलस्वा बजता प्रिय इसराज
 मुग्ध रूक जाता कास कुरंग ।
 चिकारा सहनाई मधु बीन
 मंद घर मिम स्वरों • का वास
 शरद बन सा भरता कस नाद
 कुंभ पात्रों संग बज कटतास ।

प्रतीक्षा में जन भू संस्वान -
 उदय हो उर में नव संगीत
 प्राण मन जीवन कर एस मन्म
 करे जो भू बन को उभीत !
 मुक्त कर अंतर के सिध सोत
 राग को दे जो मुस्य नवीन -
 जगम से गया हृदय - भू भेद
 गहनता में हों धतस विसीग ।

उर्ध्व श्रुंगो में खोए सोक
 इवित स्वर में हो जिसके व्यक्त
 बुभ धारमा की निस्वर शांति
 अनित धबरेहों में अभिभक्त ।
 गीतिमाधों में जिसका नाद
 दीप्त घर हे नव स्वर्णोम्पेय
 हृदि निस्तलताधों में मन्म
 करे प्राधों में ज्योति प्रवेज ।

श्रेष्ठ गंजर्ब कसा संपीठ
 बपठ जीवन को हे नव धर्ब
 बिना स्वर पंघों में उड़ शब्द
 भाव नम फूँ में अक्षमर्ब ।
 अपरिमित मूरम वेतना सोक
 मर्म बापी हे उठे महान्
 मूर्त हो ध जीवन का पाग
 दास स्वर संगति में मन प्राण ।

बताते युद्ध - संसृति बिद् छंद,
 ब्रह्म जो स्वर्गम सय में सोक
 स्वर्ग शोभा पुफिट हो विरह
 घण पीबन हो पूण, प्रसोक ।
 तिरा में बड़े हरि र बन भीठ
 सोफ भम सप्तक हा सय बड
 ध्यक्त करने प्रसीम धानद
 हृदय बीमा हो स्वर सप्रद ।

पहनतर हृष्टी प्रंतर्ब पिट
 मुनार्ई पङ्गा सित धमीठ
 पूजते - से प्रहृष्ट मि-हृष्ट
 प्राण तन मन के मुबन पुनीत ।
 प्रविस के स्वर में उर को साध
 बेतना पाठी पीबन मुक्त
 बिपम को सम कर तम का गदोति
 धनुम का शुभ बिमपत को मुक्त !

बहिर्मघ मन को इ पा बीध
 स्वने सित धारमा का स्वर तार
 मनुष्य की प्राप्ति गुहा वा दैन्य
 शीघ्र कर दे जो बिद् सकार -
 भेद कर्नेर पू मातस गर्त
 घरे, बन भी सोमा सम्पान्
 रगत स्वर सर प्रंत का हर्त
 घने पू धन हित बरदान ।

जमा क एगो में इम प्रति
 देह मन का निर कर निर्माण
 घरा को करने शोभा - मूर्त
 तिरिर जीवन बग्गा भम राज ।
 न प्रधा तन भीमिउ हो काव्य
 पटा ही में न गुरक्षण पित्त
 जमा जन मू का कर शृंवार
 मोह जीवन का बने पवित्र ।

खाद ही से विसते हैंस फूस
 काष्ठ उर ही में पावन भाग
 घण मुख का घोघो जड़ पक
 हृदय में यदि जीवन अनुराग !
 उन्हें प्रेरित करता हरि नित्य
 न हो भू पुत्र कर्म से भीत
 वेतना बीज कमुप तम मुक्त
 बड़ी भू रज में सने पुनीत ।

पाप में बिम्बे न दिखता पुष्प
 तिक्त संघर्षों में सिध छाति
 नरक में छिपा स्वर्ग सौन्दर्य
 सत्य प्रति उनके मन में भाति !
 तमस में देख न पाते ज्योति
 स्वर्ग भू को जो किए बिमक्त
 मूठक जड़ - सुसम नहीं समुत्पन्न
 ईश बंधित के बिम्ब बिरक्त ।

घाम जीवन की सुटियां खोज
 मज पर होते नाट्य प्रमास
 मुखर हों मूक जनों के भाष
 सोक जिति का रखते इतिहास ।
 बुटीसे होते अंग कटास
 सिष्ट निष्टूर उमका परिहास
 मुसाठे कहां अंग स्वस गूड़
 कहां मम रुढ़ि रीति का पास ।

भाति घनों का ईर्ष्या द्वेष
 ममुज को कैसे करता भाव
 स्वार्थ कसहों के निर्मम बुद्ध
 रियाते के दास्य दु वात !
 धाम्यबाणी का कस्य भविष्य
 निपासा निष्पिपता में भीत
 धरिदा ईर्ष्य प्रभाएँ जीर्ण
 बनात्री कैसे जग को हीन !

काव्य भय लाभ मोह व लाभ
 रूप धात्रा - वैराग्य विपाव
 निपति के संग मुनता नैष्कर्म्य
 पूजा निन्दा वा बाद विवाद ।
 इधर सहृदयता कदना प्रीति
 शांति धात्री मन्दा विश्वास
 यदमता गुरुषु मरक पट कृष्ण
 मंच पर हँसता स्वर्ग प्रभास !

अक्षतरित करत पुष्प परित
 सोर मन में धारसी मेवार
 महापुरुषों क जीवन बृत्त
 धरा तम वा हृत्ते जो मार ।
 स्वग दूना वा भू के भूर
 भूम कैसे करते शृंगार,
 भास जीवन हित त्रिमया मूल्य
 मय पर देते उसे उतार !

सोर मंगल में धाम्पावान
 न बाघाघों स हाते भीत
 धैय ताहम महयम ग गुरु
 बिन्द भू पप व सेते जीत ।
 कपानक पुग जीवन व गुंय
 भाव गरिमा ग कर धमिनीत
 मट्टु संकल्प शक्ति का मूल्य
 निग्राहे जन को पात्र पुनीत !

जपन जीपन घें जा संभाष्य
 म संप्रति वेग काम में शास्त्र
 रंभ भू पर प्रगुन कर दुग्ग
 यनाते उमे बोध धवगाह्य !
 घोषा नयी मावना भूमि
 धाउना को मत्र दुय धनुष्ण
 का मग्ना रपि रंग प्रकाश
 हरण की देन मय्य ग्वर्य !

दिखाते सहकृपि सह भू कम
 मिटाते कैसे भू बुद्ध भार
 धुन्न पूर्वो ही का सहकार
 महादधि बोहित करता पार ।
 मंच हो मोहित दर्पण मूर्त -
 बसंको को रखता अनिमेप
 सतत विमित कर अभिनव दुस्य -
 कहां धन मनुज कास भू बेस ।

दिखा कर कठपुतली का नाच
 बताते मंच ककि के तार
 मचाते कैसे जन को बाध -
 रूप तम से बुझकर निस्तार ।
 दिखाते कैसे मती तोष
 नवाबों से कर जन पर राज
 लपेटे बायी में पद हर्ष -
 लाज से नत सिर लोक समाज ।

नाटय के सँभ होते सहगुत्य
 प्रदर्शन प्रहसन कसा प्रकार
 मूठियाँ कम रंग की मार
 विविर करता सुप सत्य प्रचार ।
 माचती गाठी भू भी खोल
 प्राण सागर में उठता क्वार,
 प्रस्फुटित होता भू सौन्दर्य
 प्ररोहित मब प्राचार विचार ।

चाहते कभी छात एकांत
 हरित जाडम पर बैठ प्रस्तांत
 बुनाते प्राणों का संवर्ष
 बुडि को करता जो शन भ्रांत ।
 गाहते सह जीवन का रंत
 प्रोर सह जीवन का उत्कर्ष
 केन्द्र का पप बा धर अतिभार,
 मुक्त जीवन - मय विस्मय हर्ष ।

संतुलन कर प्राणों का प्राप्त
 भावना का मुख कर रस स्वाद
 काम कर प्रीति धर्म में शुद्ध
 दीप्त करनी थी धू की रात !
 बेह रब सीमा में निःसीम
 मधुर मित शाभा का कर प्यार,
 स्वर्ग कुसुमों भावों से मुग्ध
 स्त्रीत्व का करना या गुंघार !

बड़े धू प्राणों की तम श्वास
 ज्योति की कनक मित्रा धन मुक्त
 स्वर्ग शोभा से नित्र धनवान
 दह हीनक में प्रामा मुक्त !
 जगत क अघकार में उर्ध्व
 जगे इच्छा का हीर प्ररोह,
 प्रीति हो सहस्र प्रीति - न माह
 न ईर्ष्यामक्ति न मितन बिछाह !

नीन सरणी जल में ज्यों प्रात
 स्वर्ग सहरे करतीं स्मित नाम
 मत्ता तनिमा में हंसता झूम
 रंग कुसुमों का नव मधुमाम !
 मुबक मुबती धन क मुहु धन
 प्रकृति कर म पा धनध बिराग
 अगुहित करने सहस्र बिडीर्न
 मूलम भावों का शुभ्र प्रवाग !

कान्ता कनकों में धनिमय
 निगर यिनसे छवि सिद्धि उन्म
 हार गूह धीगन क ठर माप
 शोभा मय मानव परिहार !
 भावना मागर में रस मय
 दबने नादि धन कुल धन
 जग्य भेना नव मानव धर्म -
 धन जीवन ही शिगरा धन !

श्रमिर्मा भू बन मन की खोल
 निबन्धी हो नेतमा नवीन
 फूट धंसा से शोभा काति
 हृदय प्रथमर्ष करती सीत ।
 वेह छवि सत्ताएँ न विभिन्न
 रसोदधि की वे रूप तरंग
 काम के कसेस ह्ये से मुक्त
 प्रीति सुख भव निर्मय निःसम ।

धरा के प्रथकार से धीत
 राग का मुख भव सुदर काठ
 श्रितियों में उर की प्रभात
 प्रेम माता रहता प्रभात ।
 हर्ष शोभा के प्रथमोक्त
 प्राय मन में खुलते एकांत
 काम ही स्वयं सृष्टि का बिम्ब -
 हृदय कहता मति से निष्ठात ।

छात्र छात्रा धाते विठ पास
 भावना पाठी पूर्ण विकास
 प्रेम का एक नया ही रूप
 हृदय में भरता मुझ प्रकाश ।
 उन्हें या बंसी का धावेश
 छिपाएँ वे न मर्म की बात
 प्रेम ही प्रकृति पुरुष स्त्री एक
 धरम जीवन का होता बात ।

विषय मुम सीमाओं में बर
 हुमा निर्विष्ट प्रेम का रूप
 रिक्त बर्जन निषेध से रद
 धमूठ रस विन्धु बना तम रूप ।
 बंलवत संसृति अनित धनेक
 धभी भी प्रसन्न विकट गंभीर,
 नेतमा को मूर्खों में नम्य
 प्रकट होना तम के पट नीर ।

प्रस्फुटित हाते मय संबंध
 युबक युवती पन उर में भाव,
 बैशा छिठ छप मूत्र में शीत
 शीम्य भू यम रत निबिर समाज !
 वृष्ट रज देह प्रीति रस स्नात
 उग्रमित हृष्ट मूत्र की साज
 स्वर्ग स्मित भाव मुहुस दस पुस्त
 प्रेम मिर पर बटों का ताज ।

स्थगित होता जब शयन कम चित्त
 प्रबोधन दता बंधी दुग्ध
 शिबिर में रहना उनका ध्य
 प्राय विनये स्त्री उन पर लुब्ध !
 केन्द्र की सीमा सप्रति ब्रह्म
 मनुज भू का पत्र मनाबिकास -
 ध्यक्षि वैश्विक धंया जड़ प्रेम
 संग साया निग उपहाम ।

प्रीति की बाह पकड़ कर मुझ
 बहल कर शायम धंयन छाह
 मंत्रो नव भू जीवन का स्वर्ग
 युबक बन सजते मूम रयबाह !
 मोह भू शिबि हा धपित कर्म
 यत्री तप त्याग यज्ञ का मार
 न ईश्वर भक्ति ज्ञान चरितार्थ
 न यि भू जीवन प्रति मन्वार !

प्रम का हुषा मना से भू
 देहरी पर उन की बनिदान
 रक्षा पर ही विनयी धामनि
 न उन विग केन्द्र में स्थान !
 र्ये के बाहर जय में मम
 जही तन व ही मूत्र प्रदान
 ब्रह्म नाछन में निग प्रेम
 रेका दुग्ध रिड निप्याम ।

घरा पर मनुज हृदय का सत्य
हमें स्थापित करना धर्मिण्य
मूर्त बन मुझ हृदय की ज्योति
करे जन भू जीवन में कार्य !
भावना मिचरे, घर नव रूप
राम मूर्त्यों का हो उद्धार,
देह बेतना द्वेष-राम मुक्त
स्वतः होगी विकसित धर्मिकार ।

भावना का भाषी सित रूप
न शब्दों में हो सकता व्यक्त
मूर्त होकर ही जीवन तत्व
ज्ञेय होता - सर्व विद् धर्मिकार !
बाहुवा मैं सत संस्कृति केन्द्र
घरा पर कार्य करें धर्मिकार
महत् से बने महत्तर भोग
सतत मित्र से मित्रतर भू धाम ।

रूप तम से बिनको अनुपम
वियत भू वृत्त करें स्वीकार,
स्वर्ग-भू घरा हृदय - जन केन्द्र
मिसम स्वतः नम वैतम्य विहार !
युवक खोलें घर मंदिर द्वार
यक्ति में पुत्र्य सगमयाकार,
प्रकृति साईं स्वप्नों का द्वार
करें भू जीवन का शृंगार ।

परात्पर, विश्व व्यक्ति - तिक खेपि
सत्य का धर्मिकार सोपान -
परिस्थिति वैदिक पुण रिक् काम
व्यक्ति का सीमित करते मान !
धनप समु व्यक्ति प्रकृति का सत्य
विश्व में पाए मित्र शुधि स्थान
ऊर्ध्व के ज्योति स्वर्ग से मुक्त
सर्व सँग हो उदका कस्याम !

युवतियाँ दह भाव से मूढ़
 न करती सहज स्नेह स्वीकार,
 व्यक्तिगत मूर्खों के संस्कार
 अगाधे भय सदेह विचार !
 उपेक्षित घाग्गा का ऐम्बर्य
 त्वषा भी गुठि पीस पा रोम
 भाव जग का स्वयिक सौन्दर्य
 न कर पाते स्त्री भर उपभोग !

घंघ चबबेउन हठ हो आइय
 नीति अनुशासन जनरब भीति
 घालम सीमित छूटा उर राग
 न गिन पाती समष्टिगत प्रीति !
 शनै बंगी घंघ-पुर द्वार
 घेतता सिधा उन्हें सह बर्म
 प्राण मन का छंठा बन भूम
 बर्ष करता निर्माण का घर्म !

स्त्रियों के प्रति मज नर संस्कार,
 रूप के प्रति वैयक्तिक दृष्टि
 स्वतः बदती आगी मर्मांग
 हृत्प में व्यापक शोभा मृष्टि !
 युवतियाँ घालम दर में भीन
 निरलगाउ करती भी जो स्नेह
 ज्ञेय का मुख्य ज्ञेय हित धीर
 मज महत्प बन हृद रिन्द !

युवक युवती का घंघर मोर
 स्वर्न बागाघा का घमिमार, -
 शीन के पप घर मौम्य बहिर
 बिचरना बर्दा मर्ममज प्यार !
 नृप प्रिय पण नृपुर् मंत्रार
 बभी बर उटती उर में मं
 जे हरर भंगति करता दाव
 बेग पीवन का मानि छंद !

जन्म लेता नव जीवन स्वर्ग
 मृत्यु बंधी के मन में मौन,
 धरा पर पुन पड़ती पग चाप,
 धयोचर जमता जाने कौन !
 देखता काम पंक में जाव
 बिल रहा नव वैतन्य सरोज
 छोड़ कर धरा स्वर्ग जम मुक्ति
 व्यर्थ ही स्वर्ग मुक्ति की खोज !

सुजन क्षोभा स्वप्नो में लीन
 वृषो से उठ जाता व्यवधान
 मोटती मू पर तिखर समीर
 स्पर्श से रोमांचित कर प्राप !
 केन्द्र के धांगल में चुपचाप
 उतर धासा स्वर्गीय प्रकाश
 डूबते मन के बीने मूर्ख
 देखता शास्वत कर मृदु हास !

मृष्टि संमति में बंधे धर्मत
 नाचते छय मूम स्त्री नर संग
 प्रकृति प्रय से उठता कस याम
 खेमते कसि धलि किरण तरंग !
 प्रतीक्षा रत सहस्र सुख स्वर्ग
 काल के उर में समते भीम -
 धरा हो मनुज मिलन का तीर्थ
 ऐक्य के हो जम मुक्ति अधीन !

जगत से मिखर सुखम जग एक
 चकित करता कवि की स्थिर वृष्टि
 धन करती प्रय जब के कूस
 हृदय नम से धर शोभा वृष्टि !
 ऊर्ध्व के ज्योति स्वय से मुह
 बीमा मूर्ख धजात
 धारदों

स्वर्ग विस्तृत थी नव बिन्दु ज्योति
 सर्वमय परम - न संभव माप
 छँ रहा था प्रबलतन - धूम
 बट रहे थे बड़ भू अभिगाप !
 मधुरिमा से विलि क्षण अभिमेय
 ज्योति सय में उठता तम काँप
 भावता बाहर बड़ बुपभाप
 प्रबलतन की बाँधी का साँप !

मृगत घानर छँर में बड़
 प्रीति शामा सागर में सीन
 युद्ध युवती मिसते मिर्बाधि
 देह मन की बंधा से हीन !
 उपा ज्योत्स्ना का तित शील्य
 सौगता उठता उर स फूट
 कोटि रति काम मुग्ध परितार्थ -
 हाव भावों की मचती भूट !

अतना पट में ज्यों दिग् बीप्य
 बिजय सगता धन छाया बिन्न
 अगुदर सुंदर, धरित पूर्ण
 वंङ का मुख निरपेक्ष पबित्र !
 मुनहने धामा पट में मूदम
 मुहाता निपटा भू मूद् गान
 उतरता हृदय गियर पर मौन
 प्रेरभाषों का रश्मि प्रभात !

निगिन मनुजों में मूर्त - अर्ध
 दीपजा उगका मानव एव
 अमर जा अग परम अय हीन
 स्वर्ग बनता त्रिगता पबिदेक !
 निच नव जो पा जग विराम
 भुपर धरता अर्धस्य धावार
 तिण गावता पीवन लेखर्ष
 दिना शम में कग्ता अदिमार !

जन्म सेठा मर जीवन स्वर्ग
 मुग्ध बंठी के मन में मीन
 घरा पर सुन पड़ती पय चाप
 प्रगोचर धमका जाने कौन ।
 देखता काम पंक में काम
 बिल रहा नव शैतन्य सरोज
 छोड़ कर घरा स्वर्ग बन मुक्ति
 व्यर्थ थी स्वर्ग मुक्ति की खोज ।

सुजन शोभा स्वप्नों में सीम
 बुझों से छट जाता व्यबधान
 लोटती मू पर सिद्धार समीर
 स्वर्ग से रोमाञ्चित कर प्राण !
 क्षेत्र के भागम में बुपचाप
 उतर धावा स्वर्गीय प्रकाश
 बूबठे मम के बीने मूस्य
 देखता शाश्वत कर मुड हास !

सृष्टि संपति में बँधे धर्मत
 माचते खय मूय स्त्री गर संघ
 प्रकृति भग से उठता कस गाम
 खेतते कसि धसि किरण तरंग !
 प्रतीक्षा रत सहस मुख स्वर्ग
 काम के उर में सगते मीन -
 घरा हो मनुज मिलन का तीर्थ
 ऐक्य क हो बन मुक्ति अधीन ।

जपत से निघर सूक्ष्म जय एक
 चरित करवा कसि की स्थिर बुट्टि
 मम करती धम जय के कुस
 हृदय नम से घर शोभा बुट्टि ।
 प्रार्थ के ज्योति स्पर्श से गुह्य
 देह बीना संकृत धजात
 धर्मित धार्मकों में अधिभ्यक्त
 निरव को करती नव रत स्नात ।

स्वर्ण विस्तृत भी नव पिद् व्योति
 सर्वमय परम, - न संभव माप
 छैट रहा या प्रबचेतन - धूम
 बट रहे ये बड़ भू प्रमिशाप !
 मयुरिमा से दिशि दश अनिमेष
 स्याति समय में उल्ला तम काप
 नापता बाहर बड़ शुपचाप
 प्रबतन की मीमी का चाप ।

मृजन धानंद छंद में बड़
 प्रीति धामा सागर में सीन
 मुबक मुबती मिसते निर्वाध
 रेह मन की मंजा से हीन !
 उवा ग्योत्सना का सित सौन्दर्य
 सीमुना उल्ला उर से फूट
 कोटि रति काम मुग्ध चरितार्थ -
 हाव भावों की मधती मूट ।

चेतना पट में ग्या दिग् दीप्त
 विश्व सगता जन छाया चित्त
 प्रमुंदर मुंदर, चरित पूर्ण
 पंक्त का मुख निरपेक्ष पथिय !
 मुनहसे धामा पट में मूदय
 मुहाता सिपना भू मूद मात
 उगाता हृदय सिधर पर मौन
 प्रेरणाओं का गमि प्रभात ।

निधित मनुजा में मूर्त - प्रपंड
 दीयता उसका मानव एव
 धमर जो प्रय मरय भय हीन
 स्वर्ण करता त्रिमता प्रमिपेक !
 निरव नव जो पा जग्य विदाम
 मुपर धरता प्रमुंज्य धाजार
 निष्ठ शासन वीचन तेस्वर्प
 दिग्य धन में धरता प्रमिमार !

चेतना बंसी हरि मन देह,
 परस्पर प्राणों में विद्य स्नेह, -
 प्रेरणा वा कवि हरि युग कर्म
 केन्द्र धु भी शोभा का येह ।
 देख छातों में बधि संस्कार
 सखा प्रति रहता उर सामार
 शूभ अंत संस्कृत वैतम्य
 विचरता पग धू पर साकार ।

सोचता बंसी - क्या सावध्य ?
 मक्ष्य कर मुबती युवक समाज -
 उसे समता संयुति का सत्य
 सहज ही शोभामय निष्पत्ति ।
 केन्द्र के मर मारी सामान्य
 सुपर सबते पा बधि परिवेष्ट
 मधुरता के प्रति कृतिम वृष्टि
 हृदय को देती उसके क्लेश ।

बाह्य साधन सज्जा परिधान
 नहीं करते सुंदरता बुद्धि
 सुपरता धारमा का संस्कार
 बाहिए उसको अंत सिद्धि ।
 विगत युग के शोभा के मूल्य
 उसे सबते सीमित संकीर्ण
 नागरिक धामिजात्य शीतल्य
 अंतरांगों में पोषित शीर्ष ।

सभी प्राकृतिका रेखा रूप
 हमें करने प्रविष्टम स्वीकार,
 न के यदि रूप अर्पाय विस्मय
 असंगाय के शोभा छवि द्वार ।
 प्रकृति अंत वैचिर्म्यो के योग्य
 बाहिए अंतर्वेदि उदार, -
 सभी को मुक्त दोत्र हो प्राप्त
 सभी विकसित हों बधि अनुसार ।

यही पासी की सङ्घी स्वयं
 निपट घन्टहूँ स्वभाव में श्रेष्ठ —
 विद्विह की धर प्रति सन्धिय धंग
 सतत हूँसमुख मत द्वेष विरोध !
 ध्यवस्था करले में बहु पल
 प्रकृति धारण कम मुख मीन
 उमे माता उपाय विभाप
 स्तवक, सरु रचना कसा प्रवीण !

मममयी सहज बुद्धि स मम
 सत्रय उत्सुक बहु मति स मंद
 सीवती शीत मुखि सहयोग
 उन्नि प्राणों में धर मर छर !
 न उमको धारुति का बरदान
 निष्कर्षी धमा मे छवि कति
 एक सुदरता उममें मूर
 पून मुख पर हा बन भी शक्ति !

कन्ध में दुग मनाऊ बहु रूप —
 महान् सुदरता क बे धंग
 भावना सापर में शनि उभाव
 उठी हो रम ऐश्वर्य तरंग !
 मनुज धंशरवतना अनिन्य
 पूरम स्त्री में हाती धरत
 धांतरिण शोभा उमको बाम्य
 देह क प्रति भी बहु न विरक्त !

बीउने गए धर पर धर
 बड़ा मन प्राणों का संघन
 मक्षपता रत्न भावना उदार,
 गणेश रत्न धर पर धर !
 हूँ मन का धाम्य धनुमति —
 बन्धि धरपेत्तन का संस्कार,
 शरी शरणों में उतरी ग्याति
 गुणा विनय का रत्नमि हार !

मधे सोमा के कुमुमिठ स्वर्ग
 घँसा सर में स्वनिम रस तीर
 बही रोघों में तद्विर् तरंग
 हुए उन मग के मुबन अधीर ।
 अचेतन का तम स्वप्न प्रवीण
 हँसा - ताण्डुर निशि नम प्रात
 उषा का प्रसङ्गना सौम्य
 गुमावा हृदय सिठिण पर शत ।

केन्द्र में खुले नवीन विभाग
 पूर्ण बह हुमा अनेक प्रकार,
 देस देहों से घाते लोग
 भाव जीवन पाता बिस्तार । -
 विश्व संकट क्षण बढ़ता मित्य
 काम करते न नीति न विचार,
 खोजते नू शुभ बिस्तक प्राप्त
 समन्वित मया सत्य आधार !

बुसा सिधु कल सुधय सबाँय
 बाम मग अनुशीसन का डार,
 मातृका पाम पोष रब स्वस्व
 मबागठ का करती संस्कार !
 मुरखिमय वा संस्कृत परिवेश
 मुयोजित होता मनोबिकास
 यथेच्छित इति स्वभाव अमुक
 प्रस्फुटित होता हृदय प्रकाश !

संप्रहामय संव प्रपागार
 बुसा - जन विद्या पय अनिवार्य
 रति को पढ़ते स्वी नर प्रीड
 समापन कर निज ईतिक कार्य !
 मुदबालय ने सोक अधीष्ट
 प्रकाशित की पत्रिका समाम
 लिखिर जीवन की सिठ आधार
 सोक बेतमा - मूर्त हा नाम ।

केन्द्र ने खोसा करुणा कथ -
 (प्रेम का बीते बहु संस्थान !
 जहाँ धास्या प्राण धार्मिक
 मुक्ति सन्ध्या रखते भू प्राण !
 महत् के हित जिनमें बिर साध
 हृदय में घटा प्रीति निष्काम
 समर्पित जिनके जीवन कम
 केन्द्र मुख्यत उन्हीं का धाम !)

धार्मिक धयसा जन का बहु कोष्ठ -
 जहाँ रहती विधवा निष्प्राण
 परित्यक्ता साक्षिणा धनाय
 मपत्नी बंध्या निःसंतान !
 धनुड़ा पति पीड़िता धनेक
 स्वजन करते कटु धर्याधार -
 रूप संसृति की करुण प्रतीक
 बर जीवन मन हिन तन द्वार !

बृहद् भू जीवन का सीमर्य
 न उर में सता स्वर्ग द्विभोर -
 निविर करता उनका धार्यस्त
 व्यक्ति विपति से जो निहत्त बठार !
 केन्द्र के सहृदय छात्रा छात्र
 ध्यान देन उन पर सविशेष
 प्रेरणा भरत उनमें दीप्त
 प्राण में नव जीवन उदेष !

व्यक्तिगत कुंग क हर रूप
 हृदय में भर नव धारोदक
 बिर जीवन स्वर्ण में स्नात
 दण्ड उन का बग्ने धर्मिणेश !
 प्रवृत्ति सुगमा का प्राण धान
 धन उर का हर साधक मार
 धरिने मनोदुर्गा में बुका
 धर्मित गोभामन जन नंगार !

कहातीं माताएँ वे - मौन
 सोक धम में रख रूढ़ा पित
 शक्ति अनुभव करते शक्य प्राण
 मनुष्य जीवन धन सर्व निमित्त ।
 हृदय में होता रख संचार
 एक धन धू मानव परिवार,
 घर शोभा उनका प्रिय देश,
 सुखि से करतीं वे शृंगार ।

जगत् जीवन के प्रति धाड़पट्ट
 पुन मित्रता खोया विश्वास
 मुग्ध प्राणों में बहती मौन
 अमृतमय विश्व प्रकृति की साँस !
 शिबिर में गाता विन् संपीठ
 लोक जीवन से जुड़ते प्राण
 सृष्टि के अमित विभव में दून
 धुर समते निज रोदन मान !

पृथिमा धार्द्र स्निग्ध प्रसाध
 भुभ नरवोत्सव का जन पर्व -
 प्राठ ही से लगते धरि व्यस्त
 शिबिर के स्त्री नर - स्नेही सर्व ।
 घर का वे सँभारते रूप
 प्रथम प्राणों को वे धम दाम
 स्वच्छ धन हाट बाट पुर सद्म -
 स्वच्छता का सर्वोपरि स्वाम !

धाम दल के धन बंदनवार
 टँवे पुर पत्र में दूध अधिधम
 हरित नस्यों में सिपटे धन्य
 गुहाते पुरजे छोड़े धाम ।
 सुरंग बधि नस्ता में नर नारि
 बरों में करते मंगल मान
 रजत शोभा में समते धीठ
 बीस हल रूप छेठ धनिमान !

यंत्र हस जो झरती की मोनि
 बीज गमित रखते नित धन्य ।
 धन्य जीवन - सोचते किसान
 घर पासती बिस दे स्तम्भ ।
 गाय भेड़ें सब समती स्वस्व
 जानते पशु पालन सब भोग
 उपेक्षा गायन की अपराध
 सुखद पशुओं के संग भू भोग ।

हिनहिनाते छोड़े - गूह इवान
 हिमाछे पूछ चाटते हाथ
 भाम्यशासी मानब परिवार
 बरधर का बिसबा धिय साय ।
 मूँजवा सोरु धुनां से गाँब
 मुग्गर मुर्यों से प्रांगण हाट
 घर कुमुमित घेंद बरु किरिट
 बाहूती बना वर्ष की बाट ।

हल्लि साड़ी पहने बन भूमि
 भोड़ बीसों का श्वेत दुग्म
 कुंद दमनों से कर मूड हास
 मुहावी मघ स्नान निर्धूम ।
 कुई सग्गी बेभी में घोंस
 गूँप नव हरसिगार क हार
 भासनी क मूड बंनन बाँध
 मन्ने श्नु कुमुनों का शृंगार -

मेघ पट ग दिवसा मुख बरु
 उटाणी हृदय मिग्गु में उबार
 मीन बमनों की घायें घोन -
 प्रकृति देवी ही हो साकार ।
 रजग मौरम से भरे दिग्ग
 स्वच्छ पर मणिघों का नीर
 ग्य मे शुभ तिका जन मघ
 प्राण में घय न म्निता यधीर !

सुहाते पवन स्वर्ण कम शक्ति
 हंस पंखों का दिशा प्रसार,
 शीतनी देख हृदय निस्तम्ब -
 सत्य क्या निराकार साकार ?
 बिचछे स्वप्न चरम घर मीन
 अप्पराएँ किरछी कि अदृश्य ?
 स्पर्श से तन्मय तन मन प्राण
 भाव देही शोभा अस्पृश्य ।

ज्योति प्रभावित जन भू के कूल
 वस्तु भावों में द्रवित विसीन
 धरा लक्ष्मी न धरा ही स्तुम
 एक भावना के जगत् अधीन ।
 शुभ्र भू, शुभ्र वनिल जल नील
 कुंद हिम कुमुद चंद्र से प्राण
 कम रंगों के लय सब वेद
 एक सत् बहु मुन वस्तु समाज ।

मुसा जय की चिन्ताएँ - श्वेत
 हरित भय भी में साकार
 प्रकृति शोभा दृश्य सम्मुख मूर्त
 हृदय में करती स्वप्न बिहार !
 स्निग्ध स्वपिप स्वर लय में गुंथ
 म्पवित मन प्राणों की एकांत
 सृष्टि सपति में निस्वर बाध
 लुब्ध घंटर की करती बात ।

धनाबुद हो धारिम शीतल
 नात्र नीरव जिसकी पद चाप
 हंगिनों स जो शोभा भीष
 मीन करछा हो मधु संताप ।
 प्रीति तन्मय जिसका मुहु स्पर्श
 हृदय का हर सैठा संताप
 शील की सुईमुई सी देह
 मधुरिमा में घोसल भुपचाप ! -

कुमुद बसि रोके सीरम सीध
 घड़ी सहरे घाभी उठ मौन
 पुष्प लक्ष मर्मर भर मद
 उतरती घली पर यह कौन ?
 तारिकारै नम में धनिमप
 कुई छोले सर में दूम स्थार—
 स्वप्न सी बिस्मय सी यह कौन
 बन रही जब स्वप्न पर सुकुमार !

नीतिमा की सी सिठ मकार
 भाव मोभा में सीन मवान
 प्रतीका में सा बिश्व पवाक
 धुंधर हा जीवन में यह गात ! —
 स्वर्ग मोभा की समरस पूर्ण
 चांद का धू मे दिया कसक
 पूभतम बिजा उसे रम प्राण
 धरा को सया स्वर्ग के धंक !

ग्राम धू ज्योत्सना का सीन्दर्य
 घभी प्रसुण्य भावना पूठ
 निमृत्त पक्ष सरित मरो के सीर
 बिचरती धन्यरियाँ स्वर्गुठ ।
 उतरते पक्ष भी स्वप्न सदेह
 हृष्टि बन टपरो क उम पार,
 बुद्धि संजित मगरो का शुद्ध
 मही प्रतिदिन का मित्र संमार !

पूषिमा का पक्ष अनश्रिय पक्ष —
 पञ्जना संवोजित हो नम्य
 रूप रैम रज मे छन कर मौन
 विचरती हो जब धू पर मम्य !
 प्रीति मौन्द्य ज्योति धान—
 मरुत हो जीवन में निर्बिध
 पक्षजित लगे धर गित दे-
 इणियो के मुग्ध में स्वर्गुठ ।

शीत संतुलन शांति मांसस्य
 प्रांतरिक ऐक्य बहिर्यत साम्य,
 सेंजोए ये जीवन परिवेष्ट
 समर्पण सुख वा जन को काम्य !
 बाँटते मुक्क पुष्प कसि मुष्ण
 युवतियाँ पहनाती मुड्ड हार,
 कुसुम के बलय हाथ में बाँध
 परस्पर वेते के उपहार !

मनाता रूप रंग का पर्व
 रंध मुकुशों में बिभ्र उद्यान
 मुक्क युवती उतारते बिभ्र
 तुमि से भर रंगों में प्राण !
 बिठा मित्र बधि के प्रिय प्रतिमान
 मनोरंजक कर उगठे बात
 नाम रेखा स्वप्नों में बाँध
 मधुरिमा को देते मुड्ड मात !

मुर्य गीतों के हे जन भोज
 मनाते रस मयस मिम छत्र
 नाट्य प्रहसन रच कर सविशेष
 रिखाते रंगभूमि पर पात !
 सुभय बीड़ा जन में एकत्र
 केन्द्र करता धामोद प्रमोद
 बिसाड़ी दिखा धमोदो खेस
 जनों का करते मनोबिमोद !

धनिर्बचनीय धुष्ट धामंद
 सतत बहता प्राणों में मुक्त
 देह संज्ञा शोभा मुख लीन
 नाब रस वा धति धुष्ट धमुक्त !
 महुरियों से मिम महुरें सोम
 सोटती भर सीमा सावध्य -
 प्राण सुपमा का वा तित पर्व
 हृदय तगमय मू जीवन धम्य !

कुमुम धति सहर किरण से साथ
 माचते मुबति मुबद्ध समु-भार,
 क्व रस की पूरी कर साथ
 बिरकठ कसा पुत्र मुकुमार !
 रंग बस्यों मे सत्र प्रिय दृष्ट
 गद्य कुमुनों से रच गृगार
 प्रेरणाओं को कर रय मून
 मुग्ध करत प्रग मूग पदचार !

बिपर उपवन में छाता छात्र
 धाँनी का करते उपभोग
 निरी का बही धनेमी दृष्ट
 मित्ता शहर को प्रिय सनाप !
 कुंज में से जा उमको भीन
 पकड़ सार उसका प्रिय हाप
 कृत् उमने भी तुमका बात
 सग उनी तुम मन में साथ !

बहो बना छिरी न तुमम बात
 गिविर में मे एवारी धान
 जानता यही सर्वमय प्रेम
 भूनाता मन न तुम्हारा ध्यान !
 सिरी मे उम बिठा नित्र पाम
 बहा हून धामे कृत्ना धर्म
 धर्म हो स्निग्ध व्यक्तिगत प्रेम
 नवान का पर कभी न धय !

मुग्ध धति गहन गद्य का नय
 मुक्त हा मानव हृदय विनाय
 धर्मिणा प्रेम कभी धनिसारं
 कृत् का निनाय प्रणाप्दुगाय !
 वेष्ट को धरित मर प्र
 उनी मे हा मना धर्मिसारं
 प्रीति न धाना उर का धर्म
 का कर मन्ती मुग्धे शाय !

सही हम एक प्राण दो देह
 तुम्हारी प्रवृत्तिका वह नित्य
 प्रतीक्षा में रत छिपा न भेव
 सहज होगे दोनों कृतकृत्य !
 रहा बकर मुन क्षय भर मौन
 किया उसके मन ने स्वीकार,
 प्रीति का उर में कोमल स्वाम
 धीर वह हर सकती उर मार !

कहा संकर ने तुम हो स्वप्न
 सत्य हो संभव सद्ब्रह्म प्रीति
 किन्तु हरि भैया का अनुपम
 तुम्हारे मन की गोपन भीति !
 बहिष्कार का दुर्मम प्रेम
 केन्द्र में सफल तुम्हारी भीति
 पूर्वतर किन्तु मुझ का प्रेम
 प्रेम स्तुति मही मधुर रस भीति !

सिटी रह पाव मन कुछ काल
 नभ हो बोली - मुझे प्रतीति
 पुस्य स्त्री उर का चित सौहार्द
 प्रेम की विकसित सार्पक रीति !
 स्नेह का बेटी तुमको ह्रास
 सखे में घोल मुक्त उर ह्रास
 घतम निःसीम प्रणय पाषोधि
 मुझ स्त्री पुस्य कर सके पार !

प्रणय की अस्वीकृति से मन
 भावना में संकर की रूढ़
 बंध गई थी थी की प्रिय मूर्ति -
 मुक्त उर पुन हा गया मुझ !
 हृदय से निकली मुप की संधि
 हट गया अंतर मन का भार,
 छा गया प्राणों का घातक
 शिथिल में भर लचील विस्तार !

पतट गकर ने दया मुख
 सामने प्रीति लड़ी वो स्वयं
 दय उम दीप निगा का उर्ध्व
 ज्योति नव हुरे उम उपनयन !
 दुष्टि न मीन स्वयं न मात्र
 हट गया बुद्धि का तम भार, -
 सिरी बोली हंस यामा प्रीति
 निधु में बनी मुहुर्त पनवार !

दय दश भग पबित्र मीन्ये
 मया गकर अपनी मुधि भूत
 गुना स्वयं का मम गबाध
 निरुक्त मा गया हृदय का शून्य !
 भनना का बरमा ऐश्वर्य
 भाव बिलुप्त कर मन न द्वार
 दह की मीमांसा का मीय
 प्रेम का स्वर्ण हृषा माचार !

टगा बहु रहा प्रीति का रेणु
 कभी न गया या उम पर ध्यान
 स्व के गोमा पर न शक्ति
 प्रेम शक्ति उदय हृषा सम्पन्न !
 अथर पुन के मानिक रम पात्र
 नयन में मीमांसा समाप्त -
 कौन कयन का मरना गुण
 स्व में या अथर का गार !

बलिहा निमम मन मुद
 कुगर्ती दमिकत अमिगम
 बिबगन अर्था परव रम मुग
 स्नह भाषा में बंध निन्नाम !
 सामन्ति अर्था मन्त्र नृप
 स्वयं दाता ये मनी स्व ?
 मीन निन्ना स्वही स्वयं -
 न कयन स्व स्व दायार !

बाह सनक अंतर की बात
 बिहैस कहता बंसी स्फिर घाठ
 धाम के युवति मुकक ये बंधु,
 धमी बिज्ञासु, सिद्धिमु नितांत !
 गोपियाँ सुर बासाएँ पूर्ब
 भावना जीबी रही विदेह,
 मयी बेतगा प्राज गतिगीम
 बेह गोही जो नि-सबेह !

धरा जीवन से विमुख विरक्त
 पारसौकिक था वह उच्छ्वास
 बेतना का एकांगी बुत
 सप्तकिर्पा देता बिसकी रास !
 सर्वगत भू जीवन अनुरक्त
 उतरता मन में गया प्रकाश
 गोपियों सा जो तन्मय मुक्त -
 पूर्ब इन्द्रियमय प्रेम बिकास !

निरर्थक स्वर बिहीन संपीठ
 इन्द्रियाँ ही ईस्वर की द्वार,
 स्वर्ग रख सका न बिसको बाँध
 धरा पर करता वह अपिसार !
 बड़ाता बंध समुठ रस बाँह
 मुप्त रहता न सिन्धुसुख प्यार
 जीबि उर में सुतवी उहु ज्वाल
 दूर नि-छीम नहीं - इस पार !

राग भावना द्वेष विप मुक्त
 सहज बिचरे जन भू पर धाम
 हँसि तापपत्र सा सीमेप
 मार्य निधि में स्त्री पुरुष समाज !
 श्याम धन में प्राणी क बीप्त
 इन्द्रधनु सिमठ हो सिठ धनुराज
 स्वर्ग बेचे सी धाँवे लाम
 धरा का धनुस धर्यट मुहाग !

धभी प्रारम्भिक भ्रम ये मल
 जतना स हा जन संयुक्त
 घरा पर जीवन हा परिणाम
 प्राण मन के बधन म मुक्त ।
 धनप मानव जीवन का साथ
 मनुज के मिर म मिटे कथक
 मय्य हा धमूत तब म पूर्ण
 स्वर्ग विचर मू पर निगम !

जमाती मेरे मन में शुभ्र
 भाव प्रेरणा पृथिमा प्रात
 महू उनका जीवन दायिब
 स्वर्ग ही मू-जितना मिज्ञान ।
 मुक्त हित हा संयानित कर्म
 धर्म रत हिय यल धारम
 घरा जीवन मन का संस्कार -
 यही धारी मानव का धम !

धमूत धार्मिक तब का मय
 शुभ्र प्रतिपन हानी रम बुष्टि
 पसनी पनती हानी सीन
 धनप जीवन धनप मे मुष्टि ।
 युक्त बनि धनि य हों मर मारि
 का मूर्खों म मुक्त धनप
 म हा जो राग भावना मुष्टि
 खेदी जन मू नरक जपय !

मर्गजित मन म मुक्त पौर
 तब वा करने में धममय
 मभी दे नहीं धान मदिष्ट
 शोखन बनि बानी का धम ।
 धोर बुष्ट एम भी ये प्रात
 बिष्टे तपु मनर मगा मय
 निबिा ब बनत के दुः संम-
 धये वा करने नर धनप !

स्फटिक का हो उज्ज्वल बिन्दु सौंदर्य
 जहाँ करती हो जाति निवास -
 ब्रह्मिका के जग में निःसीम
 भावना करती मुक्त विभास ।
 पंख बोसे तब रात्र मरुत
 उड़ रहे हा धर्मत में मीन -
 बेतना देश काम में शुभ
 विचरती हो धाघत विहीन ।

स्वप्न शोभा मखिर हो मीर
 प्रेम की स्थापित भीतर मूर्ति
 धारती गा निःस्वर धारण
 स्वर्ण सुख की कर भू पर पूषि -
 विमोहित राका का निःशब्द
 सुकवि उर को देता धामास -
 कौमुदी का विवेक सौन्दर्य
 न बैधता रूप शब्द के पात ।

सूक्ष्म सौरभ सी मुक्त धनाम
 प्रह्ला कर सके न जिसको प्राप
 बहिर्नयनों के लिए धनुष्य
 पृष्ण सित शतपल सी धम्मान !
 मृदुल छवि सतिका सी धस्पृश्य
 गीति नय सी निःस्वर, धयधय
 नाज सी पर प्रकृति की स्वेत
 पुरुष के विस्मय सी वह धय्य ।

नीलिमा हँसती भी निर्वाक
 चाँदनी फँसी भी विषय
 साधते नामर भीतर पीठ -
 मधम कवि बचनों से निःस्तम्भ !
 देखता वा धर्मत धर्मियेय -
 बेतना ना रहस्यमय स्निग्ध
 पारिमी का पा धंत स्वर्ण
 तप क्या ? कृता मन मंदिग्ध ।

दिशाएँ भगता सीमा मुक्त
 दिव्य रोषों से स्मित नदात
 बाल रूप स्थमित अथ विहीन
 शांति करतास हा नम का छत्र !
 ग्याति धंक्रुसित अपरिमित नीन
 मत्प हो शाखत गुह्य भगाप
 त्रिते बन बीबन स्तर पर मूर्त
 विषरता धरती पर निर्बाध !

ध्यान फूसों की पारी बोह
 मासती भी निपटी पी बेस
 उतर गगा जग में ही बाद
 समिस में छिप दिप करते घेस !
 शोशनी में भाता मुकुमार
 राम हृदित सा हरगिगार
 तारिषामों सी नम से बूद
 बूद कलि करती भू धमिगार !

गरदु प्बतु का पा संत समीप
 कृष्टि मे घुमा ताप का भार
 गीत का मुग्ध स्निग्ध रूप स्वय
 प्रथम गुह्य का करता सचार !
 प्यार मे भरा गुह्यता नीम
 गुह्यता गुमे सिद्धि के पार -
 प्रवृति का शोभा स्वप्नित रूप
 भावना का करता शृंगार !

राग कामना कर मानव की मुक्त
 धन स्वर्ग का करे क्या परिहार
 जीवन मन हों विनय मे संयुक्त
 धेज प्रेय हों अनुभव मय हृत्कार !
 शो गुह्य भाषा के धारण
 गरे हृत्ति भू पर पितृ स्वर्ग प्रकाश
 इन्दि भुवनों की गोमा न पुनं
 मनत्र धाना का हा धन्य विराग !

इन्द्र

शिबिर शरते जन मन के पाठ
 बूढ़ बय प्रसम बट का दूँठ
 हास मुप का छाया जन धुंध
 सत्य के मुख को ढपि मूठ !
 बिजब बिबटन मुपाठ का ब्याठ
 सजय सक्षिप निश्चेतन शक्ति
 स्वर्ग मधु से भू मन प्रममिन्न
 पीर्न बब के प्रति जन अनुरक्ति ।

असद् सद् की अर्धर रस श्रेणि
 असद् ही में सद् का प्रधिवास -
 सत्य वा कस जो आज असत्य
 जगत जीवन रहस्य इतिहास ।
 समापन प्राय पुरातन बूठ
 क्षितिज तम से उन मध्य प्रकार
 निकय पर स्वर्ण रेख सा मुन्न -
 विहंसता - भू बेतना बिकास ।

धांतरिक बटवी जब कूठ कति
 बिजब पट परिवर्तन धनिचार्य -
 गुस लक्षितया अक्षि में जाप
 अयोधर में कय्यी निज कार्य ।
 प्रपति पब में बज के मति रोष
 सहायक होती अप्रत्यय
 परीक्षा में होठा उत्तीर्ण
 अमग्न पर सन् - जो विधि का सत्य ।

जैसे सहृदय गंगा के तीर
 समांतर देखें संस्था पौर,
 काम निरबध्दि, विपुला जन भूमि
 यहाँ सब के हित निश्चित ठौर !
 केन्द्र स्पर्धा में मठ को पीछ
 दिया माघो मुद नै मय ह्य
 शांति प्रायम सब बहु विग्राह
 धर्म का मू पर कीर्ति स्तूप !

शांति में बिरब मोहिनी मक्ति
 शांति क देनों में षडु प्रप
 एवनातिक पति बिधि हा धर्म
 शांति हम युग में मर्य समर्थ !
 शांति प्रायम मुमुगु जन द्वार
 विग्राहे जहाँ घण्ट बिधि योग
 ब्रह्मचारी ब्रह्मात छात्र
 बानने तर्कनी बरणा सोग !

साधना का या इग सोपान
 विरल तर्कनी बरये का मू
 सया प्रायमा में जो एवाप्र
 बित्त का रखते साधन पूड !
 तुम संस्कारों का मन ग्युम
 बीच परस्परियों के घर मू
 बना मयम की पूनी शुद्ध
 राग को बरले ब निर्मन !

प्रात शार्द कर गगा स्नान
 गिन्ध कर मंध्या, जन ना ध्यान
 हवन के मंत्र युम में गिरा
 के मंत्रों क रज्जु गत !
 मना मू मया में मंत्रण -
 बज्ज बु दु मा हीं धनुक
 मंत्र के मंत्रें मन्त्र उर बर
 दिने मन को मन्त्र मानर बन !

सर्प भ्रम मंगुर मय में रिक्त
 मोह माटी के तन का छोड़
 पकड़ बुढ़ ब्रह्म ज्ञान की रज्जु
 जगत् की माया से मुँह मोड़ -
 ब्रह्म कर दुर्लभ मानव योनि
 तोड़ कारण अर्थात्तर पाष
 मुक्त हो सका न जो हृत् बीब
 नियत उस काम प्राप्त का मास !

निरय गुरु देते सद् उपदेश
 पहिसा सत्य समागत धर्म -
 न बीटी पर पड़ जाए पाष
 बीब रसा जग में सत्कर्म !
 चिसाते जो मछली को धून
 सिखा बीटी को करते धान
 रपा ममता की कर के बुद्धि
 स्वर्ग में पाते उत्तम स्वान !

धर्म का तत्व मुहा में सीम
 महानग बसा गए जो पंच
 उसी पर चलने में कस्याप
 बताते समी शास्त्र सदुपबंध !
 बटुक का हो चरित निर्माण
 मुबक का ब्रह्मचर्य हो ध्येय
 ब्रह्म का अनुबर्णमय रूप
 मनुज का अनुपमम में ध्येय !

द्विजों के हित बन ज्ञान प्रकास
 मत्र हित रच पर सेवाचार,
 शात्र हित शीर्ष वैश्य हित वित्त
 दुर्द भगवत् करुणा साकार !
 न द्विगु संरुक्ति का उपमाप
 कही खबती में मितता धर्म्य
 मनुस्मृति में कह प्रतिम शक
 कर पर मनु खरती को धर्म्य !

'या कहते गद्गल ध्यानम्य
 स्त्री हा उठते गुरु दृष मूँ
 स्वाम महमा हा जाती रड
 दुमक पढ़ती धामु की भूँ ।
 मुग्ध थोडागा पर गलान
 गहन पढ़ता एकान प्रभाव
 धम्य प्रभु-कहन गुरु प्रवृत्तिम्य
 न तुमम मुसको तनिक दुपाव ।

नजाने जन भडा न माय
 बिहम गुरु दने धागीबदि
 पूछने दुमन मुमाठ मार्ग
 मिटाने कर्म जनित प्रवगाद ।
 पाप भव तुण्या-उममें दुग्य
 मूष में जय बे जद धजान
 न तब तब दुग्य न तनिक निबुनि
 न जद ठव मन में सम्यक ज्ञान ।

न भव तव हा निर्धूम विराग
 प्रवट हापी न ज्ञान की धाग
 ज्ञान ही मत्व ज्ञान ही बदा
 गदु मद् ज्ञान मूव तिन गग ।
 जम मेगा जम में छिज कीर
 पूरें कमी वा काने माग
 निदति रु मीठ बरु में पुम
 भापना - निमम बिधि मताय ।

बाणे धार मापू मा
 रगू बन पूरठाग ताग कीद
 जग निजन बीरद धन धार
 बहो कम धी जन शेरक धार ।
 प्रसामी धापी जग में शीर
 मार्ग दू मनी धरु वा धाम
 तिबिदि दुग्य व ताग न दुक्ति
 धाकी धाना गुर्त विगय ।

गुंजता वहाँ घनाहूँ नाव
 वहाँ प्रिय की मयरी का डार,
 मटकना भूठ निष्ठा में व्यर्थ
 मूढ़ तर का प्रिय घर उध पार !
 यहाँ कुछ नहीं किसी का प्राप्य
 सभी को जामा प्रिय के देत
 स्वयं वू फाट सीढ़ कर भेंट -
 प्रेम का यह निर्मम सहेत !

नित्य फूसों से रण शृंगार
 सँजोनी मूसों की तप सेज
 पहँठा सुख दुख माम ममतव -
 भेजने प्रिय के योग्य बहेज !
 प्रतीक्षा में जय कर धनिमेप
 प्राप की पकड़ उर्ध्वमुख डोर
 उधोदियाँ कर जकों की पार
 सतत बढ़ना प्रभु मंदिर घोर !

सत्य गुंये के पुङ का स्वाव
 मनुज का वह धाम्नात्मिक बाव
 ब्यक्ति जय भव माया जस प्राह,
 मुक्ति का पुङ वीराम्य उपाय !
 जागते धंतर्मायी मर्म
 वही भीतर के छाभी मौज
 कर्म जब कर बोये संभ्यस्त
 सभी जानोगे कर्ता कौन ?

स्त्रियों को देते मुह उपदेह
 पतिव्रत धर्म सृष्टि का सार,
 उसी से संभव भोक समुद्रि
 वही निःशेष का धाधार !
 नहीं माटी स्वतंत्रता योग्य
 धर्म बल होता उससे क्षीण
 पिता माता का घर वह छोड़
 रहे पति मुठ के सतत धधीन !

कठिन भू पर विघ्ना का धर्म
 त्याग जब तप, समय उपवास
 निरम परिजन सेवा में मीन
 रह वह जब स विमुक्त उदास !
 देह मुक्त शूलों की घर सेत्र
 क्षणिक इन्द्रियां तरल दुःख द्वार
 उसे रखनी निज कुल की नाज
 बंग राहुन धर्मार शृंगार !

विमदास मिथुन थे मुद गूढ़ -
 धर्म का परंपरागत पदा
 मानव - कर्मों में स्वाधीन
 भुक्तकों बाम् जाता में दस ! -
 चतना तत्त्व हा पुरा गुण
 धम का टिनका पर धब शेष
 प्योपमे शक्ति को निवार
 मध्य मुग से पकड़े पा देस !

जगत का बनसा माया जाल
 धरा पीवन प्रति बड़ा बिर्लिन
 मृत्यु परमात्मा से वस्त
 बही जन में न प्रेरणा शक्ति !
 मनागति रुड़ि रीति स रुद्र
 स्वर्ग गुण क प्रति धरित कर्म
 जगत न देवत को कर भिन्न
 बना ब्रह्म निरोध धमि धर्म !

पनायन दैव निरागा धर्म
 एरा बहु पात पुण्य गंजल
 धमानात्मन विष्णु इन दुष्टि
 निरनि, विधि पूर्व जम में धर्म !
 धमानररागी देवाधीन
 धान्दहानि न ग्या बर गंध
 धरिता रेनित बृ मु विष्णु
 गण निरिष्य विराग का मंत्र !

हृदय स्पर्शन धम्मारम प्रकाश
 हुमा शत शारों से पाच्छम
 पक्ष पीड़ित मति रुद्र समाज
 रक्षा कुटिल संकीर्ण विपक्ष !
 बने छाषम सभोपरि साम्य -
 जीर्ण परिपाटी नियम विधान
 शक्ति को धमर बेस सा ब्रुठ
 मतो के फैले अटिस विताम !

यताता धर्मों का इतिहास
 प्रसंभव उनका पुनरुत्थान
 मनुजता को वे किए विभक्त
 खड़े कर प्रस्र रुद्रि व्यनधान !
 जो ममा शक्तों में सब धर्य
 रिक्त पिजर वे - धय मिप्र्राण
 भयानक केंबुस से मति मुख्य -
 कर पया जीवन प्रगति प्रयाण !

फटक धर्मों की भूखी जीर्ण
 मुक्त कर बीज स्वल्प प्रकाश
 मनुज संस्कृति में उषको मध्य
 संबोना - हो अरितार्थ बिकाठ ।
 जमत को कर ईश्वर से मुक्त
 स्वर्ग कर जम भू पर निर्माण
 मनोबीबी को बनना पूर्ण
 अतमा का कर पुनरुत्थान !

कदिमत कर्म स हो मुक्त
 छिन्न कर तर्कवाद का ज्ञान
 बीरू अंतर का साहब धर्य
 उसे जम भू जीवन में दास -
 स्पूस वैज्ञानिक मुग को धाम
 पिमा मब धाध्यात्मिक पीयूय
 मनुज को हर जइत्व का ध्याठ
 नए मुग का नामा प्रत्यूय !

चेतना हा फिर म गतिशील
 गुप्त संतर्पण के द्वार,
 बाह्य बीजिक धारण गुप्त
 सत्य का ही फिर मे उद्धार !
 वह मन के पार्श्व से पूर्ण
 हृदय में हा शक्ति मंचार,
 पूर्ण धारणिक मानव जग
 धरा पर ले-हा नम धम धाम !

धरिता की मुक्ति पूजना धर्म
 जगत यदि बधन प्रस्त ध्रुव
 सर्व के संग ही संभव श्रेय
 गर्व ही में अभिर्भवित पूर्ण !
 जगत के प्रति भिष्या का भाव
 जगत कर्ता का शिक धममान
 मारु जीवन ही में प्रभु पूर्ण
 तार बनों ही म कल्याण !

इन्द्रिया क पप स उमुक्त
 चेतना करनी विरय बिहार,
 योः बर्जन विरर में बड
 न उड पात मन तम व पार !
 विरम वैराग्यवा न धे
 तिया नर ईश्वर का धरदार
 धारणिक जीवन का प्रभु
 मुक्ति मुय पर धामुरी प्रहार !

पुराहित परे हा स्वाधीन
 संघ विरामा का बुन जात
 नरर में जन का गए इरम
 दन हो धरदार में दान !
 पुणित धारणिक की कर मुक्ति
 धर्म के मे लार्मी बरदान
 धेप या न्य गय का नय
 परे कर धम धार बरदान !

छोड़ कर धीगम जीवन - प्राप्त
 गए जग जग को ले संन्यास
 हिता सामाजिकता की नीव
 जयत् जीवन का कह धम्मास !
 बोर वारिद्र्य मनो में भाव
 सिद्धा निष्कल निष्कल धम्मास
 बना हठ जग भू को निःसकट
 मोक्ष से बुद्धा मृगा की प्यास !

भूषा ईर्ष्या स्पर्धा प्रतिशोध
 क्रिय भव जग भू को धाञ्छत
 गरवते विध्वंसक धनु धस्त
 भीष जग मन रज भम उद्वृणात !
 घटा ही मातबीम - मा ध्वंस
 मही जग सम्मुख धव परिणाम
 वियत घंठविरोध से मुक्त
 सत्य का करना नव निर्माण !

जाति धायम के मीनाचार्य
 इतिवों ही से करते बात
 जानते सब के मन का मेर -
 नाब भर में ना यह विख्यात !
 बीर्ष तन धारम तोप की मूर्ति
 मात्र उच्चारण करते धोम,
 सदा भक्तों से रहते बुर
 कर्मबन्धु जग से करते छेद !

स्त्रियों की गोपी पर घर बीष
 स्तम्भ करते ने धकनुष पाग
 सहज रह बाल माव में मीन -
 धकत महिमा जाले भवदान !
 बुटी में बीटे ही पुनःपाप
 कभी हो जाते घंठधर्म -
 साक मानस की उर्वर भूमि
 रहस्यों के बुन्ती धाम्यान !

हिरण्य पासे वे मीनी एक
 बँधा रूठा कुटीर के पाग
 नित्य भाजन करने से पूव
 विमात उमका पहिला घाम ।
 स्वयंपाकी वे - चारों धार
 तृप्ति गूहन निज चित्तबल जाग
 बताते व धपने ही गाप
 रू मधु इतर जीव का पान ।

बहो रहते बाबा हरिपाण
 नियम से रण्य जा उपवास
 हपेली भर तिस घाकर नित्य
 युमात उन की मूमजन प्यात ।
 धर्म साधन भर जग में बेह,
 नहीं बहु माध्य पाप की मृग -
 पूव का रम पीकर भी धन्य
 बनी ही उनी वह नित स्पून ।

मनाते व मोता मन्नाह
 बर्म फन का मित्रमाने त्याग
 स्वाग ही भुक्ति मुक्ति मोरान
 स्वाम ही देना पूर्ण विराग !
 बाने पचागन में वैठ
 फेर मन की पाड़ी पर हाथ -
 घाना घाना जग में जाव
 व से जाएगा वह बुध गाप ।

पार कर बोधनी पगु यानि
 बरी मित्ति तब मानुष दह
 भजन हरि का न विना ता धर्ये
 जम नर का - नन मधुर गेह ।
 जपा में पाता मुर्गी बाँध
 जग व जाता हाथ जगा
 धी भर जीवन का इतिहास
 जग मान का गेह घमार !

मध्य युग के शोभे धारम
न जिनका जीवन हित उपयोग
पराम्य पुत्र मिरासा पूर्ण -
भाव से सुनत लोये शोग !
सत्य को कर धारमा से भूम्य
वास में उसकी भूषी टूस
टांग उसटा - कहते यह बह्य
बेठना का रस उससे भूष !

भारती करते मिठ हरिपाद
कास्य के बटे पर दे शोट,
माचते कीर्तन या उम्मत
छिया मुच को पूषट की शोट !
उतरता उन पर पत्नी भाव
भक्त जन करते जन जनकार,
स्त्रियों में छिन चाते वे बैठ
पुर्य उन को कर धस्वीकार !

सिखाते जन को धारम मुधार
वहाँ हंसमुख थी धारमार्मब
बुधिया विजया प्रतिदिन छान
मुसकुराते रहते मुडु मंद ! -
धर्म देवी देवी के धेद
एक पटवासी धारमा राम
उन्ही की सेवा में हो पूर्ण
मनुज जीवन धपित निष्काम !

उन्ही की इच्छा से धबिउम
धष्ट धमुस भर बतती श्वात
उन्हीं से उन इद्रिय मन प्राण
कर्म निज करते बिना प्रवास !
दहा पियसा नाहिमा शोध
गुपुम्मा में मे जाकर प्राण
धपोधर जो मन बुद्धि धतीठ
सामु जन करते उसका ध्यान !

मरु से सिपटी सूरमाकार
 गुप्त ग्रहि सी कुंडलिनी शक्ति,
 उषी का प्रागुठ कर पुण्यार्ष
 प्राप्त कर सकता जप में व्यक्ति ।
 घट कमसों के स्तर कर पार
 गुलम होता नर को गिर सोर
 जहाँ से सहस्रार की ज्योति
 बित्त को रपटी हाँड प्रगाव ।

मिघाते घासन प्राणायाम
 यम नियम ब्रह्म धारणा ध्यान
 कर्म कौशल प्रिय धारमान
 मभी जन स पाते सम्मान ।
 नाति घ्राघम का हाइ बुद्धार
 स्वच्छ रपते कर स्वयं प्रबंध
 प्राप्त कर के गुद का विश्वास
 पावते छात्रों के निर रंग ।

और भी से घनेक व्यक्तिर
 नाति घ्राघम ही क अनुकूप
 सिद्ध धारमा धमिप्य स्वच्छन्द
 हुआ सकता न निर्दे भव रूप ।
 परम संतोपी नर स्थित प्रज्ञ
 जनां को देने निर उपदेश
 गुप्त जीवन निष्प्रिय निर्गुण
 कामनाप्रद कपाय कपु बग ।

पूरने उरबो यज्ञा मुइ
 बोट कर घघ भक्ति एव धाम्य
 मेरवा बम्य माणु वा बेग
 देग में नदर लई जन माय ।
 बर्ग परित से गाव्य प्रबीण
 पड़ाव पदुर्गत पदुर्गत
 लई करणे बटू बूट विबा
 पतिवार्त्त निध्यापी रंग ।

सीखते न्याय सूत्र अनुस्य
 शिष्य पौड्य पदार्थ का ज्ञान
 तर्क को वे सर्वोपरि स्थान
 रटाते गुरु - क्या चार प्रमाण !
 दर्शन का राजा यह न्याय
 विवेचन पद्धति सूदम नितांत
 घोषणा कर कहते आचार्य -
 न्याय के पिर प्रकाट्य सिद्धांत !

बताते नागार्जुन विद्वानाग
 कुतकों का रत्न बौद्धिक ज्ञान
 सत्य के प्रांगण में किस भाति
 धड़े कर गए सत्य ककाम !
 जिन्हें वाचस्पति मिय जयंत
 प्रथम निज तर्कों से कर पूर्ण
 न्याय के गौरव को अनुस्य
 पुन कर गए प्रतिष्ठित पूर्ण !

बिलक्षण वैशेषिक का बोध
 दे गए हमें महिप कषाद
 जिन्होंने सर्व प्रथम कर शोध
 क्रिया परमाणुवाद का नाद !
 तत्त्व सम्बोधन में तत्समी
 न रूठा उन्हें उदर का ध्यान
 खेत में पड़े धन कम शीत
 सुप्त करते शुधाम्नि बलवान !

तपस्या से हा हर ने कुट्ट
 दिया जनको समूह ज्ञान
 कहाया मुनि दर्शन धीमुख्य -
 दृष्टि करती निज अनुसंधान !
 न्याय में अंतर्गत प्रमाण
 बहिर्गत वैशेषिक का शोध
 वस्तु का मौलिक सत्य विषेप
 देय पाए पुन ऋषि के मेव !

सावयव जग क निश्चित पदार्थ
 निरवयव अविनाशर परमाणु
 मृष्टि या मय का घादि न अंत-
 न कुछ भी दान काम में स्थायु ।
 मुख्यत पद पदार्थ आ भाव
 अमत् मातृका पदार्थ अभाय
 मानन प्रकृति वा मुक्त प्रमाण-
 पढ़ाते गुरु षट् भेद बाह ।

मूलमूलम अह परमाणु स्वल्प
 निश्चित अह जग विनाश सयाग
 दुःखमय नाम रूप वा विरह
 न समझ यही नियम मुख्य भाग ।
 मूल में संसृति के घात
 मोक्षकारक प्रुब तात्पर्य ज्ञान
 महान पूरक वैशेषिक श्याय -
 तत्र दर्शन क दुई साधन ।

गांधर्व क्या ? मन्वन् तत्र ज्ञान
 श्याय वैशेषिक से प्राचीन
 अस्मिन् कए एए अस्मिन् विद्वान्
 प्रसिद्ध आ एड् एए बाहीन ।
 अविद्या आत्मा का दे बाध
 जगता मन में गांधर्व विद्वान्
 मन्व एव तम मे त्रिगुणातीत
 शुद्ध आत्मा ही ले दुई टेरु ।

ईत मूलक अधिष्ठात गांधर्व
 मूला प्रकृति गुण लो तत्र
 प्रकृति अह - मत् एव तम मु गन्ध
 पुण्य धान - निगु निगन् ।
 अस्मिन् ग मत् तत्र वा जन्म
 मत् म अह - एव तम एव
 मत् म बाह्य अस्मिन्
 तमम म एव एव भव एव !

बदसती बस्तु न बस्तु स्वल्प
 रूप परिवर्तन ही परिणाम
 कार्य रहता कारण में सीम -
 यही सत्कार्यबाह्य मन्त्रिम ।
 साध्य नास्तिक - भास्तिक बेबाठ
 बीड वर्तन का यह प्राधार,
 सौइ बुबक का हो संबध
 साध्य का अंध पंगु परिवार ।

पर्वसि श्रुति को कोटि प्रणाम
 कर गए योग सूत्र निर्मापि
 धारम दर्पण में दर्शन विन्ध
 पर गए - सित समाधियत ज्ञान ।
 छीम कर बह्य जीव के भेद
 ईश में होना तदुपठ नीन -
 योग का यही परात्पर सक्य
 बह्य चित् सिन्धु, जीव चित् मीन ।

बुतियों का कर पूर्ण निरोध
 पंचविध बनेया से ही मुक्त
 सिद्ध कर संप्रज्ञान समाधि
 चित्त होता ईश्वर से युक्त ।
 बुद्धमय बड़ प्रसार संसार
 जीव हित मोल द्वार भुव योग
 प्राप्त हो जो ईश्वर प्रभिमान
 सद्म ही छूटें मन के रोग ।

स्वयं बन जाना भगवत् रूप
 यही जीवार्मा का कर श्लेष
 मनी भ्रष्टापी से सप्तद्व
 प्राप्त करना परमोत्तम श्येय ।
 विकल्पों संकल्पों से शुभ्य
 चित्त से तमा अशेष समाधि
 मुमम कर परम सत्य साधिभ्य
 न रहती सुत्र यह नी व्याधि !

मुक्त आत्मा ही माता नित्य
 चित्त जड़ ज्ञेय विद्यतन पात्र,
 मान स बन्धु जगत् प्रति मित्र
 नहीं वह मन-कल्पना मात !
 भूत विजयी योगी ही सिद्ध
 घट्ट निद्रियाँ महत् कर प्राण
 मुक्ति पथ का नेता प्रबल
 कहाता पूरकाम वह प्राण ।

धन्य जैमिनि भीमामाचार
 पद्मवादी पी विजयी बुष्टि
 धर्म विधि का द गण स्वरूप
 नित्य शब्दार्थ नित्य कट्ट मूष्टि !
 धर्म जिज्ञासा माता विद्याल
 वेद का अपीक्षेय प्रमाण
 प्राप्त हो परमानन्द महान्
 कम का हा जो मनुष्यात् ।

बद भववन् मुक्त क निश्चय
 नित्य स स्वतः प्रमाण घनादि
 म ऋदि रचयिता-प्रवक्ता मात्र -
 महा भूतत्र ब गण्य न गारि !
 मून वाच्य घनुष्ट ही शक्ति
 मधी विमल पदाय संभूत
 कम संवय का मूत्र घनूबं
 घनुम इम का पत्र विगमं मून !

निरनिगप मुक्त का वाच्य स्वयं
 यत् ही स्वयं शक्ति का दार
 स्वयं म भी निश्चय धेठ
 बने निजाम कम आचार !
 जन्म संबंध विषय हा मान
 न्त्र दंभ्य विद्या क पात्र
 कर्ब बधन संवय कर ही-
 मुक्ता होपी पाया परिहार !

जगत् पदार्थगत से धाकार
दुष्ठा जीवन का कर ज्ञानास्त
सीध भारत मानस विद्याध
जगत् से नियेष का मंत
पारमौक्तिक ईश्वर को कर प्रक
यइ माधन तंव ।

अस्मिता का करने धर्मिये
 सभी कुछ कर देते वह दास
 स्वल्प नित्र सचय स हो मून्य
 सहज धारणित करते ध्यान !
 भोग समझना क्या मे धार्म
 निष्ठाकर करते उन पर प्राण
 बन गए माघो गुड़ रहस्य
 निरम जन बुनते नव धारणा !

बरस की गई इधर अज्ञात
 सया बंगी कवि के प्रति दृष्टि
 मुनाते गुद चुन उमर भीत
 प्रेम ही कर प्रतिपद रस वृष्टि !
 बस गया था प्रसिद्ध जनबाद
 सया के प्रति गुद का अनुपम
 मुनिगत था बंगी निर्वेद,
 बबध था गुद का निर्मम त्याग !

मए बबिया के प्रति रघ स्नेह
 प्रेरणा करत उन्हें प्रदान
 उगाकर मर्म भूमि में शुभ
 पदंठा कर उनकी बसवान !
 बूट धारणात्मिका से दीप्त
 मिथर पर था तब गुर का स्थान
 प्रोत्र रस शैली में उम्मुक्त
 बभार्मण रस मिला विधान !

गुह्य परिवर्तन उनको धेर
 ध्यान मा रत्ना बाध धार
 प्रभावित बग्या जो अनदान
 दर्शनों को कर मोट विचार !
 धरमिता दुग धर्मिता प्रीति
 धरिता बर न धे धरिता म नून
 गाय रत्न जन धंउ रिमुग्ध
 रिग्ना दुर नर उर स्वर्ण !

काष्ठ उर में रहती ज्यों धनि
 प्रकृति में वा माघो के द्वेप
 प्रीति का मुखदा पहन उदात्त
 हृदय में पाठे घोपन क्लेश !
 न झाँका जग मे उतका मूस्य
 मिमा जम से न कीति धन वाम
 एँठ सी गई बहूँता रज्जु
 उपेक्षित देख अमर सब काम !

छीन कर उतका कीति किरीट
 भूमता बंशी बन सभ्राद्
 सामता उर में सिप्टूर बुल
 शूद्र बन बाठा सिमट बिउद् ।
 मुहुम बशी पर दुख से धार्
 समसता उसको निज अपराध
 पति साबक कबि का काव्य
 द्वेप मुह का वा निर्भय व्याध !

जानते मुह बशी का भेद -
 क्रिया उसको प्रभु ने स्वीकार
 अस्मिता उसकी धपित भुम्य
 बंध बिप रहित प्राण फूँकार !
 पाठ कर सकने में अथमर्ष
 द्वेप के सम्मुख नठ मद हीन
 अथव का बह न अहं रत धीव
 भेदना ज्योति स्पर्श में सीन !

स्पर्श मिसते बंशी को शीघ्र
 स्वत बँध जाता मग का ध्यान
 स्वर्ष शन - हुए तद्गतकार
 महत् सौन्दर्य ज्योति में प्राण !
 रहा जाने कितने दिन मुग्ध
 धारम मज्जित वह हर्ष निमान
 प्रीति धारन सिग्धु में दीप्त -
 दुबनी स्मृति संत संनम !

हा मया विस्मृत धरणा बाध
 जने सोनी पठ स्मृति धनवान
 कल्पना चित्रा में दुप मूर्ध
 वास्य जीवन का जाया मान !
 दीयता धरने चारों धार
 बिना क भीतर ग्यानिबिब
 शात्र मन निस्तरग धानद
 बना बहु जाने क्या पा निस्व !

एक दिन छाया सा हृ बिग्न
 गया पीछे - कवि हुआ ममन
 नाभि स जगा ऊर्ध्वमुख्य मार •
 गीत उल्लसित हुआ उर बदा !
 निरव हाथों अभिनव धनुमुठि
 मंचमित हुए गच्छि पा शान
 धमि ममबन् करणा का सर्ग
 नही कर धरित बहु प्रभु दान !

उगा अब मुक्त नाभि का मन्
 मिना कवि का धंतर धाधार,
 लया - बहु रीढ़ धन मन रिक्त
 निर पङ्गा पू पर हन मार !
 मार क्या पा बहु स्वर्गिम मर
 गुना स्तर पर स्तर विम पर ध्यान
 उतरने चढ़ने को प्रच्छन्न
 जाना का हा मनि मासान !

बिग में कवि क ग्याडि ग्याध
 यना उगा शमा धनिमन -
 निर मे उमका मन मनुका
 बन करणा स्वर्गिक गमन !
 धरिन् की जगा कल्पना मनि
 पत करण पर उस पर मुद
 धरण का हा कवि निर कम
 विरत बनन पर कर विनु !

शक्तिर्या रही बहु प्रच्छन्न
 महत् जन में-करने प्रभु कर्म
 गुह्य स्तर करता छत विरोध
 सूक्ष्म बेबा का जो पुन धर्म !
 मुह रखते उमसे सम्बन्ध
 अचेतन उपचेतन के देख
 बिटप पशु धम उनको बुपचाप
 निविम का देते पक संदेश !

सूक्ष्म रखते गुह्य अतर्भूष्टि
 योगियों का पा सत् सहवास
 उग्र बे अंध मन संस्कार
 सत्य को ईक नेता अम्मास !
 हृदय में बसता कद्रु संघर्ष
 ईश से जाती सम्मति हार,
 अघोमुख प्राणिक शक्ति प्रभुत्व
 कर सिधा उर ने अंधीकार !

मोहते गुह्य रख अत छन बेस
 अतत् कद्रु होता गुह्य स्वभाव
 सरस वा बंसी सद्बुद्ध स्वभाव
 न मन में वा मय तेष दुःख !
 धात्म सम्मयता कवि की शक्ति
 ध्यान छल कौशल से कर संग
 पिताते उसे अशिक्षित तम भूट
 कपट कर गुह्य बंसी के संग !

विविध रच सम्मोहन के रूप
 अतना में करते मुह रंज
 अचेतन तम का करे आह्वान
 मनोदुग् करते कवि के अंध !
 विधा होता बँट भाव शरीर
 कभी तम बसता कभी प्रकाश
 शक्तिर्यों का अकरण संघर्ष
 शिव को करता शुभ्य हठाम !

कल्पना वा बुझता साध्य
 भाव धरत बुरूप धारक,
 मुनस स जाते रस प्रिय प्राण
 मनो जग करता हाहाकार !
 शीघ्र मोन्दय बाध रस तर
 सुजन करते माझो नव काम्य
 ह्यध निव मानस मर को शीघ्र
 संजात हरीतिमा ममाप्य ।

पकड़ गया परजीवी कम बेत
 बिटप पर छा हुरती रस प्राण
 छीन बती की संतसु ज्याति
 छेड़ते गुद मर युग क मान !
 सबे जन में करत सम्मान
 बिहंस, बंसी पर बरसा स्नेह,
 जात पी गुद की कला न मुह्य -
 धम्य का हा भी क्या सदह !

किसी स नहीं मुझे मनुराम
 नाचना मुमको अपना कार्य
 सहस्र पगु करे धाम बभिरान -
 नहीं ता बस प्रयाग धनिवार्य !
 तपक मिर क ऊपर मे बात
 गिराए कर दस मर धम्य
 र्वं क घट्टहाम न बुमं
 प्राण मन हा उठने संतस्त ।

भूम सेते बंगी वा सार
 प्राण सीतार बेग मे शीघ्र
 महीति मुम मे कर पुण्य धम्य -
 पो लेत बह कम कर शीघ्र !
 निघर पर हाते मर के धार
 न पद जात ना मेरे ताव
 बुदबजाते बह धाने धार -
 छेड़ करजा न मुद्राग नाव !

न मैं धर्मिणा या धर्मज्ञ
 उबर हित भू पर बहुकृत वेद्य
 एक क्षण - संघकार का वेद्य
 एक क्षण जीवन का उन्मेष !
 देखता मैं दोनों ही रूप
 प्रथम तम से नित विविध प्रकार
 शक्ति पूजा की जय सर्वत्र
 सत्य पूजा का धर्म विनाश ।

गिरा जो पंक मर्त में धोर
 उठे सद्भावों से क्या काम ?
 करूँ जब तुमको भी निर्मूल
 तभी सार्थक मेरा मुक्त नाम ।
 भद्रीना मा का खप्पर रिक्त
 तुम्हाए कर बलिदान धर्मज्ञ
 स्वयं वन्दे करने मय भीत
 कूर, शक्ति माधो उईड ।

मितता का भरठा कवि मूर्ख
 स्नेह कल्पा विद्विषित स्वभाव
 किन्तु गुरु ने निर्मम स्वाभाव
 दुखद वा उतका विषम प्रभाव ।
 बराले जग को मूर्ख शमसान
 मनुष्य को पशु, जड़ सब निष्प्राण
 तीक्ष्ण स्मिर दृष्ट बुद्धि से देख
 विवश हर लेते कवि का ज्ञान ।

जमक गुरु के पाँवों की कूर
 मूम सी कुमठी उर में धोर
 बधा बंधी की भी दयनीय
 न रह सकता वह सजग कठोर ।
 पूष इसके कि सके वह ठाढ़
 धरा-तम की दास्य चट्टान
 उमे मह कर उसके मुग पाठ
 धारम बस करना वा निर्माण ।

मून पमुबद्द सह बधिक प्रयोग
 हुषा बंगी क मन की चेत
 छिन्न कर भाव जगद् सर्बध
 शक्ति उसने की निज गमबेत्त ।
 प्रार्थना करता बहु दिन रात
 न उता पर पड़े अनिष्ट प्रभाव
 प्रबल पा भाषा का धमिबार
 बिचल होता न सहज ही दाब ।

दृष्टि सम्मुख धुल पाटल पक्ष
 ज्याति का बन जाता तब सोन
 मूदन लोमा का मांसल स्पम
 हृदय का हर सेता मय गोरु ।
 गनै मुद के प्रभाव ने मुक्त
 दीप्त होते बगी के प्राण
 व्यपा बिय दंग तमस का भून
 पूरणा मनोमुहा में धान ।

देय बंगी का मजप लतर्क
 र्वनरा बरना मुद में पूर
 गाष्टियों में होनी जब भेंट
 प्राण रय पर होते घास्ड ।
 गिधिर की निग्न में संतान
 जनों में करते मुषा प्रचार—
 पत्रित बगी बरिष बन हीन
 स्त्रियों कर करना बहु व्यागार ।

तमारक से कर जन मन रगर्ग
 उमे मद्रवाड बग्ग विरुड
 भिति सी उग विरोधी लक्ति
 जगा मुबदों का घई निरुड !
 बुड रवर में कटने ममवार—
 बग्ग जन घरा नरक का द्वार
 हयें बर बय बटिन संकण
 रोचना घृ वा धर्यावार ।

न मुझ सा इष्टा जय में धीरे
 न पाथम से बढ़ बुधि सस्मान
 सत्य की जिसके उर में भाग
 उस भाता निज पर अभिमान !
 नीर भोग्या बनुरा - बिख्यात
 जगत जीवत प्रबल संवर्ष
 जूझते छूटेंगे ये प्राण
 न इसमें मुझको हर्ष विमर्ष !

तुरत कर घट्टहास छे स्वब्ध -
 स्वगत कह्ये बहू, हँस मुद्ग मंत्र
 न मैं कवि या तत्त्वज्ञ - निमित्त
 रिक्त मुरझी मैं, तुम स्वर छंद !
 धर्म क्या ? आठ - न मुझे प्रबुद्धि
 ज्ञानता क्या धर्म - न निबुद्धि
 हृदय में स्थित तुम - यथा नियुक्त
 कर्म करता - न ध्येय निप्यति !

कभी माझो मुद्ग प्रकृति प्रसन्न
 पूर्व कवियों के कर मुझ पात्र
 मुक्त उठठ कर स्मृति से श्लोक
 सुनाते मुझको को आख्यात ! -
 पिने छिन्नी पर कवि मुद्ग श्रेष्ठ
 पुरा कवि ध्यना में धमिराम
 न बीसा मिसा महाकवि धम्म
 पढ़ा छत्र से धनामिका नाम !

बतलते हँस सुखी फटकार
 हुधा बट खर्पर क्या बिख्यात -
 बना कवि छैस मुद्ग कुम्हार
 इसाइस पी कुप में धजात !
 प्रबिठ - कवि कामिदास कर प्राप्त
 बरह नाभी का धमर प्रसाद
 बने मुत्तर के धठिबि ध्यान
 रात्रि को इटने धम धनताइ !

गुप्त रथ बाणी का बदला
 पूछने पर बनी क बात
 कहा बहि ने यह वहि विष बूट
 मूम घीपधि - मैं गौरी तान ।
 प्रतिमि जब ये बिग निग मय
 कर्जगा स्त्री स जूझ - विपत्र
 तिया मुकर ने यह विष पान
 जगा बहि बन प्रतिमा मयत्र ।

मुना उपमा तु कामिदामस्य ?
 बताते गुद - पंडित ये दीन
 भोज में पाने मुना दान
 उम्हाने गड़े छद पद तीन । -
 पके आमून फन मरिता वीर
 तरल जल में पत्र गिरे घनेक -
 दण कर उम्हें न घाते भीन
 क्यों नहीं ? - बनी न प्रतिम टक ।

घाव कर बुद्धि र्द जब हार
 बंध बुद्धि दम जाइ निभार
 बने के भोज कमा बी धार
 मिने पप में बहि गुद साकार ।
 लंबाण कामिदाम ने छ
 महक प्रतिम पद कर निर्माचि -
 नहीं घात्रे दर में पत्र भीन
 जान के गानक उनको जान ।

हूए पंडित जी बड़े शमत्र
 मुनाया माखराय बा गौर
 तीन द ये तिमके गायाम्य
 दन म गुद - पंडित बा रोच -
 बहा गुद ने - बहि गुद बो छाड़
 पप बी बला न द घबिगाय -
 बाध्य म नदि न बुद्धि विमग
 करें बुधर न न्द धानाम ।

कर्ण बलि स दानी ने भोज
 एक कवि भाया सतके डार,
 नृपति को उष समा में देख
 वह बनी मयनों से बल धार !
 कहा राजा ने हो कश्मार्क
 बठाएँ कबिबर अपना कसेस
 छंद के सजस पदों में गूँब
 कहा कवि ने अपना सदिश !

बेचने वाले की पुत हाँक -
 भाव जो भाव ! - चौक धनवान
 न बच्ची मारे हठ बस भाव
 मूर्खती पली उसके काम !
 सामु बुन धार्या का समुरोष
 न सक्ता भीमन् कोई टाल
 हृदय में बिधा वैम्य का मूम
 धाप ही सक्ते उस निकाल !

स्वय्य रह गए भवप कर भोज
 मूर्त कबला रस का प्राध्यान
 कहा किक काव्य रसिक मूप भोज
 रहा न तुझे यथार्थ का ज्ञान !
 काव्य में हो कबला रस श्रेष्ठ
 वैम्य - बुब भू जीवन अभिहाप
 व्यपिठ कवि को दे मणि धन राज
 हय मूप ने उसका संताप !

मुनाते भारत दर्प के साव
 माव कवि का वैभव गुण मान -
 कर्ण सिधि हरिकचन्द्र की माँठि
 मावकों को जो बैठे वाम !
 सगै स्वाहा कर सब संपति
 बने वह रिक्त कोप धम हीन
 दुषा पीड़ित मन से संतुष्ट
 कूटी में बरे रोग से क्षीण !

माप में तीनों गुण वे साप
 प्रथम पीरव उपमा साहित्य
 दुह गया हा प्रतिमा का बस
 कवि तप का प्रभुं साहित्य !
 काव्य म भी कवि का व्यक्तित्व
 जपत में रघुता मूस्य महान्
 ईन् वे विभव भोग में माप
 त्याग में प्रपर शीवि ममान !

विचरती कहने गुरु धर्म -
 मुकवि भारवि जब कसा प्रवीण
 किरातार्जुनीय में वे व्यस्त
 प्रभं गोरव भरने में सीत !
 भीम कृष्णा को करने जात
 मुषिठिर उक्ति रहे वे शीघ्र,
 हुमा सहसा कवि उर में शीघ्र
 प्रथं पद-हर मन्ना जो शीघ्र !

भीम कुछ करना बिना बिभार
 बिपद् को देना है साहज ! -
 शान कर सतना पद सावेन
 मोक्ष कर पुनक्ति वे कवि प्राण !
 धारम मुग्र में वे जब वह मन्
 मुनारि ही तप पिग गभीर -
 मुद्र मुन कर पत्नी के बाहर
 हा उग कवि का बिग शीघ्र ! -

काव्य रचने में तुम ममान
 पूर्य न सो कवन शीघ्र
 न पर में बधा प्रथम दग जेव
 जात तुम में मायु शीघ्र ?
 कदा जागहि मे हा दुग्र दग
 जो कला में धमी प्रदन
 मेदु न पर कदर रग शीघ्र
 देवि माता मुन मनि रन !

सेठि बस दिया सिन्धु के पार
 खोजने फिर व्यवसाय नवीन
 न सौटा गए वर्ष पर वर्ष
 हुई नौ बसधि वर्ष में तीन !
 किन्तु सोसह वर्षों के बाद
 बधिक जब सौटा अपने देस
 तस्य पर देखा घर में एक
 युवक सोया रस सैमिक बेह !

सेठ का बूबा जब जस पोठ
 बच गया बा वह किसी प्रकार,
 पुन संभित कर बहु संपत्ति
 मुदित सौटा बा वह निज द्वार !
 बिया उसने स्त्री को धिक्कार
 घर सकी धर्म न वह कुछ वर्ष
 धीर मीमे विदेश में भूम
 व्यर्थ ही सहा वर्ष संघर्ष !

युवक पर बीच म्याग से खड्ग
 हुआ उचत वह करने पाठ
 मिति पर टैया धर्म बा स्तोक
 रुक गई उस पर दृष्टि हटाई !
 'नीध कुछ करता बिगा बिचार
 बिपद् को देना भुव प्राज्ञान ! -
 ठिठक रुक गया बधिक का हाथ
 जमा हुत उसका धारमज्ञान !

क्रिया संवरण सेठि ने बोध
 दिया सैनिक के मुख पर ध्यान -
 सती पत्नी का धानन देय
 सिया अपने मुख को पहचान !
 हुआ कुछ ऐण तब संयोग
 मांगने धाया कवि निज स्तोक
 मठ बोला - कवि पिर धर्मस्य
 हरे वह मार्ग लोक का लोक !

क्या प्रबलित - थी मदन मिय
 बने मीमांसक बर उम्बेर
 यही पीछे बन कवि भवभूति
 कर गए कदमा रस धमियक !
 विष्णु तब कामिदाम कवि भाग
 राज मचां पर ये आकड़
 मान्यता पा न सक्त भवभूति
 राज कवि हाती भाव विमड !

किया विद्वदन मे भी ध्वंय
 पाप दार्शनिक प्रवर आशाय
 काव्य सखें भी हों रस मित्र
 न बुधवर के हिन यह धनिपार्य !
 विष्णु उत्तर कवि हूण न दुण्य
 उम्हें नित्र कृति पर या विष्णाम
 गज्य आषय मे विमुण्य बिरबन
 गए सीधे जगत के पास !

बना रेती पर पन हिन संघ
 बाण्ट परसों बागों को जोड़ -
 जयल कर जगतन स नित्र पात्र
 नामकि संघा मे से होर -
 म्यय निर्गत बर कुछ बाप
 बरा नौनिधियों को धम्याम -
 उगारा उत्तर परिल - ध्रुव
 णिया नित्र प्रतिभा रंग बिलाम !

हुआ आरभ तीमरा दुख्य
 मय पर ज्वा ही भाव समाम
 दय छाग मीता को मुनि
 बिना मुर्छा मे जाये राम !
 पां गुन उनका करन गिगार
 हुआ पन ह्यय ध्या म भल
 उग बरपा जगनिधि मे गगार
 गए सब गारागार रम मम !

सुजन श्रम कवि का हुषा कृतार्थ
 दर्शकों से सुम जय जयकार
 निखिल उज्जयिनी भर में शीघ्र
 हुषा शतमुख कवि कीर्ति प्रसार !
 यशोवर्मा मृप कृति पर मुग्ध
 मिले कवि से से मधि उपहार,
 किन्तु मृपति की पुष्कस भेंट
 नहीं की जन कवि ने स्वीकार !

सुदृढ़ स्वर में बोझे भवभूति -
 लोक कवि जन मन का सन्नाद
 उसे राज्याध्यय बंधन तुच्छ
 कल्पना उसकी मुक्त बिराट् !
 लोक रंजन में जो कृतकाम
 उसी विस्पी की कसा कृतार्थ
 स्वर्ण पिजर में सुखी न रंज
 हरित जन में ना पिक भरितार्थ !

प्रकृति स गुरु निर्भय स्वच्छन्द
 हृदि कृच्छ सोच ठहाका मार, -
 कहा कवियों की स्पर्धा ठीक
 मृप कवि स्पर्धा में क्या सार ?
 बीठ योबिन्द भजन ना सोप
 नाचते पुर पत्र में दिम रात
 बंग मृप उर में जाया द्वेष
 तुच्छ कवि मृपति से विख्यात !

प्राज्ञ पूजे जाते सत्त -
 मृपति के मन में उठा विचार -
 गीत योबिन्द काव्य रच धर्म्य
 प्रजा में उसका किया प्रचार !
 न जाते जन को मृप के भीत
 किया राजा ने मक्ति प्रयोग
 राज भय से रधि के प्रतिभूत
 मए नीरस पर जाते लोग !

भंग कर राजा प्रतिबद्ध
 हाथ में से मुयलित मंत्री,
 भक्त जयदेव स्वयं मित्र छं
 नित्य गाते प्रभु भक्ति बघीर !
 हुए राजा यह मुन घति कुछ
 कहा कवि को करने भयभीत
 राज्य अनुभाषन वा मुन मुन
 भ्रष्ट गाने क्यों कविन गीत ?

नम्र स्वयं हैं बोधा जयदेव
 कौन पर धेष्ट कौन पर भ्रष्ट -
 कमें मंदिर प्रांगण में देव
 स्वयं प्रभु बतना होंने स्पष्ट !
 कमें विस्मित नून कवि क माय
 भरा वा भक्त जना म पप
 देव गृह मीठी पर धुरबाप
 रथ दिष्ट कवि ने शानां संघ ।

जगा जयदीग हने जय मा
 मूर्ति ने सर कर मुहु मुमदान
 गीत गोविन्द उगा कर मुम
 शिवा मर भक्त जना मंग दान !
 गुरा कवि क कल्पों पर भूर
 भूम हुन धरती कर स्वीकार -
 न अपने शर स्व से गीत,
 हृदय बी के तमय संसार !

मुक्त दुखेंप मु वा अज्ञात
 माया मुहुरी को बुद्धात
 बाध धारी हुआ पर गुरु
 छेड़ राजा क निमय छत्र !
 अज्ञि माया से मात्र ज्ञीव
 नाम मु संपन्न क मु
 उर क अर्ति सा दे शिब का
 शिमे हा शाना वा निर्मल !

प्रबलतम प्राण शक्ति के पुंज -
 उन्हें बल बना ज्ञान का स्पर्श -
 प्राण तन्मय ये मुग कवि प्राण
 समर्पण या जीवन आदर्श !
 ज्ञान ही उसे असह्य की शक्ति
 मार भरना जिसका प्रारब्ध
 सत्य को कर्म बना निज स्थान
 जगत् में रहना - कर जय मन्त्र !

नए युग का बली प्रतिरूप
 पेटमा का पट्टरा नम केतु -
 पार करता मू मन का शिखर
 मोह संयम हित रज पृष्ठ सेतु !
 जानता सम्मुख दादभ मुद्र
 धका प्रतिरोधी बल सुर्घर्ष
 ज्योति को दे नम जीवन मूर्ख
 मीन होना तम का संघर्ष !

बलसता गत मू जीवन कृत
 प्रबलरित होता नम शैतन्य
 बेखता बनी संतकृति
 बाह्य मानव या उसे मयम्भ !
 ज्योति या संघकार के रूप
 विविध स्त्री मर ने शक्ति प्रतीक
 स्वरूप वे नम प्रकाश के साम
 पीटते अधिक पुरानी लीक !

भिन्न मति बीदिन ये युग आंत
 कसाबिध कुंठित अहमावक
 शुभ्य ने युद्ध स्वार्थ अनुरक्त
 सर्व साधारण घातम किमुद्र !
 छनी शोषक - निन्दुर सामंज
 दलित शोषित - सहस्रजन मुद्र
 धर्म प्रिय होनी जीवन धीर
 विश्व चिन्तनपर अस्य प्रबुद्ध !

स्का था मू मन का भूकंप
 स्तब्ध जम उबासाभूयी प्रचंड
 दिव्य मुद्य भूमाभूठ मनभोर
 कास धामे गरभुत् कोदंड !
 भयानक बाह्य पटी का रूप
 विपर्यय घटता भीतर शांत
 उदित होता मय चिग्मणि - सूर्य
 गहनतम सगता जीवन ध्वांत !

बेन्द्र में दग्ध खतना मज्य
 हो रही जीवन में साकार -
 ह्येप दृग्ध म माधा ने दग्ध
 जीर्ण मृस्या का कर उधार
 मनातम मन का म दुई पल
 धर्म बंभित मर को मनकार
 धर्म विधि का फिर क्रिया प्रचार
 मान कर प्रथम धम साचार !

धर्म का घबम दिग् बिस्तीर्ण
 ममाते विममें बटु विधि धर्म -
 जगा में विरमे ही मर रत्न
 जानने धर्म तन्त्र का मर्म ! -
 बन गए मुर करुणा प्रवहार
 बुझने पागल पीछे भोग
 क्या नारक बन या जन गूड
 भोगने सभी मुक्तम गंधाग !

बेना विपटन म उद मुड
 देग होगा धनीति नम दस्त
 धंयु निवित्त निरीत निरताय
 मूर्तिवत् जूरे जाते ध्वस्त !
 न शिनग का का धद मन हानि
 उरे ८ गमवरना उदार
 मुक्त करे जन महान बुनि
 न बाबित का - मूत हो ने प्यार !

प्रबलतम प्राण शक्ति के पुत्र -
 ग्रह बन जमा ज्ञान का स्पर्श -
 भाव समय से मुप कवि प्राण
 समर्पण वा जीवन धारण !
 ज्ञात भी उसे प्रसत् की शक्ति
 मार मरमा जिसका प्रारब्ध
 सत्य को सत् बना मित्र स्वान
 जगत् में रहना - कर जब लब्ध !

नए युग का बंधी प्रतिरूप
 बैठना का फहरा नव केतु -
 पार करता भू मम का सिन्धु
 सोफ मयस हित रण श्रव सेतु !
 जामता सम्मुख वास्य युद्ध
 प्रदा प्रतिरोधी बस दुर्घर्ष
 ज्योति को दे नव जीवन मूस्य
 तीन होगा तम का संघर्ष !

बलता गठ भू जीवन बृत्त
 प्रबलरित होता नव वैतम्य
 देखता बंधी संतनु ति
 बाह्य मानव वा उसे लगभ्य !
 ज्योति या संघकार के रूप
 विविध स्त्री मर से शक्ति प्रतीक
 स्वल्प से नव प्रकाश के साव
 पीटते अधिक पुरानी सीक !

विपन्न मति बौद्धिक से युग ज्ञात
 कमाबिद् कुठित महमाहङ्क
 दुर्घ्य से धुङ्क स्वार्थ अनुरक्त
 सर्व साधारण धारम विमुङ्क !
 धनी सोपक - निप्टुर, मार्गक
 बलित शोपित - सहस्रधन कुट्ट
 धर्म - प्रिय हॉपी जीवन भीद
 विरह विमत्तपर धर्य प्रबुद्ध !

स्ना या भू मन का भूकप
 स्थ स्थ जम उबासामुखी प्रबंध
 शिक्ति मुख धुमाबुत पनधोर,
 कास कामे गरभुत् कोदंड !
 भयामरु बाह्य पटी का रूप
 बिपर्यय घटता भीतर शक्ति
 उदित होता नव विमणि - सूर्य
 गहनतम समता जीवन ध्यात !

केन्द्र में देख खतना मध्य
 हो रही जीवन में साधार -
 डेप दुय म माया ने लय
 शीर्ष मृत्या का कर उदार
 ममातन मत का ने दृढ़ पता
 धर्म बन्धित मर को समकार
 कर्म विधि का फिर किया प्रचार
 मान कर प्रथम धर्म साधार !

धर्म का धपन दिम् बिस्तीर्ण
 ममाते त्रिममें बहु विधि कर्म -
 प्रगत में बिरले ही मर राम
 जानने धर्म लख का मम ! -
 बन गए गुरु करणा धबनार
 भूमदे पागल पीटे मोग
 कथा मानरु बन का जन गूढ
 भोगने सभी सुप्रम संयाग !

खेतना बिपटन म जब मूढ
 देग हाता धनीनि लम प्रस्थ
 पंयु निष्पिय निरीर निरनाय
 मूर्तिभू गुरे जाने ज्ञान !
 न विनाम जग का सब भय हानि
 उन्हें दे मदवेदना उदार
 गुरु करने जन महदय बलि
 न प्रीति का - मू का दे प्यार !

प्रबलतम प्राण शक्ति के पुंज -
 यह बन बना ज्ञान का स्पर्श -
 माव तन्मय वे मुग कवि प्राण
 समर्पण वा जीवन धारण !
 ज्ञात भी उस प्रसव की शक्ति
 मार मरना भिक्षुका प्रारब्ध
 सत्य को तनै बना निज स्वान
 जगत् में रहना - कर जम मय्य !

मए मुग का बंती प्रतिस्पर्
 बैठना का पट्टन नव केतु -
 पार करता भू मन का सिन्धु
 लोक मंगल हित रच कृत सेतु !
 जानता सम्मुख शरव मुड
 प्रका प्रतिरोधी रस दुर्धर्ष
 ज्योति को दे नव जीवन मुख्य
 तीन होमा तम का संघर्ष !

बलतता गठ भू जीवन कृत
 प्रवतरित होता नव शैतन्य
 देवता बंधी धंठवृ ति
 बाह्य मानव वा उस नमस्य !
 ज्योति या प्रकाश के रूप
 विविध स्त्री नर वे शक्ति प्रतीक
 स्वस्य वे नव प्रकाश के साथ
 पीटते अधिक पुरानी सीक !

मित्र मति बौद्धिक वे मुग प्रांत
 कलाबिब कुटिल प्रहमाकड़
 दुग्ध वे शुद्ध स्वार्थ धनुरक्त
 सर्व साधारण धारम - विमुक्त !
 धनी तापक - निष्पूर सार्थक
 दमित क्षोपित - सहस्रजन कुट
 धर्म प्रिय होंगी जीवन भीर
 विश्व चिन्तनपर धस्य प्रबुद्ध !

रुका पा मू मन का भूकंप
 स्तम्भ जन उदासामुखी प्रबंध
 शिक्तित्र मुघ धूमामृत धनधोर
 काम वामे शरमूव् कोदंड !
 मयानक बाह्य पटी का रूप
 विपर्यय घटता भीतर शक्ति
 उदित होगा सब विम्बणि मूय
 महमठम सगता जीवन ध्याति !

क्षेत्र में देख पतना मय्य
 हो रही जीवन में गाकार -
 द्वेष दुय म माया में इय
 जीर्ण मूयों का कर उदार,
 मनातम मत का से दुई पदा
 धर्म बंधित मर का सलकार
 कर्म विधि का फिर किया प्रचार
 धान कर प्रथम धर्म धाधार !

धर्म का पक्ष रिय् बिस्तीर्ण
 ममाने जिनमें बहु विधि कर्म -
 जगत् में बिरने ही मर रान
 जानने धर्म ताब का मम ! -
 बन पर पुर् करना धवतार
 कृपने पागम पीछे भोग
 क्या भावक बन वट जन मूड
 धोगने सभी मुनम संयोग !

बगना विपटन न जब मूड
 देा होगा पत्नीनि मम धरत
 पंगु निविय निरी निष्ठाप
 मूर्तिबा पूरे जाने प्ला !
 न दिनम जग को सब भर हाकि
 उन्हें दे ममराना उगार
 कुट करते जन महान् बनि
 न शक्ति का-मूा को दे प्यार !

कोटि मुख से गत युग अवरोध
 नभ्य प्रतिमिधि युग कवि को प्राप्त
 वक्राता उसकी अंत शक्ति -
 वायु मंडल में तत युग् व्याप्त ।
 एक ही वा तम का जड़ तल
 इधर माघो में स्पर्धा कृति
 उधर जन मन में पुंजीभूत
 यह कुंठित कट्टु ईर्ष्या मिति ।

बनों को करते मुख संकेत
 न बंसी को हैं सूची स्वाम
 मुक्त बहुजन मुख अचित शूठ
 स्वयं वम जाती सत्य प्रमाण ।
 प्राधुनिक युग की यह अनुभूति
 शक्ति ही सत्य संघ ही प्राप
 महम्मति मुके न वह युग बोध
 घुप्टता सही न छूटे धान !

ठहाका मगा भूमते शिष्य
 समस्त उच्छृंखलता को शक्ति
 बुद्धि का देते मुख अभिमान
 सत्य के प्रति हे बीठ विरक्ति ।
 अस्मिता परिधि अस्मिता केन्द्र
 अस्मिता से प्रेरित हो ज्ञान -
 सत्य मुख कर सेवा प्राच्छन्न
 शुष्क तप्यों का अनुसंधान !

मूकम बंसी वा अंतर्मुक्त
 मनोपति बहिर्भाग् प्रति कट्ट
 धारमस्थित विद्या ज्ञान से नृम्य
 कान के प्रति वा गूह प्रबुद्ध ।
 व्यस्त रखती अंतर अनुभूति
 न है पाता सब के नंग योग
 द्वेष रखते उससे प्रच्छन्न
 हीनता स्पर्धा कुंठित साग !

मउठ उम पर कर कटु धाखेप
 दुःख जम पाते रूप संतोष,
 प्रत्य मति बनते रस मर्मत्र
 गुणा में दख काम्यगठ वाप !
 भाव के नीप उरक निरय
 युवक रखते उरठ वदुयंत्र
 छोड़ दी थी उसने धम बुक्ति
 गठ प्रति शाह्य का कठ मंत्र !

सभी ने छोड़ा जब प्रमहाय
 माप ने माया कुछ करवान
 मुझे फिर सौटा दें बिप रठ
 धारम रसा के हित ममवान् !
 रज्जु धदि प्रम से बगी मुक्त
 स्वयं देकर भी निज बमिदान
 प्रार्थना करता प्रभु से मौन -
 प्रमूठ बन जाए मुप बिप पान !

राम हो द्वेष मुक्त - चरितार्थ
 प्रेम ही धादि - मुना का प्रठ -
 विमिर उसको पा ग्योनि प्रमाव
 भाव ही शास्त्र मरप धनत !
 न इन्द्रों में सीमित साग्न
 न जीवन जग्य मृपु की हाइ
 पछानर रस मन् इन्द्रातीठ
 रक्ष्य में पूष न उमवा जोड़ !

प्रदिन जम पर मकर मत्राति
 धार गग में दुम्प महान
 वुत्रलि गुदरपुर जम धाम
 लोय मिन करते बीर्तन गन !
 दया कर बनारी पूमर भीर
 नीर पर मना मया मन् -
 धरत मबती न कड रिगोर
 मन्त्रक पदिन मदिन रिमात्र !

पर्व शोभा हिठ बन सँवार
 स्त्रियाँ गार्ती बजते करखाम
 बाँसुरी क सँम डोल मँजीर-
 स्वरों में उर की मन्दा डाल !
 सुरैय बस्ता में लोक समूह
 पुष्प बन सा बसठा हैंस धूम
 दिशा कसरव से उठती मूँक
 पर्वों पर बहम पहल कल धूम !

बने मधु फूस टाट के बास
 तने बहु खेमे बेस्म पिठान
 भोगते कल्पबास मन्दास
 न तट पर तिल रखने को स्नात !
 साधुघा क बहु रूप समाज
 प्रवाड़ों पर छड़पटे केतु
 अँट हाथी बुप रप प्रज प्रस्व -
 स्वर्ग के लिए धर्म ही सेतु !

पाँच पीरल बस कौशों पार
 विचे भास्या बस पर जन प्राण
 बपव के मसिन पंक से मुक्त
 खोजते जाति मुक्ति कस्यान !
 स्वर्ग क प्रहरी पडे टूट
 मूठे जन का तन धन धर्म
 माखा उन्हें धर्म विरबास
 कड़ियों का पहने जड़ धर्म !

भागवत उमायल सप्ताह
 मनाते जन कर जप तप ध्यान
 मन्त्र कीर्तन कर, बत उपवास
 त्रिर्षध्या कर मन्त्रा में स्नात !
 प्रबन्ध भाषण बेटे बहु मन्त्र
 ब्रह्म क्या माया क्या संसार ?
 स्वर्ग क्या पाप पुष्प धपधर्म -
 ज्ञान ईश्वर्य मोक्ष के द्वार !

याचना जन्म मृत्यु भव चक्र
 वासना जय-जीवन का पाग -
 त्याग से बना स्वर्ग हित सेतु
 विरक्ति ने कर दुष्का का माश
 ज्ञान स कर्म बंध कर दग्ध
 मुक्ति का प्राप्त भक्ति स द्वार
 यम नियम तप सयम स कुठ
 जीव होता भव सागर पार !

साधुभा के ये यग विपित्र
 बह्यचारी हंडी संन्यस्त
 कमचटे मोरपंखी शैव
 पयोरी मुंडे नागे मत्त !
 अनपिनत सत्रदाय में भक्त
 यती योगी पुरुष सपद्युत
 पूर्ण करण जन मन की साथ
 पूं धुनी की निद भमूत !

मान गाजा मद वी प्यानस्य
 निम्न बहु प्राण नियाया माघ
 पिघाते समलार व गुरु
 मूट जन सदा भक्ति पगाध !
 बजाते मन की गीत बाण
 देयरर बंध्यापा के हाथ
 निदि एम है पर ने गो -
 नशा जन करण पर माघ !

मन्म सुग के घंटा से जाग
 यही घावर मुग्धा प्रति - बर
 हरि उर्वर जीवन बंधाम
 घघ घावा का भारतवर्ष !
 मूक शिथिल भव व्याधि विभीत
 विपुय जीवन स मोह विरक्त
 स्वर्ग परमानमुनी विधि बग्न
 मुद्राणा में मह शिवा ! -

यहाँ पुट गठ कठिनों के प्रेत
 मुग्ध सुनते मृतकों का नाद
 दिव्य पा संजय की लक्ष्म कृष्टि
 स्मरण करते प्रतीत संवाद !
 मृत के पुष्प पंक में खूब
 सोक जीवन का कर बलिदान
 बनाते स्वर्ग मोक्ष सोपान
 मरक का कर भू पर धाड़ान !

मास का बिस्माता खर कीठ
 अस्मि पंजर कैफते तद गाठ
 कृहाघे सा छाया भ्रम धूम
 पाप से छरते पीसे पाठ !
 बीछी बन को दुहित समीर
 बिबिर भरती लतमुख सीत्कार,
 स्वर्ग के दूत मवी में खूब
 पुष्प मुख से करते किमकार !

राज्य प्रतिनिधि मेले में बाव
 व्यवस्था रखते कुशल प्रबंध
 केन्द्र बन की सुय मुनिभा देख
 बढ़ावा मानवीय संबंध !
 स्वर्ग सेवक सेवा में व्यस्त
 मन्नता से करते व्यवहार,
 शांति धामन के प्रीति सदस्य
 धर्म का करते मुक्त प्रचार !

बिबिर के छात्र राठ दिन भूम
 स्वास्थ्य श्रुतिवा का रखते ध्यान
 रुज पीड़ित के बन साहाय्य
 सात्त्वना करते महज प्रदान !
 सममते जिसको सम्यक् पात्र
 जमी के मन को करते स्वर्ग
 मर्क हित देश नाम अनुकूल
 सामने रखते युग धावर्य !

कलामय होंगे सांस्कृतिक पर्व
 विविध रच मोर मूल्य जन पीठ
 रुढ़ियों का जड़ मुठन खोल
 सत्य की साँझी दिया पुनीठ -
 मय पर प्रस्तुत करते दृश्य
 पुण्यों से पुन प्रिय भाष्यान
 उन्हें गढ़ नवयुग के धमरूप
 जना के हूँ तन मन प्राण ।

स्त्रिया बच्चा को देख सँभाल
 मुबतिया करती उनमें काय
 कन्द्र वा वा पांगिफ धारन -
 सार पीडन के प्रति धीर्गर्भ ।
 देख गठ मू पीडन का वृत्त
 मय के प्रति बहता विश्वास
 बनना ही का नव उम्मेद
 मिटा सक्ता मू वा तम ताम ।

विरोधा में बँट मुह के गिप्प
 बना में उँनाते धारवाद -
 गिबिर के संसृत छात्र छात्र
 बचाते धत्रिय नार विवाद ।
 केन्द्र के प्रति का बुगिण ध्वंय
 धमरूपों का बुनते वे जात
 बन्या पर करन धार्धेय -
 बोटि एन हो तुला विष ध्यान ।

उरुध स्वर में कर व प्रतिधार
 हालने बानों में व्यवधान
 मासृतिह तबों को कर मष्ट
 भंड कर हावान वा ध्यान ।
 पूर्व मुण करन व उदुपाय
 गोकना हमको धमरुधार
 नलिना का हा कनों धदिवार
 एवं गीतों में करे प्रचार ।

वहाँ सर्वधर्म अंध विश्वास,
 उत्पन्न कृपि बाणी बेद प्रमाण-
 धर्म कृपि, बेदों का मुन नाम
 भीरु जन मन होता धम म्लान !
 नरक का दिखलाते बे साव
 धर्म मित्रक का कर अपमान
 धर्म क्या ? जान न पाते सोग
 धार्य बाक्यों को मुम हत ज्ञान !

लुब्ध हरि बंकर ने जा साम
 किया गुरु से बिनम्र धनुरोध-
 घुष्ट द्विप्यों को हें धारेश
 केन्द्र का करें न ध्यर्ष विरोध !
 हृदय में हो गुरु ने संतुष्ट
 दिखाया बाहर झूठा क्रोध -
 धरे, धर सात करो दुष्कांड-
 मुबक बन्दर होते निबोध !

धृष्ट नयनों में सतका स्नेह
 कुशल बंसी की पुछ प्रसन्न -
 देख सहसा बंकर की धोर
 रहे सब धर गुरु फिर धमसन्न !
 कहा तुम धमपावर बेजोड़
 परिन्दों पशुधों की बह होड़ -
 न जाने तुम हो किसकी धोर ? -
 टठा गुरु हंसि - नाक नी मोड़ !

बुलाया बाबुलिसास प्रिय शिष्य
 पठाया गुरु ने निज सविश -
 न दिखलाएँ मेसे में छाव
 केन्द्र द्विप्यों के प्रति धारेश !
 धतवू सवू का धति मूकम विधान
 धम फल करने पड़ते भोज
 धम की होती निश्चित जीत
 पाप ना इमि धात्मा का रोग !

शीघ्र धाड़गा मैं उम धोर-
 कहा मुह मे कुछ सोच विचार-
 बेन्द्र का जानूंगा उद्देश्य
 भेंट कर बसी मे इस बार! -
 न जाने दुंगा तुम्हें क्यापि
 बिना भासम का लिए प्रसाद
 भेषाण मुह मे कन मिष्ठाप्र
 पिमाया दोनों को ताहाद !

बन्द को सौटा जब हरि शाठ
 दुबता मना को रंग मूर्ध
 स्नान मे बचस पंक्ति बर्ष
 सरिल जस में कैपता बीदुर्ष !
 बसकती शकर उर में मौन
 तीरप मुह शब्द रस की बोट
 रब रहे वे मुह भीषण बाट
 सरम मैत्री के तुण की घोर !

महाबट से जब दिगि निर्धुम
 हुमा मारंख नग श्दु का पाठ
 ताप्र तर सित्रिज तुना हिम दण्ड
 बाण रोमिन मुडु सौपी बाउ !
 कुनदने मौमापी म कल
 पूबता स्लिग्र नील मणु छत्र
 हुमा नब धारा का मंभार
 प्रवृति जीवन में दा मंत्र !

बिना मुचना एक निर प्राउ
 बेन्द्र में पंक्ति मुह बुनबाप
 गूछ बगी का कल मुल्ल
 बुन दरे भीउर घाने घार !
 ताप में दा मुह का निर निष्य-
 देव बगी को बिनान-मौन
 रब शप रब बोदे स्नेहाई-
 जानडे कगी का क्या बने ?

बोल बंसी ने नेत्र हटाए
 क्रिया गुरु का स्वापत सत्कार,
 खड़े हो कुशास प्रसन्न हैंस पूछ
 बैठने की फिर की मनुहार ।
 खड़े ही रहे वहाँ गुरु स्वस्थ
 कहा मुझको जाना तत्काल,
 कभी से नहीं हुई भी घंटे
 या क्या इससे समय निकाल !

कहो कैसे हो ? - गत सप्ताह
 दिया होगा हरि ने सविश्र -
 तुम्हें मिलनी की को मिलनी शक्ति
 प्रकसे पूज शोभता कथेंत ।
 बीजते ये गुरु निःस्पृह, सौम्य
 हुमा बंसी का मन धारणस्थ
 कहा गुरु ने मुझको संतोष
 केन्द्र में रहते सब तुम व्यस्त !

कभी पूछूंगा या प्रवकाश
 केन्द्र के जीवन का क्या व्यय ? -
 बता सब मैं - तुम स्नेही मित्र
 बही करना जिसमें हो भय ।
 बरत फिर, बंसी का कर धाम
 बिबा होने का सिद्धाचार,
 क्रिया प्रेरित गुरु ने कवि चित्त
 शिष्य को घंटे इसी प्रकार ।

धारम विस्मृत कवि ने विधि गुरु
 भिमाया बागुबिमास से हास -
 म्याय पर करता था जो शोध
 जिसे लाए थे गुरु निज साध ।
 साध गुरु ने कुत्तित प्रभिचार
 क्रिया पर में शोपन धामात
 नगा कवि को उसका शैतन्य
 नष्ट था दूट हुआ भू धान् !

शिव्य का बना जपय्य विमिश्र
 क्रिया मुरु म कवि पत्रम् स्वम्
 तमग म प्राकृत हा तराग
 हृषा प्रतिमा गदि मडल प्रम्न ।
 मगो हा फिर लक्ष्मण को शक्ति
 मर्मभिद् क्रिया मंत्र का जल
 एक शक कवि का हृषा प्रतीक
 ज्याति हा गई पितृ ममस ।

टाक ना हा मा की मय
 मित्र क ममम्पन का टेर
 शिव्य का कवि चिति क विपरात
 बिमारा गुरु ने - दगम भेद ।
 त्रिग कग्ने म जग की सात्र
 तिया उनको अनुगत ने पूण
 मुखर क स्वर बिगाध का तीव्र
 उगमना नामि कीर धाम्नी ।

प्रहम्प मड न जक का भात
 प की गगिति धगु रिच्छो -
 पह मरति हा मर्धा ड्रेण
 बिगर म कड पह का घाट ।
 पुष्ता बड़ी म ना प्रतिराध
 जगे क स्वर म क घनेक
 शिष्ता म गग्ने तिज्ञान -
 ड्रेण क पुष्ता मिग भेद ।

बिबर म शोक धनिमर नर
 बिना बाने को मुर शिव्य
 धान कवि धनम का निर्वात
 रीणा गग घाटर दार ।
 कग्ना का ममम्न को न
 हा लडा बना बिग लम क
 कबुा धरणा धेग कगा
 कमा म म - धान्य ।

पटक कवि बंसी को पाताल
 मित्र पर पहुँचे गुफ सोत्कर्ष
 धेष्ठम इतिमा को द जन्म
 बिताए कुछ इमत सह्य !
 गुह्य मुग कवि उर का सघर्ष
 न इसका साक्षी - बाह्य प्रमाण -
 न दिखता मोहित शर का नाश
 सत्य जी उठता हो बनिदान !

लर्क पजर गुह का व्यक्तित्व
 मान सुपमा से घरा पवित्र
 चुरा बंसी की मानस काति
 पिचाए गुह से युग प्रिय चित्त !
 शीघ्र नासिका नयन धुब बना -
 मिटा कृच्छ्र हिम ईम्य तुरत
 बिन्दी सूनी पतझर की डाल
 हंस उठा मासल गग वसत !

मनुज धाम्ना के प्रति अक्षम्य
 घोर पातक होगा - अग्याय
 खासठा कवि न मुह्य जो भेद
 प्रमत्त बमता सत् का पर्याय !
 सुकवि कहमाते चिद् निधि और
 अविद्याचारी प्रतिभा सिद्ध
 मनुजता का होगा अपकार
 मुकद्वत् पूजे जाने विद्य !

आगत सप्त घाटा याम
 कमकपी उर म पीड़ा मुक
 बिल रहता विपश्य उद्भाग
 बतमा कवि रूप्य सो दूक !
 विपम छाया रहता दीराश्य
 न सब हँसने छाया उग्याह
 धरत हो यया ज्योति का मुर्ष
 हृदय धरगाइ नमद्र धनाह !

राग भय द्वय काम मर प्रोष
 रेह पंजर का करते शीघ
 सिमट सा गया दितिक बिस्तीण
 ऐठ बन गया हृदय संकीर्ण ।
 बिल पट में बसता अघात
 ज्योति तम का दारण संपर्ण
 प्रनास्था अविश्राम अविश्रान्त
 बीतने गए बय पर पर्य ।

उबटती भय न निम्न में मी-
 निपट जाते तन स तम ध्याम
 पीन बीजा क मँडरा मय
 टूट पड़ते बबि पर विकरान ।
 शीघते धीम स्वप्न में काढ़
 हृदियों क भूये बकाम
 छिपकसी मी मगती निज देह
 शोक जग पड़ता बहु तन्काम ।

अक्षि में मुस ज्यो सरमा दिव्य
 पोजती निरधनन क भेद
 तमम की गुहा मोनि में पैठ
 अया कबि ने मन में निवेद ।
 दूर या अरु बहु हृदय प्रकाश
 कभी जिसमें कबि करना बाग -
 गुरु कर ऊपर में मकत
 बुनाता जा फिर कबि को पाम ।

डेप निर्मम गुरु ने निज मित्र
 कृप तम में या दिया अरुण
 निरम प्राया अरु अरु अरु मूल्य
 प्राय का कहिए इगरो शोण ।
 नाम कृप कन्या ने हो मुग्ध
 देप कबि का निरुण मुहुमात्र
 प्राय निरुण मार का द्वार
 कर दिया तम मृगु क पार !

देख युग कवि को खंडित-स्वप्न
 द्विधित ने हुए विस्मयानंद
 विमिर घर मिया मर्म से खीच-
 बयां संतर में सोया छंद !
 स्फुरित सुरधनु फिरफों का चक्र
 उया नयनों के सम्मुख घूम
 सँवाप बिसने फिर कवि चित-
 संघ तप को प्रकाश में तुम !

कर्न बड़ तम का कर उपयोग
 बस्तु जग का प्रथमाहा रूप
 फटक कूड़े कचरे का डेर
 हुआ स्तिर, मन का बिदात रूप !
 बसत का कृपि युग धँबहर मात्र
 मनुष्य मूठ पावसों का कीर,
 कड़ियों के पिबर में बड़
 प्राण पंखों से हीन घड़ीर !

मुहा में भू की कुछ कवि ज्योति
 जगत् का पी विपण्य तम सोम
 बनी युग विस्तृत से पंभीर
 देख जीवन का सोम बिसोम !
 सोचती तरक योनि से संघ
 मनुष्य का हो जैसे उद्वार,
 घर पर रख मय जीवन स्वर्ग
 मर्त्य उठरे तम सागर पार !

ज्योति के ऊर्ध्व शृंग से कूप
 प्रवेदन का मय कर तम रूप
 परालार के-स्तिर धी से शेष
 विश्व में सदसत्त्वम बो रूप
 जानने को वा कवि उत्कंठ
 विश्व राष्ट्रों के संत विज्ञान
 मोह संपत्त हित क्या महीनय
 घंट साबा धीनिक विज्ञान !

धीरे धीरे वह वा मुक्ता संयोग
 निर्माण धाया उमक पास -
 जगधि ने उठा सहर के हाथ
 किया कवि का स्वागत सोम्मास ।
 गगन ने खोल शष्प पति वंश
 पतिषि को पट्टेबाया उस पार -
 हुई तप मू की मरकत कानि
 नीम का धू धमीम बिस्तार ।

सौं हरि को संस्था का धार
 किया जब बंगी ने प्रस्थान
 दुगो में थे बिस्मय मुग्य धम
 मौन धधरो पर मूड मुमरात ।
 मोक्षता उमरा जीवन स्वप्न
 मिसे मू देगों में छातार -
 एक ही मू मानव मर्त
 एक उमने उर में प्रवार ।

बग्य मन्त्रधरमय विधि मूर्च्छि
 दल उष्ट्रो का मव निर्माण
 शिख का बन्धुग भी मोन्धं
 हुए पुनरिज युम कवि के प्राय ।
 धरत जन जीवन का लेखर्य
 धरत मामात्रिक पुनरुत्थान -
 पया कवि धाने मुग्य दुग्य धूम
 बग्य गग का मुन नव धागदान ।

नगा देखने वह मू मंगूति स्वप्न
 बैस हा बलिगीत ज्ञान विश्रान
 धन नपद्विज हो मानव शिख
 बने न धाम विज्ञान तीर धरधान ।

निघर मूम वेगान में मू स्वर्ग
 तथा बन्धना नन्हा में मारा
 हृदय कपल में उगी जन मू शीत
 नगा धवेतन में प्रगात का प्रगात

विज्ञान

ध्रुवम मास्वर, एहस्यमय नील
 निरंतर निस्वर मुक्त विर्मत -
 पंख फैला निस्पर्ध - विपद्
 से रहा हो बह्मांड समत !
 शून्य मुख का दिम् गुठल खोम
 शक्तिता मन धमत के पार, -
 खेतने वो प्रकास गति पंख
 मान पर उड़ता तन सधु मार !

कौन यह निरुकार निःसीम
 निरामय पुरुष व्याप्त सर्वव ?
 तारको के मणि कण से दीप्त
 नील का छिर पर क्षयमय छत !
 समीरण जीवित स्वासोच्छ्वास
 सूर्य शक्ति आपत् धनिमिय नेत्र
 सिधिका तट प्रेम बाहु परिचम
 धरा पद पीठ - कर्म गति क्षेत्र !

ध्योम क्या नाद बह्य निर्वाक
 लुजन मय में धनस तल्लीन ? -
 तीरते जिसमें बहु शिव् विग्नु
 महत् ध्यानर सिग्नु के मीन !
 ज्योति पिडों पर पग धर सिध
 पाहता कौन बिगा का बरा ?
 खेतना का रोमांचित नृत्य
 देखता क्या शास्त्रत प्रत्यदा !

भीस धनुज क्या घबर फुम्स ?
 भय उपा का स्वर्ण पराम -
 चन्द्र क रजत कसग से दीप्त
 प्रकृति का या मुक्ताम तड़ाग ?
 तारकों स मुञ्जित नि-शब्द
 मुनहसा या पुञ्जित मधु चक्र ?
 धूम कपु ऐरावत या मत
 पीठ शशि कसा वंश पुठि बक्र !

सास क झरते पीले पान -
 गिगिर दिग् बम यह धूसर मम
 तारिकाएँ बैभव स्मृति बिह्व
 स्वर्ण मुख का हो चँदहर भन्म !
 नयम मीरव किगास भमिमेप -
 सितिक पहिमल भू रेघ पराम -
 बेग्रता जो मब सष्टि रस्य
 छिपाए दण कर पुट में कास !

उठा जब शनी शब्द गति याम
 मंग कर गमन मौन संभीद,
 मिमटने सगी घरा छायाभ
 बस स प्रिमका दौम ममीर !
 शस्य पुमबिठ संपा पर शुभ
 शासक शत उटे मरित लड़ हार
 परीशों स बरुकों के दुद
 सगे गृह पय यन नगर प्रमाण !

रजन तिम गिरि भूंगा का बीर
 उड़ा दुन बिट् मन्नु बिमान
 बोहिया क म भीड़ा जीत
 न्ये दिव करमल पर द्विमवान् !
 तीर पर घागिया क मुभ
 भीनिया बो गोबा के कर
 मरुसा मारैप छायाभाम
 भीर न में से न बये !

दिशिज तट पर समेट सिद्ध कोप
 भूप खेत हों उबसे गंज
 उगसती हों या मुक्ता यति
 मुक्तिर्था भाङ्ग सुमहमे पंख ।
 पवन ने दुह बाणों की घेनु
 बिलोमा हो तुपार नवनीत
 रोम स्मित मेपों की सी पाति
 हुए गाटे हिम सिद्धर प्रतीत ।

पार कर देह काम की दृष्टि
 जगा बिस्मित मानस में केत
 वरा के वे जो कीर्ति स्तंभ
 मात्र ने सिन्धु पंज विक खेत ।
 विपत भावनों के मुनि मृग
 हुए हों विधि गति से भूसात्
 प्रसारों पर रुपहमे धर्मभ्य
 उचित हो नव शैतन्य प्रभात ।

लीर निधि हिस्मोमित हो स्मित
 भीम वपु से कोषित निःशंक
 भ्रष्ट फैलाए गोपी बाह
 विविध शौर्य को धरने धंक ।
 स्वर्ग सोमा हो सुख स्मृति मग्न
 कीम धर न जनमो पर पीत
 राजहंसों की ठिरठी पाति
 तिथिज में हो सोमा उद्गीत ।

मनकन्ते भीम बारि सर स्वच्छ
 स्वर्ष विगमित नम मुहुर समान
 नरित बहु ज्योति रेख सी धूम्य
 तिथी निरि मस्तक पर धम्मान ।
 इंद्रधनु दोनों में गिरि बायु
 झुसाठी गिनु हिम देव नवीन -
 उच्छता बन समतल विस्तार
 हुई दिव्य गरिमा ने न बिहीन ।

महनठाभा में निज नि सोम
 नीमिमा सार्द धी नि स्पर्द
 दिशाबधि सीमाघों से मुकठ
 ध्याप्त हा धनीभूठ धानद !
 अपरिचित नीहारों पर उष्ण
 पहर ध्वज सा रेशमी ममीर
 बड़ाठा निमसता में मम
 गगन उर की गरिमा ममीर !

गृहाघों में मेघों की गुह्य
 बंधना करती हँस धमिसार
 धुमी बेसी में सुर्यनु घोस
 अप्परी सी उड़ फिर तपु भार !
 रम मोमश मयूर सा सु
 धाम बाणों का बहँ उभार
 धमद्वत करता सहया दृष्टि
 नीम पर चित्रित सा साधार !

फिरज तुण चुन चुन मणि रज बीणठ
 ददधनुषों के रज गठ नीद
 गोन जाने धनुष स्वर्द्धन
 बना मम का लीला धाबीड़ -
 धेनो धांध मिथोनी मोन
 लनेटे धुरछाह में धग
 दृष्टि कर जामा बिरमय मुघ
 ऐगजातिक धर धर धर रंग !

देव मम का धकार मीर्ण
 नीमिमा का उगमुक्त प्रगार
 बधना का से निप दिग् धान
 उठा करि धरुगिता र पार !
 दिग् निर्बंध दिग् निर्बंध -
 दृष्टि धा धा जानी धरिधम
 मो धा धा मन विधर धुद
 मूय का का निपड धरि धाम !

पुपनुधों से जयम उडु कीट
 ज्योति के वे बहु मुवन विशाल
 नाभ धुरियों पर गति सम बड़
 दीप्त रखते भूमा का भात !
 नीस केबस प्रकृत प्रति नील
 निमूठ निस्तप्त निःसीम विपद्-
 धीर बध्नों का दिव्य किरीट
 धरे वा सिर पर दिक् सम्राट !

ऊष्ण वे कुछ ग्रह, ज्यों बुध शुक्र
 बाह्य मेघों से बन प्राणरत्न
 शीत सगठे हर्षत गुह मंत्र
 भीम सोहित - मू से उत्पन्न !
 धीरि बिर रजत वृत्त से रज्य
 खेतठा नी बंधों के संव
 सनाए घाट-बार वा जीवन
 कुण्ड पत्र वा स्मित ज्योति तरंग !

पार कर वायु बलय पत्र स्तुम
 पान कर सूक्ष्म तमस्वात् श्वास
 हुई दिव्य विस्तृत जीवन दृष्टि
 हृदय में उमड़ा दिव्य उस्मास !
 अनाहत शरणा मंगल नाद
 पवन हो दिव्य पुरुष की मेघ,
 बरसती कुण्ड धार सी ज्योति
 निधिस ग्रह हों विपद् की धेनु !

मिसै ग्रह प्रायस में पद चिह्न
 मुनी कवि ने सोपन पय बाप
 धर्म मोक्षर छाया-कृति बार
 बिचरती तम पत्र में बुपचाप !
 दिव्या ऊपर स्वामि धी साठ
 निनिमिष अंतरिक्ष के पार
 प्रमा पंथों पर उड़ स्वर्ण
 स्वप्न वपु करते समुद्र बिहार !

रखा बिस्मय स्तम्भित कवि चित्त
 गीत यह मन्त्रि दीप्त सर्वत्र ?
 प्राप्त कर जिसका इंगित गूढ़
 टोने से नम में यह नरात्त -
 नाचते स्वर संगति में मुग्ध
 प्रयुक्त दृग बरसा प्रमित प्रकाश
 सृजन मर्दन का क्या उद्देश ?
 दशन - स्मित किसका मुख प्रकाश ?

विपद् बंगा स्मित जटा बसाप
 बंक शक्ति सेषा दीपित मान
 गुहाणा व्योमवेश सा व्योम
 लपेटे शितकवच तम ध्यान !
 स्वर्ण सदृष्ट सी पृथ्वी भूम
 शून्य दिक् वरतम में प्रभिराम
 भैषामे जल का प्राणत नील
 बेग निरवसत मयती प्रभिराम !

घटा की परित्रमा कर मात
 भौम स बुद्ध कर पू मबंध
 मुक्त बुध ग भिन्न हुषा प्रमप्र
 प्राप्त कर कवि गुर प्रतिभा मंध !
 पूजना स्वप्नित दिक् संगीत
 रजत धामा के बँपते तार,
 मूर्त हा उन्नी महता मूढम
 घटीन्विय मुग्धमार्त मुग्धमार् !

इदधारा क धापुट रंम
 निरट जाठ घर मासत देर
 घेर्ना मुकाछिनी मोप्पाम
 दम्पतार्त वा कवि का स्नेह !
 दिवाने छाया पद पर मैन
 प्रभु मंधर्ब विपुल मामार
 देर्ना देवमान म मण्य
 देव बाता दीर्घे कर चार !

दृष्ट संभ शक्ति का भीहमा कस्त
 उड़ा कवि भाकाशों में अथ
 सीर अमर्षों से अगणित शीघ्र
 निबिड़ वा नम भीहार अरथ्य ।
 तारकों के अस्तंभ वे मेव—
 न मिमता महाकाश का पार—
 अयुत वर्षों में होली प्राप्त
 दृष्टि को बिनकी ज्योतिर्घरि ।

अपरिमित महा भूम्य में स्वयं
 सोचता कवि कैसे नीहार
 कोटि तत अधिवर्षों तक भूम
 बना यह उपग्रह रिमत संसार ।
 कीन यह, बिसले मरा स्व वेग
 यह कर्मों का कर पय निर्देश
 दृष्टि हत महाकाश में खोल
 अमित भूम धारण अमितेय ।

महत् किञ्च आकर्षण से लीज
 संज्ञो किञ्चने अस्तंभ अह्लांभ
 अस्तंभों भोर्षों से कर पुरुष
 भर बिना महा काल का भांड ।
 परम ज्योतिर्मय का क्या ज्येय ?
 बीज्य संपति का क्या उद्देश ?—
 बिहंसता महा भूम्य नि-शब्द—
 दृष्टि में निहित स्वत संदेश ।

रंय छायाओं के अणु बाध्य
 छिगाए तारों को अस्तंभ
 भूम में उड़ते—अत्रि सर्वथ
 हाकिमें जिनसे सिद्ध नरात्र ।
 अयंकर अमनेनु की पुंछ
 बीज्यत्री फेंकी वही बिमान
 रम्य यति स स्वदित वा भीत
 हांत मेते हों जय दिक् काम ।

पथ विरचित तारा व मय
 दीप्त कर छाया पय का छत्र
 प्रहा का धरने का मय मय
 पुमत्र इत गति हा एकत्र ।
 कोटि वषों तब लघु क्षण मात्र
 बने नदात्र ज्याति बिम्बीण -
 बिम्बु धरया धरया के बा
 हा मका नर मू पर प्रवनीण ।

बुद्ध वे ज्यानि वाप क पुत्र
 तत्र मपित गिरगा म भीम
 नुय्य हा प्र कय का मधु पत्र
 ज्योति तत्र पन म बुका क्षमीम ।
 त्रय मते गिरु प्र नवत्रान -
 धमिन शास्त्रण धीक्षीम विधान
 कमा स्पर्गा म कुजम प्रदुश्य
 बोन जाने करता निर्माण ।

राजि प्र उग्रप्र उट नदात्र
 नुय्य मे करण मोनामान -
 रथा हा महा शक्ति मे वा
 मानिया न कष भीम क्षमात्र ।
 टटन तार ज्योति त्रिरी
 गिरवत हा स्तन म मणि तार
 ध्यात्र धी मता ध्याम मे दिव्य
 उग्रिपति निगवार गारार ।

स्तनापा म गार् मड
 स्तनात्र त्र उर्मी मोन -
 इव वरि धनर मे निर्वाह -
 गुत्रा - धमत्र गुण वर बोन ?
 गति प्र क्षमात्र वा धे
 क प्रान्त मे तत्र कुछ काम
 गावने मण विगद् विगद्
 गाय वरि धन वा तने मयार ।

साहसिक निश्चय युग भर कार्य
 नाप कर घंतरिक्त बिस्तार
 खोजता वह ब्रह्मांड रहस्य
 भ्रम उच्छ्रायो में था भार ।
 किन्तु, जन भू जीवन का धाम
 चातुरिक बेर संकट भोर,
 कौन जाने यह भीषण रात्रि
 नहीं घाने वे नव युग भोर !

साम क्या बहिर्मुख में धूम
 पुन बन युग त्रिजट्ट सपाति
 रिक्त करतल गा कैला वह
 श्वेत शीटों सी उद्गुण्य पति !
 घण के प्रति अपना बायित्त
 निधा क्या चुका मनुष्य समझ ?
 ब्रह्मों पर जो भव मर्त्य प्रभुत्व
 प्रतिष्ठित करने को वह व्यग्र !

जलभ की या यह मृत्यु उद्गान ?
 प्रसवकर रच बहु प्रक्षोषाम्त्र
 सान पर चढ़ा रहा गढ़ मर्त्य
 घातक युग का सैनिक शास्त्र ।
 धूना स्वर्ण हिंसा क बीज
 ज्योति पिडा में बोलने हेतु
 भीम कैसाए कासे पंख
 लीलने युग रवि को भर केतु !!

जमा उसके स्मृति पट पर मौन
 स्वर्ण भारत का युग प्राचीन
 रहे द्रष्टा ऋषि मुनि जब गुह्य
 मनोमम ग्रन्थेषण म हीन ।
 भेद धनमानिस का नीम
 ध्यान का निर्मित कर दिव्याम
 प्राण पत्र म रोग्य कर उर्ध्व
 दे गए इन्द्र ममाधित्त ज्ञान !

प्रबल तद्गत इच्छंग हत् श्याम
 प्राप्त के पर मन्वन सोपान
 पार कर मन क रत्न प्रमार
 परून प्रविमन प्रामा कर पाम
 मरु का कुम गुनहमा भाल
 दिष्य वमप म धोत प्रान
 शानि मौग्यं प्रीति धान
 धार ताण - प्रवान क मान !

पनना क मित स्वमिण शृण
 नाप पर तम्प हा प्रब ध्यान
 लव पशु मे पय ब्रह्मा
 देवतर विरमप हृमा महान् !
 शील तागाप म उम्पुक्त
 प्रेरणाप्रम धे मूढमाकाग -
 बिबर पनविषाम वा दिष्य
 लिम्मागमा वा स्वय प्रवाग !

एक मरु धारित कर मासय
 मनुव धामा का मित प्रमरण्य
 बना धारित बप इत्यप
 तमम मे पर मय का तय -
 मृपु भव शिखि परम्पति मुह
 मनुव को र धर्मीम का रतन
 मुगना मय दुष्ट मे रय
 धग पर तागा धन का ह्य !

मा मन की धारित कर धेनि
 लय धारय मूर्ति का मृप
 मृ- तम ल प्रमाण प्रवाग
 शिखर का रंर प्रमर मर मूर्ति !
 प्रान शिखर शिवाग का रंर
 मय र मृ- ल बड पनम
 ल क र मया मे ध्यान
 लिम्मागमा मय पनय ! -

प्राप्त कर युद्ध सृष्टि का सक्षम
 विश्व धारणा का दिव्य स्वल्प
 प्रेम प्रज्ञाभूत से कर पूर्ण
 जीव मानस का तामस रूप -
 महत्तर स्वर संगति में बाध
 मनुष्य जीवन का सामिक ध्येय
 बसाना बाह्य जीवन स्वयं
 युद्ध नित आत्म प्रेम धन श्रेय !

जतना की बहु धराय ज्योति
 कर सकी भू पक्ष मही प्रवृत्त
 हिम बर्बर प्रब भी नर जंतु -
 पुन होने का युग रजि धस्त !
 युद्ध तत्पर जन भू के राष्ट्र
 भूमता जाता नर निज शय
 सृजन की शक्ति भूत विज्ञान
 धर्म का बन न जाय पर्याय !

तद्वत् भारत भी प्रब हतबुद्धि -
 भूमता उसे न पंच प्रकाश
 पुनर्जागरण नहीं पर्याप्त
 न उससे समक्ष प्रगति विकास !
 ज्ञान विज्ञान धर्म युग सत्य
 समन्वित जन सज्जे के पूर्ण
 पृथक् रह अवल रह के धर्म
 नाभि से भाव वस्तुमय ऊन !

ज्ञान धारणा विज्ञान शरीर
 धर्म बाणी स मगत धर्मित
 पंच विज्ञान ज्ञान चिर पमु
 रहे जय में यदि के विविध !
 हुषा कवि मन विस्तार गभीर
 विश्व स्थिति पर कर मौन विमल
 याम जब उदरा - उदरा ह्य
 नम्य पश्चिम भू का पा गर्भ !

गौर वेशों में विस्तृत घूम
 कृपा संवधित कवि का ज्ञान
 जगत जीवन हो मध रम छत्र -
 कर्म गुञ्जित वे जन मन प्राण ।
 ध्याम खुशी का उमठ हर्म्य
 इन्द्रपुर स्पर्धी मपर बिगाण
 बिपुल बीभव गक्षय पर मुग्ध
 बिजित स्तंभित गा सगता काम ।

स्वच्छ स्मित हाट याट उद्यान
 मध्य रम मात्र भवन जन बाग
 बिपुल जीवन उपकरणा शीष
 मार्ग मुग्ध बरगा विविध विनाम ।
 यंत्र पुग का द पू पर जग्म
 माहृगी जन मे पपक प्रयाग
 एक त्रि कर पीडागिर वानि
 सम्पत्ता का छप रिया बिराम ।

जगत का दे भोनिर रिज्ञान
 निरप कर धनुमुठ धनुगघान
 पुठ जदगी का रूप गंवार
 उम द लब नामा परिग्यात -
 बाण रिष्त् ग मे जन इक्ति
 बिना जन मे जीवन निर्मात
 धाम्य भय म पू मन कर मुका
 धापरिगता का " बरगान ।

परिग्यिगिा बी भीमा माप
 निरप घाण गुप्ती क छार
 गन कर दे- नाम क लग
 देगता धर कर बारा घोर ।
 रती बरों में रिदिा विमहा
 जगत जन में बरग्या गान -
 लर मानरग निगिने
 लरक गता निरि 15 म-क ।

राजनीतिक सामाजिक श्रद्धि
 बटो बहु - राज्य तंत कर घट
 छंटा निष्क्रिय सामंती घुंघ
 घुला मानस में तथा शिंत !
 मिटा जीवन का जीर्ण विपाद
 किया नव युग ने स्वर्ण प्रवेश
 उपहले बने लोक सर्वघ
 प्रजातांत्रिक घट भू के देश ।

जगत को वे वैज्ञानिक वृष्टि
 मनुज को नव यथार्थ का बोध
 बस्तु विश्लेषण कर दृष सूक्ष्म
 तोड़ प्राकृतिक लोह अक्षरोघ -
 भौतिकी के कर रहस प्रयोग
 रसायन संबन्धी नव शोध
 पराश्रित किया हनी युद्धम
 मृत तत्त्वों का घंघ विरोध ।

उखाड़े बौद्धिकता ने खोव
 मध्य युग के घंघे विश्वास
 प्रकृति मुख से बड़ बुठन खोल
 समाया उर में नव उस्मास !
 बड़ा नव पार्श्वों में अनिर्धार्य
 वास्तविकता के प्रति अनुराग
 जगत् प्राणों में नव ऐश्वर्य
 नए सौन्दर्य बोध की प्राग !

क्या में था नव युग उर्मैप
 मया सागर का बस गभीर
 घनाबूत किए छिपे भू घंग
 बारि का पेटिनघ घंघम बीर !
 बलम्पति जगत् जीवों क साह
 मूडम अनुशीलन दृग से छान
 परण कर यथासुवन क घेद
 नियर पर गठुंघा मानव ज्ञान !

हा बिरमिन उत्पादन पर
 बने हन उपनिवेश मू हा
 बनी धनपत्र इध्या की मय
 धप र्बापो ने किया प्रबण ।
 मगद माम्नाज्यबाद क स्वप्न
 दणन मगे नबान्ति राष्ट्र
 घघरु पैमी मर्घा की बधि
 गये मू जन बन दणन बाष्ट ।

मय पर उतग वृत्रीबाद
 बिरजित कर कर निरीह मू भाग
 पार धम का शोषण कर रक्त
 मूट जन मू का स्वप मूहाग ।
 माय घाया - घघिनायकबाद
 बिब्र मुडा - की भरका घाय -
 हाम बिपटन क गठ पन घाय
 बना युग प्रहरी मनिघर भाग ।

प्रेरणा क हू मय रम भाग
 दिया युग मे त्रिरयम साहित्य
 गिण्य ने मय मीर्ष्व निगार
 किया जन भाष बोध हृतहृय ।
 बमा ने रबि का रण मंवार
 बडा मूत्रनगीम उर बलि
 बनता का उभाण लेख्य
 टिप्र कर बीर भावना मिति !

रगी दुग मारी बघन मुक्त
 पुण्य क बीर ममुर ममका
 मय मय्या मे गोरब मुक्त
 हृषा घाडा जामा का बघ ।
 योन जीवन पर बिरमिन दुक्ति
 पती बरधे माघिन मग्धार
 हे का स्वन्तिम रिवा घन
 हे मन्गी एनर मग्धार ।

खोज सजीवन फज् कीटाणु,
 समुद्रत बना विद्विस्ता शास्त्र
 सस्य पदति का हुभा विकास
 युद्ध ने लिए मण बह्यास्त्र !
 सौर मङ्गल का माह रक्ष्य
 हुधा ज्योतिष्मत् गणित दिगंत
 मनो विश्लेषक कर, प्रति गुह्य
 विद्या निश्चेतन भुवन धनत !

खैब उद्दिमय शास्त्रों ने गुड़
 चरचर जग क खोसे द्वार
 झारबिन का विकास सिद्धांत
 बना मुम चिन्तन का प्राधार !
 मार्क्स ने कात द्रुष्टि से तीक्ष्ण
 पलट डाला जन का संसार
 विविध विज्ञानों में से जन्म
 बाध का क्रिया गतित्र विस्तार !

रेडियो स विद्युत् ध्वनि ऊर्मि
 बिस्व मन करती मुक्त प्रसार,
 दूर दहन दिम् घटा लौक
 रूप करता पराप्त साकार !
 मित्रिम विकरण स बिस्वित सृष्टि
 द रहा जब विज्ञान प्रमाण
 प्रयोगों म संभव भव मध्य
 बनस्पति पशु जग का निर्माण !

ज्ञान संपद् सचय यह बाह्य
 रिक्त मृत तथ्यों का जड़ डेर
 गारय बीगिठ हा अंतश्चित
 धनी मुम संपादन में देर !
 इन पर्वत बाहर म मध्य
 मनुज भीतर म आदिम एवं
 धात्र भी यह दिन पारक दूर
 एक ही भू मानवता सर्व !

धान पर जड़ती मम में बहु
 रेंगता मन भू तम में मान
 पक का तुच्छ पिनीना कीट
 पक ही म गता मुग्र मम ।
 शक्ति सिद्धा मानव की प्रथ
 विकट धनु प्रस्ता का धर हर
 मम्यता क विराम का प्राज
 बमा न मही धंग म्मुति म्मूर ।

विन्दु कवि मन में धुब विरमान
 हृष्य में धाम्पा घटम प्रमाध
 प्रवृत्ति की गूजन शक्ति विज्ञान
 बनेगी सिद्ध गूड विधि माध ।
 मनुज में हा बलिाध विराग
 मृष्टि में धर्मलि निग ध्येय
 धने हा दुर्धर म मपर्य
 मनुज धाम्पा दुर्धर धत्रेय ।

धन गता मुग परिबलन धन
 सुदहन गिलागत मधि छत्र
 टूटती हा तारो की पाति
 उर ग धारणी क मत्र ।
 बीटना जन मम में धुवन
 छिद्रा पुम मूल्या में मपर्य
 निग्रहक म धाधार विचार
 धाना का न पावक गग ।

तन्निज धनाता पु धु
 भूम हात जान म्मार्थिक
 जना का बय मक्ति मरुप्र
 निरहृद घट न मरुग म्मंत्र ।
 धन मम मानवा क पाव
 गत म कर्णी धरता म्मान
 गुणरग जान धमि की गगन
 धर्म ग म्मदक जन गग ।

धरा के धोर छोर हों दीप्त
 मृगो का मिटे विपन्न विपाद
 ईश्वर जर्जर हा धाम प्रसन्न
 शक्ति युग का पा विभव प्रसाद !
 अमुंहरता हो भू मे क्षुब्ध
 दक्षित दमिता का अम्युत्पान
 विपन्नताएँ हा जग की दूर
 मोक्ष समता प्रतिनिधि विज्ञान !

जगत् में उषस पुषस हो बाह्य
 महत् पर युग की अतिसिद्धि
 शक्ति सन्धिम पीतिक बड़ तन्त्र
 बढ़ाता जग की अतुल समृद्धि !
 ज्ञान की बुझी बीधिया बीप्त
 विभव के प्रति बहसी जग क्षुब्ध
 मुक्त नमचारी भूपर धात्र
 घोबता विग्न अक्षय में सुष्टि !

बहस सब गए अतुष्टि पार्श्व
 सिमट धब गया ज्ञान सेग बेग
 ममापन प्रस्तर युग के चिह्न
 तद्विद् युग करता रजत प्रबल !
 मृगा में सेनी जन्म अनेक
 एक पीढ़ी - पा नव उग्मेय
 चिरंतन वा जो युग पत्र बाह्य
 शाल्य धन सा उड़ना निःशेष !

बदलने सामाजिक सबध
 बदलने मन धाम्बा विश्वास
 पर मूस्यो क स्वयं प्रसाद
 गृष्टे मानस में मास्मान !
 मनुज क प्रति जग क प्रति जीव
 बदलते दृष्टिबोध प्राचीन -
 धध भू मन कोना वा ईश्वर
 शील करती युग दिग्ग मधीन !

विपठ न्यतिर्या त्रिनरी धाधार
 कृत् जम क नैतिक धार्ग
 महमदा उरने हनप्रम मम
 रमम पुग मति का पा शर मर्ग ।
 मरी स्पायी बहिराग बोध -
 मय्य मूय्या का द धाधार
 ऊष्व पुग मामब को से जम
 धग का देना नय मन्तार ।

निय गतिमय जग हाण तुम शीद -
 मनुज पाकर वैज्ञानिक दृष्टि
 मिया बहिराग क व्यवधान
 व्यग की कर गरता नव मति ।
 प्रतीक्षित मौनिक जैविक शक्ति
 बरम देगा पू जीवन न्य
 उग टाग धनन ताण्य
 बनेगा नन नव मव कय ।

धनि मे मर मर अपनी मूर
 माहता पुग कवि हरित प्राण -
 मी रर म माना वैश्य
 जगता विमवा जद विज्ञान ।
 और भी बिदि क द मित न्य
 प्राण मन प्रहनों में ओ व्यक्त
 पग-पग बिदि की बिदि परमाण्व
 रर गिदा ककायका ममका ।

एण कृत् ही एण्डा मे विद
 मरगा का का कका गार
 और कृत् लकुा मे विदम
 ररा दग का क मारार ।
 मन् रचनामर धनु की शक्ति
 कन् देग मानव ममार
 रना का देग प्रचिनत लिट्टि
 विद्वन् का उरका धाधार ।

असंगति पीड़ित थे भू देह
 विपमताएँ थीं विद्वृति विरोध
 न उन पर था बंसी का ध्यान
 उसे भी नव जीवन की शोध ।
 बाहुता यह भौतिक विज्ञान
 कम सके जन भू हित बरवान -
 मनुज का भीतर अंदर हिंस
 मृत जीवी - दुष्कर था धाम ।

बदल इत रहा बहिर्गत दिव्य
 न गत भू मन करता स्वीकार
 सत्य के प्रति नर धर्मों मूर्ख
 बन रहा निज पर अत्याचार ।
 प्राप्त कर सृजन मक्ति नव मक्ति
 न पहले यदि हम वीर्य विचार
 रहेगा वर्तमान गति ह्य
 मभगा भाबी हाहाकार ।

शक्ति पावन अहित कर मध्य
 पाप यह रहे पुरातन ध्येय
 मदभमा मानवता का आज
 इमी में भू जीवन का ध्येय ।
 राजनीतिज्ञ स्वार्थों न मुक्त
 भृगित भाषिक स्पष्टों त्याग
 जाति वर्णों के बधन प्राप्त
 निकट आएँ पंडित भू भाग ।

पाँच वेदों भू पर अभिसार ?
 पीछे हो चुके बापु जन्म यान
 रश्मि पंखी उड़ते दिग् अस्व
 गच्छन कर अंतर्गत अभिमान ।
 ज्ञानि भुवना में संभव आज
 मनुज मनुति का मुन्दर प्रचार
 घने ही न हा मध्य से ज्ञान
 अमृता घट मनुति का बना गार ।

गिग्धु मम ग ले विष्णु पश्य -
 भयनिमित्त हृदि मील त्वं शक्ति
 बगाएगा मर म पर स्वर्ग
 पग जीवन प्रति वे अमूर्तित ।
 गुमा प्यता म ग्यामय मय
 मुमम कर हृदि लि वृत्रिम वृष्टि
 पना मरुपम का उर भूमि
 मंशारणा निगा ही गृष्टि ।

भवे ही तद्विष्णु वग जगु शक्ति
 कर मरुं पत्रिगत निमाग
 साधना प्रेम हीन मी शक्ति
 करणी मानप का कम्पाण ।
 बाह्य निर्गि का विष्णु भाषार
 प्रकाशित कर भवे प्रतिमय
 हृदय क भयवार का भार
 करणा हीन ग्याति निर ?

दर मन क जीवन का स्वयं ?
 रणा मानव स्वयं भूत -
 उग जयपवन का भावण
 पूग भी हा - कर दगा पूण ।
 म हा कर तर भाषित भयतय
 मुय का तप बाह्य गगा
 शासना मानव का अमरुत
 परी उमरा भासा का मार ।

पार्श्वि हा क शक्ति स्वयं -
 पश्य निगाय बाह्य ज्ञान
 शक्ति घात ज्ञानि क शक्त -
 हृदय घातना म उदका बाह्य ।
 बाह्य ग ज्ञान विम
 मनुद का ज्ञान शक्ति स्वयं
 पूरा का स्वयं शक्ति स्वयं
 शक्ति मनु स्वयं शक्ति स्वयं ।

असंगति पीड़ित वे भू देह
 विपमताएँ भी विकृति विरोध
 न उन पर बा बंजी का ध्यान
 उसे भी मर जीवन की शोध !
 चाहता वह भीतिक विज्ञान
 बन सक उन भू हित बरदान -
 मनुष्य या भीतर बर्बर हिंस
 भूत जीवी - दुष्कर या ताण !

बदल द्रुत रहा बहिर्गत विश्व
 न गत भू मग करता स्वीकार
 समय के प्रति नर आर्षे मूंद
 कर रहा तिन पर अत्याचार !
 प्राप्त कर सृजन मक्ति मर क्षिति
 न वदम यदि हम जीर्ण विचार
 रहेगा वर्तमान गति बड
 मन्त्रगा भावी हाहाकार !

क्षिति माघन अत्रित कर लब्ध
 पाप यह रहे पुरातन धर्म
 बदलना मानवता को आज
 इसी में भू जीवन का ध्येय !
 राजनीतिक रक्षाओं में मुक्त
 क्षुणित आधिक स्पर्धों त्याग
 जाति बर्णों व बंधन प्राप्त
 निरुद्ध आएँ संश्लि भू भाग !

पाँच वैदम भू पर अभिमार ?
 जोर्ष हा बुद्ध यापु जस यात्र
 रक्षिम पंगी उड़न बिम् अम्ब
 गण्ट नर अंतर्गिष्ठ अभियाग !
 ज्ञानि भुषणा में संभव आज
 मनुष्य संस्कृति का मुखर प्रचार
 भगे ही न हा मर्द का ज्ञान
 अमृ पट संस्कृति का जपा गार !

सिन्धु मम सं से विद्युत् पथ -
 अपरिमित हरित गीम जब शक्ति
 बसाएगा नर मू पर स्वर्ग
 धरा जीवन प्रति हे अनुरक्ति ।
 भुसा पसनों म श्यामस मेष
 मुसम कर कृपि हित कृषिम वृष्टि
 बना मन्स्वस को उर्दर भूमि
 सँबारेगा निसर्ग की सृष्टि ।

मसे ही तद्विद् वेग अणु शक्ति
 कर सकें वहिर्जपत निमाण
 सोचता प्रेम कौन सी शक्ति
 करेगी मामब का कस्याम ।
 बाह्य निधि को विद्युत् बासोक
 प्रकाशित करे मसे अभिमेप
 हृदय के बघकार का भार
 करेगी कौम ज्योति नि शेष ?

बेह मम के जीवन का स्वर्ग ?
 रहेगा मानव स्वप्न अपूर्ण -
 उसे अक्षयतम का आशेग
 पूर्ण भी हा - कर दया पूर्ण ।
 न हो जब तक आत्मिक अवसर
 मृत्यु का तस्य बाह्य ससार,
 आबना मानव को अमरत्व
 बही उसकी आत्मा का सार ।

घातक ही रे शाति समग्र -
 धधूर निन्द्य बाह्य प्रयास
 प्रीति धार्म्य ज्योति क शोष -
 हृदय धतता में उमका बास !
 बाह्य समायन निःसंवेह
 मनुज को बेमा सौक्य समृद्धि
 पूर्णता का स्वभाव सित उर्ध्व
 विद्वति भगुर समतस अभिवृद्धि ।

मनुष्य धारमा ही वह सित शक्ति
 पूर्ण वह सख्ठी नव सधार
 सांस्कृतिक ऐश्वर्यों का स्वर्ग
 शक्ति सोमा प्रकाश का द्वार ।
 बनाए जो भीषिक विज्ञान
 जगत् को धात्म ज्योति की पीठ
 धरा पर बिचरे स्वर्गिक शक्ति
 मने मन को न धंध तम दीठ !

स्पृस शौतिकता का अधिपत्य
 विपद् भय का सूचक अधिवाद
 छा रहा मानव जग म गूढ़
 मनोबैज्ञानिक वह धबसाव ।
 गसित शक्त से धपने को बांध
 प्रगति के पीछे पामस देश
 शक्ति के धपने धपने धर्ष —
 सोच बली को होता क्लेश ।

नभ्य क्षमताओं का क्या धर्ष
 मिटे जो नहीं सोच कुछ वैश्य ?
 लीह पक्ष स्वार्थी स उम्मत
 धरा उर कुचसे बढ़ती सैन्य !
 स्नायविक विधेया की सत्य
 सभ्यता मू की रण विकीर्ण
 शीत मुठो से जन मन तस्त
 हा रहा संस्कृति हृदय विदीध !

शक्ति का हाता मन म जन्म —
 विजित हो रहा शक्ति मद मोह
 रूढ़ मुम मन में उम्ता उबार
 दमिज जन में भीषण विद्राह !
 न हम यदि बदसेदे "तिहास
 हमें बदलेगा वह "तिहाम
 शक्ति का मू वितरण अनिवार्य
 शक्ति गुण की गम कृति विभाग !

बाह्य विस्फोट मुठ जन क्रांति
 मानसिक सामाजिक उषर्ष
 गूढ़ अंतर्विकास क विज्ञान -
 बदमता प्रब बह्या का बर्ष !
 ज्ञान क जल बुग खाल गबाल
 छोड़ जीवम का विगत धरष्य
 जीण मू मन की केशुस त्याग
 प्रगति पप पर ममय शैतम्य !

राजनीतिक धार्मिक उत्थान
 न कबस मानवता का ध्येय
 पूर्ण हो भीतिक बाह्य विधान -
 अतनात्मक धांतरिक विधेय !
 मुर्मो को अतिक्रम कर मुग भीम
 बस का बदल दल परिवेज
 दे रहे मानव को दिक काल
 धारमस्वित रहने का सवश !

विपुस वैज्ञानिक धाबिष्कार
 बागनिक सामाजिक सिद्धांत
 ममन्वय क मान्कनिक प्रयत्न
 मिटा सकन न जगत का ध्यात !
 बोड़ता अतन में मूरुप
 उमड़ना धबधगत में उधार,
 प्रबम बपने भीतरी मनुष्य
 बाहरी बपने तब संमार !

प्रतीक्षा करना विश्व विकास -
 धार मुग क मम्मूष सषर्ष
 परिम्बिति इधर उधर मित मूरुप
 उमगत मुग ममार्य धारम !
 ध्यक्ति मर इधर उधर जड़ तत्र -
 बृहत् सामुहिक मुग संकल्प
 उमय जिबिरा में शक्ति विमकन
 इधर का बम न जाय जय तस्य !

विकट युग भू मानस में श्रांति
 उभड़ते अग्निमुष्ठी भावना
 स्नायु भय सक्षय से धुमांध
 सुसग सब रहे घण के बेबा ।
 वाहिए युग को अंतदृष्टि
 धैर्य सहृदयता साहस त्याग
 मनुज के चेतन उज्य प्रयत्न
 बुझा सकते बिनाश की भाग !

व्यक्ति कर सके समग्र विकास
 चाहिए सामूहिक आधार
 मूर्त हो जीवन में भाषण
 परिस्थिति का करना संस्कार ।
 बिराधी यदि आदर्श यथार्थ
 व्यर्थ बोना तब - अशुभ अपूर्ण
 उभय को विकसित होना आज
 मध्य अक्षरोघो का कर पूर्ण ।

बेचता जात दृष्टि कबि स्पष्ट
 बहिमुख क्षुप्त मनुज का ध्यान
 वस्तु वैभव से जीवन पूर्ण
 नृप्य आंतरिक मुक्तो से प्राण !
 चेतनारमक स्रष्ट बुद्धिम
 धिर रहा मानव जग में धोर
 अंध बड़ वस्तु तिमिर का सिन्धु
 भीस जाए न कही युग भार !

खास कर निर्मम भौतिक प्रवि
 मुक्ति नेता जड़ को विद्यान
 प्रीर जड़ निज रहस्यमय शक्ति
 मनुज को करता मुक्त प्रदान !
 जक्ति मन् अंध ज्ञान ही चक्षु
 ज्ञान न ले बिद् दृष्टि मजान्
 मनुज कर युग मन का संस्कार
 कर तब भू जीवन निर्माण !

प्रगत कवि मन करता प्राज्ञान
 चेतना का हो पुनस्त्यान
 अंध कर भू पर प्रखिल असत्य
 करे नव युग रचना विज्ञान ।
 इडि गठ तर्कों से हो मुक्त
 समन्वित हो जग भू का ज्ञान -
 सत्य - विज्ञानो का विज्ञान
 मनुज जग को दे नव बरदान !

जग रहा अब नव नव इतिहास
 बज रहा ईशानिक युग पूर्व
 मनुज अतर्जन का तम भेद
 प्रकट क्या हुआ सत्य का सूर्य ?
 चेतना स्वर्णिम कवि आत्मिक
 जगत जीवन विकास हित काम्य
 पूर्ण संयोजित विश्वमें सत्य -
 भीतरी ऐक्य बाहरी साम्य !

महत् संकल्प बनाए मार्ग
 विजय पाए विकास पर प्रति
 सफल हो मानव जीवन ध्येय
 सृजन अमुकूस समठित शांति ।
 लौह स्थितियों के श्रृंखल खोल
 प्रकट हो मुक्त ऊर्ध्व ईशम्य
 जगत युग कवि से से फिर जगम
 विश्व मानव - जग भू हो धम्म !

मुलम मानव को उन्नत मूल्य
 लक्षित साधन उपलब्ध अपार
 नहीं क्यों मानव जीवन स्वर्न
 धरा पर होता फिर साकार ?
 सोचता कवि मिश्रण ही राग
 चेतना भू पय की अक्षय
 मुक्त हो मान जगत की शक्ति
 मनुज को दे नव जीवन बोध !

कुरेदा विज्ञानसाधक गूढ़
 सम्प गोपी का कवि ने मर्म
 बही सामंती स्त्री भी सर्व
 रिक्त वा हृदय सँबाध बर्म !
 प्रेम का अर्थ दृष्टमय प्रेम
 वेतमा ? - मूर्तिमती भी देह,
 भाव स अधिक लज्जा का मूह्य
 रूप छवि सिखा - न उर में स्नेह !

छोड़ बर्बर विष्मसक रूप
 बन सके सुषनहील जो काम
 मनुज को धतरैष्य में बाध
 बगाए पग को सोमा धाम !
 उर्ध्वमुख हो प्राणो की ज्योति
 रूपगत रग द्वेष से हीन
 भावना का बरसा सौन्दर्य
 रहे मू जीवन स्वर्ग मनीम !

भट पश्चिम की बीभध भूमि
 हुषा कवि मन में बन भाङ्गाय
 विपुल जीवन मोभा स पुर्म
 सम्पत्ता का बिलोक प्रासाद !
 रम्ब गूह अेलि मार्ग उद्यान
 वष क प्रति सजीव अनुराग
 गौर बेलों का वा स्पृहणीय
 मगटिन जीवन का सहवाग !

राम मुक्तान मिथ की स्वर्ण
 मास्वृतिक निधि का पा वर दाय
 हुषा जिसका संतनिमलि
 सम्पत्ता का बम मय पर्याय !
 विविध विज्ञाना की जा भूमि
 विश्व बीडिक विक्राम तोपान -
 चार शक्तिपा न मन्त्रिय मंच
 प्रगति का माग्प रत्न महाम् !

प्रकृतिप्रिय कवि ने सब से पूर्व
 ग्राम्यस् शृंगों का देखा देश
 स्मरण कर जन्म भूमि का दृश्य
 हुआ तब पुलकित वृग धनिनेप !
 मुझ हिम शिखर किरीटित भास
 हरित फर तब रोमांचित बाल
 बाटिमाँ मयमल की मृदु ज्वाल
 नील वर्षा के निर्मल ठाम !

मोहते फामसई हिम शृंग
 होन निर्मर करते सित नाथ
 सुभय तसहटियाँ शिखर, पठार
 हृदय में भरते स्मय भाङ्गाद !
 पीठ वाप्यों की चुनर बोझ
 बदसती प्रकृति जमरकृत बेस
 सरकती नि स्वर पग हिम पक्षि
 बौड़ती फेन सरित सावेस !

जिनेबा सर में तिरती मीन
 शृंग छाया-चित्रित साकार
 बाल पर छाया के प्रिय खेप
 बुझ्य पट का करते शृंगार !
 बनों को बाँस बीच कर बीड़
 मर्मरित रखते वन प्रच्छाय
 मात्रिया की स्थित धू मुख स्वर्ग -
 जग्ही पर निहित प्रमुद व्यससाय !

स्वच्छ पश्चिम का सह कश्मीर
 शिखर पर मोरप के घासीन
 विशाङ्गी जगत पर्यटक विश्व
 इसे रखता धामोद नबीन !
 तब मूषिका कसा में बल
 शृंग सोभी दिग्ग घमिराम
 मनुज कर कौशस से संपन्न
 निपूत नैसर्गिक सुपमा घाम !

काँस में कर सोत्कंठ प्रबन्ध
 हुमा कवि मन में माबोमेप
 कला संस्कृति का यह भू स्वर्ण
 कीर्ति परिचय की रहा विज्ञेप ।
 स्वर्ण भू गों की सी गुबार
 मधुर भाषा हरी मग प्राण
 मिसल सौष्ठव विनम्र व्यवहार
 सहज भाकपित करता ध्यान ।

क्कति के पसने में भर पैम
 हुमा उद्बुद्ध यहाँ शैतन्य
 विरव बंधुत्व साम्य स्वातन्त्र्य,
 बरे जन ने भारत धन्य ।
 श्रेम बहु संघा शङ्क भूकंप
 बना समठित साहसी दल
 रहा परिचय की मानस भूमि
 कसा चिन्तन ऐश्वर्य निवेद्य ।

दिव्य मिरणों का गोबिन्द शिल्प
 शांति सम्मोहित करता प्राण
 निर्घनों की बाह्विस जो मूर्त
 वास्तु प्रतिभा के विशद प्रमाण ।
 शिल्प प्रतिमाना का हिम् ब्याप्त
 सिष्ट सौन्दर्य सृष्ट परिवेद्य -
 कला चिद् वैभव प्रभू धनिन्द
 क्रांत नू जीवन स्वयं अक्षेप ।

भाव धारोमित जन नू प्राण
 नित्य नव उग्रेपां क साठ
 विश्व प्रिय शक्तिर वहरण घाघ
 रूप सज्जा से धीठ प्राठ -
 मुमन शौरम शाला रम भूमि
 सुमर, मधु प्रिय जीवन रत सोम
 कसा बाधमय हो मोमा मात्र
 ध्यान में सुमभ मुरा क भोग ।

जहाँ मयनों में शोभा स्वप्न
 हृदय में नित नव भावोच्छ्वास
 प्राण में मुय जीवन उग्मेय
 बुद्धि में नव चिन्तन उस्तास -
 बपसठी हों तबि सज्जा बेश
 कला विधियाँ पा निरय बिकास
 बही रे गीत बेश प्रिय फास
 जहाँ निमि जीवन मुक्त विनास ।

सद्य स्फुट सुंदरता का पद्य
 वृषों के मम्बुब कुस प्रमान
 मुग्ध कर देता वेरिष दृष्टि
 मिस्र स्वर संपति का हो पाम !
 बनों के प्राणों का हृत्स्पद
 कलाकारों का स्वप्नागार,
 सतत जो नव थी मुपमा रक्त
 निराधों में करता संचार !

वास्तु कौशल का अपलक स्वप्न
 धमर प्रस्तर छेनी का काव्य
 स्वर्ग का विम्बित धृ पर चित्र
 तिस्र सं श्रुभुधो के संभाव्य -
 विश्व सम्मोहन कला प्रतीक
 स्वयं में पूर्ण मधुरिमा मोक
 रूप धामंद प्रेम का कृत्र
 सफ़म पुय वेरिष को धवसाक !

भव्य प्रतिमाधों से संपन्न
 विविध मीमर्षस्वस से उद्यम
 राजपथ बीधि यैधि प्रच्छाय
 नपर निब जोमा का उपमान ।
 भेदता ऊर्ध्व बुद्धि से नील
 दीर्घ धान्छिम टावर का वृष्य
 नागरिक गरिमा का दिदमुग्ध
 प्रवर्तित यहाँ धनिम्य भविष्य !

कल्पना मयनों में सुपथाप
 मूस हुत उठा पुपतन रोम
 बँडहरों से जतियों के बीच
 जग उठे बूत कोण बहु शोम !
 राम की शक्ति रोम की कीर्ति
 विश्व उर पर करता जो राव -
 वास्तु बिहूँ सिस्पाँ में शेष
 मयन वह मौरव गरिमा भाव !

श्वेत स्तंभा की शोभा श्रेणि
 उच्च सौधो गिरिजों की सृष्टि
 शिखर कृति शतुष्कोष उद्यान
 कला रुचि धपसक रबती वृष्टि !
 सप्रहालय दिगठ स्मित रोम
 मलित शीमव का धमय कोप
 कास जगता स्तमित बिहमूड
 देव सौन्दर्य स्वप्न निर्दोष !

पोष का मगर विश्व विख्यात
 हृदय ही जिसका स्वर्गिक राज्य
 रोम का बहिरंतर ऐश्वर्य ! -
 धीर सब शीमव जगते त्याज्य !
 धाम भी कला शिखर धवशेष
 स्वप्न बीबी में घरते स्तूति
 सम्पत्ता सास्कृति का यह केन्द्र
 ध्वंस में गत मौरव की मूर्ति !

कला प्रेमी इटली के लोग
 मुक्त मम स सरता संनीत
 धमर बाते बजिन की कीर्ति -
 धृति में स्मृतियाँ बिछी पुनीत !
 मीस शीमों क जल में मोन
 मुनहमी शोभा सी निर धूप
 रामियों की पनका पर मुग्ध
 उपनिषद का नैवारती भाव !

यहाँ धाम्या मीरो ने मल
 ज्वाभ पंखी निज हीपक राम
 बावकों चितकरों की भूमि
 निपुल संशित सोभा की धाम !
 मध्य युग से ही रहा प्रजस
 यहाँ राग्यों में कट संघर्ष
 मिले सौखर को उसका धाम -
 ध्याम का रहा सौह धावत !

यहाँ का पुष्प नगर फसोरेँस
 कसात्मक गौडिक केन्द्र समुद्र
 बधू सागर की बेनिस बाह
 महर हीपों की पुरी प्रसिद्ध !
 संगमरमर सौधो का मुझ
 रेसमी भी सोभा का देश
 रिनेसॉ से पश्चिम को मध्य
 दिया जिसने जीवन सवेस !

रोम के सँग ही स्मृति में भीस
 जमा धोंगड़ा इजसो में मन्म
 देवप्रिय यह पौराणिक भूमि
 खड़ी धकमुप सोभा में मन्म !
 खँडहरों में सोया सौन्दर्य
 कास के उर पर करता राज
 स्वप्न कुम महत् निस्य ऐश्वर्य
 प्रेरणा देता जय को धाम !

दिया होमर को जिसने जम
 जहाँ विचरे इटा मुकराठ
 सम्मता संस्कृति का जो देश
 जगत में नामा स्वर्ग प्रभात !
 प्रसिध भी डेस्प्री की हैवत्र
 गूँजती धब भी पिरा मपीर -
 गीत प्रिय टिरता जन में धन
 जीर्ण प्रतिमा ने स्पार्टन भीर !

मायू नमरी प्यारी एभेंस -
 ध्वस्त खेपों स उठ इतिहास
 जहाँ धब स्वप्न मूर्त अनिमेष
 स्वर्ण युग का बेता प्रामास !
 मिल्य सौष्ठव के सुपर प्रतीक
 स्तम्भ डारिक बीसी के मध्य
 मंदिरों हर्म्यो का सौन्दर्य
 जमाता कसा प्रेरणा मध्य !

रूप मरिमा प्रेमी बे प्रीक -
 स्वप्न सुपमा स कस्मिन् मूर्ति
 धंग सगति में उली अनिमेष
 स्वर्ण शोभा की करती पूति !
 काव्य समीत कसा विज्ञान -
 देवियों की छवि में धबतीर्थ -
 बृहत् श्रीश प्रायश् धब बृह
 रम्य रमस्वत स्मृति मर पीर्ज !!

काल का ध्वस्त लाव - अविजेय
 बड़ रहा मानवता का मान
 यत्त युग करता नव निर्माण
 मही पीछे बग से मूनाम !
 जर्मनी में एक कर कुछ काम
 रहा युम कवि मग चिन्तन मम
 महत् प्रतिभाओं का यह देव
 जहाँ नाची युग बंदी नम ।

यही साकुंतल शोभा यु म
 फास्ट का कवि ऋषि हुषा प्रतिउ
 स्वर्ण मू थी त्रिषको एकत्र
 मिमी कवि गुरु इति में रत्न मित्र !
 मूत्रक चिन्तन वैज्ञानिक साध
 विदित रंगा पर त्रिमकी साध -
 निघाण साधुविमीत्र ने तरब
 यही बेनर मे स्वय मय बोध ।

दार्शनिक वैज्ञानिक जन भूमि
 जहाँ के कवि गायक विख्यात
 यही सापेक्षवाद का शोष
 किमा जिसने - जमती को ज्ञात !
 मुठ में विहित शौर्य प्रिय सोग
 खोजते नव प्रेरणा प्रकाश
 माटप मर्चों सँग यहाँ प्रभूत
 नीति बाधो का भाव विकास !

बृहत् उद्योगों का गत केन्द्र
 यंत्र बल कौशल में निष्पात -
 मिस सके पूर्ण पश्चिमी भाम
 धरा पर विचरे नव युग प्रात !
 उष्ण फिर शीत मुठ से तस्त
 प्रमित बसिन नगरी धाकाठ
 यहाँ सब साम्यवाद जम तत
 सामने खड़े सशक्त प्रशांत !

खोजनी वैसायिक सौन्दर्य
 न जाने कब पहुँचि धनवान
 नॉरवे स्वीडन में कवि प्राप्त -
 प्रकृति क जो शोभा संस्मान !
 ईद ने बस्य मुष्टि से कूट
 किया हो नॉरवे का निर्माण
 बाटियों श्रुमों का मह प्रांत
 बस्य थी शोभा में प्रसमान !

खाड़ियों स चुन नतमुठ सिग्धु
 धैर्युतियों से पकड़े हो केस
 सहस्रों मुरझनुओं से शीप
 फेन भरनों का यह प्रिय रेत !
 मूँबठ इन्द्रबाप के सेतु
 धप्यरा जमती जब सजु बाप
 निभूत बन मिरि शिखरों पर उष्ण
 रेखनी उड़ते बाप्य जसाप !

चाटियां से गर्तों में कूद
 भागती मर्दियों की सित धार
 बीड़ के कुम्हों की बन भूमि
 सिद्धरती रहती सिसक धपार !
 उग्र गिरि चट्टानों के डाम
 हरे गहरे सागर से ताम
 सैकड़ों मधु मक्खी से द्वीप -
 गारवे का वैशित्य विशाल ।

दृष्टि बिस्मय स्वीडन की भूमि
 सिप्र नद बनों सरों का देश
 घीष्म में धर्म राति का सूर्य
 जहाँ भर नभ सौम्यर्योग्मेप
 सिन्धु नभ पर बरसा बिक पीठ
 उपा मुख का थी विगसित स्वर्ण
 स्वप्न तूमी से रेंपता मीन
 चाटियों सिखरों को तत बर्ण !

स्फटिक शृंगों के तीव्र प्रपात
 गसित हिम जस क मुकुर तड़ाप
 चाटियां क प्रतप्त बिक प्रांत
 प्रवृति सुपमा का धचस सुहान -
 सुरैय पुष्पो के हंसमुख तस्य
 शावसों का करते शृंगार
 रंय वस्त्रों में सज धज लोप
 ममाते मीन मृत्य त्योहार !

शीर्षजीवी जग शीर्षकार
 बिभब मपन्न स्वेड धति गौर
 स्वल्प बहु कर्म कुमस धमिजात
 मध्य सस्कृत प्रासन प्रिय पौर !
 प्रवृति की योवन थी का स्वर्ण
 धतिधि निजि गृह में जहाँ प्रपात -
 नमा का रदानहात्म्य प्रिय कम्ब
 मुपर उत्तर का बमिन शाह !

धाम्नि धरती पर घर निज पाव
 हुषा कवि को गोपन प्राज्ञाद
 बिम्ब में रहा एक स्वर व्याप्त
 सिंह सा जिसका पीर्य नाह ।
 ससामर रहा विजय साम्राज्य
 प्रस्त होता था जहाँ न सूर्य
 धाम युग जीवन के अनुकूल
 बन रहा वहाँ प्रगति का सूर्य ।

सत्य बनता रहता धन स्वप्न
 बहुबिक फह्यठा जय केतु -
 मुख के प्यसों सं जग धाज
 बनाते बन नव जीवन सेतु ।
 स्वाभिमानी निर्भय धरोज
 संतुलित सम्य सौम्य सविबेक
 बल संकल्प - न हृदय बिहीन
 धाज के बिम्ब युग के टेक !

धपक पीरप से यह लघु द्वीप
 बिम्ब मन पर रखता अधिकार
 शाति संयम से बहु पय दुर्म
 हस्त छकट क्षण करता पार ।
 प्रगति से परंपरा का मेत
 रहा धू का विकास इतिहास
 राज्य के साथ यहाँ जन तंस
 हो सका विकसित बिना प्रयास !

लोक पुजित स्वनिम मधु छत्र
 गुंजते जहाँ कर्म परिहास
 स्वर्ग मुब वर्षा धाम प्रशांत
 प्रकृति घोमा के मुग्ध विसास ।
 इच्छोदिस बॉयसट सित हॉर्बॉर्न
 पोषरा का रचते शृंगार,
 अपम धू पाठे ऐनिस उत्स
 पूम बासा करती धमिसार !

सिग्नु गामी प्रसिद्ध मह देव
 मिलाए बिचने बहु पू भाग
 विश्व को दिया महत् चाहित्य
 सम्मता संस्कृति का समुदाय !
 आज भी जिसकी भाषा जित
 जगों के उर पर करती राज
 संग्रहालय में जग के ज्ञान
 कसा वैभव के संचित साज !

यहाँ सामाजिक सेवा केन्द्र
 लोक हित का नित रखते ध्यान
 व्यक्ति को जन्म मृत्यु पर्यंत
 मिसे मुख सुविधा दुख से त्राण !
 प्रभावों की निरर्ण यत पूर्ति
 सतत श्रम बस स करते सोय
 खोल नित नव उर्वर उद्योग
 संगठित है सक्रिय सहयोग ।

गृहों सीधो का संयन पुन
 मोहते दृष्टि खुसे उद्योग
 यहाँ जीवन वैश्विय विशाल
 सौम्य मिश्रित जन सहृदय प्राण !
 प्रमथन गृह मह भीड़ा क्षेत्र
 कौमुदाय उत्सव स्वत रम्य
 व्यावसायिक जगती का केन्द्र
 बहुमुखी शोभाप्रद वैभव्य !

धने ही कज्जल का साकाल
 धुँए से रंगता हो पट बात
 गृहिन कज जापी मुख पर बात
 सुहावी मुख रश्मि स्मित प्रात !
 यहाँ भेते संसद में जन्म
 युगांतरकारी निर्भय मुँह -
 धांस जन बूट नीति में बस -
 विश्व रटना हन विरमय मह !

राजधानी यह जयत प्रसिद्ध
 पूर्ण अपने में नव ग्रह लोक
 भव्य मिरजों हर्म्यो की पाठि
 दृष्टि को लेटी बरबस रोक !
 देखने में छोटा यह द्वीप
 महत् इसका मासस वैतम्य
 लोकप्रिय शोक्सपियर को जन्म
 दिया जिसने उस भू को धर्म ।

यहाँ का जीवन गौरव देख
 सहज बगला मन में सम्मान
 हृदय में युग कवि के विश्वास
 सुर्सेने धागल समय धाङ्गान ।
 इन्हें संसद् पद्धति का ध्येय -
 प्रजा युग के हित जो बरबान
 इन्हीं का पा बैठन सपरक
 दुभा भारत का पुनस्तान !

देख पश्चिम की भ्रम तप कृति
 स्वर्ण भारत की धार्मिक याव
 ईश्वर बुद्ध कर्म का कर ध्यान
 बिरा कवि मन में मौन बिपाद !
 स्वर्ण को बना तरक का कुंड
 धर्म धार्मिकता का धर्मिमान
 बनाए जन को कर्म बिरक्त
 रिक्त मिटिजय धार्मिक ज्ञान !!

जहाँ भू जीवन प्रति धीरास्य
 मूर्त दारिद्र्य दुःख जन मोद,
 रंगता ममुज कीट सा तुच्छ
 धर्मिका का तम - धोर न छोर ।
 रुढ़ि हमि बर्बर रण समाज
 व्यक्ति बहुमत विधीर्ष निष्पाप -
 सोष पाया न क्षुब्ध मन धीर -
 सोबियत भू में पटुणा यात्र ।

मित्त भारत के सब भू क्षेत्र
 स्व का उनमें अपना स्थान
 वसित भू जम को जिसने धर्म्य
 स्वप्न जीवन का दिया महान् ।
 प्राप्त कर जन का निश्छिन्न स्नेह
 सहज भारत के प्रति सम्मान
 हृषा कवि का मन स्नेह कुटार्थ
 हृदय का कर प्रादान प्रदान ।

मध्य जाग्रत यह जन भू भाग
 धरा की भय समुद्र जन लक्षित
 महत् सामाजिकता का धंग
 यहाँ का जीवन सक्रिय व्यक्ति ।
 बुधित जापण पीड़न से मुक्त
 मनुजता पाठी युग धर्मियक्ति
 लोक मंसस सामूहिक ध्येय
 ध्येय के प्रति अखंड अनुरक्ति ।

बस दुई सामूहिक संकल्प
 प्रेरणा का अदम्य सित खोठ
 मनुज समता रस से धर्मियक्ति
 प्राण बस से जन खोठ प्रोठ ।
 पूष करते क्षय में युग कर्म
 सहसा कर पर मन समुक्त
 बना नारी का यहाँ स्वतंत्र
 लक्षित का महत् खोठ उन्मुक्त !

जठर रस से हो जन मन मुक्त
 कर मरु मित्त सांस्कृतिक विकास -
 हृदय में धार्मिक शौच्य
 प्राण में हो शैतन्य प्रकाश ।
 प्राण अतर्भव से न्यून्य
 मुदा मा अथ मनामय द्वार
 मनुज बस गता दनुज मा त्रिस
 धरा जीवन दुय कल्प भार ।

यहाँ सह कृपि से श्यामल खेठ
 प्ररोहित जलमुख जल मू शक्ति
 बृहत् सह उद्यागों का साम
 भोगते सम वितरण प्रिय व्यक्ति !
 सभी को स्वनिम प्रवसर प्राप्त
 करे निज क्षमता का उपयोग
 स्तूल श्रम प्रवधि यहाँ प्रब स्वस्य -
 कला संस्कृति साधक हों साथ !

स्वस्य शिष्यो का यह मू स्वर्ग
 वेद की जो भविष्य सपत्ति
 संगठित जहाँ धर्म मम कर्म
 दूट सकती क्या वहाँ विपत्ति ?
 दाति कामी यह जनप्रिय भूमि
 बृहत् हा रहा लोक निर्माण
 मिटा जन का दुःख दैन्य तमिस्र
 वे रही मू नव युग आह्वान !

धनक भौतिक साधन से सन्ध
 चेतना का हो रहा विकास
 मानना जड़ चेतन को शिल
 भेद मति का प्रम दृग्भाषास !
 रक्त बलि दे जन ने अथाव
 मिटाया मू से अत्याचार,
 प्रमि ज्वालाभा में कर स्नान
 हूनामा दीपन्यों का मार !

जगा हो जन समुद्र में हजार
 बुबा युग मू लट उमड़ी अति
 प्रसय मर्षों सं नव युग ज्योति
 बरा पर उतरी - ममता जाति !
 प्रबल का जन मन का आवेश
 निमित्त में बदल गया परिवर्त
 विपमता दैन्य दुःख तम भीर
 स्वर्ण स्पातर हृषा धनेप !

प्राप्त कर मर को भौतिक शक्ति
 सबस रचना साधन नव यंत्र
 विश्व जीवन का गढ़मा रूप
 मध्य रच वैज्ञानिक भू तंत !
 विविध भू भागों के अनुसूप
 पूर्ण होगा निश्चय सुप कार्य
 जार से घोषित था जम सिन्धु
 यहाँ थी रक्त शक्ति अनिवार्य !

मानसिक भौतिक या भूकंप
 रुद्ध अवचेतन पावक पूर -
 कष्ट भ्रम तप इम साध पुरत -
 कल्प परिवर्तन हस्ते कूर !
 व्येय वा निविल लोकगम श्रेय -
 बधिर कर्म सागर कर पार
 सौध विष्णो के श्रुम अमंध्य
 बिह्वता नव मानव परिवार !

प्रथम इसने ही स्फुटिक छोड़
 मूल्य उर का मापा विस्तार
 गुह्य नम के समुदा को जीत
 मील ग्रह पत्र का खाला द्वार !
 प्रतीक्षा में भू की शक्ति लोक
 धप्यरा लिए रहिम जय हार, -
 शिमाश्वों पर ले मुग अभियान
 धरा जीवन करता अभिमार !

संप्रदासय जम निशा केन्द्र
 जहाँ शक्ति युग भू इतिहास
 मूर्तों के बसन विभ्रपत्र रूप
 चित्र संपद उद्योग विकास !
 हर्मिटेन् सेनिम पाठ में मुख्य
 कला इति बाम्नु शिल्प का कोष
 प्रदत्त दे विम्बून कृतांत
 हर्मकों को देने मनीष !

कीब प्रिय माँस्को मेनिनशा
 नगर बर यहाँ अनेक प्रसिद्ध
 मातु नगरी नब निमित्त कीब
 नेपियर तट पर मुमय समूह ।
 अति का गङ्गा या मनिनशा
 कड़े कारों क हर्म्य अबाक
 राजधानी माँस्को प्रक्यात
 दुर्ग श्रेम्सिन जन भू पर धाक !

मान काने स्पष्टिकों का सोम्य
 यहाँ मेनिन का स्तूप पवित्र
 पारदर्शी बप्टन में भव्य
 सुरक्षित हाइ मास का चित्र ।
 मौह दुई मिश्र बन्ध संकल्प
 हृदय हो विपसित करुणा स्वर्ण
 धरा पर विचारा नब युग भूत
 दमित को करने मुक्त मर्ष्य ।

उमड़ रेड स्क्वायर मनाता हर्ष -
 नाति का जन्म दिवस त्योहार -
 परबती पर बापों स भूमि
 मास सेना में उठता ज्वार ।
 विश्व की एक महत्तम शक्ति
 सोशियल भू का यह जन राज
 धर्मित सामूहिक बल का सिम्बु
 धरा पर बग बिहीन समाज !

महत् पा वैज्ञानिक मग मिथि
 सर्वहित कर उसका उपयोग
 धाम हो ना पुर क समकल
 धर्म कर रहा बिघट्ट प्रयाग !
 बन्ध दुई जनगण मन संकल्प
 समुपग मनुष्यत्व का ध्येय
 सामूहिक रच जीवन प्रासा
 बने जन धन तंत्र परिवेय ।

भीत रश्म भीत धर्य जम प्राप्त
गम्भता निर पर विश्व विनाश
शाति रदाक होगा जन देश
हृदय में युग कवि के विश्वास !
शाति क बिना अधूरी शाति -
मिस मछे शक्ति सिद्धर भू भाग
छोबियत का भू प्रति सिद्ध वाय
दिखाए मद् बिनेक सत् त्याग ।

माक जीवन की माधी ज्योति
असहाय मात्र रश्म के पास
स्वस्थ स्वर्धा से हो अरिहार
साम्य का भू पर सम्य विकास !
वर्म मानव बुद्धि हो सीत
माक सागर उर में दिग् व्याप्त
शीघ्र प्रस्तर युग का पौरुष
वव बर्बर हो स्वत समाप्त ।

दख जनप्रिय वास्या की भूमि
गया कवि की धाया में भूम
कुबेरा का बह देश विनाश
हालतों की जिनक पर धूम !
गगन मेधी धट्टों की पक्ति
दर्शकों का रचनी धनिमय
ति भुवनां क बीमब से पूर्ण
स्वग थी सामा मुकुर धधेप ।

मम उगमुक्त हृदय क लाप
अतिवि जन का करते मत्कार
मम्यता मस्ति पर अनुरक्त
बिचारों क प्रति बिल उदार !
मुग्धि थी मुपमा प्रतिमा मुग्ध
अप्तरा करली यहाँ बिहार
बचनूतों का यह प्रिय देश
मार्गिता भीतर बिबक मगार !

घुमि कण कण में यहाँ घनत
 बिछा' बैभव उर्बर बिस्तार,
 बिघाता ने इसका निर्माण
 किया निज महिमा से साकार।
 सिखर हो पाटी मनी तड़ाग
 महान बन हों दिक् प्रयामस खेत
 प्रकृति धीरार्थ घरा ऐश्वर्य-
 यहाँ सब शक्ति सिद्धि समवेत !

निरख नैसर्गिक छटा बिपद्
 हृदय निस्तब्ध मिनिमिप वृष्टि
 छाँह गुफिष्ठ वन श्रुग प्रशङ्क
 धादि बिस्मय की करते सृष्टि।
 तरण भू का बहुमुख वैशिव्य
 तरंगित जल सा बल उमार
 देख स्वमित रहता धारण्य
 प्रकृति का अन्य भीम शृगार !

फूस ज्वालापी की बन काठि
 सँजोयी रंग मय सरद दिपंत
 ईद वन से धनिम्ब उद्यान
 सहस्रों हैंसते जहाँ बसंत !
 स्फटिक निर्मल नैसर्गिक सेतु,
 मुबार सरिता मरकठ जल तास
 ईदधनु बेणी बाधे मेष -
 दिना मुख थी पर मोहित काल !

बिपुस कृपि खनिज बग्य संपत्ति
 धमित बीबन सीप्यवन सिद्धि
 बुहव उद्योगा का मह देस
 उपसर्ती धरती धतुस समृद्धि !
 कुसम कर्मठ कीमस प्रिय व्यक्ति
 बिभव की हावी प्रतिपस वृष्टि
 मनुष्य तिमिठ स्वर्णों का स्वर्ग -
 बमलूत रहती मोहित दृष्टि !

साहसी घमरीकी निर्भीक
 मुक्त युग स्थिति प्रबुद्ध स्वच्छंद
 वायु जल स्थल वन कपित विरह
 गरजते सिन्धु म्योम निर्दुन्दु !
 मगर ढँके घटा के पुत्र
 स्वय स्पर्धी अलंघ्य सोपान -
 विपुल धौधौमिक बैभव सत्र
 कसा शिक्षा क केन्द्र प्रधान !

देव दुर्मम प्रभूत रस भाव
 रात्रि विद्युत् क्षुति क दिनमान
 बूमती जन चरनों को ऋद्धि
 निम्ब में करती शोभा स्नान !
 साधते यत्र मनुज का कार्य
 सीढ़ियाँ बरती स्वय प्रयाण
 कोटि मस्तिष्का से भी सूक्ष्म
 कुलस गणितज्ञ वस निष्पन्न !

गद्दी धारण्य यंत्र युग तंत्र
 बाध बिगू छोरों में गति सेतु
 प्रहा क प्रायण में भू पुत्र
 गाड़ने को अब निज जय केतु !
 अभी मह प्रथम चरण ही मात्र
 मूर्ति युग स्रष्टा अद् विज्ञान
 मनुज को साथ बियन इतिहास
 स्वर्ग का पासा नव बरदान !

व्यक्ति में यही प्रेरणा योन
 कम में सामूहिक उन्मेष
 सर्व बैभव साधन संपन्न
 शक्ति भू पर बोना ही देश !
 चन्द्र बल म जग पट बड़ नियम
 मायता मागर उर में उबार
 नियंत्रित करने ये भू भाग
 धरा जीवन का नव ध्यागाण !

परिस्थिति ! मकट स्थिति भी धोर -
 विपत्तों में अब उभय विभक्त
 बिस्व इसक घटकों से मय
 प्रलयकर हों वो इद्र समकठ !
 व्यक्तिगत हो सामूहिक मार्ग
 नहीं वह मानव जीवन ध्येय
 मनुज मूर्खों को कर स्वीकार
 उभय पथ से ही संपन्न भवे !

मए युग की हो वैभव तिदि
 घटा के धोर धोर में व्याप्त
 लोक बन हा संपन्न प्रबुद्ध -
 न बर्गों के उपवन पर्याप्त !
 सभी कुछ नहीं शुभकर धाय
 विश्व रस का सफ़्ता मू ध्वस
 जनों का रहना सत्रय सभत
 नष्ट हो जाय न मानव वक्र !

रोकती प्रकृति न धमुम असत्य
 धसत् मत् से वह परे, धनत
 बेतमा में पथराया धुष
 उठे जब निखरे मया दिगंत !
 धसत् ही महत् महत्तम सत्य
 धसत् पर सत् की जय धनिवार्य
 हिरण्यमा का यही विधान
 सत्य हित निखिल सृष्टि का कार्य !

व्यक्ति मन क समूह क मूल्य
 मिसोंने - पा यति प्रगति विकास
 मनुज युष ही दोनों का क्षेत्र
 मनुज जय परिधि - मत्य अधिवास !
 गड़े विज्ञान बाह्य युग पीठ
 तंस दे धम बस्त धम धाम
 सर्वोए मनुष्यत्व का स्वयं
 मनुज जतना निखर अधिपत !

देखता मनश्चक्षु से प्रेम -
 तद्विद् अमु स भी महत् सत्कृत
 ज्योति ध्यान प्रीति की शक्ति
 हो रही जन भू पर अभिव्यक्त !
 स्वर्ग स जिनके हृयोमत्त
 सिन्धु कर नाटि फणा में नृत्य
 आत्म मंचन शोभा पर मुग्ध
 नय्य मनि रत्नों स कृतकृत्य !

हृयम में छिपे शुभ्र मैत्राक
 क्षिप्रिज धूमिम मेघों का भीर
 उठाते धरा गर्भ मे भीम
 नील का मेह जाम गंभीर !
 मंघ से राम प्रहृषित बापु,
 भुग धरते बसंत गुजार
 कंठ में कोकिल के नव गीत
 विश्व श्री शोभा से साधार !

अगम से भू पर अंतर प्रेम
 जाति बर्गों क अघन धोम
 प्राण मन जीवन की उन्मुक्ति
 मनुज को मौप रहा धनमोल !
 शुभ्र गरिमा का शोभा बह
 कामना संसृजत धकनुप प्रीति -
 प्रतिष्ठित मन में अंत शान्ति
 मनुजता में सित स्वर्ग प्रतीति !

मोर मन नव प्रकाश में म्नाम
 मुपर भू रचना में धब गम
 उष्ण प्रेरणा गरिम से वीण
 हृदय गौण्ये बाध रग मम !
 मापता दगी भाव विमुग्ध
 उगहें धिज भू जीवन म मित्र
 मानन या मानम तेज्यवं
 न्य गुण चिति का कर विधिप्र !

शांति से प्रिय न जिन्हें धम थाति
 मूस्य से प्रिय न मूस्य की सुष्टि
 माम से गौण जिन्हें धिक् रूप
 सत्य जीवन से प्रिय सच् बुष्टि ।
 उन्हें धिक् जिन्हें न प्रिय संघर्ष
 राग मद डोप रोप स भीत
 विश्व रचना से विमुक्त विरक्त
 धारमहन जिन्हें पसामन भीत !

सुहावा जिन्हें मधुर ही स्वाप
 साक्षता धम्म लक्षण कट तिक्त
 धामते वे न विश्व वैधिल्य
 बैठना जिसस रस धर्मिपिक्त ।
 ध्यान कर रिक्त धारम भीतय
 विश्वमय की महिमा मे दूर
 शून्य रत वे - ईश्वर धिक् सिन्धु
 जगत जीवन जिसका प्रिय पूर !

देव भू जीवन का वैधिल्य
 हो उठी बाप्य सजस कवि बुष्टि
 प्रकृति सुमया मू-इमे मनुष्य
 बनाएया कब स्वर्गिक मूष्टि ।
 मनुष्य से पुषक परम भीतन्य
 नहीं भू पर भेठा धमठार
 कोटि कर पद जो मर्त्य धमर्त्य
 उठी पर क्रम विकास गति धार !

विश्व को होगा धम सयुक्त -
 मनुष्यता के हित उसे विश्वास
 योजनाएँ रचनीं बहुरूप
 क्रम परिमा में जीवन धाम ।
 सांस्कृतिक वैधिक भीतिक मूस्य
 समन्वित कर हर ईग्य विगार
 मूर्त कर धारमा का तेषधय
 संज्ञोना भू जीवन प्रामाद !

देव पश्चिम भू सौष्ठव पित
 हुआ कवि न मन में आभास—
 बहिर्मुख जीवन में जन मन
 न संतर्जित पर विश्वास !
 विश्व मंगल हित यह दुर्भाग्य
 कि पश्चिम बहिर्मुख में मीन
 भाव पीबी भारत जन भूमि
 वस्तु जीवन महत्व न हीन !

हाथ ठम का—भारत में रूप
 पसायन पाप पुष्प की भीति
 पारमौक्तिकता कर्म बिरक्ति
 संघ विश्वास बढ़ि जड़ रीति !
 सभ्य पश्चिम में स्थापित स्वार्थ
 अनास्था रण भव बन्दु संदिह
 शक्ति का मोह राष्ट्र का हर्ष
 बहिर्मुख भीतिव जाड़्य संदेह !

राष्ट्र जीवन का निर्मम प्रेम
 बन गया मन की मीमा घोरा
 विश्व मंगल का इनका स्वप्न
 बंग—जिसमें न प्रेरणा होर !
 कभी मञ्जित भी जैत भूमि
 सिन्धु जल संघम में अतमान
 दबा घब मनुष्यत्व का तत्व
 न्यून भीतिकता में निष्प्राण !

कसा दर्शन स अधिक महत्व
 जहाँ रगत मशम्र रख पात
 हृदय में हिता फिर आरुध्य
 मबाधा पर गाभा का रवान !
 स्वल्प ही संस्कृत मुग्धी समूह
 घनमिनन ईस्य प्रस्त प्रियमाण—
 मम्यता कब न उगत दे ध्वंस
 बरी कब उबामामुग्धी गमान !

दुःख से कैसे हो जन मुक्ति
 धर्म ने दिया त्याग विश्वास
 भूत जय से जूझा विश्वास
 परिस्थितियों का क्रिया विकास !
 उभय पक्ष ही एकांगी सत्य
 व्यक्त उनमें न समग्र प्रकाश
 मित्र जब तक न ज्ञान विज्ञान
 सम्मता का रे नियत बिनाश !

महता संग जो हा सौजन्य
 शक्तिमत्ता के संग कादम्ब
 विभव के संग जो प्राणिक न्याय
 न समय हत का भू तादम्ब !
 राष्ट्र के संग जो प्रिय हो विश्व
 सम्य परिष्कृत की भू हो धन्य -
 बुद्धि संग हो जो मञ्जु भाव
 बहिर्गम संग संतर्भूतय !

घरा जन में हो प्राणिक साम्य
 बुद्धि धर्मशास्त्रों का हो त्याग
 विश्व शासन हो जन संयुक्त
 नाति भू रचना प्रति धनुराग !
 विहित हो क्षुधा विज्ञा जल-वायु
 समन्वित सञ्चलत मनुज विचार, -
 न बदसे यदि संतर्भूतन्य
 मात्र से बाह्य संत उपचार !

मात्र मानवता रे धर्म देव
 धीर सब देव प्रयति पक्ष भेष
 निश्चित संस्कृतियों का नवनीत
 शुभ नव मनुष्यत्व का बोध !
 सम्मता को करना संघर्ष
 मित्र राष्ट्रों की रेखा स्तुत
 मर्षे जन गत इतिहास समुद्र
 शिष्टे नव मानवता का कूल !

किया पश्चिम जय ने ही प्रसन्न
 जमी कबि उर में गिरा 'गमीर—
 जाति कामी सिद्ध भारत वर्ष
 धर्मिणा प्रिय प्रबुद्ध तप धीर !
 किन्तु भू मन की प्रगति विकास
 विरोधों में गतिरुद्ध — विमक्त
 आक्रमण कर दे यदि जा शत्रु
 करेगा क्या भारत ? — निःशक्त !

सहेया भारत — अंत शक्त
 दिया मन ने उत्तर साबेस
 धारम रसा हित दुःख सकल्प
 एक हो युद्ध करेगा वेस !
 भगा बन पशुधों क मद्य इंद्र
 सीह क हाम पैर विकराल
 रक्त तृपिताघ धरा में घूम
 न ठेकेगा प्रमत्त बह ताल !

बीर भोग्या समुधा — यह सत्य
 बीरता के पर रूप अनेक
 धात्र जन मानस भू रण क्षेत्र
 विजय नित पाता जहाँ विवेक !
 राष्ट्र सेवा में धरा विदीप
 मनुज जग का हाना घब एक
 बहिमुख घाए मन में मध्य
 जनता का कर गिन अभिवेक !

रंगा समगिया कामा मम
 रक्त रोमी स रच जन मान
 गरजनी रही यही रण भूमि
 पहन पर परि मुँहों की मान !
 धात्र धनु धर्म्या स धर्मिभूत
 पशुगि का धारि नक्षि का र्व —
 गान्ता पुरप शानत्रम चक्षु
 बिनन धन तमम शक्ति मन् शप !

रक्त पचासन पर प्राचीन
 दिव्य मू घर फिर बड़ी बेस
 किरण के कर पद बड़ा सहस्र
 धम्मि बरसाएगी सोम्येय !
 सत्य हित होमा बह युग मुळ
 विश्व जन मंगल होमा ध्येय
 मनुष्यता के विकास का द्वार
 मुक्त कर देगी ज्ञाति धर्म्येय !

शक्ति का दर्प मनुष्य को हिल
 बनुष का बना रहा प्रतिरूप
 धर्म के लिए नख नर धाज
 खोदता निज जिनास का रूप !
 शक्ति मद हो जब युग का शाठ
 तुझे तब रचना दीप्त दिगंत
 जगत की भूत निशा का दीग्य
 हरे बेतना प्रभाठ तुरंत !

धर्म मय से जर्जर धर्म विश्व
 चाहिए देश एक स्थित प्रज्ञ
 लिए जो मरे सत्य के हेतु
 निश्चित जीवन हो जग हित मज्ज !
 लिए, ही जो ईश्वर के हेतु,
 धनास्था का जड़ तम कर बुर
 देह मज्ज से पर जो बिद् ज्योति
 हृदय म उमड़े उमका पूर !

मनुष्यता का से दिग् अभियान
 करे मुग अंतरिक्ष जा पार,
 ऊर्ध्व ज्योतिर्मंडल का बोध
 समाहित मू पर महज उतार,
 रहस्य धर्मम स संकेत
 धर्म - दे पुत्र मय्य संदेश
 धर्म बह धीतिष्ठता का ज्ञान
 धरे मू मन में नव उन्मेष !

मनुष्य को अज्ञित करनी प्राय
 घटा पर ईश्वरत्व की शक्ति,
 लोक अंतर्यम का निर्माण
 कर सने जो - संस्कृत हो अस्ति !
 बृहद् अणु वस हो रचनासीम
 संचारे बहिर्जगत का देश
 संबोए अंतर्यम का सत्य
 आत्म वस - भू हो स्वयं अज्ञेय !

सत्य ? ईश्वर ? - जगदों में बाध
 उन्हें विबुधों में बनना मूढ़ -
 न हो यदि ईश्वर पर विरासत
 (गुण अज्ञा आस्था अति मूढ़ !)
 लोक अंगस भू रचना शांति
 सत्य ईश्वर के युग प्रतिरूप
 इन्हीं मृत्या की रक्षा हेतु
 सचे भारत - सह अज्ञा अणु !

युद्ध यदि युग भू पर अनिर्धार्य
 मनुष्यता हित दे निर्र बसिदान
 अथ भू तम का मुद्य कर वीर्य
 करे भारत जन भू अस्थाय !
 हृदय लेमा दानव में जगम
 हिंस जन को बाधेमा प्रेम
 मत्प के हिन अर्पित कर रक्त
 अज्ञेमा भू का पाप क्षेम !

नाम क हिन हा जग में पात्र
 ईत्य पात्र अममे अानद
 नाम मे हा नूतन निर्माण -
 नूतन ही गित विनाम का अं -
 यत्र हो सामूहिक जन मृत्यु
 नवी भू निग्रहे नूतन स्वर्ग
 अंम नव जीवन का हा हा
 मिने मानवता में गत अगे !

मुठ यदि दुनिवार मुय सत्य -
 रक्त बह धोए धरा कर्मक
 बिसे नव जीवन शोभा पद्य
 जन्म दे नव युग को भू पक !
 हिस बड़ भीठिकता को बेठ
 ऊर्ध्वमुख पाना सौम्य विकास
 यही पन नियति सृष्टि का इयेय
 मृत्यु तम मे समुत्पत्त प्रकाश !

भागवत सत् पर ही विश्वास
 सोक मंगस की करता बुद्धि
 असत् दानवता की उपसब्धि
 मुझ सत् मामवता की सिद्धि !
 असत् से महत् सृजम रत सत्य
 प्रसिद् पर पित् की जय अनिचार्य
 तमस से कर्क प्रकाश की घोर
 सृष्टि जाए - बिधि से मिधर्मि !

सभ्य जय में धजित कर ज्ञान
 प्रीड़ कवि सौटा अपने देश
 मार्य में सुसोदय की भूमि
 प्रतीक्षा करती थी अनिमेष !
 बंपई घातप की मुडु बेह,
 मुके स्मित युग रुचि मडित केज
 यथ फूसो में लिपटे धंय
 सहज का सीस मुजर प्रिय वेज !

देव भू का अनिष्ट सौन्दर्य
 क्रिया कवि के मन ने स्वीकार
 सूर्य देवी की यह प्रिय भूमि
 धरा जन को स्वर्गिक उपहार !
 बुबा कर चार घास की बुँद
 मिम्बु बस करतम में साकार
 दिया जिसने द्वीपा को जन्म
 धरित्री को पहता मनि हार !

सूर्य पीत्रो का प्रिय नृप बंश
 स्वर्ग सी भू पर करता राज
 देवता की सेवा के नाश
 प्रजा बल उतरा देव समाज ।
 धर्मोक्ति थी शोभा का बेश
 श्रेष्ठ बल हा नभ सिद्ध भक्तुस,
 युक्ति बल स्वयं बेनी बस्त -
 तूमि चित्रित प्रिय मुक्त मृदु फूल ।

सहजा बर्षा से दिग् वाप्य
 सौमनस सुपमा का भू प्रांत -
 उच्च प्रयुक्ती का योरज गृह
 अकित करता वृष - भुभ्र प्रजाठ ।
 सेवा फूला क हंसमुख पर्व
 प्रकृति करती अत्रल अभिसार,
 काम सतिसा पर सतरंग छाँह
 बंध अपसक वन प्रिय गृहार ।

तने मृदु गद्य छेन अरुमाभ
 ये री पुष्पा के भुभ्र बितान -
 बैगनी फूर्सा की तर बेनि
 नीम युग आइरिस हरती ध्यान !
 तिहार बन भर खोती की भूमि
 घाटियाँ पाती कम कम गान
 घरा सौम्य स्वयं छवि मौर,
 मुड़ाती अंशमस्त्रिका प्राण ।

प्रकृति मृदु भाभा प्रेमी भाग -
 फूल का पागलपन प्रख्यात -
 बूर शोभा यावा क हेतु
 प्रकृति पूजक जात दिन रात !
 माधनी अल्पगियों सी बाद
 सुपर गैशार्दै उत्सव नृत्य
 मधुरिमा नीम स्नेह की भूमि
 अभिविषों का करती कुतकृत्य ।

बाटिकाघों म हो समवेत
 चाय सँग धारम शांति कर पात
 बुद्ध सीरो के प्रेमी भक्त
 प्रकृति शोभा का करते ध्यान !
 टोकियो राज्य मगर विख्यात
 बम्म से बका धनेको बार -
 हिबोभे सा भू को मू डाम
 सुसावा - बने नया ससार !

सरस कौसल प्रिय कमठ नम्र
 यहाँ मारी रग स्मित बेल
 स्नेह नय सहृदयता की मूर्ति
 मल्य विरहित जिनके मूठ कल !
 कर्मात्मक अमरत कर सुकुमार,
 सुदम सौन्दर्य बाधमम दुष्टि
 चित्त ही काव्य नृत्य हो मादम
 भाव बधि संस्कृत तमकी सृष्टि ।

किमोनो म चित्रित सी बाद
 यौवना अपक तन वन फूल
 कर्म उर्बर बिक् सुंदर भूमि -
 रीब इसक प्रति हो अनुकूल !
 प्रध भीतिच्छटा का उन्माध
 इन्हें दे पुन म सेनाबाध
 सनुसन बहिरतर का सौम्य
 सम्भता का सर्वोच्च प्रसाध !

स्मरण कर हिरोमिमा का काह
 हरा हो उठा ममुज का पाव
 पुरेया कब संस्कृति का मर्म
 कक्या कब उर रक्त साध ।
 पाव की त्मानि निगम कर धाज
 रब रहा मानव सर्व विनाश
 वीरता - धवक उडे भू सिध
 मृषा से डँकटा मुख धाकाज !

विश्व स्थिति से मन में प्रसन्न
 पहुँच फिर तपोभूमि में प्रेम
 गया बलिष्ण सागर के तीर
 खोजने जन भू योग क्षेम !
 प्रथम भी मित्रा उस सयोन -
 खोजने अंत सत्य प्रमाण
 गया कवि दिव्य प्रीति के द्वार
 ज्योति का पाने मन्त्र बरदान !

निमृत्त भाषम में धारम प्रजात
 योग रत्न से भी युत् धरनिन्व
 दिव्य मानस के स्वर्ण प्रतीक
 विश्व मन पर हों स्थित सित ईश !
 वहाँ देखा कवि ने दुग खोम
 मुझ अंतम्य सूर्य धातोक -
 प्राण जीवन मन से वह सूक्ष्म
 तप सस्कृत हो मन्त्र विश्व लोक !

बुद्धि भी कवि के ईश्वर दत्त
 उतर धाया उर में प्रजात -
 दुबा कर विश्व बाध का श्रुम -
 चेतना का मन्त्र स्वर्ण प्रभात !
 ज्ञान विज्ञान अरुण का सत्य
 म तप मेघा दर्शन से प्राप्त
 अनिर्बन्धीय तप का मुत्
 बुद्धि प्राप्ति सर्व में व्याप्त !

निर्विक्रम बोधा का अरुण बोध
 बिना जिससे जग भूत विनाग
 स्वर्ण मणि - उड़ जिसम अंतम्य
 ज्योति तम में पर स्वर्ण प्रकाश !
 अक्षय मय अरुण मित्र का गिष्णु
 व्यक्त हो गया म विगना अरुण
 मून देगा कवि ने वह मरुण
 सूक्ष्म अन्त में - मन्त्र गमर्ण !

पुष्प निरुपेत्तन स नम व्याप्त
 दिव्य प्रतिचेतन तप सोपान
 याग सक्रिय वा - विद्या निमूढ
 विश्व का अतर्पीय विधान !
 कोटि सूर्यो सा हा जागृतस्य
 ऊर्ध्व शिद् विद्युत्सोक विनाम -
 रहा आश्चर्य शक्ति ह्य वाक
 ज्योति तन्मय कवि उर कुछ काम !

विद्या कवि को विमूढ चित् तत्त्व
 सञ्चिदानंद प्रतिबन्धनीय
 प्रादि जो अत रूप का रूप
 मुञ्च सीवर्ण परम कमनीय !
 प्रीति धामद साति नीरंघ्र
 ज्योति रस थी कामा कर पाम
 जगा कवि उर में तव उमेप
 हुए विस्मय रोमाञ्चिण प्राप्त !

अगत जीवन में जो कुछ व्यक्त
 मात्र उसका धूमिल धामाद्य -
 शक्ति को होना वा अतर्पीण
 मनुज का करने ऊर्ध्व बिकास !
 जया जग भर में मुप्त प्रथोद्य
 विश्व जीवन का क्या शुभ ध्येय ?
 कोन सा युग बिकास का द्वार,
 निश्चिन्त मानवता हित क्या ध्येय ?

मिटा माघा क घण का चित्त
 मिथर छिर उठा ममामय सोक
 तीष जग में कर ज्योति म्नाम
 प्राय हा उठे कुठार्थ अमोक !
 इमा युग कवि का अतर्षित
 खेतना मामा में साकार,
 प्रेम का तद्गत पाषण्ड स्वर्ण
 शोभ देता मानवत क द्वार !

अर्थ वाञ्छित सामाजिक शास्त्र
 ज्ञान विज्ञान योद्धा का सार—
 समन्वय से वह उत्तम विपद्
 मूर्त था—प्रख्य अर्थ क पार ।
 नाद का था कवि को प्रबसंब—
 बेतना का पा अब नव लोक
 उठ रहे थे जब भू से पाँच
 सिमा उसको बाणी ने राक ।

बुध पचासन पर ध्यानस्व
 स्वर्ण प्रतिमा ने अपसक देख
 जगा कवि तंत्री में अकार
 बीच ही सम्मुख बाणी रेख ।
 हरित अक्षरी समाग अनिन्द
 प्राण पौवन स भरी अगत
 धरा फहरा बन सुरभि दुकूल
 खोल उर में सौन्दर्य दिगंत—

बिहँस बाणी—प्रकाश का वीर्य
 किते सौपोने कवि छविकार ?
 धरा ही की वह उर्बर यानि
 उगाने का जिसको अधिकार ।
 बिना धरणी का से आघार
 भूम्य में होगी ज्योति बिलीन—
 धोम से पिबस अग्नि क बीज
 प्रकाश बिरहित—होने बसहीन !

मरत्य दो उत्तमों का एकारण्य—
 प्रेम जिसका स्व रूप सित नाम
 दधर जड़ उधर बही धैर्य
 मूर्च्छि भेणी जिसका परिचाय ।
 धरा जीवन क अंधन शोन
 गयी बेतना करो संचार
 दना स गुमका बरम अनन
 स्वर्ण का सिमा अमर उगहार ।

छिपा या मू प्रार्थना में सूर्य
 फूटती स्वर्ण हरिष्ठ की ज्वाला
 बकित देखा कवि ने - मूर्ति
 बैठना का नीराजन नाम ।
 निरख मू का चैतन्य स्वरूप-
 बढ़ी मूर्त् प्रतिमा प्रति धनुरकित
 पुष्ट करता वा बह विज्ञान
 सक्रम बढ़ सत्ता सक्रिय सक्रित !

गद्य प्राही कवि मधुकर कर्म
 जयी हृत्तली में गुजार
 कल्पमा क फड़के सित पख
 बुना कवि ने मू मधु रस सार ।
 कला कवि प्रतिभा भयवत् वेग
 भूम बह लोभा उपवन फूस
 मोम सी भाव बुद्धि से मन्त्र
 रखा विच्छन्न लोक धनुकूल !

रूपहली की धायम में जाति
 सिम्धु ही निस्तरम गभीर
 धुनहमा प्रति मानस धामोक -
 ज्योति क हो सहस्र सित धीर -
 ब्याप्त वा धार पार, - मीरंघ
 संमटित वा जीवन चैतन्य
 लोटता प्राणों में धानंद
 धरा वा स्वर्ग स्पर्श की धम्य !

दिव्य प्राणों के स्वर्ण मरंद
 लिपट रोमांचित करते प्राण
 ज्योति निर्धर सी झर सित-धार
 प्रेरणा माठी मम में नाम ।
 बिबरती सुंदरता भी मूर्ति
 भूम बम जाते पद धू फूल
 प्रीति भी बाहर भीतर मुक्त -
 प्रीति मरिता मम सिम्धु धकूस !

धुन रहे वे सब शोभा मोक
 मनो नयनों में छवि अनिमेष
 भतना आभा से या पूर्ण
 स्वप्न सौरभ मधु का परिवेष्ट ।
 मिहुर उठता या मुञ्च स गुह्य
 तिगाओं में या स्वप्नित रक्त
 धनीकिक धार्क्यण या व्याप्त
 धभीप्ता प्राणा में धम्भक्त ।

शांति सी धनुषब करती शांति
 प्रीति की निस्वर चित् शंकार, —
 शुभ भतमुख मधि सोपान,
 विभ्य धारमा की हा सित द्वार ।
 ज्योति धानद मधुरिना पर्व
 मनाली प्रकृति भेद भय त्याग
 बरसती स्वमिक भूति धसीम
 समर्पण — धशामय धनुराग ।

पंख धाधम धवर में हीप्त
 धीपतिपरिक चित् सूर्य प्रकाश
 सम्मता क्या धब रितत धपूर्ण —
 दुधा कवि व मन म विस्मान !
 पड़े कर धौतिक धवर धम्भ
 धात्र परिधम जय में विज्ञान
 विभ्य धारिमिक आभा स शून्य
 हृदय स्वदन बिहीन दिव्याण ।

धिरम धाध्यारिमकता में मन्त्र
 धाम भारत में जीवन ईश्वर
 धधिर धौतिक धैभव में मत्त
 ध्रम धरिधम में दिगा धैम्य ।
 धमन्वित धैम रम धध्याधम
 धरु जीवन में कहे धिमास
 धुनियों व मन्त्र में शुभ
 धेवता करें धधिर निधाम !

व्यक्ति उन्नत मान प्राधार
 नहीं समझ जन मू उदार
 साक्षता बगी - भगवन् ज्योति
 घण पर हा हीने साकार !
 ऊँच जीवन - इमका क्या धय ?
 कहीं समदिक पद में धरराध ?
 जगा मयम कवि उर में तीष
 कमुप तम का हा क्या प्रतिमाध ?

व्यक्ति हा देह प्राण रज मुक्त
 घण पर माए ऊँच प्रकार -
 निद्र हा मक न पूर्व प्रयत्न
 पूर्व हा मका न मनोविकार !
 मस्यपन कहीं दृष्टि का दोष
 कडा मयवन् बीबग प्रति प्राणि
 जगत ही में ईश्वर का बाम
 प्रकृति पय ही में स्वप्नि शांति !

प्रकृति गुण हों भारत हित प्राप्त -
 कर्म यदि विधि पर प्राया काध -
 धुने महमा तम सीह कपाट
 हृदय में उठय स्वनिम बोध ! -
 दिवा धग जग में ईश्वर व्याप्त
 प्रोवना धा न उग पश्यत्र -
 नुत्र सबधा का कर मुद
 र्म को रचना का सवत !

ईश्वर के हित का धर्मिप्रेत
 का नित्र भारत की शुद्धि
 प्रति बने मनुत्र-उर मुक्त -
 मंगय में धी कवि बुद्धि !
 में वे कितने ही सिद्ध
 कर चुन बनाहव ताद
 हा मका न वहर्य नीस
 जन धरणा का न विपाद !

ही जब तक होना चरितार्थ
 का जग में मुक्त विकास
 पंशित भू पर बिप विकृत -
 संभव सित भगवत् उन्नास !
 ही स्वर्गिम सामूहिक द्वार
 केतना का सुरधनु स्मित सेतु,
 मुक्त उर नारी नर हों पार
 नीति का फहरा ऊर्ध्वग केतु !

ही सामूहिक भगवत् मार्ग
 का सित धादान प्रदान
 काम का मुब हो रश्मि प्रवीण
 भाव गुणित नर नारी भाव !
 ऊर्ध्व प्रेरित हों जीवन मूख्य
 प्रेम की हों सब जन संतान -
 माहिए जीव जगत् को धाव
 ज्ञान स धामोक्ति विज्ञान !

भावना ही वह स्वर्गिम रश्मि
 जनों को करती भयवत् मुक्त
 मनुज उर में ईश्वर का वास
 मनुज के प्रति हो उर उन्मुक्त !
 मदाजय हों व्यक्तिगत प्रयत्न
 स संघर्ष उनसे भू कल्याण
 पलायन मुक्त साव भू प्रीति
 करे जन घर स्वर्ग निर्माण !

मनुज मनु पर करना मदेह
 जगन्मिथ्या का हाना मान
 जीव को बहता धनुम स्वभाव
 धेद मदि का निर्मम ध्यान !
 गत्य ही बी के मला एव
 बही चर धरों का संत्यान
 मनुज निरधय ईश्वर का धन
 भणे जाने म मन्नाविज्ञान !

न बब तक मामाजिक परिवेश
 बनेया ईश्वर क अनुकूल -
 न होगा प्राण भुवन छवि दीप्त
 न हूँगे गत नैतिक कर्म ।
 जाति बर्णों में मूल्य विभक्त
 रहेंगे मनुज ऊँच या नीच
 मर्तों धर्मों में बग विदीण
 स्वाभगत स्पर्धाओं क बीच ।

न अप तप समय ज्ञान विराग
 मुक्ति या इष्ट मिट्टि क ठार
 राग चेतना बुद्धि ही पूज
 भागवत भक्ति मुक्ति का मार ।
 शांति सौन्दर्य प्रीति धानद
 धरा पर करें सतत धर्ममार
 राम हो मुज बुद्ध बा मुक्त
 हिरण्यारामा हो धी माकार ।

मंदिरों म बत प्रस्तर मूर्ति
 हा गया ईश्वर निष्प्रिय धाव
 नाम धास्वा का धध प्रतीक
 मंत्रधार्यों में छिप्र ममाव ।
 मनुज संबंधों में धर रूप
 दिव्य को करना भाव प्रथम
 हृदय ही उसक मुग्ध का धाम
 दुर्गों में उसका रूपोन्मग ।

काम बन मानवीय रम मुद्ध
 रच नब जामा का मसार
 प्राण मुख बीमब म महिमाध
 धरा जीवन का कर शृमार ।
 न धार्म्यारिभक सांस्कृतिक विकाम
 मनुज बग में मभव निर्बाध -
 तीर छी चुमे पूज छवि देह,
 प्रेम यदि रहे पुण्यप्रनु ध्याव !

खुशेरी यदि न काम की वधि
 रहेगी बुद्धि धूम धाञ्छम
 बन्ध नर दंग जाति कुस भक्त
 गेगा पहरिपु लह्य विपन्न !
 लोभ उन्मुक्त हृदय के द्वार
 प्रीति मोभा जग में बिस्तीण
 पित्त मानव आरधत मुख हर्ष
 धम्मि वीक्षा में हो उत्तीर्ण !

राम बेतना स्वग सिठ बह्नि
 मुद भववत् धानंर स्वस्य
 तपे इमम निघरे उर स्वर्ग
 मनुज हा ईश्वर के धनुदप !
 उर्ये पंतर्मुख बह प्रभु भक्ति
 बहिमुख जन भू बीजन वक्ति
 बरे भ प्राणा में चिन्मुक्त
 प्रेम को मिने पूर्ण धभिष्यक्ति !

मोच रजा धा प्रेम
 बीमे खुमे हृदय की वधि कठार
 गाहा उसने गुह्य
 प्राप्त भवन - त्रिमया धा धार म छोर !

धरवतन तम धंघ -
 पर तक उमजा करे न नर संस्कार,
 गय मविग प्रम ध्येव -
 नही करेदी मसुज बुद्धि स्वीकार !

रज राम ही बन भीरण धनु धम्म
 जन बीजन वा बग्ने का मगर
 धरा धानि तम भरना कर हंवार -
 गातो नर गामो निरुद उर द्वार !

न्यासि द्वार

- १ अतर्हिहास
- २ अंतर्हिरोष
- ३ सत्क्यन्ति

असर्विक्रम

सोमो बुद्धि कपाट
 सरस्वी ज्योतिर्घार
 जग ६ विकास क्रम क्षेत्र
 निराकार साकार
 हो पठ रस मृष्टि
 बहिर्बपठ व्यापार
 मू हो सस्कृति क्षेत्र
 स्वर्ग करे अधिसार !

निमृत् कौन बस रहा मनोभू पर
 स्वप्न सुमम बेतना सबग पम घर
 बोल सुमहमे मोपन बातामम
 बरसा रस लोभा प्रकाश निर्झर !

प्रतर्बिबम का स्वमिक प्सावन
 तन मम प्राणों को करता मञ्जित
 धारमा के प्रतर्मुख यौवन से
 हृद् तंत्री धानय छंद दंडित !

मुक्त प्रीति के सस्कृत स्वर्णों स
 स्वपिम संगति में बँधता जीवन
 नम मामक की अस्कृत भाषों से
 शरी गूँजता कसा निबिर प्रांगण !
 कुसते सिठ सावध्य सोक उर में
 नम भाषों का भर रस सम्मोहन
 उपचेतन इच्छा पावक में तप
 काचम बनता प्राणों का यौवन !

मयनों की भाँसम जम सगरी में
रुम चतना तिरती स्वप्नप्रम
मघ स्फुर फलों से मांसल तन
स्नेह मधुर वरमात उर शीरभ ।

गम चतना की मासा सपद्
नव घोषन उर में हाती जागृत
घननुभूत मौख्य बाध से बिर
जीवन मुक्त होना अभिनव भासित ।

उपा नाव साहित मुरवाला सी
मोहित मानस क्षितिजा पर घाटी
पद्मस्तुभों की धूपछाँड़ घाडे
मधु घमन घोषन वग मानी !

स्वप्न संजगित म तगते मुहु बन
मुन घत प्रेरित कम पिक बजन
कमिया की पर्यटिया रंग उठती
गध नदिर स्वर पी मधुकर गुजन ।

जल सगरी की हरीतिमा मपनी
मलयम ज्वाला सी जीवन मासम
भावा की कलिया उर में घपतक
पैमाली स्वप्ना के रत्नम दस ।

उम सम्भृति के नमन वासन की
परिभमा बगती पद्मस्तु छविउ
जाती चतना मन वा रम बीमब
जीवन मयम में हना मजिन ।

धीप्प तड़पता घनर्गमा वा
घान्त नाति मुन में करने मजिजउ
मपनी क उठ प्रपड घंघट
पन म मानम को कल्प बपिन ।

झींग क बन गा जगना घन मन
दल विप्लारा वा निदाप भीरम
वाँ पायला माग्बत गुन लम्प
बधत गुना म पागा क दण ।

पावस भरता रस उबर बनने
तड़ित् स्फुरण से होने उन्मत्त
भी सुपमा की रस फुहार बरसा
मरकट म पर विछने रूप हरित ।

इन्द्रधनुष प्रम स्वप्न मनु रथकर
मू जीवन हित बनने धारोहण
भाष बोध का बह्म ध्योम बोधो
पी खग स्वर म कह नब प्रणय बचन ।

स्निग्ध शरत् मुसकती धायन म
नित्र शशि मुख स उटा बाप्य गुठन
धूपछाह्म धौंस ली बह ज्योत्स्ना
हो घटर धामा प्रतीक शेतन ।

काँस फेन की फूल सत्र में जय
मव कम पंथ दुकूल धरे तन पर
कमल मुखी फेटी हस शीवा
बंचल बंचन चितवन स मन हर ।

हरसिगार लोभा पड़ती शर शर
स्वच्छ चतमा बर्षण स हरि सर,
कुद स्मित मासती मुहुल पुसकित
पत्र शानि तन थी शारद सुंदर ।

हिम धावी युग क पतझारों का
नम देह पंबर से सग्नाऽश्रुत
शिलिर सोटती धूम भरे मुख का
जीवन गरिमा से करने महित ।

कैस हा विवसन जन मन कानन
बिम्ब चतना थी में रिद मुहुलित
ग्रंथ कृहासों स धूमिल भाषी
जावन शामी धयु तुहित विवदित ।

मूने मामम विधी मुख मरसिज
दुसह बैम्य समीर मर्ष दशन
जी गेहूँ में रोम हरित जन मू
प्रीति स्वय बावती पाप्र मोचन ।

नव वसंत हेमता रस प्राप्य मे
धिर किञ्चन मन से अनंत यौवन
स्वनिम केसर की प्रसक्त मुख पर,
बनीमृत नीरम स विरचित तन ।

पाटल उवासाया क मुसने बन
मुद्ग प्रबान क्षितिज मरते मर्मर,
मध मरद प्रपित समीर प्रचम
नील रेसभी रश्मि छत्र चंबर !

काससई तूली स स्वर्ण किरण
क्षितिज करुणी गूह पथ पुर कानन
बहुरंगी छायाया म क्षिपटे
स्वय स्नात से मयत भु रज कण ।

गुप्त पड़ते कसियो के क्वारे भग
गुन मध मुञ्ज क र रज मध क्षय
ज्वाल पथ फूला मे क्षित उठती
धरा योनि की कासाये मारन !

महने हुमन पोसे चंपक बन
माते ताम्र क्षितिज पस्तक चंचल
जमी धाम मंजरियो रामाक्षित
उक्षित पलाश लिया क बिटमडल !

काशिम धामा का संदेन बेटी
धीर प्राप मन का क्षिपण महूर,
नीरम निम्बर रम तमय करुणी
छू पलाश की क्षपटों स धतर !

धिर यौवना प्रकृति के धर्मों ग
फट पड़ती नीम्बे काति नूतन
नव वसंत की धामा धग जय म
रज दृष्टि का मग्नी मम्माहन !

गूढ माण्डूकिर जाति हृद्य धीनर
चमकी शक्ता गिरिधर भु रम क्षिपण
नव प्रलाश के क्षरिता मुसने
चार विजय मे कर उर को क्षिपित !

रजत वीमनी अधिमग भृगों स
 शीघ्र प्रेरणाओं के शर निघंर,
 सूक्ष्म प्राण बीषाएँ संकल कर
 भरते अंतस् में स्वप्नित मर्मर !
 मुक्त युवक मुबती जन निज मन में
 गाइ एकटा का करते प्रभुभव
 देह भाव की रज को अतिरुम कर
 कृष्ण जगम सेता समग्र मानव !
 रहस्य सुरभि जाने किम सुमनों की
 अंतर मुबनों से उड़ कर आती
 प्रभुत बेतना के रस स्वप्नों से
 प्राणो को आसोकित कर जाती !
 विस्मित लमती पू प्रहसित अंबर
 रस शिथिलों में उड़ता प्रेरित मन
 अर्ध बोध से निबर जर्म स्त्री नर
 मुक्त भोगते आत्मा का मोहन !

विश्व भ्रमण से सीट अंत कवि ने
 देखा केन्द्र अधीष्ठा वा अनुक्षण
 अपसक जन मोहन पुसक स्मित सकु,
 हृदय प्रदीप सँजोए मीराजन !
 लक्ष ध्वनि से कर सित अधिवादत
 माया स्त्री नर ने स्वापव गायन
 कृसुमित बदनवारों से रज पय
 मंगल घट से सँजो खिबिर प्रापण !
 बुध हर्ष वह ध्वनित हुषा दिशि में
 मुक्त भावना पंखों पर उड़ कर
 अपने ही घर में अधिनंदित हो
 तीस संकुचित हुषा मुकवि अंतर !
 भाव सास्य कर नव मुबती जन से
 मुद्राओं के बधि आसिगन
 मृपुर ध्वनि संकल कर जीवन लण
 बंक भुबों के रने वीर्य तोरण !

मुबकां न बन मार्ग बीसि युग स्मित
युग कवि का सम्मान दिया मानत
कसा प्रमोदों भीरा नाक्यों स
सस्कृत युग नर का कर कर स्वागत ।

पुष्पहार मे छात्रा म कवि मे
हरि का पहनाया हुत उपहृत मम
उसे हृदय से मगा हृय विह्वल
स्नेह उच्छ्वमित बाप्य इवित मोचन ।

देखा हरि ने सिधु पार का कर
सोना सस्कृति पिक प्रबुड विवसित
अथ वृष्टि का स्वप्न विषय स्विति न
बस्तु बोध मे हुया नविन मदिन ।

बनी हरि का निष्ठम प्रम मिसन
हा पर्वध समामम युग काचित
मिने प्रेरणा कम भाव तमय
हुए बतना प्राण प्रीति अपित ।

हरि न तप से मुबका के भीतर
जन्म से रहा था मब मनामुबन
विश्व वाति का बीर मुगाध तमस
हमना हा चित् स्वजिम मब पुपय ।

देखा कवि ने मस्कृति मदिन में
तम प्रकाश ग्राबते बिगद जीवन
मूर्धम राग बतना तदप उर क
रम मूर्ध्या में भरती सवाजन ।

माबाईगा म मबनी हुसबन
मन का सबत मानन मवेदन
प्राणा न गोमा पावन में तप
घटने उर म अपटिन परिचयन ।

शाप घबनन नम न उर भुंगुम
रदन मुक्ति घनमव बरना उर मन
देर कामना बतनी स्वर्गोदम
महबीजन का पा मित घनगाजन ।

धनुषासन धनुषासन कहता हरि
धनुषासन ही जन भू का जीवन
धनुषासन की बख रश्मि से बिद्य
संभव सामूहिक जन संवर्धन !

उपचेतन छायाप्रम घाटी में
वहता मोहित सुपमा का प्सावन
प्रांथ मिथोनी खेल मुग्ध जगता
रश्मि प्रेरणाश्रावो में जीवन !

इंद्रिय द्वारों से घा जा बाहुर
मन सित जीवन मधु करता सचय
भू इच्छाघो का मुख वीपित कर
आत्मा के स्वगिक बर से प्रलय !

भावो की हीरक सरसी म तिर
संवेगों के हरित पुसिम धू कर
रखोन्मुक्ति में मञ्जित होता उर
धिन्गुह्यो के मुक्ता चुन भास्वर !

मनु का सुत बन आत्मा का मनसिज
मुक्त निश्चरता मानस रस ईश्वर
जग भू को कर जीवन भी उपहृण
भू रज में रत भू रज से ऊपर !

सिन्धु मत नृगे निश्चेतन के
हो उठते मय इच्छा स संवित
सित सामाजिक प्रीति सेतु बनकर
धंध वासना होती रस वीपित !

स्वसित प्रवालों के गिरि निचरों पर
इदनीम जन धामाएँ तिरछी
पीरोजी मरकठ तलहटियाँ में
मम स्पृहा की भदिर घटा फिरती !

निश्चतन उपचेतन धननों स
प्रतिचतन धाकाओं तक प्रसरित
मुलग रही थी पावक सागर सी
प्राण भूमि धानंद ज्वाह स्पष्टित !

कवि मानस चिह्नरों पर था उमड़ा
जा भड़ा धाम्ना प्रकाश का धन
मत्त रम छागधा में बहु भरता
क्या पीठ का कर मोमा बेतन !

कहता कवि मन ईश्वर का होना
भू सम्कृति में रम वैभव मूर्ति
निज मप्रिधि की चदन मौरम स
जग का कर पावनता में मग्निभत !

अह कवि क पड़ भू स्थितिमा क
निमम व्यवधानों का कर कुठित
मनुज लेख्य की मयस गरिमा स
जन मन का हाना धडा महित ।

विपर मानव मीय भू पर ईश्वर
दिनि धन हा चिन् सुपद् म कुमुमित
बुद्धि भावना धम नाम बहु पर
भू मानस में हा नव मयाजित ।

जावन भाभा हो नव प्रभु प्रतिमा
जन प्रायश्च वैशानय सडा स्मित
मानव हृदय मिसम ही तीर्षम्पस
भू मगस प्रति हा रति कृति धनिन !

ध्यात धाम्ना प्रवनि भावना म
मीमित हा क्या सजा का पूजन ?
भडा धनिन कृणार्थे न हा गकर्ना
पत्र पुण्य भव का प्रभु को धर्षण !

रचमा मजस धम न ही जन क
मजस जीवन मौर का धर्षण
जन मन की उन्नत धामाधा ही
प्रम पर पूजन की पवित्र माधन ।

निजन्त उर वैषट धनय निजधय
मग्न कृति ही धाम्ना मीगजन
धनिन मग की सग्न दः मरिह
जन जीवन गरिमा मौर दर्जन ।

नव संघों मूल्यों में विकसित
 प्रेम मूर्त होना प्रभु को भू पर
 ज्योति किरित्वा में धूम धतमूर्ख
 बने नाम साकार रूप नव घर !
 जीवन की रस संस्कृत श्री सुपमा
 सृजन प्राण ईश्वर को हो धर्मित
 जीवन मासत धनयव संपति ही
 धाराधन उपकरण भाव सुरमित !
 शिगम में तमम जीवन इच्छा
 ऊर्ध्व स्पर्श पा हो उठती ज्योतिष
 भेद वृद्धि प्रतक्ष्यति ही रे भव
 प्रेम सृष्टि मह, - पाप पुष्य विरहित !
 हुमा गूढ़ अनुभव कवि के उर में
 स्वर्ग छड हो संस्कृति केन्द्र सुखर
 मनोमुक्त नव - जगती में उसको
 मिसा न ऐसा भारीस्वर्ष धमर !
 एक सिग्धु निर्भर वा उतर रहा
 श्री मोमा रस स्वप्नों से मुबारित
 नहीं व्यक्ति हित समन सामूहिक
 रस धसीम सपद् करना सचित ।

फिर भी समता धरा स्वर्ग कवि को
 बन्म नहीं से सका प्रेम भू पर,
 जिस न पंक में सका ऊर्ध्व सरसित
 उमस गए निशि धमकों में बलि कर !
 नवस राम बेठना भाव नम में
 सुरधनु रस बीषव करती नितरित -
 प्राण कामना का पावक रखता
 उपबेधन धलिसों को समुच्छ्वसित ।

भूली मनोवृत्तों में युग द्वारा
 कवि की वृष्टि पर्ये बाहर पीतर,
 जीवन धाकाशा का बारि प्रसय
 सिए हुए या स्वर्ग बेठना बर !

कवि मानस त्रिखरों पर था उमड़ा
जा थड़ा भास्वा प्रकाश का मन
मन रस घाणमा में वह भरता
क्या पीठ का कर साभा बैठन !

कहता कवि मन ईश्वर को हागा
भू सम्भृति में रस वैभव मूर्तित
निद्र मन्त्रिधि की चदन शीरम से
जग का कर पावनता म मन्त्रित !

अह वृद्धि क अह भू स्थितिया के
निर्मम व्यक्थाना का कर सुठित
मनुष्य ऐक्य की मगम गरिमा म
उन मन को हागा थड़ा मन्त्रित !

विषर मानस संग भू पर ईश्वर
दिशि धरा हा चिन् सपद् में कुसुमित
बद्धि भावना धर्म काम इह पर
भू मानस में ही सब संवाञ्जित !

जीवन शान्ता ही नभ प्रभु प्रतिमा
उन शान्त ब्रह्मण्य थड़ा स्मित
मानस हृदय मितन ही तीर्थस्थल
भू ममम प्रति हा रति वृत्ति धरिण !

ध्यान धारणा प्रणति भावना म
मीमित ही क्या स्पष्टा का पूजन ?
थड़ा भक्ति कृतार्थ न हा मकती
पद्म पुण्य भर कर प्रभु की धरिण !

रचना मगम मम म ही जन क
ममम जीवन शीघ्र का धरिण
जन मन की उपन धारणा ही
प्रथ पर पूजन का पवित्र माधन !

निश्चय उर मीरध धरिण निश्चय
ममम कृति ही धरिण मीरधन
धरिण मम की स्थल्य दन धरिण
जन जीवन गरिमा शीघ्र धरिण !

मय संवर्धों मूर्त्तों में विकसित
 प्रेम मूर्त्त होना प्रभु को भू पर,
 ज्योति किरणों में बुल प्रतर्मुख
 बने नाम साकार रूप मय घर।
 जीवन की रस संस्कृत श्री सुपमा
 सृजन प्राण ईश्वर को हो धपित
 यौवन मासल प्रलय सगति ही
 धाराघन उपकरण भाव सुरभित।
 बिगमय में तन्मय जीवन इच्छा
 ऊर्ध्व स्पर्श पा हो उठती ज्योति
 नेद बुद्धि प्रतर्भ्युति ही रे प्रव
 प्रेम सृष्टि मह, - पाप पुण्य निरहित।
 हुधा मूक धनुमय कवि के उर में
 स्वर्ग बंद हो संस्कृति केन्द्र सुषर,
 मनोमुक्त मय - जगती में उसको
 मिला न ऐसा भावैश्वर्य धर।
 एक सिन्धु निर्झर था उठर रहा
 श्री शोभा रस स्वप्नों से मुबारित
 नहीं व्यक्ति हित संभव सामूहिक
 रस धसीम सपद् करमा संचित।
 फिर भी सपटा घट स्वर्ग कवि को
 जग मही ले चका प्रेम भू पर
 खिल न वंश में सका ऊर्ध्व सरसिज
 उलझ गए मिति धसकों में धति कर।
 नवल राम बैठना भाव नभ में
 सुरधनु रस बैभव करती बितरित -
 प्राण काममा का पावक रखता
 उपबेधन ससितों को समुच्छ्वसित।

भूमी मनादुयों में युग जामा
 कवि की बुद्धि यई बाहर भीतर,
 जीवन धाकासा का बारि प्रलय
 लिए हुए वा स्वर्ग चतना कर।

नव बसंत क श्रीका उपवन मे
मौन्दर्योत्सव मना रहे थे जन
रूप रम मधु रसमय विश्व प्रकृति
धामधन वती मन को प्रतिभजन !

खाल पस्तबा के नव बातायन
उपा दिवाती शीम मलय धानम
पावक कितियों से मर रजठ निरण
घोती जन रज पावन मू प्रांमन !

रम शिवा कृमों के शीप जसा
उपधेतन का बाभी दे बुसुमित
पर्व मनाता जन मू का यौवन
रज के तम को कर विगंत शीपित !

सुदरता - गाते फूलों के क्षण
सुदरता ही धरती का जीवन
सुदरता ! - मू का मुख निर्गुण नम
मुग्ध देखता धपन्नक मीम नयन !

मुक्त समीरम कहता कोंप पर धर -
महानंद ही धारमा का यौवन
स्नेह श्याम मा मिपट चराचर म
करता ध पर उर मौरम बरंन !

वा उठता पिक घत मुख विम्भुत
गंध स्फुरण पा भरने धमि पुजन
जाने कैंती रज्जु बृष्टि हाती
रम तमय हा उठन जीवन क्षण !

जाने शिठने धगाछीह चित्रिन
बंघों में उड मधु धरन पाता
प्राचा का धानद मुग्ध रम पत
शत कंठों से बसन्त धरमाता !

प्योति प्रीति मोन्दय मधुग्मा मिग
मू पर मुग्ध मनाने म्बर्षोन्गव
जीवन रंग धनि मधु परिमल मे
म्बुन दंशिया में धर मुग्ध विभव !

शोभा की प्वासा संसृति से छु
जम भू का हिम जलर बड़ खँबहर
प्रगणित मासल रंगा से भरती
नव बसत भतना छरा पंजर ।

अपम सगोबर जल से उठ ऊपर
भ्रत स्मित खिसते अपमक पुष्कर
मूम अचेतन बड़ कवम म रत
दिव प्रवास में नीन मकल भतर ।

मव ससृति संवेतबाहू बन कर
भुबक भुबति जन गाँवा में बाते
मव युग का अमिमान कुटीरों में
कर्म बचन तम मन में पहुँचाते ।

मानवता के दूत बना म भूम
भू मन की रचना करते नूतन
बीज स्वच्छता का बी जन भू में
शोभा का स्वर्णकुर कर रोपण ।

मनुज प्रेम में बाँध साक मन को
बैग्य निराशा का हूर दाबन तम
सोक प्रेरणा की किरणें बरसा
प्रोत्साहित करत सामूहिक धम ।

सदृश स्वच्छ थी रुदर हा धुतम
जीवन मूर्खों पर देते वे बल
धम की मति सय में निमित्त हो मन
जीवन रचना धम ही में संकल्प ।

जाग रहा था शनै रज जन मन
ग्राम छरा का होगा स्पांतर
जन्म भरोत से जूझ अचक अभिरत
अमितक कर पाता भू मन में घर ।

अरुम कम पदम कदम म निष्क्रिय
बड़ि रीति इमि से भू मम जर्जर—
भाव भूमि नव देनी थी जन का
विधि निषेध तम निवधि नरक भय हर ।

जाति वर्ण प्रेतों से जन पीड़ित
 गत आदर्शों मानों से नाशित,
 थी समग्र जनता नव मानव को
 बड़ उर में ही पुन एक स्थापित ।
 पक्ष नर हो न सका था परिभाषित
 सभी प्रेम का हृदय उठ भू हित
 काम तप्त बन्दु स्वार्थ सिप्त जन मन
 जामा भू पर भीत असंगठित ।
 गत भू जीवन बूत व्यक्ति केन्द्रिक
 नव विकास क्रम में हुआ बिपटित
 राय द्वेष स्पर्धा पर निम्ना रत
 जाति बंध कुम परिजन में सीमित ।
 प्राति मुक्ति के साथ द्वेष फूटा
 दुराचार को करना उन्मत्तित
 पूज प्रसूदित हा न प्रीति जब तक
 नैतिक सभ्य अपरिहार्य निरिचत ।
 सप्त धागल ललितवाम खेत पशु हम
 नाथ जीव मह लड़े पुर, पर
 निग्रह रहा था धीरे नव मानव
 निकल धरौदा बिबरी में बाहर ।
 कमा निबिह का घन मुरमित धम
 नव जीवन में जाता थी कुमुदित
 मानव गरिमा के प्रतीक लपने
 गाँवा न स्त्री मर जामा मस्तुन ।

हाट मयी हा गया प्रजात तम में
 हा बदी में थे जमान भाषित
 गत मध्य के प्रति जीवन धर्षित
 प्राधान मर में इन धरें शक्ति ।

मर के धामन में हृदय बुद्धि
 दस्य विवादा में थे उन शक्ति
 ज्ञानि तर्कित न जति पात म इन
 धरा धनना मर थे धामनित ।

बृहत्तुमति प्रामीणा क मन में
घघक रहा था गुप्त विराघानस
कसा सिविर सीपठक प्रति स्पर्धा रन
फैलाते जन मन में घृणा गरम !

हीन भावना पीडित नव शिक्षित
धना द्वेष विष दंजन म कुठिन
स्वप्न पसायन कहते मन्कृति को
भीतिक बँधक मद से भाकपित !

परपरा प्रिय बृद्ध मौन रहते
मह जीवन के प्रति मन म शक्ति
भोगी कामी रिक्त हाथ मकते
कीड़ा कंदुक नारी जिनके हित !

दधिक बहिर्जीवन गति का पूजन
जड़ यथार्थ हैसता धबहमा कर
धतर्जीवन चिन् बँधक न प्रति
जायत् घा न घरा जन का धतर !

ममज्ञ न पाते कसा पीठ भाकय
मधु साधारणता में खाए जन
जनरक फँसा माघा न धनुकर
माय उगमते कवि के प्रति अनुक्षण !

द्वेष लक्ष कुठित यकको का मन
घात्म रिक्त थे प्रीड़ पराधित पण
घहृम्मस्य पाममपत क पूजन -
विश्व ह्रास विघटन का था युग रन !

कहते संकृति दूत नम्र स्वर में
द्वेष प्रम ही का निग् भ्रात चरम
छोडो घृणा विरोध - निशा का पथ
करा ज्योति रन का अधिपेक ग्रहण !

हम जन-भू प्रेमी मानक सहषर
जीवन क्षासा सिल्पी थडामय
घात्म प्रकृति पर चिजयी हा जन को
विश्व विद्वतिया पर भी पानी जम !

उच्च परात्म पर भक्तवर्षित
कमा तिरिचिर का जीवन रस-संस्कृत -
सोय प्रेरणा ग्रहण करें उल्लेख
छग स्वर्ग पग में बहु ज्योति गठिन !

दुःख भङ्गा स्पर्शा स उठ जन
नव प्रकाश का कर प्रथम धावाहन
छोड़ें एकापी भीतिक धाग्रह
पद्य ऊर्ध्व में भर नव संवोजन !

ग्राम नहीं हा नमरो से दूषित
जीवन रचना हो घंठ संस्कृत
भीतिक विभव शिमा पर हो स्थापित
मानव धात्मा मौघ स्वर्ग बुधित !

ग्रामो बुद्धि पद्य पट रुचि निमंम
छाड़ो वस्तु विभव मद स्थिति पुञ्जिन
कवि मे लो स्वर्णिम रम प्रमूठ कसज
नव धात्वा को कर जन मन धपिन !

नीप्रदाव मत धर्म न यह दर्शन
स्वप्न सत्य बनता जाता नृजन
पधुन पग धरता मानव ईश्वर
मून बन रहा हा धर्मूर्त प्रतिक्षण !

ज्योति एतज हो मिमा तुम्हें गोपन
जन भू मान करो धा निर्देजन
घटक एहा यदि प्रधकार में मन
कवि प्रकाश में छाया उर मोचन !

पद्यकार ही पद्यकार दुर्धम
भेद बुद्धि तम की ही धरि पात्रन
जो प्रकाश का भाष म देने जन
पद्य कय ही बना रहेगा मन !

विद्युत ज्ञान व कर्म भागर मे
दृष्टिमा मा गेमा जन जीवन
लक्षण कट विष्णु गी धाहा मति
पूजा इव व लेगी विव रजन !

व्योतिबाह बनना प्रबिरत जसगा
इष्ट व्योति को पूर्ण समर्पण निव
कवि की हृदय सिखा से निज मन को
रस शोभा में करो स्वप्न दीपित !

इस प्रकार के भू जीवन प्रेमी
जन भू मन को करते संबोधित
सूक्ष्म चेतना के बहु पक्षों को
मात्र धींचियों में कर उद्घाटित !
प्रास्था प्राप्त धनेकों सरस हृदय
नम्य प्रेरणा किरणें कर संश्लिष
भूषा द्वेष कस्मप से रुद्र बाहर
नभ भू रचना प्रति होते प्रेरित !
भक्त संस्कृति के स्वप्न सैंजो उर में
सुख अहंता से कर संवर्षण
भू रज को शोभा उर्बर करने
जीवन का सिद्ध भक्त करते धर्षण !
उच्च अरातस पर रस मगत के
भुज संघटित कर के निज तन मन
भुज कर्म संस्कृत भक्त जल से धो
प्रसाद चित् संपद् करते बितरण !
रचना उर्ध्वों के पाषक से
मनस्वर्ष करते भू पर निर्मित
दीप्त चेतना नम में रोहण कर
मात्र विषय मन में भर रस संस्कृत !
शक्तियों से जीवन कुटिल स्तीजन
मर्म उष्णता का कटती धनुषय
अरु तिल्लियों की प्रिय बाणी में
मिसता उनको सत्य स्पर्ष धमिनक !
काम दग्ध जग जीवन के मह म
बातक मी प्यासी भुजजस मुख हित
स्वाति चेतनाभ्रुव पीकर, उर में
भरवा रुद्र प्रहृष श्रोत रस सिद्ध !

रुढ़ि प्रसूत भय कलमप गढ़ गत मन
 स्वस्थ बात पा रस चिठि का पीतर
 मुलग उठा नव लोमा सपटों में
 ऊर्ध्व धमीप्या क नम को छुकर !
 रोड़ हीन रेगा करती रख म
 जीवन भाकाया सहसा जम कर
 नव प्रतीति के शुभ पंथ पटका
 उड़ी भावना का पा श्रुत संबर !
 नव जीवम लामा गरिमा का जम
 मनोदुर्गों म हुमा मीन जापुन
 बह बोध की धूस झाड़ मम से
 प्राणो में रम छर हुमा शक्य !
 जीवम मूहिनी ने मानव धू पर
 मयी दृष्टि डाली जम प्रीति इबित
 उपपत्ता का जग रम उपहृत हा
 नव मुय म हा उठा भाव मुकुनित !
 प्रत पुर म वीठ जाति बुपक
 बरमाती जापूति बिनगी प्रतिक्षप
 गम खेतना की सित ज्वाला में
 काम द्वेष कलमप बमने ईधन !

विम्बून जम पब निमि विपुहोपित
 पुग बाटिकारै, बिहार पुष्कर
 उन्नत बिषा मदिर छप मबम
 नगरा मे मगने जतपर मुदर !
 पतिम मे मगम गम्य से जन
 का दृष्टि बह उद्योग पत्र विक्रान्त -
 मध्य बर्ग की गार्ध कुठा में
 धम मुग्ध जन जावन धर पीठिन !
 मोवित पश्चिमत या धाकापह
 मम रिवाग पउति पर धाशास्त्रि
 धावित धानि मपण म धी माधन
 धू का होना या धन मग्य !

मही दिशाई दता बनगम में
मनुष्यत्व का थी मय सर्वर्षन
एकांगी ममदिग् भौतिक जीवन
मनुज उत्तमन पय हित वा बधन ।

बाह्य धर्य जीवन रचना के संघ
धर्य रचना हानी को निश्चित
भू प्रतर्षीपित हो रस संस्कृत
केन्द्र इन्ही ध्येयो से वा प्रेरित ।

सुजन कर्म सहृदयता स्नेह प्रमित
सुंदर स्वच्छ मरस हो भू जीवन
ऊर्ध्व ज्योति सौन्दर्य प्रीति वाहक
धर्यर्षधर्य प्रेमी हो जन मन ।

मय सहस्य रतिर्षों के दुःखन सा
मास्त्रन रस धानंद स्वर्ग पुसकित
मूर्धन्य प्रेरणा से धर हृदय गुहा
धारमा क धरमो में हो जायुव ।

मामूहिक भौतिक विकास तम पर
शिक्षित बाह्यता वा करना स्थापित
स्फटिक सीध नव मानव ससृति का
स्वर्णिम चित् किरणों से भातोक्ति ।

साध्य मही वा बाह्य यत्न स ही
स्वर्ष पीठ भू पर करनी निमित्त
हृच्छ धातरिक माधन तप से भी
मूजन जाति से रही धरा बधित ।

बहिरतर गतिर्षा संयोजित कर
बड़ सक्तता मानव जीवन का रज -
केतन धरिबधित धर्य मूच्छकट जड़
मारुचि मित रस ज्योति विपुल भू पय ।

मानव को धर्य निज प्रबुद्ध कर में
प्रगति रश्मि से करनी सञ्चामिन
जटिल विकास सरुचि भू जीवन की -
ममत्त को कर ऊर्ध्व धार प्रेरित ।

मारों के संसृष्ट श्रुत पावक मे
गठ पाहन मन को करना विमलित
बहिरंगत सब से मूर्च्छित जन का
प्रतर्जीवन के प्रति कर जीवित !

पषत बाधार्थ सम्मुख दुबह
नब के प्रति जनना नहीं आगुत
बहिरंगत दुर्मध्य वैभ्य दुख तम
घह कूप में जन जीवन मीमित !

घतरेष्टा पा युग कवि का मन
द्वय रहा का बहु भाषी धानन
मन स्वयं उमदा - म उसे सद्यम
कम का जीवन बस्तु सत्य नूतन !

जन जीवन के बहुमुख पक्षों को
छात्र भंजान सब चिन् स्पष्टों से
नब प्रकार म उम्मेपित कर मन
घनुप्राणित हा नब पादनों से !

बीच कृत के जाने किस युग म
प्रानितिहास करी म सपुत्रिन
हृमा मगटिन मानव प्रबधेतन
निर्मम प्रतिबिधायमा से निमित्त !

घध ऊर्ध्व मानव मन के स्तर हू
दृष्टि घध होता का कर ग्यातित
कटु नुक्तग र्द्व्यानु भीरु पशु का
मनुज बनाना का कर मम मन्कृत !

जन घग्नी के चार छार का तम
पादेगा उडवा मे मबिन
शमा पीरिन या विरग्न नापर
ग्यानि गेनु नब करना या बिरबिन !

जानि बम कृत के मन्कृत को
नब जीवन छाम्पा में कर बिक्रमित
राद बगोना ग उबार जन का
मानवता में बनना या नूटिन !

भू पर वा सक्रमि काम भीषण
 बैठे जाते रोको के जन मन
 धकुमाते नर बदी धनु दामक
 भरता मन ही मन बिनाम गर्जन !
 रिक्त मठों बड़ जीवन मूस्यों में
 पयरा से से गए नामरिज जन
 राजनयिक प्राणिक पद्धतियो के
 पाटों में पिसठा हू जन जीवन !
 गोपन धातका भी जन मन म
 धरि न धाक्रमण कर दे फिर भू पर
 धंठरीष्ट्रिय स्थिति का भी जनरक
 धादोलित रकता उनका धंठर !
 बुद्धि प्राण नामरिज मुड दपित
 गत जीवन बोधो से जन पीकित -
 कला मनोरथि सुवण्या मधिरा
 भू बिकास गति क्रम से उच्छेदित !
 धंठर धास्था पन से भू मन मे
 ज्योति नीव नब करनी भी स्थापित
 नयी बुष्टि दे जीवन प्रति जन को
 सुभ्र बेतना रस से धनुप्राणित !
 जन धार्मा में उग भू जीवन की
 स्वर्न हरिठ बेतना प्रीति संस्कर
 सुभ्र बुद्धि तम से कबमित मन को
 करे हृयम की प्रतिद्विति में निमित !

बासठी सौन्दर्य पर्व में कवि
 नब रघ मूस्यों को करता बितरित
 जीवन होमा बिकसित प्राणम को
 रग बेतना से कर सित सुरमित !
 होमा सज्जा में धपित स्त्री नर
 नब बसत थी का कर धभिनंदन
 मीठ लुरय रघ भाव व्यजना से
 सृजन बेतना का करते धजन !

साक नृत्य गीतों का रस उत्सव
जन संस्कृति में भरते वे मधु स्वर,
मुग्धरित कर जन मृ शाना का मुख
धरती या उठनी उनके भीतर !

हाव भाव नय धमधम संवति में
जीवन भाषा हाथी रम कुमुदित,
उपचलन पावक मपटा स वे
गहरे रगा में नगते चाभित !

जीवन महार जीवन महारा से
टकराती हा हृषं उबार मग्धित
युवन युवनिजन भाषा की लय में
तन्मय हान प्राण स्वर्ण प्रेरित !

गौरव म पुनती विपती सौरभ
उर स मिस उर हाठ मुग्ध पुनक्ति
गुनते थी सुपमा वे धमगित स्तर
मधु धारमा हाथी विगत मुकुदित !

नयना क स्मित नील मुग्ध नभ से
उड़ता मन कीना स्वप्ना के बर,
धारमा का मुग्ध छूना धारमा को
स्वर्ण विभव में प्राण गुहा को भर !

दह प्राण क मुनन पट पर पट
धनर मुचनना में कर मन राहुण
रग मित धाषा मग्धी में करला
चिन् शाषा मतिना में धवगाहन !

स्वप्ना की मुरधनु मग्धु हैमना
मनादुगा का कर मौर्ये चरित
भाष मनु पर धन शिडिवा के
गुर बागा धानी नृपुत्र गहन !

मानव निश्चय पर मर एमि विभव
मार्गि करला प्रजा क गावन
तम धरार क भू विराग रण म
रिश्ये ग्नादि की कर निश्चर धारण !

धर्म काम के उमड़ तूपातुर धन
 धरा उदर में करते संवर्षण
 सुजन कर्म - सामूहिक जीवन का
 विश्व साति हित करता धानाहम !
 उठता चिति मुझ से भू छाया पट
 मन के धंधे स्वस कर धामोक्ति
 धर्म मानसिकता से जय मानव
 धरा स्वर्ग भूव तक मपटा विस्तृत ।
 टैंक रुझिया का कूबड़ भू पर
 ऊर्ध्व रोड़ बसता बह धतस्थित
 गत जीवन के वीरूपम से कड़
 वेह भाव तज धारम बोध बीपित !
 युवति युवक रस स्मित नक्षत्रों से
 जीवन शोभा सरसी में बिम्बित
 धारम मल तिरछे सित संयम से
 धर्मों की इच्छा को कर सासित !
 रचनात्मक बन रग समयन से
 सुजन प्रेरणा में होता सञ्चित
 प्रीति सर्व गत सामूहिक रस बन
 भाव मुक्त धन छिरती प्रकृतकित ।
 मुक्त प्रेम की नीव ज्ञान गहरी
 भू जीवन प्रासाद स्वर्ग बुद्धि
 स्थापित करने को धातुर वा कवि
 मुझ रस कसल धर, - बन मयम हित !

देखें कवि ने युवति युवक प्रमुदित
 श्रीड़ा बन धंसन में एकलित
 रूप रग मय शक्तिर बेसों में
 एक रग के स्वर से मय शकृत !
 हलके गहरे रगा की मीठी
 मधु मधु बीभब को करती सञ्चित
 फूलों से मुडु धर्मों में धर्मदा
 धरा बतना लपती कि शोभित !

बटकीसे रंग में भूविठ हरिण
हीरक कनियों से हस्ता लोचन
कूम धँसुरी हवा पुनाबी पट
समज उत्तरा के विमोहते मन !

स्वग काँठि रम स्वर्न कमला सेकर
स्वचिम स्मिति किरचे बरमा भू पर
स्वज डार कामती स्वग शोभा
स्वर्न प्रमक से मुख दिवसा सुदर !

रगा बी छी छापाएँ चम फिर
धी सुपमा का रखती सम्मोहन
प्रम जग को कर छवि रहस्य यदित
गणि किरणा का घर मुख पर बुटन !

मग्यमम माग्य ज्वाला में मिपटी
पनाबी पुवती बी जीवन प्रिय
रवत पीर पावक मुभाब सी स्मित
स्नेह मुपर नीन्दर्न गिषा सक्रिय !

जल उम्भर रत कमठ मिसन कुशम
सकट प्रविचन पप करनी निर्मित
उप्राबी कामनी दुसुमी पर
पृम्प योयना पर पबने निश्चिन !

रूप मदिना गजम्भान बहु
धाभिजाग्य परिमा से मुग मदित
प्रीति वना म्दु स्मिता बीजि मदिना
गारी मोरी मन्त्री चित्रानिन !

नीये चुनर बी गामा महरी
मरयम उर गगनी पावय मुपरिन
पीन बेगरी गुनी धनधानी
मिदित कर छाया में परिधानिन !

प्रीति शाय जाधा नर रम मगहन
जम बिष्मा मा स्नेह निगय चिनयन
बस पुबनिवी बी कर कगा चुनन
चार योयना धरिग जीवन मन !

धीस मूर्ति लबे लहरे कुटम
स्वर्ण पंढियों-से धुति कोमल स्वर
पामसई बपई, सरवई हबि
धूपछाई ही तिरती प्रिय तम पर ।

गुबरउती बामा भी धी निर्मल
सौम्य मुबर सस्कारों म कल्पित
कमा रगिणी पति परिजन प्रीता
मार्दवता की सतिका मुख मुकुमित ।

उनके निशुलम अंत सौष्ठव मे
कमा मिबिर का बीवन या मुरमित
मोनपीठ मूही गुमबासी रंग
गौर लक्ष्मा पर समत प्रतिबिम्बित ।

ऊर्ध्व रीढ़ भी समोजित अक्षयव
महापट्ट कन्या भी वीप्तानन
दीप लिखा ही ठबस्वी तनिमा
कार्य बस कर्तव्य निष्ट बुद्ध मन ।

कमा पीठ की ससृष्टि में पापित
ऊपा सी सगती वे रस बीपित
चिन्दूरी सोमनी समई अज
बच्छ बाधती मज यौवन दपित ।

नीमारुण रवि किरणा में मालित
कश्मीरी मुग्धा बिधि कर किरचित
हिम शृणों ही भी अतिम्य गरिमा
मणि निर्जर ही लीला गति संकृत ।

मुड पिरि मुकुसों म मे कोमलगा
चारबाधुधों स अक्षय यौवन
बह निसर्ग प्रतिमा ही मद्य विनी-
स्वप्न मीग अपसक रममय कितवन !

नाम कमल सटक अम धुतियों म
हंसी मोठियों की बड़ नी मुखरित
बननारी काही मूपी नूती
ममूल नेत्रमी भाषा में भूपित !

नृत्य भंगि निपुणा रक्षित बामा
वीत कंठ में जलधि तरल मय स्वर,
धीर, घकृण्ठित पट संस्कृति विरहित,
सरल हृदय जीवन पथ की सहपर !

सङ्घृष्टिणी घनुधुतियों में पातित
पद् रम व्यंजन प्रिय सात्विक जीवन
हरे, मंत्रीठी खरी गुमनारी
चटख कौश मुहु वसन रत्न भूपथ !

महा स निकली भक्ति बासा सी
यवन नारियाँ भाठी सद्य स्मित
बुलबुल माठी मुग्ध मन्दिर स्वर म
स्वप्न भरी चितवन चक्रस विस्मित !

साय नडा सा विना सपीसा तन
जिष्ट शीम प्रतिमा गोभा मुठित
करीशई विस्तई सायबंदी
रथ मग छू हो उठत जीवित !

घन्य प्रदेशों की भी भी नारी
घण स्त्रीत्व सुपमा हो एकत्रित
कामल मगो का मुकुण्ठित मधुवन
भू पथ भाषा ता रघता सुरमित !

प्रिय सपन नव छवि कुमुण्ठित तन मन
उरामार, धन्यवध संगति कामल
मुकुण्ठि नाम मयु रिमति बल नील नयन
गुहर, - रत्न पुरस्ठुत भू जीवन !

नृज कति जिष्टर उरोशों में उठ फिर
नव पीवन धी रेगा छवि घक्ति
बुना हृष्ट सायम्य मिला विनरित
इद धीधि पर भाषा मनुशिय !

जिष्ट मुबद्ध धे बल पीरुध प्रतिनिधि
बल प्रराटा ग बुद्ध उर्ध्वं घमप
गुण पतिवो नम्य रनाय मुहु रवच
ग्रीवद् गरिमा रत्न गोवं तम्यर !

सुखर कसा संस्कृत स्थितियाँ पाकर
मुक्ति मुक्त मानस होता विकसित
काम द्वेष से मुक्त राग परिभति
संरक्षित वन सी भावी सद्य स्मित !

नव भावों के सौष्ठव से वेष्टित
सुखम प्रेरणा प्रपित प्रंत स्थित
तम का जीवन प्रतिक्रम कर स्त्री नर
मन के मोहन से वे सुख पुमकित !

देव रूप बीमव कहवा कवि मन
नारी तुम भू शोभा हो मलय
भू पर प्रमय फिरेगी जब शोभा
स्वर्ग उतर प्राणा तब निरुचय !

विक्रम प्रवेष्टों के रस प्रस्यों के
प्रीति मोह से मुक्ति का उपवन
भारत रचना संपद् पर विस्मित
छात्रो संग करते विनोद गुठजन !

विक्रम विद्वेषों की किन्नोर तस्नी
कसा विविर संस्कृति में भी बीक्षित,
मुख भाव सौन्दर्य परिष्कृत छवि -
जीवन मधु रस बीमव में साहित !

बहिर्मुखी शीतिक संपद् स्तर पर
वेह प्राण के मूर्खों में सीमित
सुख विज्ञान के मधुर लक्षों में रत -
राग भेदना भी न ऊष्य विकसित !

नवस बीव मूर्खों से परिचासित
प्रीति तत्व से भी न पूर्ण परिभित
प्राणा के मरकत सागर तट पर
सुमता प्रंतस् में मबाल रस सित !

प्रतर्जिन के पथ से धीरे
कसा पीठ में होती वे संस्कृत
प्रतर्मुख भावों की चित् स्वप्नम
धी शोभा उर में करती संभित !

बापबीय मारिब स तन निमित्त
 धनु कुमुना सी सुरीग मुकषि मग्निठ
 महज स्नेह मयु सौग्म का पंठम्
 मुक्त प्रकृति आनन्द - स्वर्ग पुसकित ।
 भाव गौर परिचम की बाताएँ
 बला पीठ को एदती भी स्पष्टि
 उनक प्राणों में मू जीवन का
 स्वर्ग छंद रहता जीवन संकृत !

नर या कवि मन ईसा क सम्पुय
 जिसने जीवन प्रेम दिया नम को
 ममतामय सक्रिय मानव कदना
 स्वर्ग राज्य मू स्वप्न दिया मन को ।

दुःखमय मिथ्या बतना मू जीवन
 जिसने नहीं सिखाया नून बर्जन
 पाप पुष्प मय वस्तु मनुज उर को
 चिन्मोहित स किया घीठ पावन !

प्रेम प्रकाश घरा उर मम में भर
 किया भतना का रग स्यातर
 नय ससृति तीर्थ्य शोध देकर
 फिर की प्रतिष्ठति बतनाया नर ।

परिचम का पल जीवन ईसा क
 प्रभु क मुख का रूपा न सब स्वर्ग
 घम विचमन ! राम कृष्ण सौत्रम
 ईसा का बतना प्रकाश मूनन ।

ससृति प्रायण में मिन मारी नर
 नर जीवन में कल्पे घवगाहन
 शिव बाबला एर में कर मुक्ति
 नय बनता स्वप्नित पावक नय ।

परिचम का नय मू मन बापारों
 नय रग निरुता एर नय घारातन
 मृगत स्वर्ग म मुक्त शिवरता मन
 एर शक्ति क गति एर प्रायण ।

अंतरिक्ष युग का व्यापक विस्तृत पट
मयनों के सम्मुख होता प्रकृत
विश्वों से एक भीटों से सभु नर
मानव सागर बनते दिग् विस्तृत !

पंच खोस उड़ता जड़ भू मानस
मध्य खेतना मम में ज्योति प्रकृत
महाशक्तों के हार पूँज मानस
जन भू शरणों पर करता क्षणित !

बहुती उर से उर में सहृदयता
मन को छूने मन के सुवेदन
सहज उमड़ता स्नेह घट के प्रति
पुष्प हृदय सं उड़ ज्यों सीरस जन !

धर्म नीति पाशों को कर खंडित
सभु साधारणता से उठ ऊपर
जड़ यथार्थ की धूल पोंछ मुख स
घादलों का भेद रिक्त अंतर -

उमग भावना उठती हिस्सोमित
भू जीवन के कर विरोध मञ्जित
मुसा प्रीति पसने में मानव को
भू मन के कर्मप कर प्रवगाहित !

दीप्त खेतना मम जन युहिणी सी
ज्वल भू जीवन खोसा कर रोपित
उर्वर करती जीवन मन के स्तर
प्राणों के स्वर्णिम मुख से सिञ्चित !

इंद्रिय दर्पण में बिम्बित प्रभु मुख
मनोयुता ऊपा से भासोक्ति
अंतर्भू की पावक रख सरसी में
तिरछी खोसा दह बोध विरहित !

अधर्मन क स्वर्ण नील में उड़
मनो पावना मधु पिक सी पाठी
रजत धनित कर सासा से सुदमित
इच्छाएँ रख तमय हो पाठी !

राजनयिक मू जीवन संबधण
स्वर संगति में बंध जाते बिस्तृत
ऊर्ध्व ज्योति से समदिक बढ़ सीमा
हा उठती चित् स्वर्गों में विकसित ।

अंध विरोधों में बन मू प्राणम
हृष भक्त सब ध्वंस नद भौषण
समतल युग मन ऊर्ध्व बोध ध्वित
बढ़ीमूठ गिनता निर धर्मिष ध्व ।

व्यक्ति साधना का कृत पद निष्कस
गठ समूर्त धास्वा यदा कुठित
मू विकास की पुण्ड भूमि से व्युत्
प्राणों के गूंग धूमि सुठित ।

सामूहिक पद नव मू मानव हित
गुण भावना रस से धर्मिषिधित
कमा शिविर रचता जीवन धम रत
स्वध प्रीति में नर स्त्री नर बुधित ।

मू रज से कर मुक्त भाषना पद,
मनरधतना सापानों से सिध
हीरक निघंटों पर नव युवति युवक
बिचर सधे—चित् धामा में मग्जित ।

धुमे प्रेरणा धितिक मनोदुग में
मुर संवद् धन नोमा शीपित
मुरम भावना स्वर्गों में लठ मन
मू को नर धमर परिमा मधित ।

नव मूस्पासन कर धू जीवन का
देगे नर दीवर महिमा जीवित
तन नन प्राणा के गुण वैभव में
दधिय हात तक धारमा प्रसग्जित ।

भूमीं ग नव भूमा पर बिचने
गन मू नन धामा ग उ उ ऊपर
नव प्रवाग रम रंगन प्रति धेतन
धामे धधितन धधर्मन ना नर !

मान पित बदले जन धरणी का
नव जीवन पञ्चविमा हों विकसित
देत जाति काय से कृष्ण पुष्पी
मानवता की प्रतिमा हो जीवित !

मघिनीलों में जहाँ अरविमाएँ
रबत वीक्षिमाओं में प्रतिबिम्बित
फालसई भाभा रस धुबनों में
हृदय स्वधिमा में रहता मज्जित !

आत्मा के भी तरब प्रघारों में
भावों की तत भाभा फहरती
सुपमा की स्मित रत्नच्छाएँ
प्राणों की सरसी में महारती !

नव बसत भी कीड़ा उपवन में
फिरती धू ताक्य मृति कुसुमित
फूल बवास रंपों में बेष्टित तन
धबयव गंध मरंदों से विरचित !

बर्ष छटाओं के सहस सीकर
फूट पड़े हों धू के घटर से
नव जीवन धारेणों से पुसकित
प्राणों के रस पावक निर्झर से !

रगों का प्रिय पर्व मनाती धू
छोन जुही कामिनी बपा फूलीं
धसक्यकी ठाई पतपी दिशि
मारंयी माधवी सता शूलीं !

नील मम के नीचे फालसई
गगन पुष्प छत्रा का कर निमित
फुस्त जैकरंदा - मूसमोरों की
रक्त पीठ भी से धब पब शोषित !

धमसठास के स्वधिम मुकुटों से
हरित बमानी सगतीं आभूषित
रंस स्पष्ट से नव मधु पावक के
धू जीवन हो उठता रस पुसकित !

दृष्टि धंध करती गुप्ता की रज,
मदिर धंध से मलय प्रसक्त गुफ्टि
स्वयं रंग किसलय से विभि धीग मांसस
कुलत धन छाया करती मोहित !

नव कनेर टेसू पनोफ के बन
वीवन धंधारों से दिप् दीपित
धाम्न मीर, चपक चंदन मुकुमिन
बचनारों में हेम मृ रोमाचित !

मध स्वप्नों से मे शामा माधन
रूप रंग छवि सौष्ठव की धरिमा
नार भाव चुनती मर्जन प्रतिभा -
रमा दृष्टि मे रज वीचन प्रतिभा !

पुबती पुबक बिपरते रज स्वविठ
भाव प्रहृषों म धतर संहन
गग धतना करती धाराहृष
नव धी शामा वैभव से दीपित !

निघर पुबठिया की छवि से पुबती
गूधम भावना धीरम म कस्विय
नव धी सुपमायी में धी लिपटी
मन की धांधों का करनी मोहित !

शान धतना इधर तदध उर में
भाव स्वग करती नव उद्घाटित
उधर रज गग पावक रपती मे
उपधात का करनी धांधिन !

रज माह धा शेष पुबक गध में
मगात उर में गूध देव रजम
भूत विभरनी जब नव महुरा मंग
मध धनित महरी नी पुबतीजन !

धनित गिता पर धंड प्रीति शरर
मधु उर धारा का करनी विनिमय
गोबरीय नव मुहुता में गुननी
नग धरिनी गुननी गग उधर !

सागर सहरी रेणुम में परिवृत्त
प्रीति कसा कसि सी समती शोभित
स्वच्छ केवड़ी कुरते में बकर
बीस नम्र निस्वर अंत संसृष्ट !

प्रणय अंत्रिका व्याप्त हृदय भीतर
बिखकी स्थिति से प्राण न बे धवगत
सोक कर्म में रहते उमम निरत
मर्म वेतना स्मृति रस में तवगत !

एक मधुर अंशुति उनके उर में
सुजन प्रेरणा भरती जन भू हित
सोक श्रेय की धास्वा से सुरभित
प्राण कामता को करती विकथित !

व्यक्ति प्रेम वा या वह सार्वजनिक
सहज न संभव वा इसका निर्णय
व्यक्ति केन्द्र वा विश्व परिधि सुखमय
भू भगम हित हृदयों का परिणय !

प्राणों से उठ कर उर में केन्द्रित
भोग न रह वह वेह बोध सीमित
हृदय सुरभि का भरता भू प्सावन -
सत्कृति रस सपद् से उर धपित !

शोष रहा वा भाव मुग्ध अंकर
देख प्रीति का मूष - सुख से बिस्मृत -
गुम ऊया हो या पबित ज्योत्स्ना
सद्य स्फुट सौरभ तन में मूर्धित !

सित शोभा सरसिज सी अंतस्मित
छू पाते बिसकौ न स्पर्श प्रिय कर,
भाव रूप परिमल पराग सी उड़
भरती मौन मधुरिमा से भरत !

तुमको बिना छुए ही हो उठती
आराम आराम क सुख में मज्जित
श्री सुपमा ऐश्वर्य फूट मन से
प्राणों को करता बिस्मय मोहित !

क्या है प्रेम ? अतन्त्रि एत पापक का
एत मन जीवन होते एत में सय
प्राप्ती की तुण इच्छा अत उठती
मनोगुहा में होता स्वर्णदय ।

पुष्ट स्वर्ण वा अिमका पापक उर
अत अग पर हो उठता ग्योछावर,
मुपमा एत धारणी के नम में
कर्म से उठ फैसाता मन पर ।

तुम्ही प्रेम हो क्या सोभा प्रतिमे
धिर रहस्वमपि जोसा धबबुठन
स्वप्ना की मधु एत निर्भरि तुमसे
अन-मुञ्ज में मुखरित मेरा मन !

किन्ती मुपमाया में कितने अति
तुम्हें देख उमन मिरल मन में
अपों की स्वनिम छाया ठिखी
निनिमेष मयता के अर्पण में ।

पौर मराम मिथुन सोभा स्पर्दित
अपक अरसी में साए भाते
अमय अाग अंड अ्वनि से प्रेरित
कितने गिक कितने वी अग माठ !

अमपक नीवीं म उड़ धाकुल मन
नीद जोअता मुरधनु मुञ्ज निमित्त
हृदय अलना एत मामामा में
माअ पग मिपटा पाणा दीपित !

अधर वीनि सय वी अिवित रिमति अ
अदता धीअन का शिगन अहसिन
मधु अस्मृति पुमकिञ्च एत अताया में
निधिअ अर्पण का मुञ्ज अमव अचित्त !

प्राण मुग्धार माअ गौर तन में
अर्पण उगाएँ हा गत धी अृतिन
अनता अरन हा अरना अर तन
अन अिअ अित अयम अर पर अग्निन !

उपमा नीसिमा किन नीहारों की
साँझ रही स्मित मयनों से निस्तम
पंख बोस उड़ता स्वप्नों का मम
किन सोमा धाकाओं में निर्मल !

पन उरोज किन रस धामों के
स्वर्ण हृद-विद् गौर ससित दोसित
प्रीति श्रृंखला सी धट्ट बहिं
बपन मूस सोमा तब धात्मा हित !

पी करता तुमको मन मंदिर में
नब भडा धात्मा में कर स्थापित
सित रचना धम से नब भू जीवन
करें तुम्हारी सोमा में निमित्त !

तुम्हें समपित कर तम मन जीवन
शाश्वत जीवन के सुख में तन्मय
बन संस्कृति का स्वर्ण रत्न भू पर
धात्मा इद्रिय में भर रस धन्व्य !

तुम्हें तुम्हें सम्मुख पा मेरा मन
नम्य बेतना में करता रोह्य
मुझ संतुमन की तुम सित प्रतिमा
स्वर्ण मर्य की स्वर संगति गूतन !

स्वनिम नीसों से भर बिद् वैभव
हरित प्रसारों में ही मधु मुषित
रस प्रतीति से धमूत प्रीति से तुम
बन भू को करने भाई उपकृत !

प्रिय सन्निधि से होता मम पावन
तीर्थ जमा में कर क्यों धवमाहन
धर्म प्रीति बनती तुममें धारिक
बिन्दु बिन्दु में तुम रस सिन्धु पहन !

तुम्हें बाहुओं में भरने को मन
सहसा हो उठता जब सात्त्विक
सी सोमाएँ तुमसे मूक निबर
मधुर रूप धर करती उर विस्मित !

काम एक से ऊपर उठ मू क
तुम धमिन्द्य सौम्यर्य पद्य ही स्थित
कौन सत्य का मूर्ध तुम्हें करना
स्वर्गिक भाव परामों में विकसित ।

मुझ प्रीति धानन जाति होमा
प्रथम बार भारी तन में मूर्ति
मुसम हो सका धान धरा मन का
गोचर मूढम धगोचर रस निश्चित ।

फूट ज्योति रस निर्भर रोमा स—
उस कहें प्रैतम्य भाव गरिमा ? —
पूज गद्य स भरते तुम्हें हृदय
घँटती जगों में न धनुष प्रतिमा ।

प्रणय निवेशन कहें समर्पण या
माह लोक कुंठा शंका विरहित
भर जाता मिठ धास्वा स मत उर
प्रेम स्वर्ग भू पर करने सचित ।

मुर पीना ही बासी कल्पवृत्ति कर
प्रीति—स्वर्ण निरिधिया मी संकुट—
देख रूप में तुम धरुण होमा
राश्वर करते कला इष्टि निश्चित ।

निज वैभव से गगन उर परिधिन
पहिने ज्ञानोदय हा तुम संकर
धामबाध ररुण जिहने मुग्धा
शिया स्वर्ग जीवन का भू पर वर ।

देख मूर्ति ही स धमूर्त तुमने
रस में बिरत शक्ति गी में भाव्यन
इष्टि मनुष्य का ही जीवन मूल्य
नाम भूत पर गिना रूप धान ।

शिम शक्ति मन निज धामगा ग
शिया हृदय से रस पर में शक्ति
धाम इष्टि से उर पूर्ण कर शक्ति
शिया रस का प्रथम ग गभारि ।

राम भुक्ति ही सृष्टि ज्येष्ठ स्वर्गिन
विश्व समस्याएँ जिससे प्रापित
विस्तृत हों भू स्थिति विकसित जन मन
बदने जीवन परिभाषा निश्चित !

मुक्त सुरभि सा प्रेम बसे उर में
नर नाटी जीवन कर रस ससृष्ट
रचना शोभा में ठमय हा मन
जीवन मधु जन मंगल हित सचित !

प्रीति मुक्ति स्थित हो सित समय पर
उमय परस्पर हों रस संबंधित
स्फटिक शिला पर उवर संयम की
हर्म्य प्रेम का उठे स्वर्ग बुधित !

अमृत प्रीति - आत्मा स अनुभासित
धरा स्वर्ग स्वप्नों स अनुप्राणित
भू रज पर सोटे - जीवन पावन
स्त्री नर उर कर स्वर्ष रहिम मुफित !

ग्रहण शील हो तुम बिनम्र शंकर
प्रेम शक्ति की करो मूर्त सार्धक
सबु सरयो स सासित भू जीवन
साधो भू ठम कर पुष्ट्यार्थ धनक !

रेखा सम्मुख ज्योति सोक शास्वत
नर से मीम प्रतीक्षा रज धपनक
काम पंक स उठे धरा जीवन
राग बने प्रगल्भित प्रेम पावक !

भू जीवन हो थी शोभा मद्धित
नर बसंत आत्मा से आलियित
जन के तन मन प्राणों का पतझर
प्रीति स्वर्ग में हो दियत मुकुलित !

मुजन कर्म रत र्हो बधु भू हित
हृदय ज्योति से कर उसका भुवित
रुम मोह हा भाव प्रीति विगलित
स्वय शक्ति उठरे भू पर अम सित !

स्वल्पि त्रेम सामूहिक सागर में
करे रजत धारा मद्धा प्रपित
पुने हृदय को रग रंदि - भाभा
भाप करें नर नारी रस संसृष्ट !

संध धरा सम के व्यवधानों को
धैर्य नीरस से करना पद मुठित
यत भू मन से कर कदू संघर्षण
प्रमिदक को करना जीवन मूठित !

मठ घंठ संघठन बृस प्रवसित
विचार एहा भू मन समदिक तट पर
रम शुभ्र ठिपरा पर उर्ध्व विचार
प्रधिन बहिर्मुख पुने मनुष्य घंठर !

प्रीति मुक्त बरसे सित रस बीमब
धी गोभा हो बन जीवन का घन
बुधि मा रग एहा भू कर्षम में
काम द्वेष से विवित भाक पीबन !

तन मन की ही गठिया जगती में
गती हा मकी जीवन सपोठित
मनुष्य हृदय का स्वर्ग हमें भू पर
स्थापित करना भाप विमब मरुण !

पुण बीबिया में एकान विचार
मुवति मुबन करते पर्यापानन
रग रंदिया रमडी मानग की
गुन बन में उम्मुक्त विधी कजम !

जीवन क्या ? करन विचार विनिमय
निश्चय ही घानद गुजन का राप
मण्टि ? घन पादक एजो में
धी भाभा बुधुति हा जन जानन !

संघ प्रीति क स्वर्ग मृग में बन
स्वप्न मरगि घन धरा जीवन
प्रीति शान विचने निर्धय स्त्री नर
उपगत हा रग गुठि नव यौरन !

कह्ये न गत सस्कारों का मन
बिगड़ मुक्ति के लिए लीह बंधन
प्रतिक्रम कर इतिहास भीति दर्शन
उठे बतना में स्वर्गिक प्सावन !

तन को दे रस भोज स्नेह मित्र तन
शोभा स्वप्ना में हो तन्मय मन
हृदय मृजम धामद छत्र संकृत
हो हठार्थ प्राणों का भू जीवन !

यौन कर्म हो रस पवित्र संकृत
देह - प्रणय स्वप्ना की मुग्ध क्षयन
पूतों के मधु शोभा तल्पों पर
कुभ्र प्रीति से बग्म स्वर्ग पावन !
मानव रचना मयस में हो रस
धारमा धंत संपद् से दीपित
प्रकृति बल की मांसल शोभा में
ईश्वर ही हो स्वर्ग भाव मूर्तित !

सोन बमेली के मिहुंज भीतर
सेटी की धास्या अया सी सित
सुंदर बैठा तिकट भाव नठ सिर
गम मुग्ध मधु पवन स्पर्श पुलकित !
करतल पर कर पस्तक धर धास्या -
कोमलता सा पुत्रित भार रहित -
पीठी पीरप की शोभा गरिमा
नब रकि सी - पावक पराग बिरचित !
सीस पठित तन संयम यौवन का
मूदम बोध छाया तिरछी मुख पर -
पीन धंस बिस्तीर्ण बस सुंदर
धायत नीस नयन प्रकाश के धर !
धपसक चितवन पैठ मर्म भीतर
उड़ नब शोभा धितियों में निस्वर -
मुग्ध खोजती धारमा के नभ में
सुरधनु वृष स्मित प्रीति मीड़ मुखधर !

प्रम समपण स प्रादोभित उर
बोसा मुंदर वृष्टि गङ्गा मुख पर
भाव यौवना हा तुम रम मुखे
मधु धाराभा की पावक मिमर ।

घरती सी सेनी तुम रब मुभने
पीवन लोभा में धनन्य बेष्टित
प्राणा की प्रादांश का सागर
नव यौवन पुत्तियो पर समुच्छसित ।

तुम्हें देख रस की मुख प्रादांश
फूला की शय्या बनती पुभकित
झरती मधु की सुपमा की कमियां
धम स्पर्श स हाने मृदु मन्थि ।

तुमको छू शोभा का मधु धनुमब
हृत्तरी को कर तन्मय संकृत
भावा की स्वगिक समति में बंध
पारमा को करता बिस्मय माहित ।

रस की सौधी इच्छा की उसमें
रहती मारक देह गध मिथित
प्राणा के मधा म शीघ्र तद्विद्
धतर्मन को करती हीनि शक्ति ।

शक्ति स्पर्शों स कुमुदा क गर की
धिम पड़नी इशिया राम हृषित
भाव बाहिनी मन तिरामो म
बहना लोभा पापक रम विपन्थित ।

ठारा म मुक्ति निनि धनका गा
उपबनन तम हुंमना छवि स्पष्टि
धेगना स्वनिम तीर प्पभा गुर्य का
निधनन मन का पप कर दीनि ।

मीना विधम श्बुनि गता श्रीग
नानि प्रणय भावा का मधु नक्षय
महा गा उर निर माधे मुमभ
हात नदप रग मातम में मय ।

स्वप्न पुष्प तुम स्वर्गिक सौरभ से
हैं सेधी प्रारमा का सिध धंवर,
बनता रूप प्रक्य निबर प्रतिपन्न
हम प्रक्य छवि में हरखा धतर !

बाने कौन मुषा सेतों को धू
बेह सासना हो जाती प्रसमित
काम हृदय में वन संपीठ मधुर
मधु भावों में हा उठता मुखरित !

बाने कौसी प्रीति पुरुष स्त्री में
नया हृदय कर रही सूक्ष्म सन्निव
बाध युग्म को नभ मानवधा में
यथा की कर स्वर्ण रज्जु निर्मित !

पावक धमिसों में तिर नारी नर
रस प्रवामा में न्हा होते शीतल
विप को प्रमूठ तमस को कर ज्योतिव
भू से स्वर्ण त्रिविध से रस भूतल !

सुमने तुम रस योनि प्राण तम को
श्री शोभा में करती धातोकिव
दृष्टि धंध वा काम वाम धंयुनि
किमा धाव पय तुमने निर्बेधित !

जीवन के शोभा धानव सिखर
उभर बस में रहते सिध स्पर्धित
स्वर्ण मर्त्य में पूर्ण रूप धरने
हो मुखों में हुषा मधुर वितरित !

देही से मानसी मानसी से
तुम रस प्रतिमा - मानस से धठित्तव
प्रारमा की पा ज्योति दृष्टि प्रकनुप
बेह रूप रस में न्धत सुख तन्मय !

पित् प्रकाश मम में धारोहन कर
धवरोहन करता भू पर नभ मम
कवि रस प्रतिमा पा नर धरती पर
मए स्वर्ण का करता धावाहन !

उठी काम धमारों पर सेटी
पुत मोनि भूमिने धमव जागो
उठी भावना क नद स्वर्गों में
मुक्त प्रीति में विचरो भय त्यागा ।

स्वय त्रिजिनी बजती प्राणों में
कटि की कांधा काशी रस मङ्गल
नव भू रचना हित धंतर उल्मुक
धमिनव ऊपासों म उन्मेपित ।

मानस तीर्थों में न्हा धम्मरियां
तिरछी रस पावक जस में प्रमुदित
मन स्वर्ग की शोभा धरती की
प्राण धमि स होती धमिपेकिन !

नव श्री शोभा नव संसृष्ट सुख में
भू जपनों की उभासा धम कुसुमित
रस स्वधिय मानव तिरासा में
भाषा की रत्नासा भर धगधित ।

रक्त बेव का हर्ष मत पावक
मधु शोभा सुप धुवनो में गरिष्ठ
जिम्न वह में सीमित वा वा सुप
ध्याप्त मिथिन धात्मा में धम उमत ।

मृजत प्रेरणा र धत सुपमा
निर्मम पगु भू बने मानवाधित
मुझ वह ही धात्मा की प्रतिमा
द्विय पप पर विचरे ईश्वर निज !

स्वय धरा वा भूम रग धंतर
बिटे गारे भू रज पर श्रुत उर्ध्व
परिदृष्टि वा ॐ धूम धामक
हृदय प्रेक्ष ने ईश्वर वा हा पर ।

बहिर्विचर ने धनरंज धैमव
धमिज कुम प्रेक्ष बाधन विरनिता
धीनर न रा ॐ रग धारा
वीरन मुन संन्य हा नंबधित ।

प्रलय मधु रस संपद् प्राप्ति में
भोयें उसको स्त्री नर शक्ति संस्कृत
जात निश्चित हों पाप-बुद्धा कद्रुता
कुंठा स्वर्गा - हिल युद्ध प्रसमित !

रस वृत्ति का सुख धर्मित मन को
करता रचना स्वप्नों से प्रेरित
रस धर्मत रस का प्रहर्ष धर्मय
शास्त्रत मधु नर से वह सुख उपमित !

रस सहस्र रतिया का सित बंजन
करता सुख से रोम रोम बंजन
तन्मय हो धर्मत सिन्धु में मन
स्वयिक विस्मृति में होता मुक्ति !

धर्म वृत्ति से मुक्त - प्रीति व्यापक
प्रकृति - भाव समता से धनुप्राणित
बिना किसी अधिकार सातसा के
स्वप्न नीड़ रचती उर में इच्छित !

मू सामा उपभोग कर सकें जन
हृष्य हृदय के प्रति हो धाकपित
काम संयमित मुक्त प्रीति प्रेरित
मानव उर संवेदन हो विकसित !

प्रिये न जो तुम होती सरसी में
उठती नहीं हिमोर भाव बचन
बंध न उड़ती फूलों के उर से !
गाती मधु श्मशु में न मुग्ध कोमल !

गाती भी - होता न धर्म नमित
पुसकित करता तम मन रिक्त न स्वर
सोमा वृष्टि विफल होती विधि की
प्रेम बिना उर होता तम पल्लर !

तुम धर्मों के सम्मुख रहती नित -
मू पर मुन्दरता होती उपकृत
जीवन का सूनापन धर जावा
मीन - मधुरिमा में होता मुखरित !

स्नेह सिक्त स्वर में बोली धारणा
भाव वहि में डबी स्वर्ण प्रतिमा -
संयम सिद्ध गोमा में हो मूर्तित
मानव धारणा की महिमा मरिमा ।

भू जीवन प्रेमी हो तुम सुंदर
धारणा रह सकती न प्रीति विरहित
मध्य युगों के जीवन दर्शन स
धरा स्वर्ण की मुपमा में वषित ।

मुझ प्रीति रस में पापित ईस्वर
वन भू हो उसका गोमा स्वर्ण
इंद्रिय विषयों मानव भावों में
निपटा पीपित रहता रह चित् रूप ।

छोले छुड़ नैतिकता के बंधन
धा भीतिव तुप्पा का भू प्रांगण
हमें मनुजता करनी नव निमित्त
उठा पुष्प स्त्री बेह भाव गुंठन ।

प्रति दरिद्रता भू पत्र की बाधा
प्रति वैभव भी उमति हिन बंधन
मान बग्य धारणात्मिकता मापित
जनि संघ भीतिरता मृत मरण !

कसा पीठ अठबिकाम धरण -
संयति जन भू स्थितियों में सीमित
मर नाटी की प्रीति धेतना उर
नव भू रचना में हो अयोचित ।

उभिन धारण मिश्रु मन में
गन भू जीवन पुनिल करे मज्जित
संयम मुझ में गीच स्थल गोमा
मुझ मानवी प्रतिमा हा कल्पित ।

प्राना का गर्वीत मात्र भ पर
निर्मम दृष्ट्या की कर द विगति
ग्य प्राने भी गोमा की धरिमा
धामोत्र पर द जीवन म मिता !

अंतर क स्वर्णिम तारों में बज
नीसम अंकारों करती तन्मय
मरकट उल्हासों में हँस उठता
प्राणों का सुख अति से हो अतिशय !

विगत प्राण मन जीवन क बधम
जड़ हिम खड्डों से गल हठे समय
तन्मय सुख - तन्मय सुख में विस्मृति
यह असीम सीमा का रस परिषय !

भूमा की शिबिका घर कंधा पर
नृत्य निरगत नखत मुग्ध अंबर
भू विकास क्रम ठोना मानव को
विबिध पीढ़ियों में निरत नव पम घर !

रत पावक में जमता प्रतिपन्न मन
बरस रहे रति सुख क धाराघर,
अंत मोभा पक्ष से समय अंतर
पूर्व प्रकृति गरिमा से जाता घर !

नामा हा जीवन प्रतीक पावक
जीवन अंतर्भावों का दर्पण
अद्भुत प्रीति प्रतीति उस दे जम
विम्बित पाएँ उसमें निरत मन !

बुधा द्वेष से बुधा द्वेष तम ही
पाएया मर जीवन में विम्बित
सर्वगत संस्कृत जीवन का साधन
मिस्वी नर, भू स्वर्ग करे निर्मित !

हरित बभ्रु सी प्रकृति मुग्ध नारी
मती पुस्य भरे स्वर समय नूतन
प्रीति हृष मोभा प्रकाश बरस
स्वर्ग रागिनी हा जम भू जीवन !

सुबह, प्राण धरोहर तुम मेरी
निबर रखा तन से मन भाव द्रवित
हँसता प्राणों में नव सूर्योदय
उपपेतन मुख पर मीलन्य ससित !

सोह सिक्त स्वर में बोली धारणा
भाव बहिर् में कनी स्वर्ण प्रतिमा —
संयम सित शोभा में हो मूर्तित
मानव धारणा की महिमा मग्निमा !

भू जीवन प्रेमी हो तुम सुख
धारणा रह सकती न प्रीति विरहित
मध्य युगों के जीवन बर्जन से
धरा स्वर्ग की सुपमा न बंभित !

बुध प्रीति रस में पापित ईस्वर
वन भू हो उसका शोभा स्वर्ण
इन्द्रिय विषयों मानस भावों में
निपटा भीषित रहता रह चित् कर्म !

बोल कुछ नैतिकता के बचन
घो भीतिक तृष्णा का भू प्राणन
हमें मनुष्यता करनी नव निमित्त
उठा पुण्य स्त्री रेह भाव सुठन !

प्रति बहिर्ता भू पत्र की बाधा
प्रति वैभव भी उच्चति हित बंधन
ज्ञान बन्ध धार्यात्मिकता धारित
शक्ति धर्म भीतिकता मूर्त मरण !

कला पीठ संतबिकास स्वर्ण —
संप्रति वन भू स्थितियों में सीमित
नर नारी की प्रीति चेतना उठ
नव भू रचना में हो संयोजित !

उद्देशित प्रानंद सिन्धु मन में
मठ भू जीवन पुनित करे मग्निवत्
संयम युग से शीघ्र स्वर्ण शोभा
बुध मानवी प्रतिमा हो कल्पित !

प्राणों का सगीत भाव भू पर
निर्मम हृदयों का कर द विगमित
रह प्रहर्ष भी शोभा की धारिमा
मम्मोहन धर र जीवन में मित !

अंतर क स्वप्नित तारों में बज
नीलम झकारें करती तन्मय
मरकट उस्मासों में हूँ उठता
प्राणो का सुख भति से हो प्रतिभय !

बिगत प्राण मन जीवन के वधन
जड़ हिम बड़ों से गस होते सय
तन्मय सुख - तन्मय सुख में विस्मृति
मह भसीम सीमा का रस परिणय !

भूमा की धिविका धर कंधा पर
मूल्य निरत मदात मुख धंवर,
भू विकास क्रम होना मानव को
बिबिध पीढ़ियों में निर नव पग धर !

रस पावक में जसता प्रतिपन्न मन
बरस रहे रति सुख के धाराधर
धंत सोमा पक्ष सं सय धंतर
पूर्व प्रकृति गरिमा से जाठा धर !

सोमा हो जीवन प्रतीक पावक
जीवन धंतर्भाषों का दर्पण
भद्रा प्रीति प्रतीति उसे दे जन
बिम्बित पाएँ उसमें निज तन मन !

भूमा हो दे भूमा होय तम ही
पाएगा नर जीवन में बिम्बित
सर्वन संस्कृत जीवन का साधन
मिल्पी नर भू स्वर्ग करे निमित्त !

हरित बभ्रु सी प्रकृति मुख नारी
यत्री पुरुष धर स्वर सय मूठन
प्रीति हर्ष शोभा प्रकाश बरधे
स्वर्ग रागिनी हो जन भू जीवन !

सुंदर, प्राण धरोहर तुम मेरी
निघर रक्षा तन से मन भाव प्रबिध
हंसवा प्राणों में नव सूर्योदय
उपवेतन मुख पर सौन्दर्य मसित !

धन न अपेक्षित ' बुद्धन परिवर्तन
वेद्य र्ही तुमको सित रस तन्मय
बहुता अंतर का सुख अंतर में
हो हृदयों का यह स्वप्नित परिणम ।

टकराते हो मेधा के पर्वत
बहुपटी जीवन की समिन्नाया
जगते सूक्ष्म हृदय में संबेदन
यात्री शोभित में नूतन आता !

अंत श्री सुपमा का रस प्सावन
मेरे तम मन प्रार्थों में विन्वित
मन्ने तुम्हें जो जगता प्रिय मुझमें -
पद्म जीवन करता न हृदय मोहित !

नव प्रकाश प्रतिमा में ही परिवर्त
आस्था हुई उपस्थित दृम सम्मुख
बदल यही परिभाषा जीवन की
बदल पर मत्त मूल्य - प्रीति श्री सुख ।

हम निज यौवन के मधु पावक से
भाषो नव संसार करें निमित्त
बेह प्राण मन आत्मा की निधि को
रस संस्कृत शोभा में कर गुच्छित ।

आत्मवाह वा आत्मदान अग को
उर आभा से सुरभित कर विधि अन्न
आत्मा का मधु संचित हो जन हित
पर जाएँ जीवन अभाव के अन्न ।

तम अर्नत - उससे मत्त टकराओ
बह संसृति आश्रय गिन्ना गोपन
तुम प्रकाश गुंवा नू बेनी में
सम्पार्थों का वर्णन हो जीवन !

टैया अधर में हृत्त मानव का मन
ऊर्ध्व ज्योति में कर उषकी मन्वित
मुक्त प्रकृति के स्तर पर संस्कृति को
करो धरा जीवन में संयोजित ।

समय ही यमा - जसो मज पर हम
देखें जब नव सृष्टि नृत्य रूपक -
निखर रही सागर उस से पृथ्वी
देख रहे नम से मुरगज अपमज !

नील रेशमी जल पट फहरा कर
जसनिधि सहरो को करता चितित
हरित मखमसी ज्वाला में सिपटी
धनिस बुकूमा धू उठती सस्मित !

मुग्ध नाचती वह बिक प्राणभ में
रंगमज पर छाई नीलामा
नाच रहे प्रह तारक तुहिन वचन
स्वामत करती प्रथम स्वर्ण जामा !

कमक मुकुर से घाटा हैस नव रवि
रजत मुषा बट करता जलि अफित
नाच रहा स्वर मय गति में भूमा
दिखा काम जब सज्जा में मूर्ति !

प्रकट हो रहे क्रमस सजरापर
यह विकास क्रम हुस्य हुस्य विस्मित !
उदय मत्स्य बनता धीरे स्वमचर -
सरीसृपों से जग बन मूय जनशित !

पंख उमा उड़ता नम में जीवन
मेढघरों में मनुज ऊष्य विकसित -
गाते धू भाषों के नारी मर
जीवम पव मनाते निम हपित !

जो जाने कितने युग धा जा कर
विश्व मंच पर करते अथ सर्वन
पुरत बदमते इतिहासों के पट
चिन्तन मज बड़ा पीछे बर्जन !

कीम मूतघर मटी ! हुस्य श्रावक
नूढ़ कमानक नाटक का कल्पित
मठ संस्कृति सम्पता जग चाहत -
बहु देसों शिकिरा में धू खंडित !

महू दियंत बिद, भरता युह गर्जन
महृहास करता युमांत भीषण
दुर्जय हस्त्रों सैम्यों से सम्बिधत
महानाम करता तांडव नर्तन !

घघकार यवनिका निरी दुर्मम
प्रमय मृत्य करता धर धम्पु शानव
दीरव श्रंति का पुर्वह वादण क्षण
भवप बधिर छाया दीरव विक-रव !

ध्वस्त युवा का पवराया चेतसू
प्रस्तर युव का हुमा समापन रण
उदित मृत नव - प्रज्ञा स्वर्णोदय
बिजयी पुन बिमल मन पर जीवन !

जन भू संस्कृति स्वर्ग ! - सुजन रत जन
धर्म पाति से मुक्त विश्व मानव
रण चेतना के सिध प्रापन में
धम्म से रहा मनुज प्रेम धमिनव ।

धी सोभा धानद मधुरिमा का
रचना संवस में कर नव धर्मन
मुझ प्रीति परिधीत मुक्त स्त्री नर,
रस संस्कृत भोमते स्वर्ग जीवन !

नभ्य चेतना प्रतिक्रम कर धम को
भू का कंपुन धी धर करतम पर,
धित् स्वर्षिम स्रोतों का रस दीभव
बरसाती रज पर हास्वत धधर !

स्वर्ष ज्योति में लोक मच प्ताधित -
मानव भाषी चठा एही गूठन -
नव जीवन धाना से उग्मेधित
ताकी देत भाव मूय्य धनवण ।

छाई धी मधु ज्योत्स्ना धंधर में
धरती सगरी स्वर्णों से कस्वित
धम प्रकाश गया ममुना से मिस
प्राणों की करते मधु रस सिधित !

कूक रही मधु कोमल तरु नभ में
 झरते मुकुल पुसक भर मुडु तन में
 पार्श्व बिम्ब भाषा सेवा शक्ति का
 मंघ पवन धैर्यदायी बस मन में ।
 भाव मुग्ध तर कास बोध विस्मृत
 तिरते पुष्करिणी में नारी भर
 कुमुमित धर्मों की जोमा सौरभ
 रस प्रहृष से भर देती धतर !
 अपस पात्र मुडु सतिम सताघों से
 सहर्षों पर शत छत्रियों में विम्बित
 बिज कद में परिणत कर सर को
 यी सुपमा से करत दृष मोहित !
 काम बुक्ति अधिहृत करने पर भी
 प्राण भावना हो तन स त्रिभूत
 तिरम सुरभि से कर तन मन पुसकित
 जीवन का बरती धानव इहित ।
 वहठा प्राणों मे संपीठ धमर
 उड़ठा आकांक्षा मरब स्वर्णिम
 मूढम धाव धम से अपक पावक
 धर्मों म जसता सग्ना रक्षितम ।
 धारम संतुसित निमते मुबति मुवक
 सहज भाव से गंध समीरन वप्
 सह्र ज्वा सहर्षों में मय होती
 देह मुक्त धतर होते तद्गत ।
 भाव समाधि बिरत कर छात्रों को
 सोम कर्म प्रति कर मन को जायुत
 केंद्र, धर रचना मंगस क प्रति
 संस्कृत जीवन को करता प्रेरित !

धर ज्वास कैपता सरसी का तर
 धरित कुमुम धरते तरस जल में
 सुंदरपुर के कुँवर कसा प्रेमी -
 मधु मात्र सूनी सी रस तन में !

शोभा पावन की मधु ज्वाला सी
जल से पिबनी जति सपटें घाटी
मुग्ध रूप यौवन की जयमय सी
पाँव मिचौली प्राणों को घाटी ।

स्वर्ण हृद्य से सटा पंख मन के
कभी तैरते मिथुन निकट घाते
बुमा मुहर श्रीघारें नीसावत
देख दूसरे को फिर बिलनाते !

धर्म विवृत्त तन शोभा जल पट से
जपक पुष्पों की मकली पुत्रिय
मधु परम पावक से विरचित सी —
नता प्रता से भी सरसी परिवृत्त !

मुग्ध करम सा जगता तरुण धवित
कमल जता सी कुसुम कसा वस्त्रित
सावत रस जतस सी पुष्करिणी
प्रकृति पुष्प हों नीला सुख मञ्जित !

त्वच से लिपटे गीसे मसृण बसन
प्रिय धवमव सीष्ठव करते धक्ति
पुनच्छित्त धंगों में वा बृह पीस्व
तनु देही में कोमलता मूर्च्छित !

जल से ही उतरा स्वत पर जीवन
जल की जल तर हृच्छ स विह्वल
रस समाधि में वे निमग्न दोनों
पा जल का त्वच स्पष्ट प्राण कोमल !

दोब रहे वे क्षितमिल कर तारे
निश्चेतन बल तल रहस्य बीपन
कर्म जग्या में जग भू शोभा
खोज रही थी स्वप्नित कुमुद नयन !

पुष्कर के स्थातिक शोषाणों पर
रूपति बैठे वे धव पुनच्छित्त मन
तुल्य तब जल पर तन मन प्राणों पर
श्वोत्प्ला का वा छत्रा सम्माहन !

स्वर्णों के झुटपुट सी शशि धापा
 सातस मुख में करखी उर सज्जित
 धपपबिता सठा सी सित श्यामस
 धम बय को कर रस तम स मङ्कित !
 धारं बस्त गिरि वर्षा से भीयी
 ऊँच नीच शोभाधों की शोभी
 सिद्धर कसस से भाठे उभरे स्तन
 इत कटि पेशस बचन पुष्पुस खोपी ! -
 मारहीन शशि सेखा सी ठिखी
 कुमुम जसासय में सपती शोभित
 काम पुष्प के स्वर्णम दर्पण में
 रठि की शोभा हो शास्त्रत विम्बित ।
 कुस न सके से कनक काम बधन
 देह वृत्तियो का इष्टा या मम
 उसे अंक भर शोभा मुख धजित
 सहता रस धानद शक्ति दंशन !
 प्राणों की हो सर्प शक्ति जाप्रद
 चढ़ती भावों के सित चानों पर
 सूक्ष्म रूप रस बोध मधुरिमा मुख
 धंतर में फूलों से पड़ते शर !
 साज शुभ्र उसके मुख सरसिख पर
 धंक्रि कर सत रस धतुण्ड चुंबन
 ज्योरस्मा को धक्षित कर मुख धजित
 रूप समाधित कहता प्रणय बचन -

धो बिबसन शंया की प्रिय प्रतिमे
 यह चदन शीरस का शंषक तन
 यौवन के मधु पावक में निबहरा
 शुभ्र प्रीति का रस प्रवण कांचन !
 धो प्राणों के मुख की तन्मयते
 धार पार तुम दर्पण मी उजबस
 धपने को कर तुम्हें प्रीति धपित
 बन जाता मन पंक मुक्त निर्मल !

धमती हरिष्ठ पुमिन पर आकांक्षा
मुन स्वर्गिम मूर्तो का मधु गुंजन
स्वप्नों के सापानो पर चढ़ गिर
प्राप्त खतना करती धारोहन ।

भार मुक्त मन हूबब - न मैं तुमसे
रख सकता हूँ अब कुछ भी योपन
घटिक्म करता स्वर्ग मर्त्य का सुख
पूर्व समर्पण का यह पावन क्षण ।

ताश पडा पडा तन पर आभिस
हृदिमुदि उर सरसी तम सा स्पंशित
बने केन नहरे तम से कोमल
लोभा तन मत करती आच्छादित ।

घतन घन्तन का जाने कैसे
भौषिवासा हो उठता हिस्तोमित
कामे बन की पीर दामिनी सी
इच्छा प्राप्ता का करती मंशित ।

बाँध मुबसक खोल द्य स्मित फन
नाम बुहा में पग करता नर्तन
साँसो से मुलमा उर मे ज्वाला
मूर्च्छित करता मर्म अंध वंदन ।

तुम रस पुष्करिणी हो शिठ बीठन
मन लोभा में करता प्रववाहन -
फैल बूँब बिप की घनंत चल में
प्रीति धमूत बनती - जीवन पावन ।

अप बृष्टि हो शिठ लोभा में सव
स्पशित मोह बन निम्ब भाव बिस्तृत
राग कामना उठ हृमि कर्म से
प्रीति खतना में हृष्टी विकशित ।

फिर भी आकुल मेरा उर मुपये -
प्रेम सर्वमली पावक निश्चित
पुष्प बाध ही नहीं स्पशित शक्ति भी
मूझे तुम्हारे प्रति करती प्रेरित ।

शून्य बायबी खिचिआ में उड़ता
सर्व - प्रेम उर पख खाय निस्तुव
उपचेतन की वास्तवता को छु
व्यक्ति प्रेम होडा सार्बक उपहृत ।

धव प्रिये तुमको धामिगत कर -
धय जय को बाँहा में भर धतर
रति तम्मय धठिक्रम करता जय को
छु धसीम निस्तुल प्रहर्ष के स्तर ।

बह किरण पीकर स्मित धधरों की
मुधा वृन्त होठा रस धाकुस मन
पर्वत मासल उर धाटी में खी
पाता धपने को कृतार्थ यीवन ।

ज्योति तमस मुच्छिठ तुम प्रिय ज्योत्स्ने
मेरे मोहित प्राभा का धाठी
हरित नील तलहटियों में बजती
मदिर बटियों की मधु ध्वनि धाठी ।

रक्त नील बन ताभ बप छाया
बाने कैसी बन म यँडपठी
सुनवा द्रासा झोठा की टसमस
रस निर्धारिणी काना में गाठी ।

प्राणों की धंधा तुप्या सापर
धीब रहे उर के निरचेतन तल
धूम तनो रस धँबर चेतना में
उप सामसा को करता बंधन ।

मगा कुमुम को निज बिह्वन उर से
कूदा बह पुष्कर में रस बनिव
जस कीड़ा हो यीन सनाधि धयम -
छेनोन्ध्वसिठ पुसिन जल धाशानिठ ।

स्त्रीत प्कार में गिर ज्या फूस मुयल
जब डूब करते गति जब ताकिठ
प्राय सिन्धु में तुषाबन् दा देह
विरली तमय मुग्ध धात्म बिस्तुन ।

बन्ध स्तंभ सी धी बसिष्ठ जाँसै
 तिम्र काम ज्वाला से परिवेष्टित
 उमङ्क ध्वजतन स प्रमत्त महर्
 दूष्य मुखरो सी समरी मतिव ।

तद्विद् पात होता रस का बुधैर
 भूमि भूम सा भँसता उर भीतर,
 स्रष्ट सहस्र भङ्गि वंसा से विङ्गम
 प्राण खोजते शीतल मरकत सर ।

बाहु पाण स छुवा बेह नतिफा
 बोधी कसात कुसुम सन्धा सोहित
 प्रलय भोग के धीर बिलस साधन
 धर सुजन रति में हो बह कुसुमित ।

संयम बस जो ध्यात्म ग्मानि मचित
 हुमा ध्वजित ना हृदय बिरति पीडित
 मंद पङ्क गई मानस शक्ति ज्योत्स्ना
 तम समुद्र में हुई दृष्टि मञ्जित ।

नर नारी की हृदय मुक्ति चोतक
 बुध्र प्रीति चेतना भाव सुरमित
 सित उज्जाम भरती जो मंजर मे
 छिन्न पंख बह हुई पंख झुटित ।

हृदय कमल कुम्हभाया रति तम में
 मांस पिङ्ग बन पया प्रकाश धमित
 उचित हो रखा पक्ष धैतव्य मुबन
 हुमा धस्तमित - गर्त मुजय कबमित ।

शीत कर्म प्रति बह पक्षु धर्म जति
 मत्त मू संस्कारों से ना पीडित
 उद्यम मही ना सका जिठे मू २
 संसृत्य स्तर पर सित प्रहर्ष प्रीति

जस बिहनों सा मधु कमरन म
 प्राण बहाँ मुबक मुबती उल ४
 तरल हँसी की रजत हिलोरों

पुमिन कल में पहन बस्त्र नूतन
 मिसी कुमुम हुत सबा सपी बम में—
 केन्द्र प्रभा थी हुरों में स्त्री नर
 बिभरण करते संस्क्रुति प्रांगण में !
 निपुठ मिलन का भी पाते प्रबसर
 युवति युवक भीतर से संरक्षित
 भावों धावेगों का कर विनिमय
 राम सतुमन हो जिससे स्थापित !
 भाव प्रबम दुर्बल बरिह के प्रति
 आपत् रहते स्नेही सहजर नित
 प्रीति मनोहर विधियों से उसको
 नब संस्कारों में करते वीक्षित !
 व्यक्त न करती मर्म भाव सीमा
 मठ बन मू संस्कारों से पीक्षित
 प्रबम भीत उव भाव गुठिता का
 हृदय रूप प्रति वा अपने कुंठित !
 सहज स्नेह से शकर ने उसको
 कुंठा मुक्त क्रिया—घठ संस्क्रुत
 गुह्य कर्म धव वा न प्रेम बजित
 मूक पिकी उर हुषा भीम मुब्रित !
 मूह समस्याधों पर बनि का मठ
 सेते सहृदय छात्र तर्क प्रेरित
 धारसों को कर जीवन मूर्तित
 हृदय निकप में कमते अदाभित !

व्यक्ति प्रेम रनि अनुभव हो विकसित
 मुझे नहीं इससे विरोध किबिष्
 निबिभ घटीत ममुज की मठ संस्क्रुति
 व्यक्ति प्रीति ही की परिणति निश्चित !
 बंसी कहवा—सर्व प्रीति का मुव
 कसा स्वर्ग का तज्य—मानबोषित
 मुभ्र प्रीति का सनु भाव—संस्क्रुत
 मर नारी उर करे सहज निमित !

राग भावना का पट हो विस्तृत
प्राण प्रफुल्लित हो मू जीवन पथ
प्रीति मान स मिटे द्वेष कम्प
पंक मुक्त बिचरे शाभा का रस !

प्रीति मुनि की मुद्र पीठ पर ही
व्यक्ति प्रकृति भी हा संकटी विकसित
समदिक जीवन बिचरे तितरों पर
ऊर्ध्व गमन हा मुग्ध व्यक्ति के हित !

धबित कुमुद से कसा केन्द्र संतति
मू शोभा रचना मगन में रत
उपचेतन सकिता से सुख्य धबित
बनता धीरे रस संस्कृत संयत !

चिनमारी पा मूठ प्रंगार जैसे
नद ज्वालाम से ही उठता बेष्टित
वैद्य स्वर्ण पा उपचेतन का तम
रस प्रकाश की म होता जीवित !

वर्ष राग रति भाव मूल्य पीड़ित
मू जीवन का वा उपचेतन मन
बस रहा वा कवि नद संस्कृति हित
व्यक्ति प्रीति मर रूप मोह बंधन !

नम्य चेतना ने उर क्षितिजों में
व्योति रस मुबन किए जहाँ विकसित
रुद्रि मुक्त निश्चेतन कर्तों में
दुर्द बहाँ रस तूष्णा धादोसित !

प्राणा का जीवन शत स्वप्नों में
करता अपने को नित धमिर्धबित
अचन नामि स्तन प्रसर मयन मुब की
बप प्रतीको में बहु का चिहित !

पत्र कर धँवर, मण्डल रक्त पत्तन
मीस कमल सति हो धनिमेय उल्लि
मनोदुर्गों को करते मुग्ध सहज

कर्ण धेतना के अंतर पट सुम
प्राणो की रश्मि को करते विकसित
निहार भाव शोभा के ज्योति किरण
रस प्रहर्ष से करते उर पुसकित !

शोभा प्रेम सूजन प्रहय ही में
काम पूर्ण होता विकसित उपहृत
प्रधोमुखी वह, मानव मूर्खों स
रखना पड़ता पशु मुख को भासित !

कसापीठ में लभिक शुण्य होकर
कनी संतुलित हुआ काम का बल
धी शोभा रस के धानक धुनन
धुने रहस्यों के फँसा सित रस !

कमल फुल से बिसे धंग कोमल
गाता प्राण किरणों में सोमित
पारिबात बदन की सी सौरभ
तम से भा मन को करती मोहित !

मूक भाव शोभाएँ सहस्र निवर
धानन की करती धामा मञ्जित
मयमों की नीमिमा स्वप्न स्मित सी
बिस्मय सरसी में सगती मञ्जित !

सित संयम ही से कृतार्थ होता
प्राणों के उन्नत मुख का जीवन
रस समग्र पूर्वता प्राप्त कर ही
बुसता धार्या का सौन्दर्य मुनन !

जीवन शोभा से मानन मुपमा
मानस मुपमा से चिह्न रस ज्वावन
उमङ्क प्रकाशां स प्रकाश अक्षय
पावन करते क्या स्वय प्राणन !

वह मितन के मुख का धनिष्म कर
भाव मितन क रस प्रहय में मय
मुबति मुबक क प्राणा के तम में
हैमता मय जीवन का अक्षोदय !

भाव वह की भाषा से प्रेरित
 प्राणों के परिणय में बँध यौवन
 सित रस सागर में तिरता तन्मय
 ऊर्ध्व प्रथमताया म कर मञ्जम ।
 मन के नम में भावों के मधु मध
 भावा के नम में लोभा शक्ति मुख
 मुख लोभा में सित सुरधनु किरन
 प्रतिच्छवित करती शाश्वत रस मुख ।
 अमित रस पासोको में विगसित
 सहरा उल्ले उर पाक सामर
 वृजन प्रेरणा भर सित प्राणो म
 धामनित करते प्रकाश प्रबर ।
 मन कहता यौवन के प्राण्य में
 अत भाषा पीठ गढ़े जीवन
 स्वर्गे प्रीति को मर्त्य प्रीति रम म
 परिचय कर उपहृत हो मुन दर्शन ।

राम भावना स्थिति स युवका की
 कवि ने हरि को बुना किया प्रबगत
 प्राण्य शक्ति नूतन प्रकाश प्रेरित
 मू रचना कर्मों म हो परिणत ।
 नव बसंत उत्सव की प्रबधि बड़ा
 भू मम पर्व बना उसको कुमुमित
 जन प्राणो की लोभा रचना हित
 किया युवक युवती को उसाहित ।
 प्राण्य शान देना या मृत शव को -
 बहिरंतर की स्थितियों से मर्बित -
 भीतर की जड़ परंपरा बाधक
 बाहर या जन जीवन असंघठित ।
 युवति युवक भू जन में भूम मिल कर
 हगने मन के लका मय संलय
 संसृष्ट स्तर पर कर अतीत जीवन
 उच्च कृतियों या देन परिचय ।

मुक्त जनों में वे गत संस्कृति के
उच्च मध्य स्तर पर भी जो विचटित
काम पंक्त में सता घरा जीवन
ऊर्ध्व खेणियों के प्रति था वदित !

धाम सुवर्तियों की सैवार प्रिय छवि
निजुधों के तम मन कर थी भूपित
शोभा का सिद्ध कल्प बुल भू पर
उठा स्वम से करने वे रोपित !

बहिमुख्य बन जन भू पर शोभा
जीवन ममत्त करे प्रथम वदित
सुदर स्तर पर हा जीवन बाहित
वन धम से भू स्वर्ग करें भजित !

धरतमुख्य बने फिर सिद्ध शोभा
राम बतना हो व्यापक विकसित
गीति छंद में बिई मुक्त स्त्री नर
हृदय सुरभि से ही जन भू सुरभित !

वन-धम में धर नव युग संयोजन
कसा छात्र ऋत बिद् से धनुप्राणित
भू जीवन की शोभा प्रतिमा में
शुभ मलय सिद्ध को करते स्थापित !

बुणा ट्रेप के कटक बुन उर से
मनुज हृदय का कर सतदम विकसित
मध्य युगो के मुंड मक्त मन को
नव समाज में करते संयोजित !

धधामुखी बन उलट मया था उर
पर हित निमम जीवन प्रति कुठित
सहृदयता सहभाज जमा उसका
ऊर्ध्व प्राण करत कदना विन्वृत !

गाँवों में मज्जिय वा धर नव मन
तर्क बिठकों में रहते जन रत
कभी जूम टकराते धापम में
प्रयतिजीव प्रतिगामी बस के मन !

इस प्रकार नव मानव का जीवन
धमर वीर्य बन उगता धरती पर
श्री शोभा धानव शम्भु में फल
ज्योति प्रीति मंगल मधु संभव कर ।

सुखन हर्ष से रोमांचित जीवन
लोक कर्म प्रेरित होता सार्धक
स्वर्ग प्रीति में मृषा हृदय संयम
श्री स्वप्नों से रहते दृग प्रपन्नक ।

कहते वे धिक् मन्मथुमी मन को
बिखने मू का दी बिचरित बर्जन
दिया पारलौकिक का प्राकर्षण
कर्म प्रेरणा से बंधित कर बन ।

बाध कर्म फल क्रम में जीवन को
पूर्व जन्म की रच निर्मम श्रुंखस
धमर बना नियति विम का मिच्छिम
पाप पुण्य भय बिबा किया निर्वास ।

धिक्, जग जीवन को मिथ्या बतला
रिक्त मुक्ति हित सेवा मूह का बन
घोर बरिख क्रूर्य बना मू को
मूठी घास्वा वी मूठे साधन ।

पक्षाघात प्रसिध पा मू बन को
भर घाते कदगा बन से लोचन
रधिर उबमता हृदय बिचरनों में
प्रेम सृष्टि को देख तरक प्रायण ।

प्रीति रक्त से सीध घरा मन को
उपचाते जीवन प्ररोह मूठन
गूँध स्वर्ग स्वप्ना मे मू बेधी
रख मूठन को देते संजीवन ।

घरा स्वर्ग ही में प्रभु का पुजन
सिद्धमाते रचना धम कर धर्षण
जीवन शोभा का नैरेण चढ़ा
भाव दीप्त बधि मे कर नीराजन ।

प्रत्यसंख्य जन माघा के धनुषर
 रण कुचक करते बिरछ जन मठ
 नव प्रकार का लहराता सागर
 हास तमम जप बतना अहि पर्वत !
 युग समपण बा सम्मुख भीषण
 धगुर धवीठ प्रबल समु सिधु अधिनव
 म् कर्दम क धतस गर्त तम को
 एक रश्मि दीपित कर - मभव !

माघा वे धस्वस्य दख उनका
 सौट रहा बा पर उमन संकर
 कसा तिविर क निकट गुल्म तम में
 उसे सुत पड़ा बुधा दीप मूठ स्वर !
 ठिठक बकित हाकर देखा उसने
 धवस पीठ सत्ता का लघु मुठन
 सौष से रहा बा कपे शाकी में
 करपा कोमस कर धरप्य रोपन !

सर्व दृष्टि रवि इस पश्चिम तम में
 फेर रहा बा काध ग्कठ धानन
 तम प्रबल स डेकती धरकी मुब -
 नव जीवन क जन्म मरण का क्षण !

मिस्नी सी हूतवो बज धनधन
 जाने क्या कहती विधि म सोपन
 प्राण प्रबोधन करता या प्रेरित
 शिगु वा जीवन का स्फुसिय बतन !

उसे धंक से मकर ने देखा
 स्वप्न मुहुस सा बा नव शिगु सुंदर
 कसा तिविर क शिगु गूह को उमने
 सौष दिया उमका से जा मन्बर !

मुनकर शिगु का नियति कुत् काठर
 दीने मंस्टूति मंकिर में मर्मर
 मानव कण्ठा बिजयी हुई जनी
 मय संभय कट्टु कृमा क्रमय पर !

हरि की सहमति क विरुद्ध कवि मैं
किमा इविठ हो अभिनव का स्वागत
बस्तु वृष्टि से वा हरि पार्श्वकित
कवि हित वा निगु भू का प्रम्यामत ।

नही प्रनावाथम मह - कहता हरि,
कसा पीठ पावन संस्कृति प्रांगण
परंपरा का हृदय कुचल - करते
तुम पर्वत बाघा का प्रावाहन !

बैसे ही गाँवा में प्रतिपत्नी
सते गुप्त बरबर पछड़ नित
बढ़ता बाठा निपर्याम धीरे
वृष्टि तुम्हारी उम्हें नहीं स्वीकृत ।

तुम स्वयंश चला हो नि सहाय
पर कास्तबता से न पक्षिक परिचित
बानू में सित रोप स्वर्ग टहनी
उसे स्वप्न जस से करते सिचित ।

नोह निपति पित्रर प्रिय मानव को
उसे मुक्ति से स्वीकृत जब बंधन
नईम से प्रबगत बहु शाय उसे
मुमम न समज ही धाकात मुमन ।

मृग मरीचिका का भी बाध उस
सीमा रेखा को उसने पक्षि -
इधर गरक है उधर स्वग - मध्यम
पत्र उसके मन को चिर धंपीकृत !

मुझे दुख मैं भी न पूर्ण सहमत
पाता धपने का इस जीवन से
बेह माँह सकता न पंगु जीवन
मनुष्य न गृह सकता कथम मन स !

निश्चय नव जीवन की परबलता
गुस्म कोच ने बना मनुष्य बालक
केन्द्र नहीं वापिरण मुक्त इससे
बहु पविष्य जीवन का संशालक ।

बिस्मय हूँ सा बैठ गया बगी
 दुसह बोन न सह पाया धर
 दूटा हो उम पर घटीत पर्वत
 तम में बुझ सी गई किरण क्षण भर !
 देख स्तब्ध कवि का निरुद्ध शिबु मुख
 स्वग हो रहा था शिममें बिम्बित
 मनस्ताप हरि झुठला निब मम को
 हुमा पुन पुन कवि के प्रति अपित !
 धार पार कवि देख मका हरि का
 महसा वा फिर म्पाति केन्द्र भास्वर -
 वृष सा फेंका मूतक भार मन म
 काल बरू हो घुमा उर भीतर !
 नैतिकता का पाश छिन्न कर हरि
 गाह न पाया वा प्रकाश सापर
 ज्ञानगत का वा स्पर्श प्रीति स्वभिम
 उठ न सका वा वह मन म ऊपर !
 केन्द्र चतना धमून मरोबर क
 तट पर बैठा करता मन्नामित
 जीवन मम की लहरा को बाहर, -
 दृष्टि न थी प्रंतर म धनुप्राणित !

उत्तर सहसा र न मका बगी
 वा घटीत से प्राकृत जन प्रंतर
 निव बिप् खेपी में बड़ सोदोतर
 मूर्तिव होना वा मब को पू पर !
 दैन साप्रत सीमा बन मकनी
 माधी पू जीवन बिकाम दपण
 द्रवित घटीत शिमा हार्ति निमम
 बिजयी होगा मूचि मूरम मूतन !
 मपु धपुनतामा म ही गुफित
 गुप्त्र पूर्णता का पट निःसंजय
 पूर्ण धपुन उभय म ही प्रतियय
 रम स्वभिम चैतन्य प्रीति - लम्पय !

एक दृष्टि की बत्ती के भीतर
मानव भावी स्वप्न तूफान प्रकृत -
स्फि रीति में पसरई जन की
दृष्टि दूधरी की जीवन कुण्डल !

जन जीवन मन में प्रयोग अभिनव
करता वह स्वप्न प्रकाश प्रेरित
खुद बुधित को मनुष्य प्रीति बल से
भू जीवन पट से कर प्रकाशित ।

जीवन ? जीवन ही के पावन से
छटा स्वर्ग हो सकता नव निमित्त
पंगु न जीवन ! (निश्चय मृत बल मन ।)
उड़ सकता वह भूम नील प्रविशित ।

जीवन सत्य नहीं प्रकाश कुसुम
मृग सुष्मा चित् कोठ नहीं निश्चित
पठ मुक्त की बद्धि वास्तवता को
पूर्ण चेतना में होना विकसित ।

सच्ची वास्तवता प्रविध्य मुक्ति
मृग वास्तवता मात्र ह्रास विघटन
स्वभू स्वर्ग गहनी निव रस बद्धि
उर स्वप्नो से ही संभव सिद्धन !

बद्धि स्तमित निश्चिद्य रज्जु ही
गहरी नश्य पव - धंस प्रमथि सूचक
स्वर्ग विकास धरा का ह्रास तरक
जीवन दोषी छिद्र दृष्टि मूपक !

निश्चिद्य विश्व ही धार प्रनाशक
सुप्तम मनुष्य को चहाँ न सुद साधन -
धकधनीय जन भू विकास की स्थिति
मानव भसी धनी मनुष्य का मन ।

क्या पीठ क्या ? - कहा शीघ्र कवि ने
मृतन प्राक्तन का युग संश्लेष
नश्य चेतना में कर चारोहण
जन मन को करना भू पर विचरण ।

ज्ञान प्रेम धार्मिक शक्ति शोभा
 सत्व ब्रह्म यत् मानव के निरुपम
 राष्ट्र मायकों का दायित्व प्रथम
 रहे लोक जन हित जीवन-सुखमय !
 भिक्षु उनको पद गौरव के बल पर
 ईश्वर पंखरो पर करते शासन
 हृदय हीन जन धर्म के अपव्ययी
 मज्जा नन मत्र मानव का धामन !

माघो क सिष्यो ने ईर्ष्या बस
 कसा, पीठ धू को करने साछित
 बस अहाते के सम्मुख सिधु को
 निज कलक करना बाहा छारित !
 निविर सार्भभौमिक विकास के हित
 प्रीति मुक्ति को करता प्रोत्साहित -
 योपन कुर्यो की कटु परपरा
 बिगत युगों की बेत रही कुरितव !
 कसा केन्द्र में भी दुर्बल क्षम में
 होठा यदि अमिभूत तन्म यौवन
 स्वीकृत करता कवि अतिष्ट कस को -
 राम खेत का दुष्कर परिमार्जन !
 उच्च ध्येय वा युग कवि के सम्मुख -
 असफलता स मज्जता मित साधन -
 राम बेतना हो धू की संस्कृत
 धरा स्वर्ग हो प्रीति प्रथित पावन !
 फिर मनुजोचित भी सिधु संरक्षण
 परंपरा का प्रश्न न वा प्राकृत -
 हरि का नैतिक मग्नु दंस छाकर
 युग कवि का मन हुआ नहीं बिचलित !
 बन्द बेतना का रस सित सामर
 बड़ प्रतीत क तट करता प्सावित
 बुद्बुद से गिरते चरित उसमें
 प्रथम मनुजता - व्यक्ति पौष निश्चित !

कहता कवि मन भू विद्यात क्रम में
यही सत्य हो रहा मूजन छंदित —
बला त्रिबिर में मार तत्व संदूत
स्वप्न तुमि स भसे जगे पकिण्ड !

उस बोध या जड़ यथार्थ कैस
सत्य पाग में होगा खयोचित
टीम पमारे नेटी वास्तवता
सत्य करे उसको प्रकाग ममित !

देख नवावत का मुख धारै हृष्य
कवि के मन में हुमा स्फुरण बोधन —
दिग् विराट् मन्तराचर में व्यापक
हुमा जनम पद्धति का उद्घाटन !

पावक ज्योति मरंबों से विरचित
मातृ प्रकृति का भग वा रज पावन
स्वप्नित सित कलो में थे पुत्रित
जीव धेनियो के घसक्य चित् कय !

सोच रहा या कवि पकिण्ड नव दिग्
भमित योनियो के क्रम में छन कर
पथ तत्व तन्मात्रा मे निमित्त
मूकम स्पूस का मूर्त रूप मुदर !

बुद्धि प्राण मन धई हृष्य चित् से
भाव प्रबल रस यत्र हुमा कल्पित
घनक विद्ध आत्मा रज पंजर में
कैम मुकन बंधी भव नीमा हित !

जाइवत निमिया म जागा घपसक
क्य घक्य हुए मिल महिमान्धित
स्वर्न ज्योति चित् तर ने नून्य तमस
जीवन घटनालय में किया इचित !

कीन नाम रे तुम्हें पुकारा भग
दिन क्यो में देखें जन सोचन ?
अब धमर्य ही स्वयं मर्त्य बनकर
कर्म मुखर करता जन भू प्रायज !

धनाधमनसगाणर बन पूगू गोचर
 ज्यों में भरता धसकर घास्य
 धिक उस मन का तुमको पा उर में
 जो तुम पर जग पर करता संजय !
 सिन्धु का मुक्त धवसोक सोचना कवि
 कौन भला इससे जग में पावन ?
 जाति बस कुल मोक्ष मनुज की कृति
 ममबद् गोत्र सनातन नर सक्षण !
 किस विनिष्ट गुन से हा सिन्धु मर्मित
 धायक स्वयं दया से धमियेकित
 वैतिक सस्कारों पर ही बिजयी
 इसे धरा पप करना नब निमित्त !
 प्रकृति पुण्य इसके प्रिय जननि जनक -
 पूर्ण धरा जीवन जो ही बिकसित
 जो बिजुड हो तन मन भव प्रागम
 मानवता म हों प्रभु रज-मूर्तित !
 मेधा प्रबचन से न प्राप्त ईश्वर
 धर्ष सत्य विज्ञान मीति वजन
 ध्यान धारण म न तब बँटता
 उस मूर्त करना दे नब जीवन !
 धमूत सिन्धु हा प्रथमु सिन्धु भीतर,
 मुहुम मुहुन में हो बसंत मासगत
 हो स्वगिक संभीत मूक स्वर में -
 सिन्धु रहस्य जगती का - कवि धमिमत !

यथा करती नब सिन्धु का पासन
 उन प्रीति का घाता सहज स्मरण -
 मातृ द्वार की स्त्रियां पूर्ण प्रह का
 धीरे सिन्धु का करती धमिमधम !
 धनुम माम बची ने दिया उसे
 बड़वा बह पा जीवन निपति संसृष्ट
 पुत्रहीन स्त्री जग रीते उर का
 मुक्त प्रेम उसको करती धमिपि !

सोरी पाठी थड़ा फिर ना बन
जीवन प्राण के प्रति थड़ा नत
बढ़ दृष्टि - जब पाप क्षेत्र संगूर,
सत्य दृष्टि - जब धरार, सित शारवत !

गाठी धात्री मुख स्नेह तमय
हुसा पाजने मे तिसु को छारर,
दिना हिलोला पावन तिसु ईस्वर,
काल मुसाठा बपकी दे निस्वर ! -

गायो नव माटी गायो
मुझा का हृदय पितामों
कपहूनी नीसिमापों से
नम की अप्परिमो धायो ।

रत्नछाया पर बूनकर
भो जोमा में निपटायो
स्वयिम फिरना ही असरें
शक्ति मुख से बिहूँस हूनायो ।

सखि धरा गूहापों में नव
जीवन स्वर्वाय नयायो
रस मिठ नव पित् सोठों मे
गन्हें का मन नहनायो ।

बीना तारों म सोई
स्वयिम स्मृति उसे बवायो
शास्वत की तमय समय में
नव तिसु का हृदय बुबायो ।

नव जोमा के किरितियों में
लासन का मुख उबायो
स्वप्नों के बन की सौरम
नामा पुट में बरनायो ।

जीवन विकास कम को नव
धानर उँर वे जाया
नाचा नव स्वर संपति में
विधि की बाबी मनबायो ।

सोया बिट् पावन का कण
दिनु धतर में मुसगाघा
घेसे हेंस प्राबि मिश्रीनी
सीमा धसीम मुसकाघो !
तुम मानव की स्वधस्त्री
नव जीवन धमूत विसाघो
लिनु उर म श्रुत रस वैभव
बरसा भव शोक मिटाघो !
जीवन की सित शृंखल में
करुणे नव कड़ी मगाघो
यह मानव धारमन पावन
बेतने इस धपताघो !

मरव वीय जीवन क लिनु को
धू करम से उठा पोंछ कर
स्वर्म दया - नव धरत धतमा
धू मा सी गोदी सैती भर !
मुला प्रीठि पसने में उरका
बिट् रस स करमा सपोपन
धू विकास के कट्टु रप में बह
बिजयी हो धाप्रनु नव बेतन !

अन्तर्विरोध

तिमिर विमल प्रणाम तुम्हें कवि का
तुम अकण्ठित ज्योति रूप शास्त्र
घादि सृष्टि आघार जिम्मा रस मुह्य
प्रकृति योनि रति अचित् रूप अक्षत !

सृष्टि अविद्या म दो युग कवि को
देख निम्ना के पार सक अंतर,
विद्या का सित तीर्थ वने धू मन
खुले ज्योति अमरत्व भोक भीतर !

देख तुम्हारी भगवच्छवि मिय तम
वस्त्र मरुत भय मिटे बुद्धि संभव
जीवन बोध अने तद्गुण उर में
अङ्क संस्कार धरा मन के हों क्षय !

गुहा तिमिर से ज्योति ज्योति से तम
निश्चित विश्व जिसका भीमा प्राण्य
ज्योति तमस से परे सुखन सुख रत
प्रेम तत्व अंत प्रेम अक्ष पावन !

कटें अक्ष तम मूढ़ भोक मन के
ज्योति अक्ष युग पाएँ सृष्टि नवस
अज्ञान का कर नव रस मूल्याकम
धीरि स्वग हो भेद भ्रम सृष्टल !

जिहा मुगांत तमिस्र विश्व मुख पर
अंतर में होता नव अक्षोदय
मन अक्षिण पर उचित मुझ रस अक्षि
प्राण गुहा तम नव प्रकाश तन्मय !

किरण तूनि से भर सतरंग छाया
गिरे करा कवि स्वप्न हृदय धकित
धास्वा की झंकार भरो जन में
जामें वे जो नभ मय प्रति निद्रित ।

छाया मावस का सठमस सधन
ज्योति पर्व का धाया पावन दण
नभ दीपोरसब मना रहे भू जन
भूत निशा हो उठी स्वर्ग चेतन ।
नव सूर्यो की धाया का दर्पण
धंशकार का कदना नम धांगन
पूर्व सत्य का मुख न देख पाए
दिवा दृष्टि क नीड भीरु लोचन ।

स्वर्षिम सपटो में सा सुसय उठा
स्वप्न शिखा जन भू तम का धनस
ज्योति बिड निश्चेतन प्राण भुवन
जाम उठे धंगड़ा सोए बिशि पत ।

बिहंस उठे भू ममस् पास मुष्मय
धतर्दष्टि मिली जम को धमिनन
जीवन प्राणन चित् प्ररोह प्रहमित
जया रही जम भू ज्योतिर्बैभव ।

बुद्धि घोट छिप रश्मि चतना की
जम जीवन पय करती थी ज्योतिव
स्वर्ग बिधा धब उठरी भू मम में
रज के रोम कनक सौ में कुमुमित ।

शुभे धविषा दैव्य सौह बंधन
कर्मय का मुख दिव कस्या उज्वल
स्नेह बति चेतमा प्राण मिस कर
मता रहे नभ भू जीवन ममल ।

मृदु दीपा का धपमक व्योम खंजो
जन भू मन का क्षितिज बिधा बिस्तुठ
गूह धामिन पब धाम नगर तोरण
पावक ध्वज छवि दीप शिखा मंडित ।

प्रकट प्रभा इन्द्रिय गवाक्ष मुख पर
 मन बाणी से परे ऊँच प्रसर
 जग जीवन सब स्वयं ज्योति मंदि
 माया के पय बिह्व बिछे भू पर ।
 धरा दीप ही ईश्वर का प्रतिनिधि
 मूर्त का प्रालोक मिए प्रलय
 पूर्ण हुआ बिगम मूर्तय सौ बन
 उपस्तेज पी महत् - स्नेह तन्मय ।

काल नीस पङ्कुर सा लयता नम
 तम वासुकि हो दिक् कुञ्ज मारे
 फेन स्फीत हत विप फन फैसाए -
 स्फोटा मणियो से जमते तारे ।
 ज्योति पीठ सब जग भू का जीवन
 ध्योम देखता बिस्मय से स्तमित
 मिच्छी भाल पर पी जो ज्योतिस्तपि
 भू पर सत्य हुई, जीवन मूर्तित ।
 चंपक ज्वालामाघा के धरणी ने
 पहने जयमय उत्सव प्राभूपम
 तम ने जो स्वर्णिम किरने बोह
 पूटे उनसे प्रकुर बिन् पावन ।
 धमक सुप्त प्रबोधन का पावक
 जीवन शोभा लपटो में मुहुलित
 मन प्राणों के मुबनो वा बिप्लव
 स्वग सृजन संगति में मयोजित ।

ज्योति तमस की प्रभुमुत ज्ञाना म
 देख रहा वा बधि बिस्मिन सोचन -
 जग ने रहा पन भू प्रांगन में
 तप्य कम्प - सब शक्ति वा प्राकृतन ।
 स्वयं केन्द्र जीवन बिकाग में भी
 लयना सब मतिरोध कही सोपन
 रमोप्रबन के बिमुद्य प्रबेतन स्तर
 उद्वेगिन करते मन का प्रतिक्षण ।

गत भू के संस्कारों में पोषित
प्राणों का जीवन बिभ्रोही बन
पापित करता निज स्वतंत्र सत्ता
बुनड़ा करता भावेष्टा का बन !

प्रगति रूक गई थी रस शतवृ की
कही सूक्ष्म नीतिकृता का बंधन
वृष्टि सिद्धि को कुठिल कर देता -
पठ मूल्या के प्रति बे धाकर्षण !

रस मोषा भानंद प्रीति मम म
मुक्त न उड़ पाठा यौवन का मन
जहाँ प्रतीला करत धपसक दुग
मध्य चेतना के घासोक भुवन !

स्नेह डोर म बँधे मीन हरि थी
मोह द्वीप से स्थित रस सागर मे
केन्द्र चेतना को सीमित रखते
प्रावृ स्नेह की स्वर्णिम सागर में !

उमक भाव रजत धारकों से
धनुसासित या निखिल कन्द्र जीवन
प्रसंतोष का कही गूढ़ भीतर -
भसे वहिर्यत हो सित सयानम !

मिमृत महन प्रवर्तन कस्यो में
रुद्र पड़ी थी मनुज भाव सपद्
धमिध्वसित के हित जो भी प्रातुर
प्रवचेतन का जोर सजन याच्छ !

कहा एक दिन बंसी ने धी से -
थी तुमने हरि ने मिस कर निश्चित
कसा केन्द्र को जग्न दिया भू पर
निज जीवन मत धम तप कर धर्षित !

धैर्य तुम्हो का संसृति प्राणय का
स्वग स्वप्न तुमने भू पयकों पर
मूठ किया - शाब्दिक कल्पना स
हा मरना ज्ञान मुक्त नहीं धंजर !

किर कृतमदा ज्ञापन कौन करे ?
मुझसे अधिक तुम्हारा यह प्रिय धन
किन्तु, देखता नभ्य चेतना प्रति
अभी नहीं चुन सका निरी का मन ।

आतु स्नेह की बेगि पार कर ही
तुम्हें मिलेगा अतर्कित भास्वर
वहाँ छेड़ते तन्मय बंजी ध्वनि
निराधार रम पुष्प खड़े निस्वर ।

आतु प्रेम प्रति अज्ञापित जीवन
अपने में सित संस्कृति निधि निश्चय
पर धू हा अमबद् चित् रस नायर,
अप्रेम प्रेम के लिए प्रेम अक्षय ।

आतु प्रेम में महत् वेन्द्र जीवन
अनुज प्रीति का यह व्यापक प्रायण
मिटे मोह अतिथक नैतिकता का
अभिषेक हा अंतर्हित जीवन ।

तुम हरि से रह दूर अमपदों में
अ गचना अंगन का ये दुःख अत
अस्तुत करो कुक्ष्य अरा का मुख
अकर के अंग नाक अर्म में रह ।

अुंदर प्रीति अजित भी अाँव में
अव संस्कृति अोछ अरते रोपण
अुम अिज दुःख अठा अंतुत अचि स
अोषो अर्क अरोह अमि अित् अण ।

अुक्त अृष्टि अंबो जीवन का अुक्त
अहजानी अह प्रेम - अाह अृष्टि
अह चेतना अासर में - अाहा
अह अकून रम अिममें अम अम्बित ।

हरि अ हित भी अोगा अह हितकर
अात्र अह जीवन का अितुत अन
अहाँ अ प्रीति अरुत अुक्तों अ तत
अक्त अमित अानंद - प्रेम अर्पण ।

शून्य नैतिकता पाठक जन मू हित
 धन मात्स्यकता ही जन जीवन धन -
 थी मे माँका कवि क धतर मे
 स्वच्छ प्रीति रम क मर से लावन ।
 मूजन बतना मर वा कवि बंधी
 कम शक्ति का वा हरि सात महसु
 धाव प्रेरणा थी हरि के हित भी
 जन मू मगन निष्ठा तप व्रत रत ।
 बोधी थी मे कवि की घाजा का
 करती रही मदा मन से पासन -
 जन मू जीवन क प्रति थडापित
 मरे उर क मापित का प्रतिक्रण !
 कवि क मित वैतन्य स्वर्ग के प्रति
 थी का अतुरतम वा धाकपण -
 मभार्षण कर्तव्य प्रेम हरि का
 किन्तु माहता उमका मात्स्यक मन ।

भारत जनपद जीवन वा दारण
 कड़ि रीतिया का कदम मागर,
 उम उबरक बना - कन्दु मसृति
 जन मू मन का करती रूपांतर ।
 हरि वा दुई सकल्प शक्ति पबत
 भात्म त्याग क हित धनम्य तत्पर
 नैतिक संभव वा दुई रजत कबच
 मशापार का शक्ति शीत पीठर !
 बंती भी न धर्नैतिक वा किबिन्नु
 धतिनैतिक वा उमका रम धर्म
 हरि जीवन बाष्पकता मे ध्रुव स्थित
 उठने दना मू म नहीं चरण ।
 स्वीहून करना हृदय मही हरि का
 प्रीति बतना वा रम मंजीवन
 बिपम ममम्याए मू जन मम्मूठ -
 मुक्त प्रीति हागी बाधा भीपण ।

वही धरा जीवन, मानव मन में
मना निरखर वादन संवयन
वही अचेतन वृत्ति बना कर कवि
नरक तिमिर को देता धारण ।

सुप्र राम संस्कृति के पथ से ही
समस्त स्त्री नर का जीवन संगम
हो स्त्रीत्व की स्फटिक मूर्ति मारी
गृह बूटि से बंधा स्नेह घनम !

प्रीति इकाई हो कुटुंब - स्त्री नर
प्रेमि बह ही मुक्त नहीं संशय
साध बुद्धि के पुमिन माध धारण
कर्तव्य में सन आण्ठी निश्चय !

समस्त न पाता कुछ भी हरि का मन
कवि किस धरती पर करछा विवरण
मुक्त कल्पना पंखों में उड़ वह
स्वप्नों के चुनता आकाश गुमन ।

वही प्रेम की नहीं बुधा की जय
सत्य नहीं मिथ्या का अनुनासन
संस्कृति पर पशु बंदरता विरामी
मू न ज्योति मरिच, निहित तम प्राणम ।

छिड़ता मुहूर्तों में विशाव प्राय
कहता हरि, तुम क्या उमटी धारण
बहा सफोगे जय में ? शात तुम्हें
प्रेम काम मधु सायक का मारण !

तुम केवल मानवता पर मोहित -
दानव काल स रक्षा के साधन
संप्रहृणीय न क्या जन संगम हित ?
दुर्बल मनुज प्रबल धनि निश्चयन ।

विगत विद्व हाता कब हरि कवि न
प्रीति मुक्ति न प्रति मन में अंकित
अंकर मैना पन महज कवि का
जन्मभान वा वह धत संस्कृत ।

सिद्ध धर्म रम चित्त के प्रति जायत
उसका मगता - धरत पद में धन
रंग रहे सधु मानव इमियो स
काम श्रेय हुत्या माछन में मन !

संभव उनक हित न महतु जीवन
जा घोषा क स्वभा स्वत में रत
नव मानवता का करना हागा
मुझ प्रीति का नव युग में स्वागत !

मानव बन सकता न पूर्ण मानव
जब तक हा रम शुद्ध न भू प्रायण
नाम त्याग तप - विकसित प्रेम विना
रिक्त धनुर्बन्ध नृप विमुक्ति माधन !

गंकर, - दख चुका था जा जीवन -
बहुता - यह धरा का पायलपन
मित प्रकाश को कहत य कदु तम
ज्योति मान तम का करण पूजन !

देख रहा था वह बुधर्प ममर
मानव क धतमन प्रायण में
बड़ा काम था पशु बन मना से -
प्रीति धारम विजयी निर्मय मन में !

मही तन का उत्तर दता कवि
बह यथार्थ क जग मे था परिचित
दानव तम का पीछे छोड़ - स्वय
नव प्रकार रम शतलमें था स्थित !

यन भू जीवन ही क पट में हरि
नव प्रकाश का करता मूर्खान्त
घाहूँ था कवि रम ममप्रदा में
कर पाता हरि चित्त का मही ग्रहण !

स्वय किण्व का 'बहना नरक तिमिर
दुष्टि दोष यह भू मन का निरुचय
काम धततन धर कृति जग में
प्रेम भागवत ज्योति - मही मलय !

बहि जाहता घरा मन में बोना
रम प्रकाश की नव सौम्य किरण
रश्मि स्पष्ट से षण उठते मन में
प्रसकार के मधुर बन बतन !

प्रसकार ही की उर्ध्व भू पर
बोम ज्योति के हो सकते विकसित
जीवन का बोधन रहस्य इसमें —
ज्योति तिमिर हो घट संयोजित !

विविध शक्तियाँ भू बिनाम पथ में
ब्रिम पर मानव मन करता रोहण
भाषी गत की पूरक बन माठी
नष्ट न करता पूत मिट्टि नूतन !

गमकृप्य संस्कृतियाँ रहें घटस
नैव शास्त संपद् भी निज स्वप्न पर
मृष्टि प्रक्रिया का घनम प्राणह
नव विकास का प्रतिनिधि हो युग नर !

स्वप्न नहीं यह गति प्रिय मलय चरण
नव यथार्थ की सित भू पर स्थापित
साँच रहा निज अर्थ यथार्थ स्वयं —
यह न कास्पतिक स्वर्ग मन मञ्जित !

उड़ता मानव वायुयान नभ में
भू पर रहते उमके मध्य चरण
भू से भी ऊपर बन भू की स्थिति
मन को साँच निखरता मन का मन !

ऊर्ध्व धितना भाषी समदिग् गति
मुझे नहीं इसमें किञ्चिद् अक्षय
प्रेम मलय संवन्द्य मनुज मन का
लैमझाहट भर काम — अर्थ निजि भय !

कुछ ताकिर वैज्ञानिक कुटिल बन
मिथ्या नैतिक मानों ने धोड़ित
रम प्रकाश को प्राण तमम बतमा
तब करेदैं डेय अंध माछिन !

जीवन का प्राथिक मस्यांकन कर
गैरिक्त सत्य करेंगे वे घोषित
स्वयं व्यक्तिगत जीवन को अपने
गुण्य काम ठम कक्षा बना कृत्स्न !

क्षुब्ध बिल बोसा हरि एक दिवस
प्रेम तुम्हारी वस्तु तुम्हें प्रर्पण
तुम्हीं सँघामो कसा शिविर का भव
मुझसे हो न सकेगा सञ्चालन !

घात्रा दो घर द्वार बसाई में
फिर से हार्वा में ले हँसिया हम
कही सिरी के हित भी घर खार्ज
मुझे दीखता इसमें ही मगल !

घाँसू घर बुग म बोसा बसी
हरि तुम कैसे सगते मर्माहित !
ऐसा क्या हो गया दृष्ट होकर
केन्द्र छोड़ने को जो तुम उद्यत !

धीर कौन घर द्वार चाहिए अब
तुम्हें ? केन्द्र क्या नहीं मनुज का घर ?
सिरी प्रेम के चरणों पर प्रपित
उसे नहीं चाहिए दूसरा घर !

बधु बनक हो कसा पीठ के तुम
हम सब शिशु, घासा करते पावन
उतर सका युग स्वप्न म पून अभी
केन्द्र बन सका नहीं स्वर्ग प्राप्ति !

कहा व्यक्तित हरि ने—देवों को ही
स्वर्ग सुसभ हो मुझे न बह स्वीकृत
परंपराओं का निर्बान्धित कर
मू पर होगा स्वयं नहीं निर्मित !

उष्णता धन्य धन्य ही
तरक द्वार के धर्मोमुखी सन्ध
विकसित मर्यादाओं पर निर्भर
स्वर्ग पूर्ण स्वयं संगति संयोजन !

प्रीति मुक्ति का जाने कब मू मन
समस्त सकला कबि कल्पित भाषाय
जनम मुक्ति का वर पा सब तुमसे
मचने का जन मन में मूस्य प्रसय !

प्रकृति जात शिगु का भाषय देकर
तुम बिब्य कर चुके कुछ जन मत
सब सुदर भास्या के हुत इमि से
स्वर्ग कल्पना तरक कुछ परिगत !

प्रजनन का प्रबिकार उन्हें देकर
तुमने वाल्या किया लोक पातक
भर न सकगा सती घरा उर जन
कना केन्द्र के हित भी यह बायक !
बमत करेगी घरा कोष कर्मय
हुत कलक उपजेगे नित सकर,
बर्ग बयन गत हुत संस्कारा वा
मू जीवन होगा वषय बँडहर !

प्रजनन भास्त्र नूबश नीति के भी
नियमो का हाया निष्करण हुत
पाट न पाएमा भाबो मानव
मर्त सध्यता संस्कृति का भीषय !

बोला कबि हरि क्या तुम इस कारण
छोड़ रह हो कला पीठ प्रांगण ?
केन्द्र नष्य मू संस्कृति का रस भम
जन घरा पर लेगा नब जीवन !

जो तुम कहत वह न ध्येय मेर
जन उसकी करते ऐमा चितित -
मुने इष्ट जो - वह प्रतिभाय उसम
जिमे मनुज कर सका धनी धजित !

मर्ब प्रीति स्वीकृति स जीवन के
मम क हागे मूस्य ऊर्ध्व विकर्मिन
बयन प्रयोजन जाएगा जय वा
मेव भाव होमे मू क मजिबत !

सामाजिकता होमी दिव्य विस्तृत
भाव मुक्ति स जन मन अनुप्राणित
नव प्रहर्ष से जीवन उर स्वदिव्य
शोभा होमी मू पर सम्मानित ।

मनुज प्रकृति होमी रस परिभाषित
सूक्ष्म भावनाधो का मुझ उदय
मुग्ध चयन रस साम्य बोध प्रेरित
सभव होगा हृदयो का परिषय ।

तुम कहते हो तो सुंदर भास्वा
दोनों पाणिग्रहण कर लें विधिवत्
संघन मेरे चिन्तन में सुटि हो
किन्तु सत्य जनमत से कही महत् ।

मुझे ज्ञात जिम्मे मुझ प्रणय संतति
प्रेम हुआ जन मू पर धम्यागत
मा बमने की इच्छुक भी भास्वा -
हुमा साथ कर ही कुछ भी सहमत ।

जाति पोल मत वैवाहिक प्रजनन
विगत सांस्कृतिक मूल्य धरने स्वीकृत
काम जनन मेरे मत में जारज
प्रीति प्रसन्न ही लोक मूल्य संस्कृत ।

सामाजिक स्वीकृति विवाह बंधन -
मू विकास स्थिति कम में धावत्यक
किन्तु न वह रस शुद्ध कामना का
मुझ प्रीति परिणति का परिचायक !

भोग लालसा की अनुमति भर वह
मुग्ध कल में बर भावना गति -
संघ काम धारणों न प्रेरित
हमिया भी रेंपनी मनुज संतति !

प्राप्य शक्ति दुर्बल - संघि बंधन
भाव मुक्ति हित बने नहीं बंधन
सर्व प्रीति क सित पंथा में उड़
मनुज प्रकृति कर सके ऊर्ध्व रोहण ।

प्रीति बुद्धि ही सार परिग्रह का
क्षेत्र बनाना भू पर उमके हित
परिणय बाह्य विधान मनुज जीवन
प्रीति स्वर्ग से ही होता उपहृत !

इदि रीति कदम से बाहर कद
प्रेम पथ हो सके पूर्ण विकसित
निज शोभा की दिव्य पूर्णता में
जम भू को इतइत्य कर सके नित !

नैतिक स्वयं सीमाओं में बंधकर
सामंती स्थितियों से अनुप्राणित
युग्म प्रीति रति कदम रूप कबलित
जम न सकी सित उस प्रह्वं विकसित !

प्रीति मुक्ति की चित् उस शोभा से
बहिरंतर मर्षण हो प्रथमित
भौतिक धार्मिक जीवन मिलकर
स्वर्गिक शोभा में ही मयाजित !

सर्व प्रीति प्रजित कर ही जय में
समय उन्नत धार्मिक जीवन
भाषा भाव विचार कसा संस्कृति
बन सकते स्वर्गिक शोभा स्वयं !

मर नारी की बुद्ध प्रीति ही में
भगवत् गुण हो सकते प्रभिम्बित
प्रीति नीच पर ही भी शोभा का
सौम्य सांस्कृतिक हो सकता निमित्त !

उच्च प्रीति के ही स्वनिम गुण में
भू मानवता को करना मुक्ति
धार्मिक सामाजिक समोजन
नैतिक भू जीवन में बन स्थापित !

कदम छोड़ने में यदि प्र मयम
तो मैं पहिले छाँड़ूँ - यह संगम
मैं प्रतिबारी करि - तुम कदम जनक
कसा विचार संश्लक - जन मन्मत !

कवि श्रद्धा प्रति हरि वा मत मस्तक
बली का बिच्छेद न वा संभव
बिना इन्द्रिया के जी ने मानव
श्वास बिना कव जी सकते प्रबयव !

भुग कवि की सिठ धास्वा प्रति धपित
कर्मठ हरि फिर हुषा कर्म म रत
मवात्प्रति के प्रति मन में शक्ति
कर्मिक प्रगति से ही वा वह प्रबमत !

नम्य वेतमा पट पर प्राधारित
मन समठम मे वा बली रत
पड पर चित् की कम न मक्ष्य वा प्रब
दोनों का संयोजन वा धमिमठ !

कवि शैतम्य न वा धावात कुमुम
वह भाकी जन भू जीवन दमन -
जिसे मूठ होना तब जीवन में
मानवीय बन सके धरा प्रायण !

जात नहीं वा उष केन्द्र के प्रति
बढ़ता जाता वा विरोध जन मे
जार पुत्र में प्रीति मुक्ति परिणति
मर्म मूम ही चुमती जन मन में !

वैश्व ह्याय के कारण भू उर में
प्रसताप के बिरे धंध से बन
कट्ट प्रतपति भीतर प्रघाति बाहर -
गत जीवन से वा भुग मत वा रण !

विश्व शक्तियों में विरोध बढ़ता
भू विकास हित वा धति मकट लज
बढ़ता जाता धिर पर क्य घई
महामात क उटा प्रयकर पत्र !

प्रस्त शस्त्र दष्टों से मज्जित भू
धहि धामक नी मूह बाए कुलित
शक्ति स्फीत मर मत व्यवम जम
मूह में चुमने को वा मामायित !

रक्त तुषा विस्तार स्पृह पीड़ित
सर्प छत्र से उग्र राष्ट्र भ्रम कर
झांति भंग करते भू देशों की
छत्र धाक्रमण कर प्रतिवेशी पर !

मध्य युगी भारत का जन मानस
रुद्ध रीतिमा से विपन्न जर्जर,
सुन्न सप्रदामा बर्षों में बँट
निरुक्त रहा था धव विमुक्त बाहर !

कौन स्वतंत्र हुआ भारत भू पर
सोच रहा था कबि मन में चिन्तित
हैन्य प्रस्तुत जन ? - नहीं - मध्य युग की
मनोवृत्तियाँ मुक्त हुईं कृत्स्न !

धिक बहु वश जहाँ नारी शोभा
नहीं पुरष को करती उन्मेषित
मानव प्राणा को नव जीवन की
उच्च प्रेरणा से कर बिम्ब दीपित !

जहाँ मुक्त भावान प्रदान नहीं
स्त्री पुरुषों के हृदयों का पावन
भू जीवन रचना मोमा के हित
अपित जहाँ न युक्त कर्म तम मन !

धिक बहु सहाचरण जो स्त्री नर को
सदा परस्पर रखता भय अंकित
बौनी नीति विवक्ष करती मन को
भाव अनुर्वर जीवन आपन हित !

मनुज प्रीति का नर नारी उर म
हाने देती जो न सेतु निमित्त
मधुर प्रतीति सहृदय सहृदयता से
धरा हृदय को रखती चिर अंकित !

मध्य युगी भारतर्षबाह्र जो धिक
सामाजिकता के प्रति जो उपरन
अङ्ग यचार्य का पश्चिम के मत धिक
जो अंत मजम पीड़ित सतत !

सामाजिकता व समाज में व्यो
वैयक्तिक परविकास मिष्कस
प्रत सिखरो की उपलब्धि बिना
बहिर्भूत जीवन मूप तुष्मा उस !

बोये धारधों में रत युग मन
बदल गई धार्म्यात्मिक परिभाषा -
प्रक न धर्म परमोक मुक्ति धर्मन
बह उन्नत भू जीवन अभिभाषा !

सस्त त्याग रण बर्जन से जग मे
राजमयिक हो जाति भले स्थापित
एक ऊर्ध्व संबर्धन भू मन म
जन्म से रहा प्रक विमंत विस्तुत !

भौतिक रण से कूर कही यह रण
मानव संतर को करता संभित
धारोहण करमा गत भू मन को
जीवन तम को होना नष संसृठ !

ऊर्ध्व स्वर्ण प्रति विमुख धरा उर को
संभव वा करमा म स्वर्ग दीपित
धार्मिक धनु रण सत्य - सोचती धी
बिरव बेठना जन भू मगस हित !

तुष्क स्वार्थ बेरे वे भू जन को
वैमनस्य संमित करता संतर,
बहती रण विहृतियो घोषित में
धनाचार वा किए हृदय में कर !

धार्मिक राजमयिक स्वर्धा प्रेरित
व्यों भौतिक विज्ञान ध्वन क्षय रत
हुमा धविद्या संत तंत कबमित
स्वार्थ सिद्धि हित धार्म्यात्मिक भारत !

युग मूप के छाए तामस धन मे
भीत विहृत हो मया धरा का मन
पुना स्वास कदु द्वेष हृदय मोषित
निश्चित धेय बन गया धहंता कण !

छाई की विष्णु प्राप्ति लोक मन में
 मय सक्तव का फँसा वाक्चन तम
 कौन पाप करता न बुभुक्षित नर
 क्षीण निष्करण होते — यह विधि क्रम !
 सत्य मृषा का बोध न वा भीतर
 मटक रहे वे भ्रमकार में जन
 घातम प्रवर्धन विज्ञापन ही को
 सत्य निष्कप मानसा मूढ़ युग मन !

माघा के अनुयायी जन मठ को
 करते बन्धी के विरुद्ध अविरोध
 यह पुनर्म्य रहा भारत मू का
 द्वेष वक्त से यहाँ मनुष्य आहत ।
 ज्ञेय नाम के सिर पर इस मू ने
 ठोका हा ईर्ष्या का प्राप्त गहन
 व्यक्ति एवं जग मङ्गल लोक त्रिभ का
 करता रहा यहाँ निष्फल खंडन ।
 तथा ज्वालि का छत्र मुदीटा तम
 मनुष्यत्व का करता मूर्खान्त
 बौद्धिक मूर्खों के कुश कटक वा
 नम्य खतना का प्रतिस्पर्धी जन ।
 प्रकृति प्रवाधा के कारण जन मन
 उद्वेगित वा प्रतिपक्षी प्रेरित —
 सस्कृति प्रांगण के बाहर यद्यपि
 सवाधार का स्तर वा सर्व विदित ।
 पर मुगाध मन का आक्रान्त प्रसर
 स्वर्ग दूत मुम कधि प्रति वा निम्नित
 निष्कम्य मनामुहा का सूनापन
 अज्ञान क्षति न रहता अविरोधित ।
 जाति कृत्य में रहन सब माघा
 तम स जर्मर उर अहि न इति
 अज्ञान अज्ञान का कर प्रसाध कधि पर
 कृष्टि अज्ञाना संघ मार्ग अज्ञित । —

शोषण कर मुग कवि के शैतस् का
रस प्रकाश स हो मव उन्मेपित
घोष्ट सर्जना कर मुग मानस शक्ति
हुपा कर्न फिर राहु कबध प्रसित ।

एक तीर से कर बोगों पशु बध
मेकना की सी जय गर्जन पर
हुए स्वयं गुरु हत - धप्रत्यागिन
लौग जब उमका छोड़ा घर घर ।

विचलित हा उठता रह रह घंटा
तमोर्दन करता मन को मंथित
राके घंटा में ज्वालामुख का
सगत के बाहर पर्वत से स्थित ।

कुमती जाती ज्योति किरण मन में
उर कुस्वप्ना का जजर पजर
ग्रह वर्ष बनकर कष्ट तामस घन
भिरता जाता छाया सा मुख पर ।

किसस करत गुरु धरम्य भाषण
किमसे रखते मन में मधर्पण
बैठ मित्र के निकट कभी दान पर
पगत दुःख न पिसठा मुग कवि मन ।

नही मूमता कुछ उपाय उसका
ब्रात न का उपचार ब्याधि प्रबिन्ध
मुस कू बचनों न माधो क
मुग कवि मन ही मन रहता शक्ति ।

हृदय भार स नीर उचट जाती
मूमा करता धौआ में वह मुख
तेजाग्बल जा रहा हास्य वपप
प्रतिबिम्बित सब उममें निमन दुःख ।

गुरु उदार के पर उपकार निरत
दान त्याग तप की प्रतिमा जोबिन
तेजस्वी ब्रष्टा मिस्री मर्जक
वर्ष दीण प्रतिभा क रवि निशिचन ।

दुर्बल व बल, दुबियो के रक्षक
 स्वाभिमान के उभरत सूर्य विभर
 जन संघर्ष के अजेय नायक
 युग पथ निर्माता प्रबुद्ध सत्पर !
 सह सकते अत्याय न पर होषक
 पूजा कोष अपमान वंश सोचन
 बुद्धि बीबियो के निर्भय प्रतिनिधि
 कबिता कानन के गजेन्द्र गर्जन ।
 हास्य व्यंग्य प्रिय मुक्त प्रकृति दुःख
 काठ बुष्टि के माधो युग गायक
 मल ठर विधि दीक्षित माधक वर,
 के स्वर्गत भता वधि निर्मायक ।
 विद्या वैभव युग बल दर्शन न
 युद्ध नि संसय के घुरीय पंडित
 विगत चेतना का भा उर प्रतिनिधि
 जो अक्षय भी भावी मंगल हित !
 युद्ध बंड व्यक्तिव रहा उनका
 अति उदार संकीर्ण हृदय निर्दय
 स्नेही ह्येवी नम उग्र उद्धत
 त्यागी प्रतिस्पर्धी काधो साहूदय ।
 सामाजिक पुण्डितियो से माहृत
 अत्याचारों से कर निमम रज
 आत्म विषय का चेतन पहराने
 क्रिया उन्होंने निर्र बीजन अयम ।

जात बारि बहते गहर भीतर
 बंसी वा घंतमूख चित्त सागर
 मधुर प्रकृति सुघ्र भीरु अमम संस्कृत
 येमादासी सजत चिन्तनपर !

उपा बन का कसा कठ मधु पिक
 बरमाना उर का स्वधिम पावक
 नीम मौन ईश्वर के प्रति अर्पित
 ...

आत्मसीन रहता वह घट स्थित
 सृजन प्रेरणा स्वर्णों हित कातर
 मंत्री से बंधित मत विमल विरत
 रहस्य शक्ति में पसता प्रंतर ।
 उसे न भगता इसमें कवि पीर्य
 प्रतिभा बने उदय यह पवत
 जस सी डलने की पा गति क्षमता
 महत् पात्रता में हा रख परिणत ।
 सब के न्सापी गुरु कवि प्रतिस्पर्धी
 होय तुपानस जसता उर भीतर -
 हुए धधोर धविद्या पथ में रत
 साय बना महत्काक्षा का बर ।
 ईसा उमट कर उन्हें धचित् तम मे
 धधोमुखी धहि - ज्योति सुधा सी हर
 पूर्ण पूर्ण हो यया बर्ष बुद्ध गिरि
 मिरा बय सा टूट धहं उम पर ।
 कुमुम बय - एक ही सत्य के मुण
 भू मंगस हित हुआ मुमन विजयी
 प्रंत सुरभित धरे धरा पथ बहु, -
 विश्व प्रकृति - जोभा धानंदमयी ।

वाग्बिनास ने धर गुरु के भी गुरु
 प्रापित ज्ञानि धामम क संवासक
 नित नव मुक्तों का करत दीक्षित
 सिद्ध जिय्य गुरु परंपरा पासक ।
 होपी प्रोही युग विप्राही बन
 उनक बस का बस करते बर्धन
 गुरु धह क धर्ष बर्ष फधधर
 गुरु ही ने उनकी यति धनमदन ।
 धशाक श्रुय महत्काक्षा कुठित
 गगन पुष्प मद म्बजा क न्दुद्धर
 निवन धतुष्प विषय रम म पीडित
 पावग छत्रक बन स मन उबर ।

मू भाषा होपी ठाँवें पंडित
यहु विद्या बर्यम क छिछसे सर,
पर संस्कृति मम क परपूठ सभु इमि
होप दज स जीबन मन बरबर !

धेर उन्ह बहु विद्या भ्रांत निबगन
कया बन्ध बन बा करते साछित
बागूबिसास उमका सिद्धातों की
भूट पिला नित करता मनुभाषित !

नब पीकी का असंतोष पाबक
घषकाता नब प्रामुर हबि का पूठ
उन्हु बलता की समिधा सुमगा
वड पहुंच ज्वाला होती बीबित !

पूना होप का घष घूम छ कर
मम क्षितिज को करता पाच्छादित
संस्कृति कला पलायन बन उकरीं -
बीस काद हंसता यचार्य कुत्तित !

बुहगयो बहुमुख स बुहगयो
भूठ सत्य बन बाएमा निबिषत
करो उपला सब तटस्व खूबर
सत्य स्वयं मर बाएमा प्रबन्धित !

बिस्व मुठ की यह महार्थ निश्रा
राष्ट्र मनु हंस करते बिम् बापित
उपत प्रकृष्ट उनकी छाया में
प्रगति न कर होत कुंठा रोधित !

प्रतरीष्टिय प्रतिभा पंखो पर
उकते पंत नमम नुछ कहा मरइ
नित्र मू न उठ मधर बीच मटक
मिष्य मरग बनते पुर खने गुफ !

कापी मनुइति होती उनकी इति
मू जीबन न मसंबद्ध खंडित
मात्र कला विधि छोड़े ऊपर स
बिबध मूस्य गीबब ने भी बन्धित !

दस स निकल उमरग नित नव दस
 दलदल भी युग भू वाहर भीतर -
 महत् न कुछ - गड़ जाएँ पाँव कही -
 काव्य बुपाखरबन् धमूर्त दुस्तर !
 नयी कसा भी आदि चित्र सिपि सी
 मूकम प्रयाचर को करती व्यक्तित
 दृष्टि गून्ध सिस्वी क प्रांत करण
 ममय कामुका पर हा चित्कानित !
 विविध कसा कृतिपाँ एकतिग कर
 खोजा करता कवि भाबी प्रानम
 मध्य बतना मुख पर गग मन का
 धमी पहा का भारी धनमुठन !
 दलपठ मूल्याकम काव्यालोचन
 दिन निशि निशि दिन बन जाता तन्मय
 वसी क भूषण मगत भूषण
 गुन क भूषण भाव दीप्त भूषण !
 प्रति प्रचार क इस दिक् प्वावम में
 हुए बाध क पग युग क डगमग
 मानव स प्रति मानव बन माधा
 धरत धन जनधुनि क भूधर डग !

मूकम मुजन सीस्वर्ण भाव रम स
 बोध मिराएँ भी जन की बक्षित
 राग द्वेष स्वर्धा दयन स ही
 हीन भाव कबसित मन का परिचित !
 दृष्टि बाहिए भी युग का विक्रमित
 दृष्टि माधना न होती निमन
 प्रीति पद्य शामा प्रति मूँद नपन
 वृत्ति बखरी कर्म हा केवल !
 र्कन्पीकरण मनय का प्रावश्यक
 मूस्य बाध हा मक मूँदम विक्रमित
 नव शामा धानं प्रीति रस में
 मू प्रामा का जीवन हो मज्जित !

अशुभ धीरे अशुभ में छिड़ने का फिर
नव युग रण - धिरते अंबर में बन
सैन्य अशुभ की होती ध्रुव अगणित,
शिव के सबक होते मोडे बन !

नम्य कल्प बिजयी होगा भू पर
मृदा सत्य अस्ति से होगा , अंबित
बहुमुख्य तम हागा प्रकाश में सत्य
तिव ही से भू उड़ सकती जीवित !

बिरद ह्रास के कारण अन्न छाया
बुधा द्वेष अन्न संतप्य जीवन में -
भ्रूमावृत्त बिद् अतिवन्न लोक मन का
दुर्बुद्धिना पलपती बिचटन में !

माधो की उन्मादन मंदिरा पी
पुरु से पा साहस कवि सं सित रस
बाम्बिसास ने उतर अबाड़े म
सैदांतिक साठी से झूटा यत्न !

पट्ट सिन्धु गुरु का न उड़ा असाफल्य
केन्द्र बिच्छु किया उठने बन मठ
विद्या अंत कर भीव बौद्धिकों को
निज बन बस म किया उन्हें परिपत !

शक्ति बाण पर बढ़ कर माधो के
बहु करता उन्मुक्त अग्नि अर्पण
प्रवचन म मासियां नहीं घंटतीं
उन्हें छोड़ - करता कवि का अर्पण !

युग मन आवेसो क मावृद् में
भरते से बाहुर अस्तव्य टर टर,
बध कड़कटे ठडिद् भृङ्गुटि चढ़ती
कृमि चूहां साँपों की होती सर !

अति संवित हा केन्द्र अरिठ प्रतिदिन
नम्य बीधितों में हावा अघिन
नव आक्रोश की आशुति पाकर
अपन अग्नि हो उठनी उठेवित !

काम कूप कवि राम रूप धर कर
पावन भू मयानि कर खंडित
जन्म बाराजा का वता जप में
कवि कला स्वस कर गोपन निमित्त !

उत्तक ही दुग्धरूपों क फल स
गुरु का मत हा एहा कर्षण कबमित्त
कुसुम के मन ही मन पातक से
विश्व व्यथा से दग्ध धात्म विस्मृत !

मध्य युगों में ऐस धीरे मठ
दख कुक जन गान्धीय मोहन
धर्म प्लानि से रही धरा पीड़ित
काम पंच का तंत्र बना पावन !

बिज मठी में मह सब पापलपन
काम राम क पर पर हा स्वापित
प्राण ब्रह्मि से वस्त दमित कवि मत -
गहन मनोविज्ञान मय्य मुबिन्ति !

कुछ उपाय करना हागा निश्चय
कवि का दिग् भ्रम मिटे छे उर तम
केन्द्र ग्राह से छूटे जनपद सब
दूटे महा मतातम जीवन ज्यम !

स्त्री क मत की रक्षा हा जग में
नव जीवन का हा म रक्त शोषण -
धार्मिक समता स्थापित हा भू पर
धम मिति पर जन संस्मृति पापण !

सुधा काम क शाश्वत मूल्या पर
जन सामाजिकता हापी निमित्त
दौड़ेगा सब धाव रधिर उर में
जब भीतिरता हापी भू विकसित !

यात्रिकता की भूधर चारों स
हाया मानव गौरव दिग् चापित
भीतिक भू स्थितिया ही का दर्शन
धर्ममनोजगन् - विज्ञान बिदित !

एक घोर शाब्दा भी उस दस में
अस्मिता धाधुनिष्ठार्थों से परिचित—
मार ठहाका हैसत न सुनकर
सामूहिकता के प्रति आकर्षित !

अस्ति मानव से सब सब मानव का
बगने भाए से सुख सर्वधन—
एक सत्य अस्मिता द्वितीय निघन
वाम धर का सुख ही भंगुर भव धन !

भोगवाद रस के ध्यासे आतक
केन्द्र ध्येय के प्रति तन्त्रम मम में—
सोपन अंतर मे से आरधासित
सब कुछ उभय शीघ्रम जीवन में !

कसा क्विदिर पर युवक रस हैसता—
उच्च भावना अंतर में बहु स्थित
ज्योति प्रीति आनंद मधुरिमा के
वी शोभा स्वप्नों पर आधारित !

बुजा उपेक्षा स्वर मे से कहते
कवि जन धू वास्तवता से अंचित
पुस्तकहीन संस्कृति से धू जीवन
हो सक्ता अरिचार्म मही किञ्चित् !

ऊर्ध्व पमायन सिद्धभाती संस्कृति
अब कि सोक मन बुधा काम पीड़ित
नाह्य पमानन इससे ध्येयस्कर
मौलिक जग ही अंतर मे विभिन्न !

युग कुंडलएँ भी सब क भीतर
मन में युव के प्रति न स्नेह आवर
कहा एक स्वर में सब ने मिलकर
बंसी से मीगा आए उत्तर !

अस्तामृत रवि से विचर्य बुद्ध को
मुञ्जिया बना बना रत्न मीज ममय
कसा केन्द्र की घोर—मीह निर्मम
मम ही मन कर कुछ भीषण निर्भव !

बहुम बोधि में कसरत करने लग
इसरी संबी छायाएँ पू पर,
रश्मि किरिटी तक उपवन माठा
पोढ़ भुटपुटे की शीनी बादर ।

बीठ पोखरों के तट पर बमुने
ध्यान मूर्ति लगते ठापन बर से
पाम डगर पर उड़ती गापक रज
शशि मुख रेख झलकती झबर म ।

मुख्य भवन के पाम पहुँच सब ने
बधा—सुबति सुबक करत बन -
मग्ध्या के उस माठ मील लण में
पंचड़ हो सामने खड़ा निम्बन ।

शुभु कुमुमो क कामम प्रांगण म
कुम्हसा सा बा रहा मौस का मुख
उमड़ रहा बा विश्व प्रकृति उर में
पहरा करणा स्वयंकर निम्बर सुभ ।

एक गृह्य निश्चेतन परिवर्तन
विश्व चेतना में तब हृषा बटित—
घणु रस भय की छाया गहराह
कन्द धाकनित हृषा तिमिर हृपित ।

कहाँ गया बंजी ? — गर्जन भर गुरु
उम बब मकपका उठे कुछ लण
प्रीति इबित जन मंगस बासा का
उमके मुप पर बा मुडु धाकपम ।

मू जीवन प्रेमी बा बनि — जीवन
प्रमु शोभा जिसका स्वरूप शास्त्रन
रम प्रहृष गोपित मित प्रीति हृदय
तब बसंत मित जिसका धम्पायत ।

बहु ज्ञान बर्मन—मणि मुक्ता मक
पंत शोभा करने संवर्धन
प्राण श्वाभ जड़ बनन प्रुब कर पर
महूर स्पृरण जिसका चिन् मच्छि मन ।

कवि - सकुचाया हा हेमंत दिवस -
वडा रहा सम्मुख हठप्रभ मानन
बूम टुल्ट फिर गया क्या भीतर
सूँष सहज भागत संकट कारण ।

साथा उसने सोच कर्म क हित
मुसको जगती में रहना जीवित
जीवन ध्वमक मे बिदेपी जन
इन्हें न करने का बम में क्रिषि ।

कहाँ भागत हो ! - कह मुठ का दल
भीतर बुसने लगा क्रोध वनित
वाँघ ठोड जैसे प्लावन का बर
नीम्य पुमिन को करता जस मज्जित ।

पास्रं दार से बड़ दुठ छात्रा ने
भित्ति बड़ी कर ही सम्मुख दुर्म -
हटो दार स बिस्ताए दुर्मद -
दूर करेंसे हम कवि का विग्न भ्रम !

कहाँ छिया जन बंधक कवि बिस में -
निकले बड़ वो बात करे जन स
दुपचार की बाढ न रुक सकती
बाँध बना कुछ तिलका का मन से !

जन राजक कवि ? बोला दुठ संकर
बहु न मिल नकेमा भक्तिष्ट दस से -
हटो दार मे - बुसो न यों भीतर,
हृदय न जीता जाता पनु बम म !

कडे देखत क्या हो ? - कडक उडा
बान्धिसाम दुठ - घस्का मुसकी कर
बुसने नया निरकृम हम भीतर -
राधा मुसको ने ठन कर सत्वर ।

बम समुद्र धानदों की मदिरा
शास्त्रज जोभाषा का सम्माहन -
धमूठ मेव या भाबी जीवन का
कमा बन्ध मिल धू संस्कृति प्राणन !

उसने हित मरने को वे तत्पर
 छात्र प्रभीष्टा से प्ररम्य प्रेरित -
 मृत्यु प्रमर जीवन बन जी उठती
 केन्द्र हीन जन मू भी जीवन मृत !
 हाथापाई होते देख व्यथित
 कसा छाड़ बंसी निकला बाहर
 उसे देखते ही दुर्दल पिशुन
 टूट पड़े सब मित्र सरोप उस पर !
 उन्हें घकल सहज बमिष्ठ हरि ने
 बेर लिया कवि को बाँहो मं प्रर
 छिपी छुरी का प्रघन बात सहसा
 पड़ा पीठ पर उसक ! - धिक कामर
 कह कर जब तक लकर ने हरि की
 रसा करनी चाही वीड़ तुरत
 बिजभी सी छुरियाँ उठ कैंप लप लप
 उह कर चुकी भी हुठ मरमाहत !

यह क्या करते हो ? - गरजे माघो
 हत्यारो छोड़ा उनको भायो -
 देख रक्त सपसप हरि को - बाले
 हाय क्या किया तुमने बुझाियो !
 धित संस्ठानि संस्पर्तो म पोपित
 प्रतुल न था मू ईर्ष्या स परिधित -
 निकली जीव पुकार भेव उर को
 हुभा मनुज पशुता पर बह सज्जित !
 पाप जात कग सौट पड़ा दल बल
 हुए घनेकों मुकति मुकक विधत
 प्रंध घरा र्ण्यनिस की प्राहुति
 हुभा प्रेम फिर, जीवन संगम रत !
 मूर्छा से जग बोला भाहत हरि -
 तुमसे सखे बिष्टुङ्गने का है दुख
 प्रेम तुम्हार सम्मुख मरने में
 जीने से भी प्रथिक हृदय को मुख !

भूम छैट गया कवि प्रब प्रंतर का
धुमता दुग सम्मुख प्रकाश संबर
तुम्ही सत्य कवि - धरा चेतना का
करना हामा भवविषय सपांतर ।

रक्षा करें तुम्हारी प्रभु ! - जो सब
बिना मांगता तुममें ही तम्मय -
ज्योति ज्योति रस बुबना में मन सय
प्रभु रवि के रवि रम के रम अक्षय ।

मूढ किए हरि ने दुग बंजी भी
तन मन से हठ हुआ पुन मूर्च्छित
मूर्त शून्य से सौटे मुद धर को
हरि की तद्वत बाणी से विस्मित ।

शैश के अकल्पक अक्ष से छाया
गहन मूढ दुख तम थी के भीतर
सखा शून्य विरी अक्षय कातर
तद्विद् हठा नतिका सी बह भू पर ।

धीरे सहृदय क्रूर काम कर ने
विषसाया निमग दुख का प्रस्तर -
बुना भगता उसकी नाश भय
भर न सखा धतर का अत दुस्तर ।

भर पड़ती दुग से शैश की स्मृति
छाई भी जो उर में बन दुख बन
माता पिता उस समयता मय से
कात मूढ के प्रभु पुण्य अर्पण ।

देख जात शुचि स्मित हरि का ध्यान
किया मृत्यु को कवि ने विनत नमन -
निधम न हो बह - नभ जीवन के हिन
दिग् विलुप्त हो पुना स्वर्ग तोरण ।

पुण्यों से परिकृत था हरि का तन
वेन्द्र चेतना से आत्मा जीविण -
धर्या को से गए छात्र नत मिर
धरर मृत्यु गगनी गग्नि मंडिन ।

हुमा चिता अपित जव हरि का सब
 ज्यमा प्रस्त पड़ा था कवि भाहू
 चित्त शुभसती तप्य चिता सपटें
 क्या दग्ध थे प्राण-स्मह स्मृति रत !
 भुम रहा था धाँधो न प्रिय मुष
 मन को सगते स्मृतिमा क बसत
 जीवित होता धतर बस पट में
 त्याग तपस्मा निष्ठा का जीवन !
 युग प्रबुद्ध जीवन सिन्धी था हरि
 भाषा की रस भाग्मा मे परिचित
 क्या प्राण सौन्दर्य तरब इष्टा
 भास्वा उमेपित यथा अपित !
 लब्ध भूम्य क्यो अप्य पिना बपु भुमु,
 बिना प्राण बस के अंतर्भेदन
 धनुषब करता अपने का बधी
 शोणित शिरा रहित हो हृत्स्पदन !
 देख रेख करती कवि की पब श्री
 निज दुख भूम - उसे वे प्राग्भासन
 कार्य धार हरि का ने कंधा पर
 कसा केन्द्र प्रति हा बुहरी धर्म !
 कसा शिबिर ही था हरि का स्मारक
 कीर्ति स्तम्भ कवि ने न किया निमित्त
 स्मह बति सा जल बह जन भू हित
 स्वयं बत गया था स्मृति निधि जीवित !

हरि के बध उपरात कत्र धनिय
 धमतोप की मुसगी कटु ज्वासा
 धार्डी की उपभवन में तृष्णा
 उमने बस मन में डेरा धामा !
 काम डेप से कबमित युक्ति युवन
 कवि बिबेक प्रति हुए स्वयं सकिष्ठ
 नर्ब प्रीति का स्वप्न मना बुन्दर
 प्राण बारि हो उठन धान्गेनिग !

सर्ग राम सम्मोहन पर पा जय
सखी हुषा बहु सरसों का संघम
खुसे चेतना के रम मुझ सितितज
मिटा कामता के मन का दिग् भ्रम !

बरसाते हा गंध सुमन सुरस्य
जगा मनाभावा का मिन बीभब
राय द्वेष का धूम छँटा धीरे
काम प्रेम बन प्रकट हुषा धमितब !

खोस हृदय का मुठित बाढायन
शोभा ने विखसाया स्वयिक मुख
सित धात्वा का ज्योति स्पर्श पाकर
बहा गिराघों में शास्वत का मुख !

नम्य इधिर से पूर्ण मुबा जन वष
मम का मूय भर मब प्राप्ता से -
छातों में संचरिय हुषा जीवन
मूजन चेतना की रम स्वासा से !

खिसता ज्वा हिम दग्ध सरोरुह बन
कसा केन्द्र फिर हुषा स्वप्न गुञ्जित
जागा हो पैरास्य निजा से मन
नब भया विश्वास हुए जागृत !

निमम मू वास्तवता का का शर
कवि चेतना हुई निज म केन्द्रित
देखा जगने मन की हाया में
राम द्वेष मू जीवन में मूर्तित !

मुह मठा म भक्त धरा घंतम्
झड़ि रीति का जीवन मूत पंजर -
यत प्रादुर्भों का समाविस्थल जग
जड़ बौद्धिक मिटातों म खर !

दाह पिनीने स्वासों में रत जन
धर्म काम तिप्या से मन कुठित
बिहृत अहंता क मानग छँडह
परंपरा क प्रीता म सेबिन !

रह हृदय मर मतिन भावना रस
मुझ प्रीति—पशु प्रकृति काम कल्मष
मय शक्ति मन रैन्य प्रसिद्ध जीवन
अधम कम करने का मनुज विवश !

बुधा छुटी सं धी अछह मम का—
युग मबार्थ के हुए उसे समन
सिमट गया वा शिद् प्रकाश भीतर
तमोयस्त वा बाहर जन प्रायण !

यौन यत्र मारी बर्बर पशु नर,
उत्थ वृत्तियों के प्रति उर शक्ति
ध्वस्त भीम उन्नत अद्या धास्वा
प्रीति काम अंशुसि पुट में सीमित !

संकट क्षण अनिवार्य विश्व के द्वि
उमड़ रह वे अंधकार के जन
बढ़ता अधिमज प्रति विरोध दुर्धर
यद्यपु जीवन का होठा विवटन !

अपरिहार्य वा मू मन का विप्लव—
अंध मियति—कवि का वा पूर्व विदित
छेने पर बिन्धोह धूम का यम
नव प्रकाश का पक्ष होगा विस्तृत !

आत ज्ञान का ज्यों प्रकाश उज्वल
मूम अंध विश्वासों का जड़ तम,
पूज प्रबुद्ध न हा जब तक अंतर
बंजित करते तम क फन निमम !

असमर्पित जीवन अंकामु हृदय
विह्वल वृष्टि—मज जीवन दुख कारण
बहिर्घात जीवन धारमा हृत् बस
मर्द मूल बन चाहत करती मम !

ध्वनि अर्ह—अंतिम अक्ष उच्छ्र क्षण—
विगत मनुज—अवसित उच्छ्रा जीवन—
मुझ भूमि अक्ष मन श्रेष्ठ निश्चित
अन तत्त्वत बहिर्जगत का रण !

जेप धमी जा-बह मन क काग्य
कवि प्रजा का वा न तनिक सक्षय
विकसित म् भीषम मापन साधन-
बौने मम को सेना युग निर्णय ।

मानव मानव सब समान मू पर
घोर छार करने मू के दीपित
मानव भगवन् पाबक का वित्कण
निर्णय सेना - वन मू हो संस्कृत ।

धेद नहीं कुछ मानव मानव म
एक मात तन एक हृदय स्पर्शन
एक प्रकृति पुष एक ऊष्म कोमित
मनुजा म नित ममुब एक बिद् बन ।

उसे ज्ञात था वन न पूर्ण मानव
के नाटी युष स्थिति से कुठित गर,
धमी पूर्ण मानव विक्राम पम पर
कवि भी उसका प्रकृत पन सहपर ।

मित बनाता रहता कवि भरि को
कदु न फन मू मन मीमा निविषत
फिर फिर मू तम व्याप्त उल्लास फन
मत् हो करता भसद् कास संछित ।

कवि के कोमल उर में भूम जाता
कुर्ष्वबहार कृपा विप्रेष धनित -
उमकी सगता नयी बैठना की
सुदृढ़ धम्बि होती भीतर निर्मित ।

राग द्वेप वा युष मन में सञ्चित
उम करने होने वेसा वा क्षय
पम संलय का भूम चीर विगस
धम्म में सब नव युग सदभावय ।

वरणाज्युत स वा कवि विष-कर वन
मू वंगम शक्ति हुषा पुन धपित -
तमा प्राग्ने ज्योति जम्ब नूतन
घष घष मन ही विषस संस्कृत ।

पुन मुक्त । रस प्रीति चेतना से
बह भावी भू मानवता न हित
नव सांस्कृतिक हृदय करता निमित्त
केन्द्र शिराओं में भर नव जोजित ।

इन्द्रिय पुट न घर भगवत् पावन
बह भू जीवन में करता वितरित
विपत्ति निपेधों से विमुक्त कर मन
सँजो घर पथ स्वर्ग लोक विस्तृत ।

खोस मानसिक मूस्यो के बंधन
ईश्वर केन्द्रिक जीवन कर विरचित
बना प्रकृति प्रामथ का प्रभु मंदिर
इह पर प्रेयों को करता चंचित ।

भव कर्मों से कर धपित पूजन
बह्य जगत् का डूँठ मिटा कल्पित
सामूहिक व्यक्तिरव घर जन का
भगवत् सत्ता में करता विकसित ।

राम चेतना की सित मीन उठा
मामथ संस्कृति का प्रासाद महत्
रचता बह सित स्वर्ग तिवर पुनी
भगवत् सुख न सुख में कर परिणत ।

माध्यारिमकटा मौक्तिका शोनों
एकांगी निर्जीव पसामन मंद,
नव्य चेतना में कर संयोजित
शानों का करमा वा रपावर ।

अर्ध व्यक्ति साधना मार्ग दुर्मम -
सर्व लोक हित समदित् जीवन पथ
निमित्त करता प्रीति मुक्ति वा कवि
राम नृप ह्य जिजीविषा भस्मव ।

भू हित रस साधना निरत कवि को
होती जा निर्मम धानद व्यथा
स्वमिक भावों चित् सक्तो में
ठसती उर में उसकी मुड़ कथा ।

उसे विरहित था जनपद प्रायण में
धाम छिन्न रहा जो युग संपर्षण
बहु समस्त जगती के संवर में
छाएमा - मू मन का वस्मय बन ।

खाम रहा था कवि वैतन्य किरण
जीवन तम का कर दे जो ज्योतिर
तप पूत जन मू मन का तामस
सोभा मगल म हा दिष्ट मुकुन्ति ।

बनी उर म स्थित हरि का बध कर
भारम स्तानि से मुद संतर कबसित
दिन दिन होते रहे क्षीण विरहित -
बहु प्रसाम्य उर बध न भरा कल्पित् ।

विक्षिप्तों से बरति रहे रहे
संघकार से सङ्ग मन क प्रतिक्षण
उसे चरम स्थिति मान मनस्वी की
पूजा करत कदमा हत प्रिय जन ।
धति इच्छाया के प्रतीक माधो
बभिवानी बन युग मन में संक्षिप्त
वैयक्तिक जीवन भाकाशा की
मगल मूर्ति करती जन हृदय इहित ।

मध्य मृषा की संघ संक्षिप्त तम धर
रचती नित नख कथा परिह सागर
गूढ़ रहस्याभासा में लिपटे
चमते मुद - कर मेद निखर मू पर ।

सत्य मृषा स चिर रहस्य बनता
गरम सत्य से मिथ्या का पूजन
सत्य मूढम संमठियो म विरहित
मम तप से संभद ठमका धर्म ।

निमम रहा था गुद का मूनापन
हृदय मून्य की धमि म था भाहृत
प्राप्त शक्ति रम मूर्छाता जाना
बाध भक्ति होना स्वभाव उद्वन !

निश्चेतन तम ने बापा हो मुंह
बना चित्त छायाभासों का घर,
जीवन मन के घघकार से सड़
हुए शरी गुरु भात प्रांत बजर !

मन ही मन करता प्रणाम बखी
प्रकम ब्यथा के परबत उम नर का
बाइव सामर को दावा बन को
प्रति प्रतिभा के ताप भ्रष्ट बर को ।

मन ही मन करता बुद्ध मौन नमन
उस कइनात कबा के नायक को
धीर बिरोधी के सम्मिश्रण को
सबय भ्रष्ट प्रति मति बिधि सायक को ।

व्यक्ति मूस सांस्कृतिक संभरण की
जीर्ण ग्रहंता बे माघा मित्रबय
वैयक्तिक पौरुष गुण गरिमा में
भडा धास्वा भी उनको प्रतिघम !

कुमुमाकर हा बना कृष्ण पतझर
सरित बेग कसरत जम हिम प्रस्तर,
बुधी बेतना शिखा अचित् तम में
राज भयन बन गया मन्म खंडहर !

धीर एक दिन तोड़ ग्रह बंधन
मुक्त हुए गुर पी युम विप दुष्कर
छूट अविद्या सौह पात से मन
उच्छ्रम हुआ - प्रभु कार्य समापन कर !

चंदन का रस पुष्प तस्य गुरु हित
दाह कर्म को स्वजन हुए उद्यत
प्रस्त हो चुका वा रवि चिरता तम
मधता जन मन को दुःख का पवन !

भूषा द्वैप भय स्वर्धा सलय का
मस्मसाल् करती चित्तानि प्रतिलक्षण
बह न व्यक्ति शब या बुध जन के हित
मृत्यु धमर यत मुप नव वा पावन !

गिरा सिन्धु तल में हो रूढ़ बिखर
मबला ज्वार तिमिर का युग मन में—
राय द्वेष की सोई कट्टु घाँधी
छाई फिर से जग जन कानन में !

प्रकरा समस्यथा के धाँवों से
हुई धनि मुख जन मन मू कंठित
ज्वार मबलन सम म उठ कुर्बंर
करने लगा हृदय तम धाँछादित !

मधकार की गहरी छाया फिर
धारण करती मध जन मू का मन
सोचा कवि ने—स्वयं समय पर ही
गनी छुँगा बिगत महुता जन !

बाँट गए वे मचित् कवित्त जन में
निमित्त कर मुद सबस विपथी इस
कन विराध की कठिन कस्तौटी म
तम्य बसना निबरे स्वधोरबस !

प्रभु मेटे जब जन्म वमत् क्रम म
क विमकत कर बत मध घंठर,
सदसत् का ही बाध लोक मन की
सबर्षम स कड़े सत्य बित्तर !

बिसय सनी हा हास महु जन का
नम पुन करे मनुज का कपाठर
एक सत्य क उमय पक्ष—कवि मुद
ज्योति तमस—तत्त्वत नही घतर !

मत्य मूर्ध विरहित की हास मिता
बहुमुख मठ ताठमा स मंचित
मुगक्षिणि क धनिबार्म रूप माभी
मस्तंयन रवि से ये स्मृति में स्थित !

परमुठम का विमन मस्मिता रवि
निज विनाय प्रति ना न मबोध कवचित्
तबन्धा पौरय विवसा मिटवै
निनकर रक्षिम मुद कर कनन निउ !

कोसा कवि को शोक मुझ जन न
 किया कन्त्र रस जीवन को साछिठ
 दिना प्रांत गुद दुःख दग्ध मन को
 कन्त्र स्वस कवि परिमल वा वाछिठ !
 धवचेतन का मुझ बोध कहुता -
 गुद का ध्ययम उम सब कुछ का धय
 जिस सत्य समझे वे मन म जन -
 रूप धरुता स्वर्धा दर्प बिजय !
 बोर प्राणि फँसी गुरु शिष्या म
 मरम मुपा प्रति हुषा हृदय शक्ति
 हास मुगी पश्चिम का दर्शन भी
 कर न मजा उर मंचन को प्रशमित !
 कहुता मन योपन सकेला म
 धात्म दप पर्याप्त नहीं निश्चित
 वियत धस्मिता का धामुस बदस
 नव मुस धाहति न होना विकसित ।

गुद क यह मिथन स बची क
 कुमुम मन न धाल समा गापन
 उर धवाक धनिनेय रहे लोचन
 बाप्य भर उमक कथना क बन !
 मदा व्यक्ति का करता कवि धादन
 सामाजिक स्थितियों की जा संतति
 छिद, ईश्वर क कार्य यत्न से गुर
 नम्य ज्ञाना का दन न्यून गति !
 वे बहु मक्यक मुहुवा शिष्या का
 छाद गए सह दुःख से संतापित
 नव बिर् जीवन का विरोध करन
 विमल हा वह जन भू पर स्थापित ।
 मर्या का या मुझ ध्येय इसमें -
 सहज बाध स प्रेरित नव रस बिग
 बहु रवि वैचित्र्यों में मुपित हा
 नव मानव मूल्या में हा बिगर्हित ।

बोध प्रहृ बल पाद पीठ नभ की
सत सहस्र मस्तक हो प्रब नव फन
मध्य चेतना चतुर्ध्रुव मंडित
नए विष्णु को करता युग धारण ।

गुरु बधी केवल हो युग प्रतिनिधि
युग कवि का जय गीत न मह संभव
विश्व सत्य की दिग् जय की भाषा
बल भू मगस हित विसरना उद्भव !

प्रस्तर युग की प्राप्ति प्रहृता का
घरा बुत होने को प्रब प्रवसित
सूदन चेतना का नभ चतुर्ध्रुव
विश्व मनस् को करता चकार मणित !

निगम रही की निष्ठा विश्व का प्रब
भू मानस में ही नभ सूर्योदय
रस प्रकाश युग में स्फांतर कर
सय हा युग तम पाकर प्रथम विश्व ।

स्वामादिन वा विपत अस्मिता का
विश्रोही बनना - स्पर्धा पीडित
अधत् अधिष्ठा बल का आश्रय ले
निज सत्ता को करना फिर स्थापित ।

प्रभु निज को अतिश्रम करते रहते
नभ्य कल्प में नभ गुण में विकसित
निश्चिन्त भूत संप्रत सुर सपद् को
निज भाषी गरिमा में कर मणित !

स्वर्ण बुत यह मानव संस्कृति का
देव दनुज में प्रब न सत्य चरित
रस प्रकाश से स्पृष्ट कष्ट राबन
नभ्य सत्य में होते जय विकसित ।

मृदा धारणा भी यह बल मन में
कवि युग में ही प्रीतिमय गोपन
स्वच्छ अखंडित वा - अक्षर विम्बित
मवस चेतना का प्रस्तर दयन !

जन मन का वा समाधान करता
मीव काम नव की स्वीकृति क हित
रस प्रकाश से भरने से पू जप
घरा स्वय को कर सित समोजित ।

सुंदरपुर के बृहत् बनुप्यन पर
कवि ने गुरु की प्रतिमा की स्थापित -
पूर्णाकृति स्मित कास्य मूर्ति सम्मुख
कवि ने मठ धराजलि की धपित ।

दुर्बल के बृत्त मध्य उद्यत
गुरु की गौरव क्षिप्त मूर्ति की स्थित
कुसुम क्यारियों में मधु बीजा से
गाँव मधुकर भाव गीत सुजित ।

बोसा बनी स्वप्न शक्ति स्वर म
गुरु को हम करते मठ मज्ञ ममन
युग मन की सपष् धडा पूजन
गुरु चरणों पर करते मठ धर्षण ।

इस अतसर्षण निरत मुग का
कीर्ति मुकुट गुरु को रोता मोहित
यस काय से धन युग छरय निकल्य
नर ब्यक्तित्व उन्हें करता मोहित ।

ज्योति स्तम वह विगत अस्मिता के
करते रहे विज्ञा पक्ष निर्वेष्टित
सकट बक्षियों में ध्रुव पार लगा
मन सायर में जन जीवन बोहित ।

प्रिय वा उनको कीर्ति मान बैभन
अनुभव महजर राजोचित सौष्ट्य
वाम स्वाम पौरव मर धात्य विजय -
धपित उनको निश्चित ब्यक्ति पौरव ।

सिंह माद कर जन मन कानन म
विचरय करते न नर हरि निर्भय
विजय पराजय से बिर महत् छत्र -
विजय पराजय में भूजे जय जय !

नूतन प्राक्तन के सुपर्ण में
रहू मदा माघो जन प्रिय नायक —
पूर्ण हुए सब कर्म नियुक्त मकल
रिक्त शैल तुषीर काम सायक ।

प्राक्तन नूतन में रे सति हुम्तर
मेद — राग बर्जन तप मे पीडित
एक — सुसरत जन भू जीवन प्रिय
राग उन्नयन म रत रम संस्कृत ।

एक मुक्तिधामी जग से उपरत
भयर ऊर्ध्वमुख भू जीवन अनुमत
उच्च विभव को ला ममदिग् भू पर
जीवन जोमा में करता परिणत ।

ध्यान पीन चित् ज्योति स्पर्श पाकर
तुष्ट एक — सित आत्मा में तन्मय
भयर बाहता उतरे जन भू पर
शास्वत सुख — मृग्मय सब हो चिमय !

मोदा विरति म रम संस्कृत रति म
संतर्मुखी का यह नव युग रत
एक अस्मि पंजर भर ईश्वर का
इतर भाव मागत मबधत् ध्यान ।

भूम छे पया युग कवि व मन का
बनी के ही ये विभोम माघव
वान बका जिनसे बहु अपने को
माय लड़े ये प्राक्तन नव मानव ।

दृष्या अर्धदित युग मन में खडित
भू जीवन का देने गति नूतन
नम्य ज्योति हित हो गत तमय निरूप्य —
दिया मुक्त कवि मन मे प्रणत नमन ।

नय युग के जलना दिग्भू में मय
घाव व्यक्ति अस्मिता — नही संजय
अपिन ईश्वर का रति हृति घत मय
नर नारायण घरा प्रीति तमय ।

सोक घहता के सम्मुख मन सिर
हुआ पुन कबि मन चिति में लक्ष्यत -
सृष्टि कसा को बाह - नभ्य युग हित
घन पीठ विरचित करने म रत !
घोर विरोध अभी वा कबि के प्रति
मार्ग स्वायता प्रति जन मन नूतन
बिखर रहे थे विपत समटन अब
गहरा होता म मन का तम जन ।

ज्ञान शक्ति है - किन्तु मही यदि
बह ईश्वर धरमों पर अहित
असुर वर्ष जन बह विघ्नसक
जन जाता जन मु जीवन हित ।
निश्चित शक्तिया में जगती की
प्रेम शक्ति ही निश्चय अविजित
मम सोक जीवन रचना रत
मंगलमयी सृजन रत तसकृत ।
चिर विकास गति कम म अचिरत
मानव जीवन सरय चिरतन
पौरय यज्ञ क मान पुरातन -
मव धार्मिक - समपित जीवन ।

उत्क्रांति

प्रथम बार जन यू के प्राबल में
प्रेम जगम मेता - जीवन स्वर !
पुण्य बुष्टि करते कृतार्थ सुरगल
प्रकृति पुण्य मिस देते प्राणीवर !

शाह्य मुहूर्त खुसे कवि उर लोचन -
बसा स्वर्ग का ज्योति चक्र तोरन
जन भाषी भी देख दिव्य सपद्
चक्षित निमति - हृदित विधि यपसक लय !

बरस रही युग स्वर्णों की शोभा
प्रथमचक्र से जन उर विस्मित
मन प्रकाश के रस सित स्वर्णों से
भाष मुग्ध प्राणों को कर पुनक्ति !

स्वर्ण इवित चत पावक धंदर से
उतर रही स्मित अगार भास्वर
मुझ प्रेरणा किरणा भी रिमसिम
रम तन्मय काठी युग कवि यतर !

समूत रोग जन जीवन स्वासा ने
मृत्यु क्रम्य भर दिया - मर्मभिद् लत
तिरोपाध म प्रिय हृदि के छू छू
मृष्टि चक्र लयता स्वमित बदबत् !

शाम निशुन पर कगता कवि रोहण
बड़ता स्वनिम मापाना पर मन
यमसं पट पर पट भाषी मुख म
गुण्य बुष्टि रम रजना उर प्रतिधन !

अति अतिथियों को करती अतिरक्त
बहिरंतर का होता रूपांतर,
आत्मा क रस पावक में तप कर
निखर पूषतम डलता स्वप्नित मर !

प्रकृति मनुज मस्कृति का शुचि परिषय
भू जीवन को करता थी सुखमय
दिव प्रहर्ष स पुसकित इंद्रिय मुख
जीवन आत्मा का होते परिषय !

मानव के संग पशु पक्षी जग भी
मगता मय अठत सुपमा मंडित
नैसमिक भवबोधों का जीवन
मूल्य अतना शोभित से स्पंदित !

सुक बलस्पतियों का मुपुत भुवन
गुह्य अभीप्सा म लगता प्रेरित
रंग गंध मधु पत्र पुष्प फल म
ऊर्ध्व प्राण आकाशा हो प्रहसित !

भाव योगि की स्वर सय मीती सी
पदच्छतुर्ग सिद्ध संगति में आती
सौरभ सुरधनु ज्याल्ना मिहिका की
धूपछाह सुपमार्ये बरमाती !

भाव रूप घर धानी स्मित अतुर्ग
मानम साभाषों म सी भूपित
रूप रंग रस गंध म्बप्प मुख क
सम्माहन म कर भू को मंडित !

पिक ध्वनि करती म्वर्ण मंजरित जग
रिमक्षित अर बिछती हरीतिमा बन
ज्योत्स्ना बनती स्वप्नो का धावन -
नील ताप बिजयी बन भू प्राणम !

बदल टा का अइ निमर्ष का मुख
रूपांतर हाता उपचेतन में
मूजन स्पर्श वा सित रमपावक का
म्बप जम नेता भू जीवन में !

ज्यों ज्यों ऊपर उठता कवि संतर
घाससात् करता वह जम जीवन
समदिक बनता ऊर्ध्व ऊर्ध्व मन्दिक्
मीन प्रवतरण करता नव चेतन ।

साध पुरंठा का भू जीवन की
पद्म से रहा या प्रबोध नूतन
द्विभ्य चेतना गोमा न दीपित
परम भाव का ही प्रहृष सित लण ।

ज्ञान बधु से घटिहय स्नेहोम्बल
धुसा हृदय का सहज दृष्टि मोचन
काम मोनि के प्रंधकार में जो
भू जीवन पत्र करता निर्वेदन ।

घात्मा का धैर्य इद्रिय कुमुभित
रस हृत्तार्थ हाता समग्र मोचित
चिति कर मे पर घाभा उर में तम
परम हृष म सगते अति बीधित ।

भाव विम्व मोमानुभूति करती
उर की सूर्य तिरुभा का सकुट
दृष्ट बासना छाया प्रह म मन
नवम कलापों में होता विकसित ।

हीरक सरसी में पावन रस की
प्राणा का सुष करता प्रवमाहम
कम्प को उर्वरक बना जगता
भाव प्ररोही में यथाप नूतन ।

घात्मा की मित्र करद नीलिमा में
धकम्प सुपमा का उगता अदि मुष
भरता जो नव स्वर सयनि भू पर
बड़ की कर जीवन विकाम उमुष ।

साधिव रवि उर में धिन धव कवि मन
मिग प्रकाश रम निर्मन बरमाता
धी गोमा धार्मिक प्रीनि भर में
जम भू प्राप्ति का जीवन म्ना ।

चंद्र मुहुर में संतर्मान क
 शाभा क बे मुकम मुवन विम्बित
 मुवन प्रेरणा क मित्र हापों म
 नव मानव भाषी हापी मिमित ।
 मप्य बप ग्वाभाभा म सिपटी
 उतर बेठमाएँ घाता धू पर
 स्वप्ना की हों रत्नछायाए
 निग नव भावा में डसती निम्बर ।
 लोक ऐक्य की नीर पीठिका पर
 भाषी धू मानव ईश्वर का स्थित
 मूठम स्वप्न किरणों की जामी द
 स्वर्गिक मुख पर - नव जीवन थी स्थित ।
 नील मुतहसी घामाएँ सर सर
 मामम मुकुतो में पराग भरती
 गंध बप क बाप्य पुष्प बनन
 शामाएँ साहजि घर मम हरी ।
 रजत नील संतर्भ्रमियों का नम
 प्रेम दून नव मधु विक बन याता
 भावो क धुबता का मधु बखने
 स्वर्ण पंख सर्वन मुक्त मँदगाता ।

दबा कवि में - मरकत नर लट पर
 इंद्र धनुष नीहार में बेजिन
 करती विवाहितार मन्तराएँ
 प्राणा की मुकमात्रा में मँदित ।
 उनकी चितवन से बिद्रुम जम में
 रजत नील मित्र ग्रिन उठन पुष्कर
 भूकृति भंग बनती तरंग बचन
 स्थिति शाभा सीपा में जाली भर ।
 मुषर उर्वरी थी ममा रमा
 स्वर्ग कमा स हा तम थी निमित्त
 काममता क माकत का पा बपु,
 स्वप्नों क विम्बन म उर कल्पित ।

स्वर्ग पृथ्वी वृक्ष हों पंच अपस
स्तम्भ हँसी हँस मम ही मन विस्मित
हृदय भाव की पुष्प बुष्टि करती
बोझी बे कवि छवि से भाकपित ! -

किन्तु भावों का मधु परम उड़ता
स्वर्गमिमा क्षमा में कर उर मञ्जित
धो धू जीवन के नव रस मानस
तुम्हें देख रति मदन काम लम्बित !

कौन समूह जोतों के तुम ज्ञाता
कैसी रस धारा यह धू मासम
कैसी सित सौरभ कृती उर को
पूर्ण काम हो उठवा जग जीवन !

इंद्रिय तम से आत्मा के सद् रुक
हो उठवा चरितार्थ विश्व छप्टा
रस इतार्थ रति पूत प्रकृति रस भग
मा नव धू मासम जीवन इष्टा !

निखर एक तम से धर रति मन्मथ
होभा रस पाषक में परिवर्तित
जग पूत मन्मा पर धू जीवन
सुखन बेतना सुख से मभिप्रेरित !

कैली धू कौ कीर्ति धमरपुर में
सार्धक स्वर्ग गिखर पर इयासन
मुरपति भद्र धू जन का प्राण सखा
प्रेम ज्योति करती जन मन पोषण !

स्वर्ग हृदय रोपित कर पृथ्वी पर
ज्योति केन्द्र कर बकिमा में स्थापित
किन्मा स्वर्ग तुमने जीवन सक्रिम
मर्त्य बंधु उर कर रस ध्वनि नादित !

अप्यगिया को भी गौरव दो कवि
केन्द्र मवस्याएँ हों के जोमन
भी जोभा गुणमा के तुम पूजक
हम उनही प्रतिनिधि मन्मथिख मोहन !

बोसा कवि धो साभा छायाप्रो
 कवि उर सब का करता अभिवादन
 भू विकास रचना भ्रम में गुंथ कर
 सभव तुम बन सको पात्र पावन ।
 स्वर्ग सोक की तुम सासत प्रतिमा
 तुममे गड़ने होंगे भू प्रलयक
 घरा स्वर्ग का स्वप्न सत्य से भी
 गहन वास्तविक निष्ठुर - कवि अनुभव ।
 रूपसि जीवन सर्जन भ्रम तुमम
 नव आयाम सँजोएया मिश्रण
 रचना पात्रक ही म तप शोभा
 जन भू हित हो सकती मगसमय ।
 शक्ति भीत दुग देव परस्पर मुब
 बोसी बे - अप्सरियाँ जन भू भ्रम ?
 हम स्वप्नो की प्रतिमाएँ, प्रिय कवि
 लीह स्वण तुम - शोभा प्रति निर्मम ।
 कहा नम्र हो कवि ने सुर मोहिनि
 भी सुपमा का उपजाठी तुम भ्रम
 शोभा की केंचुल तुम शोभा का
 जन भू रज भ्रम मे पवित उष्म ।
 सुदर्या की शोभा ही इसम
 प्रपित हो वह शिव के चरणो पर
 मुरझाने के बदले मब गरिमा
 प्राठी उसमें जा निवत्य का कर ।
 भू विलास प्रिय रिक्त मावनामय
 हुई अप्सराएँ भ्रम में शोशल
 डूबी धीरे स्वप्निल मुरुर ध्वनि -
 वह प्राणों की काया का वा छम ।

हरि ही जैसे पव थी क तन में
 कसा पीठ का कर्या सचासन
 मधुर करों क प्रलय मलो से
 स्वत फूम सा हेंम विमता जीवन !

प्रेम मित्र थे संस्कृत मारी नर
योनि मुक्त स्वी उपरत मू जीवन
प्रथमस्या के अनुशीलन में
कर्म निरत रहता रचना प्रिय मन !

मू सोमा भी फूल जता ससना
गद्यप्रिय चित्त रस मधुकर नर मन
सोमा के संग जन मू सर्बम म
जीवन सुख का होता सवर्धम !

सुम न रहते सन्निधि से परिचित
सार्धन करते शाठ सुधन मंगल
मू भी सोमा पीठ हृदय तद्गत
बहुता धत प्रीति स्रोत निगद्यम !

समाधिस्थ का कर्म सीन अतर
मू सक्रिय भी मन की तन्मय स्थिति
भव विकास मति क्रम म चिति परिणति
परम बोध मे भी न आत्म विस्मृति !

अथ न पुन म वा शाश्वत जीवित
बहु मूल वा चित्त पट नव संस्कृति
भेद बुद्धि के पुष्पिन हुआ बहुता
बाह्य भीतर प्रेम-म भी अथ इति !

अथ सन् चित् आनंद पूर्ण रस जन
मू जीवन सोमा में थे मूर्तित
शाश्वत भीर अनंत सूचन रत क्षण
बहु सिन्धु रस अज्ञति में सीमित !

स्वयं न ऊपर, ईत न सृष्टि पूषण
अस्ति अतना सापर वा विस्तृत
बहु पवताकार अडा अथ नम
प्रेम एक बहु स पर अथ रस चित !

एक अनेक न वा रम परमस्वर,
ईत्वर अथम पुन बहु एक अत्रुम
अतिक्रम करता नित नित को नित स
रस समूत न जीवन मूर्त अत्रुम !

भौतिक सुख से तृप्त कला प्रिय मन
भाव विभव गरिमा से वा दीपित
जीवन सौष्ठव, सुख स्वच्छ भू मुख
सरस हृदय का सुवन स्वप्न प्रेरित !

स्वतः बुझ गया ही धन मन का मन
नयन यवण के नयन यवण निश्चित
भूमा की स्वर संगति में जीवन
व्यक्ति प्रकृति सुरभित होया विकसित !

प्राप्त काम सुख स्वयं पूर्ण आत्मा
निश्चित ताक मयत से अनुप्राणित
रस समग्र आवर्त उम्हें करता
सर्वांग स्वप्ना से उन्मेषित !

मन से झरत नभ प्रकाश के मभ
मन श्रेणिया पर नङ्गा सित मन
सोभाएँ इस सुपमार्ग बनती
सत्य महत्तर शिव निवृत्त प्रतिक्षण !

स्वर्ग सपना साट घटा रस पर
जीवन सर्वन में हाठी कुमुभित
स्वप्न शिरामो में रस वेवस् की
ज्योति रघिर गाथा प्रहर्ष शक्य !

नभ प्रकाश के सुख पकड़ कर में
विकसित हाथा स्वतः कन्त्र जीवन
महत् स्वर्ग मुख यहता प्राणों में
संपन्न का गान बना गूतन !

इंद्र धनुष किरणों में परिवेष्टित
सोभा पाता ज्या धनध हिमवत्
धलय ऐश्वर्यों की धंतर में
भासित हाठी चिन् गता शाश्वत !

इस प्रकार जन भू संस्कृति प्राण
श्रेय प्रेय निधि कर थी संयाजित
जीवन मन आत्मा के सुवर्ण के
मण शिनित्र नित करता उद्घाटित !

कर्म और जनपद में लोगों में
 धैर्य प्राणा का हृत्ता विनिमय
 में जीवन से हो चित्त का परिणय
 जन युव के कवि का या ध्रुव निर्णय !
 ऊर्ध्व चेतना समदिक विचरण कर
 नव भव मानवता में हो परिणत -
 धरा प्रेम का ज्येष्ठ केन्द्र जन का
 व्यक्ति मुक्ति की सर्व मुक्ति वरुण !

सह म सही हरि का विद्योह क्या थी ?
 कमा पीठ का या विकसित जीवन
 साथ बुका या उसके मानस तट
 नव चेतन से जन नव रस चेतन !

पकड़ म पाया नव विकास यदि कम
 यत युग मूर्खों का नैतिक प्रतार,
 या अनिर्धार्य धरा जन संभव हित
 नैतिकता का स्वनिर्मित ज्योतिर !

चित् रस से कर प्राणा का संस्कृत
 नव ऊर्जा से भरना या जन मन -
 इन्द्रिय मधु वैभव संलय बर्षित
 बना बरिष्ठ भरत में का जीवन !

पानी ही बुझती भव की कवि क
 मनश्चक्षुषा में रस सूक्ष्म प्रखर,
 बंध दुःख बौद्धिक रजत गृह्यता में
 हो न सना चित् इति कथं धर !

भुज त्याग की प्रतिमा की प्रिय की
 धारम समर्पण हित नित उर तम्पर
 मूजन प्रेरणा में सेवा इत एक
 का स्वभाव सचरम - प्रकृति दुस्तर !

राम चित्त चित्त की सहज मविष्यात्मक
 पीछे रह जाता धर्मीय प्रतिक्षण
 यत विकास गृणी का नृत्यपरा
 साथ स्वर्ग करती नूतन गर्जन !

पूर्ण चेतना के निर्विकार बाह्य
केन्द्र पात्र सब से अतः पर रत
पिछड़ सूँ जाते पर निर्दोष
अभिनव बनते अमरुत अविरत !

सिरी फूल नी कुम्हला मन ही मन
स्वास अभिनव में मिमा हुई तद्गत
उर सौरभ से भर जुन प प्रायण
गरद चक्रिका में निस्वर परिणत !

देखा कवि ने मृत्यु रूप सुवर
बह अनत जीवन का वा दर्पण
रहस द्वार में कर प्रवेश जिसके
पुनरुज्जीवित होता म जीवन !

कसा निर्विकार सतति ने मायु नयन
मुझ प्रसूना में प्राकृत कर तन
अंतर पावक को पा सब भीतम
क्रिया देह को अग्नि चिता अर्पण !

हरि श्री से मणि स्तंभ अतः कवि का
स्वर्ग सेतु या जिन पर अकलित
रजत अभिनव स्थित भाव स्वप्ननिधि अत्र
मगठा हा न सकेगी रज मूर्ति !

युग विकास यति प्राग्रह वा—युग कवि
म्यस्त कर्म हो मुजम बाध सच्चिद
भाव अंत में अंत कर्म निरत—
कर्मों का चिह्न उत्तम उत्तम वा प्रिय !

सूदम बोध ही न वा मुझ चिह्न रम
नव सजीवन शक्ति प्राप्त अलय
साध अनेकों युग नव युवनि युवक
अनुभव करते अभिनव साकोदय !

बुद्धक वा अंत ममृत जीवन
स्वयिक बुद्धक—करता प्राकृतित
मर्ब प्रमति की मति मय में अंधकार
कन्ध चेतना होनी सवधिग !

परम पूष धी स्वर्ण चेतना बहु
धी हरि क उर की उखा उग्रमय
ज्योति प्रीति सुपमा प्रहर्ष रस निधि
पीठ श्याम मरकत प्रकाश में मय !

शीघ्रोंपरि भागवत ज्योति भामुत्
मधोमूल रति काम स्वर्ण शङ्ख
धी होमा रस पावक प्रतिमा सी
बहु धी शास्वत हृदय स्वर्ण म स्थित !

मूषन हर्ष बनला सित सम्मोहन
बहु समग्र स रहती नित प्रतिशय
स्वधु प्रीति - मित्र हक्ति सूक्ष्म धवयव
सन् चित् वा मानव शशि परिचय !

बुध धनर्षी तप की पावनता
हैम ज्ञानि से कर उमका भावुत
हित समाधि मुक्त को करती सार्धक
परम जतना म तद्द्वन्द्व उपकृत !

दया कवि में अंतर्बर्णन में -
शास्वत मुख स्पष्टित अनंत जीवन
कूम हीन सागर सा भावोन्मित
अभिगत महिमा में प्रजात प्रतिदान !

धी होमा क गौर सिखर पवत
पुन प्रेम की तनमता रस सित
चित् प्रहर्ष की सिन्धु महन विस्मृति
बुध ज्ञानि क स्वर्ण प्रसार अमित ! -

हृष्टि पुसित पर बाड़ा एक मय तुंग
पा धमीम मुख से चर चर कपित
निस्तम चित् जन का भावोन्मित
मय प्ररोह उर में होता स्पष्टित !

माधमीम स्वर संगति का कवि का
हुषा गड धनुमध - सब मपरचर
बीच छंद मय में हान अक्षित
अमुन श्याम रस म पोषित भीतर !

जीवन की धारणा कवि ने सम्मुख
प्रकट हुई निज जीवन में प्रलय
सुखम पूर्वता में सब अभिव्यक्ति
धारम पूर्वता में गोपन धर्म्य ।

बद्धि नीति कर्मन से वह प्रतिशय
मानस पुगितो को करती प्रतिफल
जन्म चेतन रम प्रपुष्क संयोजित -
निश्चित मान विज्ञाना की संगम ।

पूर्व समर्पण कर उसका तन मन
भू रचना का सुख होता साधक
कर्म बल धर्मित मन ही निष्पय
उच्च प्रेरणा का प्रखंड बाहक ।

मैं या तुम करते न सत्य धारण
सत्य बद्धि से जग समग्र अधिष्ठत
नाम न पुत्रपाप्तम गुण नाम रहित
नाम रूप विमके प्रकृर प्रगणित ।

भावों की भावण उच्च योगी
नाम करा से होती उद्भाटित
धर प्रतीत जीवन की छाया धर
भावो नित्ये प्रमूठ बट भी जन हित ।

तन्मय धम में शीर्ष बुद्धि का पय
पार सहज करता मन धर स्थित
सक प्रतीका बिम्बों चिह्ना में
मम सत्य का होना उद्भामित ।

गहरे हसक रमा के पवन
होते धतर्क्ष्यों में परिषत
संकिन होती भावों में सम्मुख
प्रपटित भावी घटनाएँ तडत् ।

चिदंबरय का ज्योति छत्र मिश्र
भरता धर निखरों पर बीपित
प्राणों के मित मरकट पावक का
इंद्रिय जीवन मुख में धर मुहुवित ।

मनु का सुत बन आत्मा का मनसिख
नव शोभा सितियों में धब विकसित
विग्मय रस सरसी के सरसिख सा
ज्योति मरदों से समता मंडित ।

आत्मा उर मन देह प्राण इद्रिय
स्वर्च चेतना जय म संयोधित
बनते पूर्ण मनुष्य में श्री संस्कृत
जीवन का रूपांतर कर कुसुमित ।

स्फटिक पीठ पर सित भौतिकता की
नव धाम्यात्मिकता की धब लामित
इद्रिय की स्वर्गिक प्रहर्ष बाहुक
आत्मा भू रस मांसज बन उपकृत ।

पाचिक रस से पूर्ण स्वर्ग शतवन
नव मरच सीरम मधु वा निर्मित
चित् रस से भावी संस्कृति मानस
नव शोभा धानर ज्वार ज्वाहित ।

निद्रिश्य बर्जन तप से वा पुष्कर
जीवन रस उठेजग पर संयम
शोभा सागर में तिष्ठता नव नर
पाचक सुख ज्वारा को नर पठिकम ।

बेधा कवि ने निद्रिड नील सागर
संज्ञा धारणों से धामाङ्कित
केनोमित फन मठ पर्वत टकरा
ज्वलित हरित जल का करते मंडित ।

आधोलित उपचेतन निश्चेतन
संप्रति युग स्थिति को करते विन्वित -
ममदिक वृत्ति न वा भू संकट की
अपवाही जीवन दर्शन कुटिल ।

से निकर मेरु हिमबन्धु
यु जम से जगर
199 संसृति मे
चित् न !

स्वप्न पंथ मीनाक घटस जस से
उगा इंद्र रूप से जीवन निर्भय
धरा स्वग को यी समूह करने
दिव्य विभव का हो घट संभव ।

निब सा शशि गंगा घहि गण परिवृत्त
या घंतप्रवैतग्य भूति भास्वर
घय ऊर्ध्व स्तर मय जीवन सक्रिय -
दूर न भा मय मय मुग कस्पातर ।

देखा कवि ने समाधिस्थ लंकर
शिवतर वन जगत उर में निस्वर
उतर रहा स्वगिक ऐश्वर्य अतुल
स्वभिम मूल्यो न कृसुमित होकर ।

निराधार स्थित निब चिति धरर में
मृष्टि स्वप्न से मन शिवर भुवित
तद्वित् तद्वक्ती चिद् धम रस वपु म
उर में चिमणि शिखा उमा मोभित ।

काम भुजम सिपटा अर्दष्ट तन से
ममूत मोठ शशि धाम मगन में स्थित
भुजन चेतना बिष्कपदी धरता
मस्तक न-म का कर स्वर्ग हरित ।

निचमी लोहा म भव मया का
मंत्र मुदग बजाते मय प्रमुहित
धमिब तत्व यापन निरपेठन क
बहा काम करते प्रगल्भ प्रसमित ।

मय जीवन मखसा मिनी कवि का -
भुवति भुवक जम प्रारबत नंदन म
धरा भुजम स्वप्ना म उग्रभित
बिचरण करते प्रीति प्रचित मन में ।
बहू बा भामा स्वय -मजरित तन
चित मानम सौरभ करतें वपण
स्वभिम भावों का मरंद धरता -
मुमुमित धर्मों का हू मय मयवन ।

मनु का सुत बन आत्मा का ममसिद्ध
नव होमा क्षितिजों में प्रब विक्रमित
विद्यम रस सरसी के सरसिज सा
ज्याति मरदों से सयता मंडित ।

आत्मा उर मन देह प्राय इद्रिय
स्वम बेतना मय म समोजित
इमते पूर्व मनुज में श्री संस्कृत
जीवन का रूपांतर कर कुमुमित ।

स्फटिक पीठ पर मित शीतिकता की
नव प्राध्यात्मिकता पी प्रब होमित
इद्रिय की स्वमिष प्रहृय बाहुक
आत्मा भू रस मासल बन उपकृत ।

पापिब रज मे पूर्व स्वर्ग इतरल
नव मरंद सौरभ मधु वा निमित
चित् रस से भावी संस्कृति मानस
नव होमा प्राणव ज्वार फावित ।

निष्क्रिय बर्जम तप से वा कुप्पर
जीवन रस जडेमन पर संयम
होमा सागर में तिरता नव नर
पावक मुष ज्वारा का कर प्रतिक्रम ।

देखा कवि मे निबिड नील सागर
सप्ता भावेयो से आमाहित
प्रेमोर्मिल फन गत पर्वत टकरा
ज्वलित हरित जल का करते मंचित ।

आशोमित उपचतन निश्चेतन
गमति युग स्थिति का करते विन्वित -
ममदिक पुनि न वा भू संकट की
क्षणबादी जीवन दसन कुठिन ।

प्रतस्तल से निखर मेरु हिमबत्
प्राप निम्नु जल स उठे ज्वर
भावी मानव संस्कृति शृंगा से
मेरु आनु वा बिन् स्वमिम गवर ।

स्वप्न पथ मैनाम प्रतल प्रस से
उगा इंद्र श्यु से जीवन निर्मम
धरा स्वर्ग को श्री समुद्र करने
दिव्य विभव का ही अंत संभव ।

जिन सा शक्ति गंगा प्रहि गम परिकृत
बा अंतमर्षितम्य भूति भास्वर
प्रथ ऊर्ध्व स्तर भव जीवन सक्रिय -
दूर न बा प्रव नम मुग कस्पांतर ।

देखा कवि मे समाधिस्व संवर
सिवतर बन जगध उर में मिस्वर
उतर रहा स्वर्गिक ऐश्वर्य प्रतुल
स्वप्निस मूस्यो में कृमुमित होकर ।

निराधार स्थित निज चिति प्रवर में
सृष्टि स्वप्न से मन जितवर भूपित
तकिरु तडकती सिद् धम रस अपु मे
उर में विमणि शिखा उमा मोषित ।

काम मृजग सिपटा धरंष्ट्र तन से
धमूत सौत शक्ति भाम गमन में स्थित
मृजम अठगा विष्कपदी भरती
मस्तक से - म को कर स्वर्ग हरित !

निष्कली दोहों मे भव मधो का
मद्र मुदग बजाते गम प्रमुदित
धक्तिर तत्व यापन निश्चेतन क
वहाँ बास करते प्रमद प्रशमित ।

नम जीवन मत्सरा मिली कवि को -
मुकधि मुकक धम भास्वर नदन म
धरा मृजम स्वप्ना से उग्मेपित
विचरण करते प्रीति प्रयित मन में ।
वह धा शोभा स्वर्ग - मजरित तन
नित मामम सीरम करत मयण
स्वप्निस भावों का मरद भरता -
मुकुमित धंगा का ही नम मधमन ।

मृत मूर्त्यां क जीवन बेषव स
घरा स्वर्ग का निमित्त या प्रायश्च
घसन् न सोष प्रगति में या बाधक
स्वर समति म प्रमित इन्द्रगत रण !

जिब से सिबतर पब में बढ़ते भर
नब प्रहर्ष उर करते रोमाचित
जोभा घति सुपमा बन मन हुरती
मय्य महतर सितिर्वा म विवसित !

जड़ पतन का हाता रूपान्तर
बैज्ञानिक करत भू पब निमित्त
नब बैतय्य मनुज मन गड भूतन
प्रतर्जय को बग्ता रम दीपित !

सुधा काम संघर्षण पर पा जय
सात्त्विक जीवन करते भर यापन
घंठ संस्कृति धार्मिक परिणति हित
द्वय्य साधना रड रहता प्रदिदाब !

मानव का मामब प्रतिपत्ती बन
बही न रहना पड़ता घब जीवित
महत् चेतना की सित घववय सी
मानवता पी जीवन संयोजित !

प्रक्षेपास्त्र गरजत ईत्या से
हंसती नब मानव धारमा घद्यम
पूय बाब से नय्य चेतना का
मर्म स्वर्ग कर होत जा इत मय !

घषु भय छु चिन्मय उच्छ्वासो को
बाप्य धूम या उड़ हो जाता शय
मूढम बिदग्नु बिस्फोट मनुज मन के
हिए भेद हग्ता - ठम भय मजय !

गठ भू जीवन मन का कर मज्जिन
नय्य पठना का घतर प्नावन
घसत बह्नि मे रब नब पयोति भुवन
गड़ना जय हित मय जीवन मय मन !

बया कवि ने काम खन पोछे
भूम रहा - गत जन भू का जीवन
भूम रहा चित्त के सिध कम पट पर -
निखिल बस्तु - भटना हों काल धरण !

बिम्ब बिकास निबतित लक्ष सोपन
तम तंद्रा स जग जड जीवन मन
सप्त चेतना सोपाना पर चड
रत्न रश्मि रचते बिज्ज्योति भुवन !

बिबिध सम्पत्ताया के मुग भू पर
वनते मिटते - काम मुकुटि बल पर
बूद वाति भू लोक राज्य बनत
होते पूर्ण बिभक्त युक्त बन कर !

कृटिस धसगतिया में भी संयति
कूर सुजन संहारा में पञ्चति
भव बिक्राम मुन में धंतर्गुणि
बाह्य धयति न भी भी सूदम प्रगति !

सत्य बिबिध हाठा असत्य बिजयी
तम प्रकास पर पाठा धासुर जय -
सत्य महतर ज्योति पूर्वतम बन
करे बिश्व जीवन को मंगलमय !

समादिम् जीवन का बचम बितरण
धंतर्बिचि कर ही में रम सर्जन
बहिरवर का कर सिध संयोजित
रत्न पूर्ण बनता था भू जीवन !

राम धतना को कर थी संस्कृत
संभव का मानव का बिश्व मिसन
बस्तु उपकरण मात्र मही स्त्री नर
दिग्ध जकि क धंत प्रम बिगृकण !

भूत लिखर में हाठा भव विक्रमित
हाम बिक्राम प्रगति क बस्य धरण
पूर्ण पूष को साथ पूष बनता
नभ्य मुभा में 'गुण' लाक जीवन !

विश्व भ्रमण के भ्रमसर पर कवि ने
क्रिया बौद्धिकों को या प्रामाणिक
कला पीठ का कर प्रातिभ्य ग्रहण
नभ्य वृष्टि या मगते व उपकृत ।

वैज्ञानिक मूढ मुदिधा म निमित्त
देख तरुण पश्चिम जग का जीवन
इष्ट रहा कवि को भारत में भी
वैसा ही भी लीप्टव संयोजन ।

भौतिक वैषम्य की वरिद्धता से
पर भतरिष्टा कवि का पदगत
बहिरंतर संस्कृत मानवता का
युग प्रबुद्ध भंतर करता स्वागत ।

सतत सोधता वह भू पर कैंते
मुझ प्रेम ने जन्म - धरा ईश्वर
कौन प्रेरणा छोड़ मनुज मन को
करे भ्रमसर हृदय ग्योति पय पर ।

स्वयं मूढ में बौध्द मनुजना का
धत धितियों व प्रति कर भाषत्
मानव स्वयं धरा पर रथने हित
करे धरा जीवन का जा उद्यत ।

धत जाति प्रतिष्ठित हा जय में
भू जीवन प्रति हो मित धटार्यन
स्वयं शाय प्रति हो सचेत मानव
जाय हा धतर का बिद् स्वयं ।

भौतिक धाष्मात्मिक युग विषया पर
होता विवृष्टों में विचार विनिमय
गज्जनयिक धार्मिक युग संकट का
मिमता धरती को बनिष्क पश्चिम ।

एकामी वैज्ञानिक उभति से
धमतुष्ट वे युग प्रबुद्ध बुधजन
नेत्र प्राण मन के धीनर का नर
रम सुधारण या हृदय गम्य पाह्य ।

धर्म नीति संस्कृतियों की निष्क्रिय
महा ह्रास विपटन का छाया तम
विश्व ध्वस्त-या गत भू मन सीमा
मानव चित्त को करनी धन प्रतिक्रम !

भू जीवन मन के विनाम क्रम की
पृष्ठभूमि से से बहुत्र परिचित -
उधर विगत संस्कृतियों धर्मों को
होना या नव जीवन सयोचित -
उधर महत् विज्ञान प्रक्रिया को नव
प्राध्यात्मिक युग करना या स्थापित
निष्क्रिय या प्राध्यात्म पदा युग से
दृष्टि हीन भौतिकता धात्म विवित !

एकाकी मृतक्य दोना संपदु
प्रकृति पुरुष को होना या योचित -
ज्ञान शक्ति के स्वलिम परिणय से
जन भू जीवन हो कृतार्थ निष्क्रिय !

ऊर्ध्व इवास भव मुक्त पूर्व का मन
हिमगिरि सा खोया धसग ऊपर
बाह पसारे पश्चिम का जीवन
सिन्धु बिकस धिपका भू से निभर !

प्राध्यात्मिक दारिद्र्य व्याप्त जग म
शक्ति सानसा हित पागस नर मम -
प्रथ मुख को सद्य मानता कवि
वैज्ञानिक युग का कर धनुशीसन !

पश्चिम जग की दृष्टि न ऊर्ध्व गहन
वह्निर्जगत विश्लेषण में सीमित -
वास्तवता म शून्य पूव की मति
धनर्मुक्तों क नम में कश्चित !

धर्म तंत्र जड़ राजनयिक मत्ता
जीवन धात्मा का करण शान्ति
धपर मोक रत मन विरक्त रहता
दृश्य जीवन का कर निर्धामित !

निष्क्रिय नियति निषेध प्रस्त भारत
शमक भृंगवत् धारवर्ती में रत
नपित मत्त स्वार्थाद्य भोगवादी
पश्चिम यह वास्तवता का अनुगत ।

घाभ्यारिमक भाषार भूमि विरहित
पश्चिम में विज्ञान ध्वंस बाह्य -
मत्त के मूर्खों में विभक्त मानव
अंतर्राष्ट्रीय जय स्वर्धा प्रागण ।

शुभ प्रीति उपचेतन भाषा मे
हो विकीर्ण - पद्म स्तर पर कुटाचरित
जैव वृत्ति रत कुटिल मानव मत्त
अथ भंगुर अन्तिरबबाध प्रेरित ।

यहि समठन जून्य वृद्ध भारत
रुद्रि रीतिया का ज्ञापित पंचर
अति वैयक्तिक छाया भाषो से
पीडित - जीवन बर्जन से चर्चर ।

जाति पात्रि धर्मों मे पचराई
छुद्र मनुजता को मिटना निश्चित
रीति नीतिया में अंधित भू को
नव मानवता मे होना विकसित ।

सक्य सम्पता का उन्नत जीवन
मानव धार्या का ही जो दर्पण -
रत प्रहर्ष की शुभ गहनता ही
मानव अन्तर का नामा प्रागण ।

घाभ्यारिमक संयाजन में बंधकर
अन मू जीवन हाया सुबख्तर
धारिमक समता साक एकता का
मत्त मद्दत र अंतनिर्भर ।

घाभ्यारिमकता मूम मत्त जय का
उमक प्रति होना मन की आसन्
उपनुकूल कर सूजन कर्म भू अत
मून कर धम के पुट में जाचन ।

सहमत समते सभी समग्र्य से
क्रिया मुक्त मन से बुध में स्वीकृत -
पूर्व और पश्चिम धार्मिक धार्मिक
एकांगी मूर्त्याकन से पीड़ित !

ध्वंस घघ विज्ञान शक्ति को घघ
देने नव धर्म्यात्म ज्योति सोचन
सांगिक पीठ बना मू जीवन को
करे पंमु धर्म्यात्म सोक विचरण !

कसा केन्द्र का जीवन सचासन
मए रूप से कर फिर समोचित
समागतों ने ससृति छात्रो को
क्रिया प्रसासन विधि न नव शीक्षित !

देख रोड को एक विमुग्ध धर्तिका
बोला - क्या लगता इतार्म जीवन ?
स्वर्न सुजन रत जीवन से मुक्त से
क्या परिपूर्ण न एक देह का शम ?

धंग जानते धंग तृप्ति का मुक्त
धारमा मन शरितार्म मास तन में
तन्मय इद्रिम में समाधि स्थिति मुक्त
नर विकास रत वाटा जीवन में !

भाव प्रीति मुक्तको लगती निर्मम
दर्शन की कल्पना पुस्तक विरहित
धार्मर्वा सौन्दर्यो को परिषति
ऊच्य कपर्ई लक्ष पावक में निठ !

मूस्म मही समन मन क स्तर पर
स्वप्ना का स्मृति तल्प हृदय नवन
कोमल धर्म्य कर्मात्मक यह मसृति
धरती का चाहिए रीड़ का बस !

प्रेम रतत पावक न प्रकान क्रिय
देह मज न ही रहता जीवित
धंग सासमा ही उमका इधन
बिना प्राण मृत माहृति क बट मृत !

सुख सुविधा वधित धू जीवन ने
नियम बर्तनों में बोधा निब तन
भौतिक वैभव क युग में स्त्री नर
दमित इन्द्र मूर्खों प्रति नब वेठन ।

कमा स्वर्ग के सित रस म पोषित
होसी राज - मुन नब जैविक वर्गन
बोसी चित् मुख तर्कवाद से पर,
रस मूर्खों का - जीवन ही नर्पण !

बाहर से भीतर समूह्य संपद्
हृदय चेतना का शास्त्रत जीवन
हास देह मुख का होता प्रतिदाम
भौतिक मुख का प्रलय संघर्षन ।

पाद पीठ पर वेह चेतना की
तन मन से प्रतिशय बिलका जीवन
प्रेम कवित ही प्रजर देह का सुख
कृमुमित क्षण कुम्हसा सरना रज बन !

राग प्रथि गुसती न काम कर स
नहीं वासना मुक्ति बमन धीयष
भाव उभयन ही सामूहिक पप
पशु का ऊर्ध्व विकाम नहीं पत्र बध ।

प्रेम मुक्ति ही हृदय स्वर्ण कवि का -
स्थापित करना युग नर को मू पर
बिना प्रीति के स्वेत ज्ञान संपद्
दिग्घ उपस्थिति हीन - रिक्त डंबर ।

बुध प्रीति समरत्व सार घस्य
जीवन स्तर पर जीवन का रोहण
स्वर्ण प्रवतरण यह भव कर्म पर
धम धू का कर सकती संघर्षन ।

मुझे जाड चेतना किरण है मे
कप सरावर में ठिरती सम्मित
पुन मित स्वर्णम भाव हिमारा म
बर्मात्री टाया प्रजाग रन मित !

सब बूझकर तुम मुझको सँगड़ी
कर न सकोये— मैं रख में जाय
वीथ ननःस्त्रिति तन के मुख का भी
प्रीति उल्य पर करती सिध स्वागत !

चित् वीर्यं प्रवीति प्रीति वचित
द्विय कर्म रत धन भू जीवन
कमा पीठ म रह तुम मेरे ही
स्वर्ग वक्ति का करो प्राण धर्षण !

बहिदुष्टि न—क्षण धर्ष्यागत तुम—
ममस न पाषोणे रम धारोहण
पीठ कन्त्र वेतम् म बेखोणे
स्वय धनतरण यह नूतन जीवन !

ममस्युग् नव ऊपा म देया
लब्ध धतिनि ने—भू संस्त्रिति प्राणण
सद्य स्मित निज धंत क्षामा में
विना उच्चमुप हो सिध सरसिज बन !

भाव सता भी रोड स्वप्न मुकुमित
सिन उरोज धानर मुधा क बट
बाँहि प्रीति प्रगेहो ही पुमक्ति
उर जोषा म मग्जित तन क तन !

पौवन जोषा में निपटी धारमा
सगती क्षति ही मांस बन रंजित
पाकों क सुरधनु रम पाक म
हा प्रप्रय वैतस्य रश्मि बितरित !

उपत जीवन में प्रबस क हित
दोसा ही निश्चय स्वर्णिम तीरण—
सोच रहा का आव धतिनि मन में
भू मत को करता रम धारोहण !

दया धर्ष्यागत ने—मांस उपा
रवि मग्नि—स्वग धरा का मन्माहण
मात्र प्रेम—जोषा प्रहर्ष ममस
मुध गाति—शास्त्र धर्षण जीवन !

कला पीठ निर्मित कर युग कवि ने
ज्योति नीच शमी युगाँध भू पर
जन्म दे सके नव मानवता का
देश जाति धर्मों से जो ऊपर !

खड युगा क मूर्त्यों का तम हर
नव प्रकाश कर सक केन्द्र बितरण
गत युग क भावनों क सब को
साह - सास चैतन्य लितित नूतन !

रोद भूत इतिहास - प्रेत प्राणव -
रके नभ्य संस्कृति पद सब जीवन
मूर्त करे जग म सब अस्त सपद्
बिचरे भू पर नव प्रविष्य दर्शन !

प्रति युग म घाटा नव चेतन कवि
छत्र प्रथित कर आता भू मानस -
धी लोभा म सिपटा जन जीवन
नव भावा मे सङ्कट कर चित् रस !

आत्म तुष्ट मौक्तिक आत्मिक जीवन
जड भू मन से करने उन्मुक्ति
ज्योति काति की लिखा जगाता बहु
सन्धि रचना मदन से प्रेरित !

नभ कला पद का साधक बहु जो
मूजन बहि को साहृति दे जीवन
यस कृदपत् तप प्रिय भू जन हित
धी लोभा वैभव लाना मूतन !

ज्योति अङ्ग बिजोही द्वेष विरत -
निद्रित बिचर जब आसुर लकिन विद्रित
मौक्तिक आत्मिक का प्रतिष्ठा कर बहु
बैना संस्कृत लकिन मरण भय हित !

आसुर जन मे डर मने गुरु दम
मनुष्यत्व का रूप धारण प्रविशित
पद्म नभ्य ए हा विधीत बर्बर,
मनुष्यत्व निर्भय धर्मय निरिचत !

असहयोग कर बहि शक्ति मर से
हों संयुक्त मनुज जो युग बैतम
शक्ति धंध पाएँ सद् कृष्टि नबम
उचित लोक मन में हो चित् पूषण -

अंतर्वन ही रे जन मू जीवन
वाह्य शक्ति का नियत जगत में क्षय
धार्प बोध से कहता युग चारण
मनुज साथ विजयी होता निश्चय !

बहाँ मध्यता संस्कृति पंखा म
अस विम्व सेये जाते भीषण
मूस्य मनुज का तुच्छ कीट तुषणवद्
यांत्रिक दानव हित जो पशु भोजन -

निःसहाय मृतवद् रह जित जग में
नष्ट विह्वल विषटित होता जीवन
बहाँ किस लिए मानव बलि पशु बन
रहे? - बने सोया पीरप चित् कथ !

प्रकृति विजित बह, बने आत्म विजयी
सृष्टि कोय उपहृत हो पा नब नर
रका विकास प्रतीक्षा में बड़ चित् -
ईश्वर का नर में हो क्पाठर !

अति कालिका लड़ी विगत क्षय पर
मानव युग का करयी आवाहन
विष्णु कस्य फिर नब मुय सदमी संग
मनुष्यत्व का करे मरण पोषण !

मानवता अब निविस विश्व बाधक
मानवता पर्याय धरा का नब
राष्ट्रों तंत्रों अमों का निश्चय
सार सत्य मंगल प्रिय नब मानव !

ममरिक धर अंतर्राष्ट्रिय चिन्तन
ऊर्ध्व - मूस्य देना उसको निश्चित
अंतर्जीवन निर्मित कर ही जन
विश्व शांति कर सफले मिल स्थापित !

धाबाहन कग्ता कवि मुम मन का
नभ प्रबीष देता बहू भू जन को,
हो संत संगठित मनुज भीषम—
नपक प्रेम ही नभ भू जीवन को !

विष्व विकृति से हो न पराहित नर,
मन काति का पहरे मुम केतन
मनुज दिव्य बहू सत्य ज्योति बाहक
सत्म कर भू मम चित् पावक कल्प ।

सुसये शङ्कर जन अकूम भू मम
अधक दावा जन कुल कटक जन
पावक पग धर बड़े काति दुर्बल
आसोकिष्ठ हो मनुज सत्य धानन ।

सत्पों में हा मनुज सत्य बिजयी
जयी कश्चिमा में हो संतर्भन
संकल्पा म जन भू रचना संत
नभ संकट में मनुज ऐवय संभन ।

पूर्ण मनुज जन—उससे भी अतिरूप
मनुज सत्य चित् कन रहता निरुपम
प्रतिपद पर परिपूर्ण चेतना कम
परम पूर्णता में होता तन्मय ।

इष्टिम तन मन बुद्धि विवेक सहित
हो अष्टार्य मनुज का नभ जीवन
ऊर्ध्व प्रीति सोपान खुले दर में
मधु से सिद्ध संयुक्त रहे जन मन ।

एक आसोक अतिव पर कवि भू हित
बरसाता स्वर्णिम मधु रस निर्भर
ऊपर शाश्वत अद्वैतार्थ संबर
नीच भू जन मंगल प्रेम धर ।

एत प्रह्वं — मधु प्रीति स्पर्श तन्मय
रोम रोम में जन तप सत्य मूजन—
उड़ता तुमबद् कवि संतर विष कर
दुनिवार शाश्वत का आकर्षण ।

वही हर्ष जा जीवन पावक बन
 प्राणों के सुख में होता कुसुमित
 धब धबों के स्वर्गिक स्वप्नों स
 कवि धंठर को रजता रोमाञ्चित !
 स्रष्टा ने ही बिरभी उसके हित
 सूक्ष्म स्वप्न चित् तार बंधी रस सित
 तमय तर तंत्री—स्वर्गिक पावक
 वरसाती जो धंत स्वर शकृत !
 उतमा ही बेठा कवि युग मू का
 प्रहस कर सके बितना जन धंठर,
 धमूय बह्लि रस सूक्ष्म ज्योति की झर
 पीठा रूढ़ता वह धमाक निस्वर !
 पीठ बिरति सिध रति क पुलिना मे
 बहवा धसय चित् जीवन सागर
 तिरठा कवि रस में सर्जन प्रेरित
 धात्मिक सुख से भर इद्रिय गायर !

उडती सूक्ष्म मरद गद्य निस्वर
 कसा स्वर्ग में धत सुख पुसकित
 धंतस्वग्मय होता ज्या सित मन
 जीवन सोभा होती रस संस्कृत !
 चित् श्रुमा स मुभ्र भाति झर झर
 मू जीवन पब करती धालोकित
 रस शकृत कर मन तिरधर्मा को
 प्राणों को स्वर्गिक शोषित मञ्जित !
 सुजन स्वप्न सोभा सुख में रत मन—
 भाव कम निब पर प्रति हा बिस्मत
 नब प्रकास स्वर संघति में जग कर
 नबोत्साह स भर जाता धबिदित !
 हृदय गुहा में पीठ सूक्ष्म रति मुष
 सिध सोभा धानबंधों में बिकमित
 गुह्य बोध प्रेरणा कल्पना बन
 रचना मंगल में होना बितरित !

प्रसिद्ध कर रस तत्त्व प्राप्त पावक
रसत भाव धर में कर संभित,
अथोति स्फूर्ति से उर महण्डु स्पंदित
लोक कर्म रस रहुता धर त्वित !

प्रेम प्रवर्तित हो सुर सखिटा सा
केन्द्र हृदय को करता प्रवगाहित
सफस भगीरथ यत्न युवक जन का
मू जीवन को करता प्राण हरित !

कसा पीठ की रस ससृष्ट गाथा
भाव योग से आत्मसात् कर जन
होते नव वैतन्य रश्मि दीपित
स्वत कूटते स्रष्ट सत्य बधन !

मर नारी की हृदय मुक्ति शक्ति
स्वर्ग प्रीति मे होती धित परिधत
स्वप्न भाव का जन यथार्थ कस का
धीतेगा मू रस - कर तमस निहृत !

विष्णुपरी यह प्रीति - बिसे हर ने
क्रिया कील पर धारण मठ मस्तक
धर्म धर्म सगर हो भावस्यक -
रग वेतना ही संस्कृति पावक !

निश्चय ही यह शुभ प्रतीति सुधा
मू जीवन को देवी नव जीवन
मानवीय पूर्णता धर में सा
घो देगी तम मन का पशु प्रायण !

नैतिक धितियों को कर चिद् व्यापक
दोम भावना के स्वजिम धर
धर नरक को स्वर्ग बना देवी -
ओ संस्कृति का लक्ष्य - दिव्य भास्वर !

प्रीति काम से सबल शक्ति रस जन
वीर्य धारणा को करती धारण
स्वयिक मौरम से सम्मोहित * उर
निश्चित बृति करता उसका धर्यण !

हृदय हृदय को करता धनजाने
मुक्त मनुज धाता मम स बाहर,
स्पर्श प्रपताभों में घटर की
सहज भाव मय होठ मारी नर !

मूठ स्फुर्तिग धे जन भू हित स्त्री नर
मुक्तयी उर में शोभा भी नूतन
सित प्रतीति की सन्निधि में बुल मिल
साठ हुमा मम सक्रिय नभ बेठन !

मानवता की सार मुरभि नारी
भी शोभा गरिमा क प्रतिमा जन
पूठ ससूठ होते - पावन संयम
भू जीवन का नीतिक धनमनन !

मुक्त हृदय में स्त्री नर के जगता
भाषों की सुपमा का स्वर्णोदय
नीम गहनता में प्रतीति मुख की
मय होता उर निटता मय ससय !

मुञ्ज रूप की स्वगिह शारवतता
स्वप्निम ज्वाभा स छूटी तन मन
सीमा म निःसीम स्वर्ण करता
प्रीति मुकुर बनता तद्गत सित क्षण !

पावनता ज्योत्स्नाभिसार करती
गूजन सन्निधियाँ धरती शोभा तन
सागता रस कवि को मुर शोभाएँ
स्वप्न चरण करती भू पर बिपरण !

रजत मरवों का स्वप्निम तन धर
धत शौरम स शोभा बेष्टित -
स्वप्न मुञ्जरा मुन पड़ता कवि को
जब क भाषों में होती मूर्तिव !

स्त्री नर का भा प्रेम स्वय पावक
मुञ्ज रूपता स सिद्धता धनर
धाम त्याग का मुञ्ज कन मुख का
निविम प्ररणाओं का स्रोत धनर !

यौवम आत्मा में प्रवेश कर वह
भाव सुरभि छा बसा मुग्ध मन में,
सूक्ष्म मधुरता में सिपटा भू को
अननुभूत रस भरता जीवन में ।

नव कोरक खिलने की बेला का
गुड़ हर्ष छाया हो मधुवन में
मीन अनिर्बचनीय प्रतीक्षा सी
मिसती आकुस पंख समीरण में !

धरत चंद्रिका सा पद चेतन को
निर्निमेष सुषमाओं से झूकर
अमृत सिन्धु के अवसाहन सा वह
स्वप्न पूर करता उर का तम हर ।

दिव्य शक्ति नव मानव के उर को
बना रही थी निज स्वप्नित आभय
भाषों के पावक से भर भू मन
धर संयम आधार विभा निर्भय !

भू जीवन का पंचाक्षर प्रतिहत
सत्य मधुरिमा बोधा निःसंशय
शेव गीम उपकरण - बाह्य विद्या
जीव प्रयोजन भर कबल निवचय ।

सुबति सुबक को देख मधुर भूपित
कहूँ सुख पुमकित युग कवि का मन
बोधा में साकार, सत्य ईश्वर -
सुवन शक्ति विचका आनंद महन ।

भुध्र ज्योति चेतन्य रूप उसका
प्रेम हृदय करता जय की धारण
मीन अचरित करते बिस पर प्रभु
वह संतःसिद्ध शक्ति पीठ पावन ।

गोभा प्रति यदि सयग नहीं भू मन
जीवित रहने योग्य न भू जीवन
अमरत् स्पर्श न जो उर में आगत,
हृदय नहीं वह बधिर अंध पाहन ।

दिक वह नर जो प्रभु की महिमा को
पितृपद दे कर सका न पूर्णार्जुन
दिक वह जो ईश्वर की शोभा को
पत्नी सा दे सका न परिरंभन !

दिक जीवन प्रभु की बहुमुखता का
बना न जो रह सका मुख्य सहचर
दिक वह हृदय प्रथम रस तन्मय हो
देख न सका जगत ही में ईश्वर !

प्रति शोभा प्रति प्रबुद्ध हो मन
रस संस्कृत जग धाम करे निर्मित
शोभा के मधु स्वर्णिम पावक से
मनुष्यात्म की प्रतिमा हो कल्पित !

संस्कृति संत अपेक्षित जग के हित
नव निर्माण करे जो भू मन का
ऊर्ध्व निखारे प्रतर्मानस को
शुचि संस्कार करे जग जीवन का !

जो महत्त्व दे शुभ को मगन का
हो न महत्ता मय स प्राप्तकित
मनुष्यत्व के परबंभ से जो—
भू तंत्रों को धरे सधनुसासित !

जग मन का हो प्रतर्भव सिद्ध जग
मनुष्यत्व साम्राट् लोक प्रतिनिधि
धार्मिक मौरव हो जीवन प्रेरक
क्षमा सीम नियमन हो सहृदय विधि !

स्वर्भ नम्र तप की पावता से
व्यापक रस चिति मानन कर विरचित
ईद्विय मन धारमा की संपद् स
धरा स्वर्ग जीवन कर नव राजित—

जो भू मानव के प्रतर्भव में
करे ज्योति साम्राज्य शुभ स्थापित
क्षण संसुर जीवन संपरण को
साक्षत के पट में कर गयोचित !

हा चारित्र्य न अस्ति त्वेव संयम
 निविद्य प्रकृति रस निविद्य तं हो पोषित
 स्वस्य मानुषी मूर्त्तौ वा वर्षक -
 कुछ भी हो न विद्वत् गहित प्राकृत ।
 धम न्याय के पथ को कर विस्तृत
 स्वभू सत्य चैतन्य लोक सा स्थित
 निज पतर धार्क्यज से पा बय
 पणित पाप को करे पुष्य संस्कृत ।
 भेद नहीं कुछ मानव मानव में
 एक मास रज एक हृदय स्पदन
 त्रिविध प्रकृति गुण एक उज्ज्वल तोषित
 मनुष्यों में निज मनुज एक चिद् बन ।
 ऐसी धर्म साधन सत्ता का
 स्वयं ब्रह्मता मुन कवि आकाशित
 स्वयं धारम साधित हों जिसमें बन
 रचना शोभा मयज प्रति भवित ।
 मलय न भव मति बड वस्तुधों की
 धारमा प्रेम - स्वभू रस में गोपन
 जज्ञ साति सत्ता का दिव्य हृदय
 दुःखों से संकल्प महत् प्रतिक्षण ।
 शिव निज शिवतर में होता विकसित
 भी सुंदरता बनती सुंदरतम
 सत्य महत्तर बन कृतार्थ होता
 निविद्य मूर्त्ति में स्वनिम संगति क्रम ।

धर्म प्रेम ने लिया हृदय म प्रव
 हुषा ज्योति तम मञ्जित कवि धंतर,
 विद्या धर्म धविद्या पावक धर
 निज कर में वह प्रकृत हुषा मास्वर ।
 छिन्न युगों के कर नैतिक बंधन -
 या प्रकाश के बे गत धर्म चरण -
 हुषा विसोदित चेतन प्रबधतन
 धमित बामना न फैला जल पल ।

धोल गुजरात चितकवरी कासा
 सगी सोटने दे शठ विप वंजन
 किमाकार सा सगे रूप धरने
 प्रारिभक प्राणिक कायिक विधि वर्जन !
 राग रूप के कैसा घूमिन फन
 बिरहे उर में काम कनुप के बन
 काले कृते सा पीछा करता
 क्रोध पूर्वक मन के तम में प्रतिक्षण !
 मृत गर्वों से प्रेतों से उठकर
 धम नीति इतिहासा क पजर
 लगे नृत्य करने उर प्राणम में -
 जग निश्चेतन से गत भू संगर !
 बिकृत मुंड हत कितनी ही धाकृति
 धापी जाती - मम को कर कपित
 मरक रूप नीच बा स्वर्ग शिखर
 ऊपर - कवि उर निर्भय धात्मस्वित !
 बुद्ध मार का धामा तुरत स्मरण
 हुधा छबेठ धमरकृत कवि का मन
 नभ्य भूमिका प्रस्तुत करती चिति -
 वा गत दीप शिखा का धैरिम दाध !
 दुग्ध सस्त उपभवन के तम में
 स्वर्ग किरण हैंस देती धास्वासन
 विधि निपद्य गत युग के प्रतिष्म कर
 बिस्तृत होता भू मानस प्राणम !
 तमस प्रतिफसित होता छा बाहर
 बिगठ धई बनता उड़त निर्भम
 गरज परीसा सेता परश प्रखर,
 राम जात थे - यह बिक्रास विधि क्रम !

धारोहण धबरोहण कर कवि मन
 मांप्रत भूत भविष्यत् प्रति जाधत्
 देख रहा का कल्प भूत भूतन
 निम्न धनामज का कर भूम स्वागत !

गत भू जीवन पद्धति कारा में
रुद्धि रीति पट में बंदी प्रतिक्षण
मनुज चेतना पात्र मुक्त होने
प्रातुर भी - गढ़ने नव भू जीवन !

ऊर्ध्व भूमि से हो जग केन्द्र च्युत
विस्तार मंचित होता नवि घंटर
बह विमक्त उर हो अनुभव करता
युग भू सवर्षण अपने पीठर !

भू मानव के बहिर्भूत मन में
गहरता जाता समक्ष संकट
बैद्य विकट क्षिप्रों में या भू बस
बढ़ता जाता वैमनस्य उत्कट !

मिटठ राजनयिक विभेद बाहर
धार्मिक स्पर्धा भी भीतर जागृत
आस्तिक नास्तिक दोनों के उर से
नैतिक पौष्टिक कुठा से पीड़ित !

सौह मुष्टि से अधिक चूर निकसी
स्वर्ध मुष्टि - संपद् मद से निर्मम
नव्य चेतना पावक में विचलित
होती ओ घब - मिटा बैर भय भ्रम !

ऊर्ध्व वृष्टि से हीन धर्म पगु नर
दिशा प्राप्त वा बहिर्विभव उग्रद
धार्मिक स्वाधी के संरक्षण ह्य
भङ्गा शक्ति वानव वा धंगद पर !

विज्ञानेयण प्रिय वैज्ञानिक युग मन
रजत बालुका मरु सा विग्न विस्तृत
विद् धार से रहित बुद्धि निर्मम
मृग मरीचिका जीवन पर मोहित -

भीषण संमाधो स या मंचित
उठने गिरत राष्ट्र - धुध परंत
मिटठे हंस कव धारा क माह्न
गति क्रम विग्न भ्रम में होना परिणत !

हृदय हीन हठ वृद्धि - प्राण मुग नर
सिद्धि भर या नहीं मनुज सख्य
प्रतर्जग में बिरा अंध तम धन -
बहिर्जगत अइ रोषों म परिचित !

जीवन सुख उपकरणों के प्राथित
बाह्य विभव प्रातरिक दैन्य पीडित
भौतिक अय प्रात्मिक अधिभव मरित
बहिर्सम्य प्रतर्जगत् कुठित !

विकसित मृत परिस्थितिया का अग
प्रतर में स्थित आदि अथ बनकर
बैज्ञानिक सुख मुबिधा बितरण में
नर का परि या भीतर बकर नर !

साह्य बोध से पागल मुग का मन
विपुल बहुमुखी ज्ञान न समोजित
बहिर्बिधा में उडता नर भीतर
अस्त सूर्य मय निधि युगात् निश्चित !

अंत तंत केवल अइ आइंजर,
भीतर स हाता जीवन सासित
प्रकृति काम गो दुह, मय मुग सायर
विप अट नर पी सका न दुग्धाभ्रुत !

तद्विष् रक्ति अणु शक्ति न मू सर्जक
भौतिक मुग सम्मता तग्य थी हठ
अट्टहास करता अम अणु दानक
मयनों स कर प्रमय उवाच निर्गत !

महाकाम पूजित अट पादप मा
देखा कनि ने बहिर्भ्यान् मू मन -
मय मसा अथ ताडित उमूसित
गिण गर्त में हहरा जा तत्त्वप !

ऊर्ध्व मूस हा अथ साय्य मुग तद
प्रतर्मानस का प्रतीक बन कर
कहता हो ज्यों - पीच ऊर्ध्व चित् रम
मंमक मू जीवन का अर्पात !

मूस धंध मू तम में रच सीमित
प्राण हरित घर जीवन कुसुमित मन
सार्थक हो मकला न विश्व जीवन—
स्वर्ग नीड़ यदि नहीं हृदय बेतन ।

परंपरा के पजर प्रामों से
या प्राकृत तरुण भारत का मन
निश्चय ही सबसे पहले मू के
जन मन को करना या युग बेतन ।

सार्य भारत ही कवि को वादन
महा धाम सा मया स्वदि जर्जर,
यह जीवन मूर्ख्यान्त से पीड़ित
मिथिल विश्व प्रामों का अड़ परिकर ।

राजनयिक धार्मिक नैतिक धार्मिक—
सभी स्तरों पर कर प्रबुद्ध युग रच
गठ बर्बर की कुपय प्रहृता से
शाप मुक्त करना या मू प्राधम ।

बने सम्मता ही या जन संस्कृति
विश्व युद्ध हो धार्मिक कट्टरपन
खर्ब धाम्य मूर्ख्यों से परिष्कामित
विगत युगों का मू मानव जीवन ।

युग की वैज्ञानिक सपद् का भी
रोके घर यह मुक्त हस्त वितरण
जमता मदिरा पी मधु गठ नर पशु
मू बिनाश के बहता धायोजन ।

मन घटीत वीरव स्मृति सं पीड़ित
जीवन रच गठ सीक गर्त स्तमित—
बाह्य परिस्थितियां के अड़ जन की
नम्य बेतना सं करना धंडित ।

इंद्रिय जीवन म बंधित करना
धार्म्यात्मिकता का धनिष्ट धीयव
नैवर क जग के जीवन के प्रति
महा पाप यट—पीड़ित गठ मू मन ।

मध्य युगी बहु साधु संत धर भी
 विद्याभाते धन को जीवन वर्जन
 गुह्य शक्तियों के पूर्वीपति से
 सरस सोक मम का करते शोषण !
 मौक्तिक बीमब के प्रभुधो से ही
 ये धार्मिक निधि के कुञ्जर निश्चय
 मू मंगस के ईश्वर से दोनों
 रो छोरों पर—दूर—मही सतम !
 योग मही बहु मात्र योग गुठम
 ब्रह्म बोध का श्वेत धस्य पजर
 कवणामय का हाथ पकड़ कर जो
 मू मगस प्रति विरत—मोक्ष पञ्जर ॥
 विद्या बोर धविद्या तंतो से
 भारत का साधक मम चिर परिचित
 धारम मात्र का एक मुह्य कारण
 रहा धविद्या संत मही निश्चित ।
 नव युग की स्थितियो स से साधन
 संत सिद्धिजों स प्रकाश धमिनव
 बहिरंतर समोचित बीमब की
 रस ससृष्ट परिणति हो नव मानव ।
 विज्ञा क्षेत्र रे, काम-बोध हस फल
 बुध ज्ञान विज्ञान रूपम बसधर,
 साम्य उर्बरक शस्य ज्ञाति मंगस
 देवय बीज वैतन्य स्वर्ण हसधर ।

देख विगत युग क मूठ प्रेतों को
 जन मू मानस में धमिय जीवित—
 निम्न सा उठत संतदर्शन
 कवि उर को कर मव धाशा बीपित !
 महत्पता समदिक ससृष्ट का धन
 देखा कवि ने—विस्मय हत संतर
 पांथी की धारमा—नव युग विकसित
 मूठ ममाधि से उठ धानी बाहर ।

मुनिर्द्वय से फल समाधि स्वप्न ज्यों
उगम रहा हो द्रवित स्वर्ग पावक
रश्मि रेख प्रामा में दिख मूर्तित
छूटी प्रामा प्रंबर का मस्तक !

बढ़ उर मे बागा हो नभ बेतन
ज्योति प्रेठ छाया बहु दिग् भास्वर
उठरी फिर बन जीवन प्राणन में
सो न जाति स सही वैत्य भीतर !

हृदय और पृथ्वी का युग सीता
प्रति परीक्षा देने फिर नूतन
घरती हो घरती पर पावक पम
चित् शोभित की ज्वाला सी पावन !

उस प्रकार प्रतिमा बभु पर खारी
प्राम शक्ति की सिद्ध प्रतीक बन कर
कर्म बचन मन की पवित्रता से
सगठी वैदिक परिमा में सुवर !

देख सबको को बनत शासक
मनाचार वैदिक मय का कर्म
दूषित भोजन दूषित जीवन मन
हरने धार्ई बहु युग मन का भ्रम !

मम्यु प्रम्बसित तय निष्ठ अंतर
सह न सफा निर्बम का उत्पीड़न
प्रम वस्तु हित से प्रसंख्य कातर
स्वल्प बिम्ब पद नय मंडित भीमन् !

दिक्त संघरायों में जन अहित
स्वापित स्वार्थों से जन-नू कर्मनित
तक्ति एष्ट्र सैनिक बन बर्धन रत
घस्त्र नस्त्र होते परंत पुजित !

भू मन भय संघय से प्रार्थकित
वैदिक भास्वा हीन प्राम घोषक
जन भेदों मे विबल सोक नायक
घट वर्म प्रिय दिक्त जाति घोषक !

बंदी कर विज्ञान शक्ति मुम नर
महा प्रलय का करता प्रावाहन
बोर धनुष धप छिपा कही भीतर
वक्रता जाता वा भू संघर्ष !

प्रगति सतत करता विज्ञान महत्
एक दशक में कर शक्तियाँ प्रतिष्ठा
कुछ ही दशका में सहस्र बत्सर
साधिया रचना कीलत विक्रम ! -

छोम प्रकृति उर भेद प्रथि जड़ की
बाह्य परिस्थिति कर जय की विकसित
प्रात्मा हीन मनुष्य वा क्षमता बर
उम्मेद भस्मासुर सा प्रब धनु मूठ !

मनुष्य एकता ही नव मुष्य प्रात्मा
महत् धरा जीवन य हा स्वापित
जाति धर्म बर्णों स कड़ भू मन
लाभ राष्ट्र सीमा - हो दिग् विस्तृत !

धक्ति सपना विद्या कर संघर्ष
धविश्वास स दृढ द्वार धतर
राष्ट्रिय प्राधिक स्वर्धा स जबर
विश्व विजय हित उम्मे लभु इमिनर !

पूँजी जनवादी देमा क मन
बस विमलत धम धका स पीड़ित -
सोक ऐक्य प्राधी जन भू ईश्वर
धंतर्मानव का हुना विकसित !

धौतिक मुख बीमब का भी बितरण
निकट धविष्यत् में धनित निश्चित
ध्यक्ति - मुक्ति सामूहिक मुक्ति उमय
पूरक सतत परस्पर धवत्संदिग !

विश्व शक्तिया क संघर्ष स
भू जीवन हो धंतमुध विकसित
मध्य धतना क मस्कृत पट में
रम ममध होना मित संयोजित !

ओर ओर होंगे मू क कुमुभित
 नव मानव चापों से विक कपित
 प्रकृति शक्ति पर विजयी मानव को
 ऊर्ध्व चेतना से होमा दीपित !
 नव चित्त प्रति से गठ बकर पशु का
 जब तक शीघ्र न होया उच्छदित -
 दुर्भ्रम जन संगम - प्रतीति रचित
 मू उर का होगा न मूल अपहृत !
 उपनिषद भ्रम भी जग म जीवित
 वर्ण भेद से सम्य दश पीड़ित
 दिव्य चेतना सहयोगी मानव
 उच्च दाय के प्रति न सभी जायत !

सूक्ष्म दृष्टि से देखा मरकर ने
 राजनयिक से भी प्रति भावश्यक
 सामाजिक युग प्रति महिमा रत
 नव सर्वोदय की हो निर्मायक !
 पाति पाति के टूटें षड् बधम
 भस्मसात् हो रुढ़ि रीति कर्मम
 पूर्वग्रहों से हो विमुक्त जन मन
 युग मू पर हो नव मानव संगम !
 धन वस्त्र गृह द्वार मिले जन को
 शिशा संस्कृति से बीपित हो मन
 सुंदर हो मू, सुवर्ण म्बी नर
 मानव गरिमा बहन कर मू जन !

पृष्ठभूमि जब तक न शोक मन की
 बदमेयी युग प्रयति नहीं संभव
 मू प्रागज मे धो घटीत कर्मम
 नव युग बाहक जन मजता मानव !

राजनयिक प्रापिक स्वर्घर्षे भी
 सामाजिक चेतस् में हावी भव
 विस्तृत हा जो मू जीवन मानव
 भेद भाव भय राग द्वेष हा लय !

हिंस युद्ध हों अंत शांति स्थापित
अस्त्र शस्त्र हों कौतुक गृह संपद्
अशु बुध नव जीवन रचना बाह्य
शु मानव परिवार - स्वर्ग परिपद् !

मित्र अतीत अतिक्रम कर गत मानव
मिले विश्व सागर समय म सित
मानवता ही नव सामाजिकता -
करे मनुज अंतर दिगठ जोपित !

रजत व्योम मे रुका स्वयं मयस
शु पर हो अन्तरित कर्म सचित
सुखन स्वप्न हो सोभा म परिपठ -
जन रचना समता असीम निरिषत !

जीवन परिभाषा हो परिवर्तित
जाति भेद हों सोक प्रीति मुक्ति
अस राष्ट्र हों विश्व संत समुदय
विश्व देव के अंग वेत्त विकसित !

हो वैज्ञानिक स्वप्न मूर्त शु पर
राम राज्य आदर्श नवम रोपित
अस स्वर्ग की सित अंत संपद्
कर्म कुशल जीवन में हो कुमुमित !

मनुज एक - यदि एक बूखरे का
अहित न कह चाह, पय बाधक नम
पम अन्त सद्गति अन्त मंगल
ईश्वर केन्द्रिक हो जो जन शु मन !

छायाःमा फिरती निमय शु पर
कंपित कर आपों म विक प्रायण
श्रेत्र वेय मुन मुष्ठा वृष्टि बाणी
नित्र बिबरों स निकन पड़े शु जन !

स्वागत किया अहिंसा का शु ने
कह लक्ष्य आत्मिक - पीय पावन
पशु समता हिंसा अय का दसन
क्रिया पराजित अशु बाय ने भीषण !

मम उद्वेग विध्वंस मने हारे
संभव उनसे नही स्वयं सर्वत्र
महिषास्त्र मृत को जीवित करता
मिना भवत्, यद् का कर उद्योग !

देखा कवि ने ज्योति सिखा सेहर
केन्द्र छत्र जन को वे उद्भासन
मग्नि प्ररोहों से बड़ते धागे
लोक काँचि का करने संभामन !

जीवन रख वास्तवता से परिचित
मुक्त प्रीति से अंतर उन्मेषित
वक्ष्य ब भित् पावक के पय धर
भू जीवन मन को करने सस्कृत !

पुमइ रहे थे प्रलय मेव भीतर
प्राणों में वा रुद्र क्रुद्ध पावक
सदाचार पट में अक्षय सिपटा
भू जीवन वैपम्य हृदय वाहक ! -

सहज बुद्धि को नमता जो संयत
उसक वे विपरीत नीति बंधन
भू वाजिपथ धरिणा क ठम को
अपित मृत जन का विपन्न जीवन !

रेंधा करता पाप वंश में मर
धनिका हित वा जन धम का वैपक
ध्वंसास्ता में जुँकती भू संवत्
भौतिक युग का वा बौद्धिक जीवन !

हंसते जन भू पर फूना के जन
हंसता रवि जशि ताराओं का नम
मानव संतति रहती निजा अक्षित
मध्य नरक में जीवन मृत निपन्न !

रुद्र न एका निगधेवन उर महार
दुन मानव आत्मा का आवाहन
फुँ-फुँकार उठा मह्य जन ठम
विष्य स्वर्ग वा जीवन उन्मादन !

कर पद दुग इंद्रिय विहीन वामन
जड़ निद्रा स जग झुत बन चेतन
भुङ्कुटि भगमय कोटि सीमा कर पद
नृत्य कर उठा मर युगांत विपु स्वन !

मवान्मेष स प्रेरित जन पर्वत
बड़ता धांधी सा दुर्धर पग धर
युग युग क अभिज्ञाप कोप उठते
कड़ि रीतिमों के गड़ हिस कर धर !

धूमिषात् गत युग धावतं शिखर
मुंठित जड़ नैतिकता क खँडहर
भूमि कंप बौड़ता धरा मन में
मंथित युग धू जीवन का सागर !

धाँव फाड़ इतिहास देखता जब
मुँह का संस्कृति धर्म—कल्प नूतन
साँव रोक कर देखी देख निधिस
भक्ति देखत—युग ताँडन मठन !

बन बाबा सी फँस सत्य बिनयी
उगस रही भी सपटों पर सपटें
जसता बर्बर बनकर का पुर गृह
फन फँसाती सपित धूम सटें !

हृद् गति रुकती धाततामियो की
भक्ति बर्ष होता भीह्व पद नठ
सोपक पीड़क पशुता में सञ्चित
धनाचार का होता हृवय बिरत !

म्यस्त स्वार्थ मर पत्तों स उड़व
पसमात हठ पर पीड़न सापण
धूमि धुंध में बीमनस्य मिसता
ईम्य दुग क छँठ दारण धन !

धंतरित धुमता मन का बिस्वुन
सब फूटता धू उर स जीवन
शाभा मरिमा में दिव्य मुसुमिन
हँसता मध भी समता का जीवन !

घरा प्रीति भरती उर पतों को
 मनुष्य ऐक्य पथ बाघाएँ बहती
 प्लावन बटने पर पावस नद सी
 जीवन धारा सहज रूप बहती !

एक बार जो जन मू का प्रायण
 स्वर्ग अधिर से हो छिठ अथगाहित
 सद्भावों के चदन से चचित
 धरा बेतना हो समता प्रकाशित ।
 अर्थ स्वार्थ के कर्म को छोकर
 राष्ट्रनीति का पन् मुख हो संस्कृत
 साम्यारिभक जन कति धरा पथ को
 कटक मूस्य बना करदे विस्तृत !

फँसी सुबरपुर में युग शशा
 जन मठ शाखाओं में भर अर्थन
 मज चतन से अग्नि शिखा बाहुक
 प्रतिस्पर्धी से शाखाओं के जन !

दैन्य मुनिठ चाहते लुब्ध मू जन
 यह था सामूहिक विद्रोह महत्
 स्वार्थ वसन बुद्धि धनीति मोपित
 मङ्कल वा लोकाभिमान चाहत ।

वे विरोध करते निर्भीक हृदय
 उस सबका - त्रिसम जीवन दुर्बह
 मुप्त धरा धारमा को उर प्रापुत
 द्वार द्वार पर वेन सत्पात्रह !

नदसत पर कटु तर्कबाद करते
 खोर गड़े मूत मरपी क पंजर -
 तीस काङ्क ईमत जो निज मुख से
 हटा जीवन विधियाँ का धारंजर !

मग्नी मिटने का सहज तत्पर
 पूर्व अहिमक रहते पर्वतबन्
 धम धंग से कामिक जोटों से
 वही दुग्ध वा मूक मम का लत !

मनुष्य न हो जब तक मू उन्मुखित
बुले न बलितों प्रति कुसीत भ्रतर,
मिसे न सम भवसर मामक शिमु को
मिटे न मू दारिद्र्य मोक दुस्तर ! -

सुख साधन ना हो न उचित बितरण
कुमुमित हो न कुक्ष्य घरा प्राणम
दूर न हो उर निशा धबिषा तम
सुसम न हो सिधा सस्कृति तोरन -

मामक धारमा के विकास पन पर
जब तक गठ मुम का मू मत बाधक
घन वैभन पद मर से अपमानित
कोबिद सर्वक मू मयम साधक -

साधनबाद न उन्मद रावम सा
जब तक हो जममद से पद मरित
जन प्ररोह से सत्य ज्योति के उठ
मू मयम प्रहरी न बने जापूत -

जम मू बाधी में तुतला जब तक
भारत का वैतम्य न हो मुखरित
वैज्ञानिक संपद् से पस्विम से
धारिमक बिभन घरा में कर बितरित -

शांत न होगी यह अंतर्गर्भासा
प्राप्त न जब तक बास बस्त भोजन
कहते के - बिभाम मूत्यु उनको
जो मू गौरव बाहक अंगद पन ! -

भारत धारमा के ही म्यत्तों स
जम मू मानम होगा समयोचित
मय्य मुपी भावनास्मिता बिसमें
नब युग रण में बिद् रस बोध बिजित !

सुदरपुर यद्यपि हरि मत्तों से
द्विपि मगरों में ना धारम नपर
निधिस साक जीवन धभिभावक जन
मू पुत्रों न प्रतिनिधि के दुर्घर !

विश्व संक्रमण का प्रकाश हम भ्रम
नव प्रहर्ष भरता करता गर्जन
छत्र बेज घर प्रतिपक्षी वस ने
भवघर पा झूटा संस्कृति प्रांगण !

बाम्बिसास से होकर प्रोत्साहित
साधा जन ने निब झूठा सामक -
स्वर्गवास से माघो के हृतप्रम
बही महप्रिय जन का भव भायक !

द्वेष सिन्धु में कस्मप कर्दम में
सत्य ज्योति को तिरना होता निव
ज्योतिबाह का पिता झूठा विप भव
उसके चरणों पर होता भपित !

मर्माहत कर बंसी को खस जन
पूछित को मूठ जाल तुष्ट जन ने
सौटे धंधक से अत-बिसत कर
कसा पीठ का द्वेष धंस क्षण में !

भव पशुओं के रीरे उपवन सा
स्वर्ग बड सनता विनष्ट भीहत
बहु संकल्प ने कपट रूप कायर
सुबति मुबक बस भस्य सख्य बुद्ध अत !

धाम जनों को प्रतिहिंसा पप से
रोका कवि ने मूर्छा स जग कर,
छात्रों को धीरज प्रबोध बस दे
शात किया हृत तन मन के जन भर !

मुक्त सूजन संकल्प कल्पित से फिर
कसा सुतों ने यद्वा गया भीजन
पूजा द्वेष की प्रतिक्षिप्ता स बच
धतर्बम म कर निब मरझक !

सूजन प्रेरणा मे परिणीत मरत
निब का पा धामंद स्वत नृतन
जपा स्वर्ग शोभा में क्रेष्ट पुन -
साध धर्म गति का हेमता सर्मन !

काम कीट छिप कुमुमित धंगों को
 कुतरा करता यंत्र मात्र तम मन -
 धमूठ बैतना यौवन का बैभव
 धरा स्वर्ग रचना प्रति का धर्षण !
 बंगी को का ज्ञात - विपद् भय ही
 सतत पाटते नम प्रयास का पत्र
 वही विजय तोरण बमते स्वर्णिम
 नहीं विपद् भय से प्रमल हों स्तम्भ !
 बावुविज्ञास को क्षमा क्रिया कवि ने
 माधो की सम्मोहन क्षति से मृत
 भरा हृदय का का न धविष्ठा ज्ञात -
 गुरु हित उसका बलि पत्तु संरक्षित !

युग धात्मा देखी तद्गत कवि ने -
 जय धनु भीम पुत्रप सम्मुख उद्धत
 देख कदम सन्तु ह्मि सी मानव स्थिति
 लयता घुना क्या कुच मे आहूत !
 मू के ब्रिजित पमराए मन में
 भय से भरता विश्व संतुमन वह
 मृष्टि कोष का प्रलय बैरय कुजय -
 शक्ति राष्ट्र के युगत बाहु दुर्बह !
 कस्तातर का का वह दिग्भोपक
 युग संख्या की महा ह्लास का तम
 पहन सम्मता का मुख धादिम पम्पु
 उपजाता मानव होने का धम !
 जीवन मरण धड़े के धम सम्मुख
 धामोदित मू का निगुह संतर,
 उमड़ रहा था प्रस्तर युग का तम
 उबल रहा था निरक्षेपन गह्वर !
 बहिमुद्यी नर का दुखान नाटक
 देख रहा था कदगा नम धंवर
 ऊर्ध्व दृष्टि से हीन धम मानव
 धाम ब्रिजित समदिप् विनाग तत्पर !

द्रवित हो रही थी आत्मा धीरे
टसता जाता बारूक सब संकट
टकराते संहार बारि उमद
अग उकेसता हुत मू जीवन सट !

तमस सिन्धु में डूब रही मू को
उठ अशुभ्य कर एक साथ ऊपर
बचा रह बे - मरकत मू गौसक
छिमुनी में था लिए नाक पिरिघर !

चित्कन कही महत् सब सागर से
तम पर्वत से महत् ज्योति का कर
हुवय प्रथि सेव सुने बाह्य बंधन
कर्टम से निखरा मग्जित युग नर !

सौमनस्य पागा मू देहा में
स्वावत पाते छर्मीत्री मडस
बढ़ता संस्कृति कसा साथ विनिमय
मगुज निकट घात उपकृत भूतस !

विश्व संघ छित स्थापित जन मू पर
राष्ट्र युक्त नेते मू हित निर्भय
विश्व समार्ण होती आभोचित
सोक जाति हो मग न मगसमय !

विश्व स्वास्थ्य मू बंड अन्न स्थिति पर
घरा राष्ट्र करते पर्याप्तोपन
धनी देश बिठरण करते सपद् -
अन्न पन्न बहु यत्र बोध बस धन !

अक्ति राष्ट्र मिस अस्त्र त्याग के हित
विविध योजना रचत अक्ति मन
अस्त्र अस्त्र सैनिक संघटनों से
पर संरक्षण निज बस कर वर्धन !

दानव अस्त्रों के प्रक्षोषण हित
देदों में बनते अह्दरे कुत्सित
सुबरपुर की पार्श्व भूमि में थी
बहुत बापु आस्थान हृमा निर्मित !

युग प्रबुद्ध संपन्न राष्ट्र जन्म के
 प्रसन्नोत्सव देशों को कर विकसित
 विपन्न परिस्थितियों में जन्म युग की—
 शक्ति संतुलन करते नव स्थापित !
 अन्न प्रबोध अणु अन्न पाटों में सब
 यथा शक्ति कर म्यस्त स्वार्थ अपचित
 नष्ट प्रयत्ना से भू अधिनायक
 विभक्त सम्पत्ता को रबते जीवित !
 व्यक्ति मुक्ति सँग सोक शक्ति का रण
 माभी भू जीवन हित मयस प्र
 दौखिक मर को बनना बिन्दू 'मानव
 सर्वो महत् शैतिक आत्मिक सपद् !
 महत् समूहीकरण मनुज का कर
 भू मन को होना नव समोचित
 केन्द्रीभूत धरा जीवन को फिर
 बहु विविष्टताओं में अन्वेषित !
 देवा कवि ने आदिम बर्बर पशु
 धर्म सम्म मानव उर में जीवित—
 उर्ध्व धतना स्वर्गों से मर को
 बनना बहिरंतर नवधित ससृष्ट !
 धात्र उपस्थित बहु बिन्दु यचित दान
 युग संकट से पा विद्युद्वोधन
 बनवाने ही करता पठ म मन
 प्राध्यात्मिक निचरा पर अधिरोहण !
 जब तक भू शैतन्य नहीं विकसित
 निविभ बद्ध शैतन्य आसुर सपद्
 बहिर्गल से जाति लोक मयस
 दानिक प्रतिधि मर—स्वायी विश्व विपद् !

डधर शैर वृत्ता म राट्टा में
 उधर माक जेतना संगठित बन
 मब प्राध्यात्मिकता के प्रति जाग्रद्
 कष्टपूत करती नव धाराहस !

जाति धर्म विवरों से मगुज निकल
नव समलभ में बँधते मुक्त हृदय
सदय समव्यपित उभरत सङ्घर्ष बन
नव धासा धासा करते संलय !

राग द्वेष विरहित पर दुःख कातर
मनुष्यत्व के प्रति होते बेतम
शुद्ध बाध ही शुद्ध बुद्धि सित मन
कर्म शुद्ध रखते बन नू जीवन !

आत्म रूप रति से निवृत्त होकर
सामाजिकता का करत धार
छोड़ मध्य युग की जीवन पद्धति
नू मानव हित नया संज्ञात पर !

हैसते उनपर या सपथ मद को
धरित करते निव्र धर्मस्थ जीवन -
स्वच्छ वास सित धन वसन साधन
प्रिय उनको धन विकसित संस्कृत मन !

भौतिक वैभव स्पर्धा प्रति उपरत
निमित्त करते धर्मजीवन पन
मनोविभव के सम्मुख बाह्य विभव
भगता जड़ नैकुल सा विधी स्तन !

शुद्धत सिद्धि सिद्धि पर सोभा के
धन धुवन भरते मन में विस्मय
ज्ञान नम्र भगता उर, विस्तृत मति
मिटता भगवत् सत्ता प्रति सहाय !

मार्दवता धात्री कठोर मन में
मानव पद्म होता प्रसार - संस्कृत
मिट्टी भेद जनित स्पर्धा कुंठा
धर्मजीवन गरिमा से मंडित !

गुंथ धरा रज में प्रकाश चित्कण
नव जीवन प्रतिमा करते कल्पित
भूमि बिना बिद् बीज न देता दम
बिना बीज नू जीवन रज जड़ मृत !

मनुजन कर्म प्रिय प्रियतर या कृति पर
जन भू जीवन ममल प्रति अपित
व्यक्ति विश्व में भी अमिन्न सगति
कर्म-योग ही कर्म भोग या सिद्ध !

इंद्रिय तुष्टि न या समग्र जीवन
प्रथ परिणति का भर मित साधन
इंद्रिय बोध न पूर्ण सत्य समुभव
तद्गत उर बनता प्रकाश स्वर्ण !

स्वर्ण अमरता का या जीवन की
सबम प्रेरणा हो उठती आभूत
अमरता में स्वर्ण नसा विनिवृत
अविनस्वरता हो उठती जीवित !

मनुज प्रेम के विना धरा जीवन
या अमशानवत् विरति धूम आभूत
मानवता ही अमर सत्य प्रतिनिधि
मन्वर व्यक्ति - निखिल से यन् विवित !

महा अक्ष के भय स मित भू जन
कर्म निष्ठ रहते निज पर निर्भर
नेत्र रेख कर परिजम पुर जन की
संरक्षण के धोज मए साधन !

सोक संगठन कर ब जन भू के
याग क्षेम हित रहते सक्रिय निव
सहजीवन सहयोग युक्त अम के
सबुपयोग स कर जीवन उपहृत !

भू-अम बहि समृद्धि ऐक्य उर-निधि
मानवीय गुण का करते धादर
जन ही अक्ष भू जीवन संभासक
सकट हत शायन निरिचय अर्जर !

राजनयिक धार्मिक भू जीवन की
मृष्टि सुप्रतापों से हा अक्षय
संस्कृति के स्वप्नों धामों का
भू मयम हित करता नर स्वागत !

युग प्रबुद्ध पय जीवन गति परिचित
मनुज एकठा के प्रति आकर्षित
विरत बुना हिंसा स्वर्ण रज स
एक विश्व हो - मन करता स्वीकृत ।

कलह विवाद असम प्रमाद में जो
स्पर्ध नष्ट होता पन धन अम बस
मू रचना में कर उसको योजित
प्रचित करते नव जीवन संयम ।

धम - शतगुण जीवन वास्तवता म
होता धम प्रतिबिम्ब विकसित बधित
मनुज मनुज संतति हित निज धम फल
संचित करता - प्रभु को कर अर्पित !

प्रीति मुक्ति संभव धम - मानव मन
शुभ भाव जीवन करता स्वीकृत
काम द्वेष क्रुद्धा कर्म से उठ
वन जीवन गरिमा प्रति से बापुत ।

भी शोभा सर्वत्र रत रहता उर
उच्च सत्य जिज्ञासा से प्रेरित
प्रीति रजिम् में प्रथित हृष्ट स्त्री नर
मित रस चित्त सुख में रहते मन्वित ।

रति असम्प पगु वृत्ति न धम रहकर
सामाजिक - संस्कृति शोभा मंडित
रचना संयम हित अर्पित मन को
रम प्रहर्ष रचता संत संस्कृत !

मनोवृत्ति स रोगा युव कधि ने
गुह्य बाध म जीवन परिचायित
बही मन्वित जो रचना संगत रह
धम विनाग क हित भी रज सन्वित !

रम प्रकाश बन - स्वर्ग भतना स
करनी वह नव युग संतर दीपित
ध्वंस मीति बन वह मदीत ना पड़
निमीभूत शोभा करनी यन्त्रि ।

सतियों के पथराए हृदय मन से
वाधित नव मानव विकास गति क्रम
गत युग की लौंगड़ाहट को डोना
भू मन हित दुःसाध्य - बोध निर्मम !

साइ जीर्ण केंचुली चेतना तित
बढ़ती - भू मन पर प्रसक्त पग धर
मृत्यु बिना संभव न पुनर्जीवन
रूप भाव धमरत्न इच्छु, अनुत्तर !

नव जीवन सोमा पंखों पर उड़
ऊर्ध्व चेतना पावक सितियों पर,
बरसाती श्रुत शृंगों का बीज
विकसित कर युग मानव का अंतर !

छौरम मेव उमड़ते भू उर से
इंद्रधनुष सोमा पड़ती शर शर,
बीफित करते अधिमम शिखरों को
किरणों के सगीत मुखर निर्भर !

नव प्रकाश से संश्लिष्ट तम सागर,
नव जीवन जलनिधि धब उड़ोमित
देखा कवि ने - भू का कुंड उधर
ग्वासासुखी जगलता रुद्ध दमित !

प्रदीपास्त गरज उड़ते नभ में
महाकार बैर्यों से दिग् भीषण
ध्वज भ्रंश प्रस्तर युग का भू नव
नष्ट भ्रष्ट उपचेतन निरचेतन !

निखिल प्रतीकात्मक या कल्प संभर
दुधर या बिस्फोट घरा मन का
देखा कवि ने मरक दुस्व राज्य
विश्व हास क प्रकरक विघटन का !

महामुष्य का दृष्टि धंध गहर -
निश्चित सिद्ध आसोक जायता तम
स्थमित बाह्य प्रगति - भौतिक युग गति
भीतर दुर्धम अंधकार - दिग् भ्रम !

सार्विक स्वर्ग कुंठा से मुच्छित
 बुना पक में बुना वा भू मन
 मनु विनाह क बाद-वाह विमलित
 कुमियों से भाच्छल विश्व जीवन !
 पुन विमल की विह्वल गंध पु-सह
 पमित अस्ति मन्वा पंजर, जैह्वर,
 मस्मसात् सम्मता सुलमती दिशि
 मृत करवाहता सुष्क काल सागर !
 कहीं मया मन ? सोच रहा वा नम
 वारि हीन मर्कट सा-पठ मठन
 तुन तव सप कुमि मय पशु से नर तक
 हुमा सृष्टि सापान लक्ष्य निष्कस !
 प्रकृति ? विह्वति भरसेव ! स्वमित विधिम्म
 कार्य न करते सृष्टि नियम निष्कस
 विवटित होता कारण कार्य जमत्
 महानाम उर में नम अपनक पस !

विश्व चेतना मे सोचा क्षण भर-
 सत् पर विजयी हो युग विह्वति - मसत्
 मपने को क्षय करे ? - उभयन हित
 या ईश्वर प्रतिनिधि मानक उचत ?
 सहसा भास हुमा प्रबुद्ध कवि को -
 नरक दुष्म का होता स्थांतर -
 विस्तृत हाता जन मन अंतर्पथ
 चित् प्रकाश से पाठा हुत् अट भर !
 अंत सन्निय मानक का मानस
 निर शौरक के प्रति होता जायत्
 वह जन भू ईश्वर - गत पशु नर को
 मय मानवता में होना परिपत !
 अर्थ स्वार्थ मठमेद विगत युम के
 मध्य चेतना उर में होते मय
 महानाज मुठ में मय जीवन चुन
 धरा स्वय सार्जन में नर तमय !

देख बुझते प्रलोपास्तों को
 मानव की प्रज्ञा स्वल्प धर कर
 प्रकट हुई कवि नयनों के सम्मुख
 चित् किरणों से भर मामध अंबर !
 उड़ते दैत्यों का कर वर्ष दहन
 बीच उन्हें निब उर में कर उगम
 दिव्य शक्तियों को प्रबोध दे नभ
 हृद्य मनुज का उसने भय संशय ।
 धीरे फरक कर देख रहा था जब
 धीरे बोस कर शक्ति उपद्रु सञ्चित -
 उम्भर दैत्यों के पद से मर्दित
 मनुज हृदय में धमी ज्योति जीवित ।
 बहिर्बिकास न प्रपति - मातृ वर्धन
 भूत शक्ति अनेकित धू जन को
 जीत सके जा बाह्य धामुरी तम
 स्वर संपति दे मामध जीवण को !

मभ गव धाविष्कारों काजा स
 पाठा अद्र विज्ञान प्रकृति पर जब
 गिरि समतल मरुस्थल को कर उर्ध्व
 हृदित नील बस अजित कर जब मम ।
 धन मिहीन की निर्जन अधिवासी
 उद्योगिक दिवस में भी परिणत
 यात्रिक मन यात्रिक जन ये बसपूत्
 रविम याग से विद्या काम कर नत ।
 पश्यता शक्ति क स्मित प्रामण में
 मनुज विजय का ज्योति अरु केतन
 रौंर रहा था अंतर्गत उर भर
 ध्वस भीत धू का विपण्य था मन ।
 कुछ ऐसा बर नका न था मुम तर
 मानव उर मानव प्रति हा निर्भय
 नभ धास्वा मनुभाव प्रपित हों जन
 दिटे धरा मन वा तम भय संगय ।

देखेंगे प्रत्यक्ष दृष्टि पीड़ित
माबी के संघस में सबगुण्डित
वीथिक भय सतय को प्रतिभ्रम कर
घरा स्वयं हो रहा है विकसित ।

बैस भी सबसत् का सम वितरण
बैस संतुलन रखता मित्र स्थापित
तम पर ज्योति सबसत् पर सत् की जय
स्वधिम भव मति क्रम में प्रतर्हित ।

भव विकास का सहयोगी मानव
स्वर्ग राज्य के जगटा जन मिश्रित -
विष्य हृदय पावक से रथ नव नू
मानव ईश्वर को करनी प्रपित ।

घर न क्यो तुव ज्योति स्तम भारत
कुभ्र निदहन बने घर जन हित ?
जन मन प्रतर्पय धासोकिष्ट कर
भव बिवास को गति देखिर इच्छित ।

ज्याति चरण बहु, बय पाधि बनकर
भ्रंस यत्र ही में बेसा माहुति
शीघ्र काट भव हित - बहु यदि न बने
शाति पीठ - होनी कर्तव्य ज्युति ।

उन्मेपित होकर कहुता संकर,
मिस्त्र ही यह महत् पटीया क्षम
धास्या समय करे निज बस भारत
मयममय मर ईश्वर को प्रपण ।

मानव धारमा का प्रतिनिधि जन बहु
जन की प्रभु प्रति धास्या द प्रलय
नू जीवन प्रति सदा र जीवित
जड़ पर पित् की पोषित करे विजय ।

धस्त्र मस्त्र स धारमा को प्रबिधित
धनि पवन जस से बठमा धरात -
नही मय की प्राप्ति साक संभव
कबस ईश्वर दर्शन पा तद्गत ।

अमृत तत्व को कर्म मूर्त कर ही
दे सकते तत्को भू पर जीवन
प्रति सोचिंत बस से सिञ्चित कर -
रिक्त नहीं तो आध्यात्मिक दर्शन !

महत् शक्ति संकल्प भीम भू पर
ज्योति कल्प भारत प्रमेय निश्चित
कितने हिमगिरियों से बिघ्न समा
नभ मानवता को हाना निमित्त !

पूर्व समर्पित करना भारत को
निज तन मन भव जीवन का सभ्य
बिम्बात्मा का दिव्य स्वप्न पाकर
भू पथ ही क्षीपित मुग्धम चिरमम ! -

देखा कवि ने काँप रहा कर
सद् बिबेक संग काल सत्य के स्तर, -
पथ प्रकट करते जो बिघ्नों में
दिखन सक धार्मिक शनै भू पर !

जीवन का धार्मिक प्रेम मुबित्त
व्यवहाराचित सदा नहीं वह पथ
सांप्रत भू जीवन विकास स्थिति में
हमें बढ़ाना मानव जीवन रथ !

बासा कवि धामुर मुग्धम बस का
भारम समर्पण करना धार्य विमय
श्रेष्ठ शक्ति को दिव्य शक्ति बगना -
बहु विकास क्रम पथ में निश्चल !

जड़ चिद् पृथक नहीं संपूजा सगल
सत्य त जड़ पर ही जतन की पथ
बहिरंतर मयाजित जड़ जतन
धरा स्वर्ग में परिजन हों मुग्धम !

ज्योति धरम सेंद बय पाणि बस कर
शक्ति बय रख सत्य ज्योति धारित
संभव प्रपति पठिम जीवन मय में
बय गढ़े पथ ज्योति बने तमजिम् !

सत्य शक्ति सं दया शक्ति उससे
 प्रेम शक्ति पाती अतः विजय
 अश्वि शक्ति बित् शक्ति बनेपी जब
 घरा स्वर्ग का होगा रस परिणय ।
 आत्मा के बित् पावक की संतति
 भाषी नर-बोला अशक शंकर,
 वो मुझके हा संस्कृत मानव के-
 मन स्वीकार नहीं करता कविबर ।
 सत्य धाम शाश्वत अनंत जब पति
 सित धार्ष संघर्ष प्रयति के पय
 सम्मोहन का स्वर्ग यही जन हित-
 बोला कवि-जन भू विकास का मय ।

मनोमन म इधर वीण कवि के
 जन भाषी का स्वर्ग विबर उठ कर
 निज अनंत सोभा प्रकाश रस से
 स्वप्न मुख करता प्रहृष्ट अंतर ।
 उधर घरा मन की भी शायद स्थिति
 पहरे होते पाते संकट जन
 बिगत सांस्कृतिक मूर्खों में सीमित
 विविध अथ देशो का वा जीवन !
 मृत आद्यों के पूजक वे जन-
 स्वर्ग प्ररोहित केबल कुछ ही मन
 बुने स्वर्ग के सित प्रकाश के प्रति
 दिव्य स्पष्ट वा कर सकत धारण ।
 मानवीय संवेदन से अंतर
 स्पष्टित हा उठता-जन दुख विगमित
 लय कूजित निज कुमुम छोड़ में भू
 सिण मनुज मृत को भी अविज्ञापित ।
 कला पीठ के रस मानस की कवि
 बना शुभ जीवन विकास अर्थव
 धाम हृदय की अंधि-बाह्या नित
 ऊर्ध्व पेतना करे बहिर्विचरण !

निर्मम धनु दानव पर जय पाने
प्रीति बध रचता युग कवि कीमल
धात्मा के रम स्वर्णिम पावक का
बिसमें बिर पद्य प्रबोध सिद्ध वक्त ।

मध्य चतना की स्वर्गिक पावक
बिसमें तप हा स्वर्ग इवित जन मन
जाति धर्म बर्गों का मू मन धो
इसता मानवता में बन पावन ।

नव वसंत नी ही जीवन धात्मा
ज्योति प्रीति धानव सार श्रुतमय
स्वांतर कर मानव का नखशिख
मुकुसित होती गोमा में धन्य ।

शुभ चेतना क रम स्वर्गों म
कर्मय मगम में हला परिपठ
स्वूस वाचना मुहम प्रीति रस बन
सार्पक करती मुजन हर्ष अभिमत ।

प्रेम शक्ति को प्रवित कर जन मन
नव जीवन रचता मुख में वा रत
जन मू मन स्वर्गिक मय में शकृठ -
पूर गए ये मू उर क नव धत ।

धर स्वर्ग सर्वम में रत तग्मय
मार हीन मू कम काय बिस्मृत
नव सिद्धियों की गोमा में धित मन
जीवन में करता उसका मूर्ति ।

शुभ स्वर्गों वा धात्मा का धंतर
भव जन मंगल प्रति होता प्रेरित
बीर मुष्टि में बर ठर सा निपटा
सपु बिन् धनु उर में बह्वाइ निहित ।

मू संपर्ग कुटिल रत नर को
रहा कर्ण रम सर्वोपरि काशिन
प्रेम-स्वर्ग मुय मूत कसा प्रायप -
जहाँ रमा ई म वा धारधित ।

भू जीवन इतिहास पृष्ठ सिद्धना
वेद काल विधि का प्रत्यावर्तन
जन्म यहाँ जेठी भी मन्व संस्कृति
जो मानव घंटाबिक्तास दर्पण ।

मन्व विराट् स्वर्णिम मरकत प्रतिमा
कसा पीठ प्रोक्षण में भी स्थापित
जो सत् चित् ध्यानद तत्त्व संपद्
धरा प्रीति से करती संयोजित ।

पुष्पराम का बीज छत्र सिर पर
शुभ स्वर्ण निरर्थों से था मोहित
जीवन सत्य समग्र रूप धर कर
मगधत् विग्रह में था रस मूर्तित ।

ऊर्ध्व भेदना धंवर का बीज
वह भू जीवन प्रति करती प्रेरित
मन्व मानव के पथ में भी होमा
सुखम हर्ष रस मगल कर वितरित ।

हमकी गहरी नीसी फससई
सैन श्रेणियों क ऊपर व्योम स्थित
विद्यता शुभ हिमाद्रि व्योम पट पर
दिम् विराट् भूमा गरिमा संभूत -

मानस क्षितिजों को तिर बुद्धि खचित
सोपानों के पार दिवा भास्वर
शास्वत अत वैतन्य शृंग कवि को
धात्म समाधिठ प्रवचनीय धतर ।

सिर पर स्वर्णिम रश्मि छत्र बीजित
मुखानुषो के व्योमों से मंडित
सिन प्रहर्ष पुनक्ति घनत धलय -
प्राण वायुएं चैवर इमानी नित ।

मठर धनुमध से पाया कवि ने
चिर निर्मल मूलत मनुज जीवन
मन्व प्रकाश के स्पर्श मरदों से
निर्मित करमा था भू मन मूलन !

मध्य बेठना में तन्मय उर को
 सगता बहिरंतर प्रकाश पावन
 मगबद् बीजन ही इन्द्रिय जीवन
 स्वयं बेतमा बिम्ब घरा प्रांगण !

बैरव अति यह मानस की लमटा
 होने को नि-होय पूर्ण अवसिध
 नध्य बेतमा मे धारोहण कर
 नव जीवन करना जन को निर्मित ।
 सिध सहस्र वस सा बिनाम स्वधिम
 नव मू बेतम् होता प्रब विकसिध
 मुध बिदधि मुजनकम् मूय मनम्
 जिसको करता रस प्रकाश मञ्जित !
 मन के भेदों में विभक्त बे जन
 स्वर्ध ऐक्य से आत्मा क बंधित
 राष्ट्रों देकों के मपु गुत्ता में
 मनुष्यत्व का बंदी भय शंकिठ !
 मभी दृष्टि से जीवन मुबिधा हित
 हो सकता जन मू का नव बितरण
 सत्व मोह मू मन का का बाधक
 मनुजोबिध का सहज न संयोजन ।
 आत्मा के मूस्वों पर हंसता मन
 बोंग बिरव एका के आयोजन
 नर जन तक होमा न सत्य प्रतिनिधि
 मन पत्र का संभव न प्राह मोचन !
 वस्तु, वस्तु जग पर मन स्योछाबर
 भाव जगत में भय संलय बिम्ब
 जह जनता जाता शैठन्य रहित
 धाव वस्तु संतुमन हीन मामब !
 मू जीवन का कद्र मनुज ईश्वर
 मभी नहीं जन मका - ऐक्य मूर्ति
 मू राष्ट्रों के स्वार्ध - धुपिठ बीने -
 किम् घरा उर को बिपाक शंकिठ !

जीवन क प्रति सहज न पाकरपन
कुटाघस्त विपन्ना घरा प्रांगन
हो भीतिक ऐश्वर्य प्रचुर पम में—
संशय भीति घनास्था पीड़ित मन !

सुजन प्रेरणा सुन्य भाव दर्शन
कदि स्तूप पठ धर्म रूप दिग् भ्रम
मानव को चाहिए विश्व संस्कृति
बसुधा बने कुटुम्ब मिटे भव तम !

गौरव विभव प्रदर्शन के भुम दिन
बीत बुके कहता इष्टा कवि मन
मनुष्य चेतना के विधान का भव
करना सूक्ष्म निरीक्षण अनुशीलन !

व्यक्ति महत्ता केवम विन्वित भ्रम
महिमा ईश्वर का गुण निःसंशय
सहज भवता ही मानव भूषण
को समानता की पोषक निश्चय !

महत् उभयन हित जन के प्रतिक्षण
कृष्ण बल करना भव भद्रापित
दान त्याग नेतृत्व—ग्रह द्योतक
नम्र कर्म रत रत्ना नर को मित !

ईश्वर साक्षात्कार मनुष्य मन को
मनुष्य ऐक्य ही क जग में संभव
आत्मा का प्रतिनिधि हो भू मानव
धर्तर्जीवन का हो सित बीज !

पूर्ण हृदय में भास्वा हा—पग के
इन्द्रो को आ कर ऐक्य योजित
भव विन्मस पम में नित मानव को
धंत मुख न करे इर्ष्य प्रेरित !

काम धर्म का प्रतिक्षण उत्सर्जन
युग की केपन धनिक विचर्जन स्थिति
भोगा गुजन घरा जीवन प्रति रति
परी काम का रजन मूल्य पम इति !

मदन बहुत से पूर्ब घुष्ट स्मर ब्या
शकर का करता समाधि बिचसित
मधु मादन सौरभ कस कूजन से
दिशि सग का कर नव वसंत कुसुमित !

राग उन्नयन की मधु बेसा में
जैव मूस्य करते जन की पीड़ित
सुभ प्रीति भू शोभा रचना में
उसको धर होना समप्र विकसित !

साध्य महा विज्ञान मात्र साधन
बोध साध्य का जन हित भावश्यक
मानव धात्मा के जीवन के हित
निमित्त यह जग - प्रकृति नहीं बाधक !

मन का धाभ्यात्मिक विधान निश्चित
धाभ्यात्मिक एकता समित जन मन
उम्मेद भीतिक जग को कर शासित
हो धास्क जगत् जीवन मंगल !

बिद् प्रकाश का कस मागव धात्मा
रस प्रहर्ष थी शोभा में पोषित
ऊर्ध्व प्रयति के बिना धर जीवन
दाख्य समदिम् बैग्यो स शोषित !

भी समूह धाप्रत भीतिक जीवन
समदिक् मकट का कर्षम प्रायज
धारमगाव व हित युमाध मानव
उद्यत - धतर्दृष्टि शून्य कर्वर !

जग जीवन स कर बियुक्त प्रभु को
पूज रहा नव स छाया की तर
कवि को समा - स्वर्ष सेटा भू पर
साँव में रहा हो विरद ईश्वर !

महसा ज्वा युन मण बट्टि बंधन
देवा कवि ने तृण तर धग मृग में
ध्याप्त - बराबर में समस्त शास्वत
चमता निज जम भू विकाम मग में !

शोष उठा कवि मन — भव गति कम ही
 प्रभु की जीवन गाथा — रामायण
 सृष्टि क्या या क्या छोड़ जन मन
 कहीं खोबता प्रभु के पर पावन !
 पुरुषोत्तम का बीसा लेख जपत
 बहिर्मुख बहुमुख मन ही रामन
 भगवद्दैव्य स्थापित कर युग मन में
 पुन ध्यतरण करते प्रभु गूढन !

देखा कवि ने भू उर से जमते
 नग क्षुधातुर दैन्य प्रस्त जन गन
 खाति पाति बहु धर्मों में खंडित
 पिपीलिकामो सं घसंख्य चित् कण !
 बीर्ष सभ्यता के खोबहर से कद
 छायाहृति खर्बर मन भू जीवन
 नव मानवता के चित् भागर में
 नव जोभा में करता धनपाहन !
 कुजित पुंजित रूप कृति कृष्टि —
 नख्य संगठित हो गठ जन भू मन
 नव स्वभाव पुन खनिया में कुसुमित
 निमित्त करता नव संसृष्टि प्रांगण !
 कल्प धूर्त का चित् प्रकाश मास्वर
 हीर पथ दम छा धनंत प्रहस्ति
 स्वर्ण खतमा सौरभ भर — मन को
 करता नव मधु जोभा रस मग्निह !
 मानव भावी के छिन बीभब ने
 का संतर्पितम्य कर्मण पूरित
 नव भू जीवन रचना मगस में
 हा उठता जो भी जोभा मूर्धित !
 देखा कवि ने निखिल धरा जन मन
 संसृष्टि प्रायण में धन परिवर्तित
 स्त्री उरोत्र मा भू मानक जोभिन
 जीवन मानस — धनु बीभब विरचित !

स्वर्गिक शोभा बसती जन भू पर
उच्च भावना गरिमा से मंडित
मन मानवता की प्रतिमाओं से
कला केन्द्र के युवति युवक ससृष्ट ।

चित् शोभा में रूप गया था छिप
मात प्रीति आसोक व्याप्त मन में
सागर में सहरो सा भू जीवन
गति स्पष्ट रहता शास्त्रत लय में ।

जिज्ञासा का प्रसर गंध तन्मय
पैठ गुह्य मुषनों में अंतरतम
नृब प्रीति रत्न सित सुमनों का मधु
संचित करता हर तन मन का प्रम ।

नए धर्म की नीब युवक रखते
स्वर्ण प्रीति में स्त्री नर कर गुफित
मुन्न ऐक्य रचना धम मंथन से
पठ शक्ति धरा पर कर स्थापित ।

ऊँस निम्न मुष्क धन मन प्राणों में
शोभा सर्वज्ञ हित करता प्रेरित
चित् प्रहर्ष मन को नव भावों के
सित रस सागर में करता मज्जित ।

मध्य चेतना की स्वर्णम किरणें
बोध विष्णु नर का नरकृत अंतर
जन भू जीवन ह्रीतिमा में नृप
मुय प्रमात में हंसती दिग् सुधर ।

शोभाओं के सूक्ष्म क्षितिज खुसते
उच्च प्रेरणाओं से दिग् भास्वर
मानवता के सागर संगम में
धर्मिण्यक्ति पाता जीवन ईश्वर !

बैज्ञानिक धम से विकसित चित् से
सुधा काम मंत्रपंथ पर पा जय
उपद्रु बर्ष से निकलन विश्व मानव
मनुष्यता का देता नव परिचय ।

मंगल उत्थ प्रसिद्धि पृथ्वी पर,
 वन्द्य मूर्त्यु चैतन्य शीघ्र भू मन
 रोग शोक दारिद्र्य दुःख मय से
 शनै मुक्त होता जीवन प्रांगण !
 मुक्त प्रेम अतर्क्य द्वारों को
 नव प्रकाश मुक्तों में जोत अमर
 नश्य मूर्त्यु देता भू जीवन को
 प्राकृत नर को कर रस संसृष्ट नर !
 रश्मिों का रश्मि की सित किरणों से
 सरता का स्वर्णिम प्रकाश निर्मल,
 प्रीति चेतना बहु - समग्र जीवन
 चिद् पावक शोभा से आता भर !
 दारिद्र्य स्वर्गा में रत अधिनायक
 मानव जीवन गरिमा प्रति आगत
 नव मानव के सम्मुख नत मस्तक
 निज दारुण दुष्कृत्यों प्रति सञ्चित !
 सैनिक राज्य न करत अथ नायक
 अन्त रचना भयस में का योजित
 राष्ट्र रूप से निखर विशद सत्ता
 नव भू मानवता में भी मूर्ति !
 अधिक उच्च अथ को बुधित शक्ति का मद
 जहाँ मनुष्य को रखता हो आसित
 अमर सम्पत्ता - शक्ति न्याय पर से
 जयत वर्म हों जहाँ न संपादित !

व्यक्ति शक्ति की अमर सीमाएँ
 हुई एक दिन कवि मन में आसित
 घटा स्वर्ग का रस संसृष्ट जीवन
 रखत ही रहा का पावक विकसित !
 मुक्ति मुक्त जन का अतर्क्य
 मूर्त्यु चेतना वैभव से पोषित
 अतिवच करता अथ कवि चेतन का
 निज स्वर्णिम शोभा में दिद मुमुक्षु !

मुसभ न कबि को भी संस्कृत स्थितियाँ
 जब वह वा अभिकव किन्नोर कृद्मस
 नव धार्मिक युग को यह गौरव
 बन प्रसून बन सका पवन रस फस !
 दिया बेतना ने निगूढ़ इमित
 केन्द्र न हो व्यक्तित्व छत्र निर्भर
 अंत सत्यों के विधान पथ पर
 वृद्ध अंत रह वह बड़े उत्तरोत्तर !
 विग् आग्रत् धरती ही को धीरे
 संस्कृति प्राण बनना थी सुवर,
 केन्द्र स्वस्य उपक्रम भर—निखिल जगत्
 मनुज हृदय का स्वर्ग बने सुखकर !
 युग भू जीवन स्थितियों से प्रेरित
 ज्योति पीठ बहु भू पर भव स्थापित
 राजनयिक जीवन रस का कर्म
 संस्कृति शोणित करता धनगाहित !
 विविध कला पीठों से जन भू के
 भाव विभव का मिश्रता सिद्ध परिचय
 मानवता को अभिप्रेक्षित करने
 स्वर्गिक पावक का होता विनिमय !
 विश्वात्मा को समन किया कवि ने
 अपत सुजन आनंद छंद शंख
 नव पीढ़ी बन ज्योति सिखा बाहक
 धरा स्वर्ग रचना प्रति हों अपित !

एक साँझ हँसता नभ में नव शक्ति
 में ही धार्मिक युग कवि से मिलने
 परदेसी युवती शोभा सरसिज
 बनी—दूरस्थित रवि कर से चिम्बने !
 धास्वा प्रीति—सभी आधारों में
 स्वर्ग पीठ प्रति वो वह सिद्ध अपित
 सरल हृदय वा मनुज—प्रीति—महदम
 जन भू मंगल स्वर्ग रेणु सुरमित !

स्वर्गिक बाँहा में बाँधा कबि को
उसने द घंठ गुब्ब घाभियन
बुझ गया शोभा प्रहृष रस की
बुझ गहनताया में कबि का मन ।

कबि न स्पर्श करता छत्रार्थों को
रस पावनी थी मद्यपि वे संस्कृत
उपपठन का अभी न ज्योति इवित
वेह बाध था निस्तस में संचित ।

एक बार जब मुग्धा ने उसको
किया फूस बाँहों में था बेचिठ
स्वीकृत किया न कबि ने भाव प्रथय
वेह नहीं थी बुझ प्रीति संचित ।

मेरी जो पा 'महाभाष में भा
सोटा कबि उसके सित चरणों पर
गड़ा शीत उन पावक कमलों पर
मावु प्रीति स दिया बुझ उर भर !

आत्म मुक्त तन्मय मेरी तत्त्वण
मू गुरत्व से उठ हो घंठ स्थित
(भाव बाध्य पड़ते दृग से भर भर !)
हुई स्वर्ण चतना ज्योति मग्निवत !

भाषारत्ना द बिनत आत्मजा को—
स्वर्ष स्वप्न स भार मुक्त घटर—
उस छोड़ तन्मय स्थिति में बुझक
हुया कस स कबि द्रुत गति बाहर !

घौर उसी क्षण छोड़ कन्ध प्राणस
घंठबनि हुया बहु चिद् बन में
बढ़ता रहा पबिक जावत पय का
काय समापन कर जब जीवन में !

संचित चेतना पब घंठविस्तृत
ज्याति द्वार पर ज्याति द्वार भीतर,
मन्थय करता बहु पाठहृष में
महापिपी हीत रग पापेय धमर !

परम प्रेम सत्ता में ही तन्मय
कर सत् चित् ध्यानं लोक प्रतिभ्रम
रस पावन पी हुषा बोध कवि को
विष्य प्रेम ही निरव प्रेम उद्गम !

कमुप धूसि कुसो क धासन पर
बैठा बा सित प्रेम सुजन पुलकित
रस प्रहर्ष बाहों में भर जय को
पाप ताप सब कर प्रतीति प्रकामित !

हृदय परस्पर हर्ष स्वर्ण कपित
भक्ति प्रणत कवि चित् रस में तन्मय
धू रचना हित नर जीवन धपित -
धारणा का ईश्वर स श्रुत परिणय !

यह वैयक्तिक परिणति थी उसकी
स्रष्टा के प्रति रस कृतार्थ का मन -
धनुव यौवना विश्व चतना का
कसा पीठ का कन्ध - स्वर्ग वर्षम !

मेंती हो प्रकृतिस्व साक्षी थी
धपने ही भव सुख न तन्मय -
(बंसी की धनुपस्थिति में भी वह
बंसी ही की धारणा में थी लय !)

स्वर्ण हरित यह कैसा पावलपन
धनुमन करता भव दीपित भतर,
धनुव प्रीति से छू तुमने उर को
ज्योति मरंद दिए सित जसमें भर !

व्यक्ति नहीं तुम प्रेम चतना भर,
रख रही तुमका बाहर भीतर
हीर द्वार मेरे धतपुर के
लोस किए तुमने लोमा भास्वर !

मैं जिन धावकों को थी साईं
तुमने निज पावन-कर से छू कर
बहा दिया जाने उनको कैम -
प्रेम न यह - तृणत प्रनाम सागर !

पागलपन यह अंत शुभ परब -
केवल तुम हो कबल तुम सुंदर,
नाच रहे सित अंत संगति में
मेरे तन मन प्राण - निःस्व होकर !

भावमूर्ति बेबी उसने कबि की
शुभ भाति प्रतिमा वा उसका तन
सौगठ में वा दिव्य रूप संकृत
प्रीति - हृदय में रस स्पंदित प्रतिक्षण !

दीप्त कनक लख जीवन चिर घपित
दृष्टि प्रसौकिक सुंदरता में सय
सुनती श्रुति संगीत भाव नीरख
शब्द अर्थ का स्वर्णिम रस परिणम !

स्वर्भ नील सी छहरी चूर्ण प्रसक्त
मनुष्यत्व का - मुख भाबी दर्पण
सुरबासा से तुम सुंदर कोमल
मानस ज्योति सरोवर शत शतन !

सूने में संपीठ सूपने में
तुम प्रहर्ष सौरभ मरंज विरचित
प्रासंगिक में शुभ प्रेम तन्मय
अप स्वर्भ सुख में अंतर संकृत !

उषा भासिमा में हरीतिमा भी
चंद्र कसा नीसिमा दृष्टि अंधर,
सित निर्बंध मुरभि समीर बेबी -
मे समयत तुम पर स्योछावर !

तोड़ रबत अट स्वारे मानस का
बहा शुभ पीयूष ज्योति निर्भर
किन् नव तितित्तों में नव सुवर्णों में
खोस दिया तुमने मग अंतर !

नैम अम इस तिम्र प्रेम का मुख
धारमनात् कर पाएगा प्रलय
रस प्रकाश यह प्रीति मुक्ति प्पावन
पागलपन दिव पागलपन निःस्वय !

तुम क्या हो कवि जान गई धब मे
 मर्त्य बेषु में स्वर्ग प्रीति की सय
 सब जीवन संगीत बिम्ब उर में
 भरने धाए - जन मू मगलमय !
 बोध स्पर्श की तन्मयता स जय
 मात हुभा धीरे मेरी का मन
 देखा उसमे - वहाँ न था युग कवि -
 उसे खोजने मूँद लिए लोचन !
 उच्च गहनतम बिद् सोछा म न्हा
 वह धम की हो चुकी धमि पावम
 तन्मय वा हो चुका परात्पर में
 शास्वत रस दीपित सिध जीवन लक्ष !

देखा प्रात छात्रों ने धाकर
 कल रिक्त वा कवि भठगोंबर
 शेष पीठ सिध पुष्पों क कुछ इस -
 प्राण गए हुत मूदम मुरमि स भर !
 द्वार खोसते - चित्त शमम खय बन
 पंचक्रियों के पंच मार निस्वर
 गए फूस भी उड़ - बिद् धंवर में
 देवा सब ने पूङ्क बुष्टि पाकर ! -
 दह न वा कवि - धूपछाह बेष्टन
 स्वच सिराधों में खूत रस मोषित -
 प्राणों में पूजती मूजन स्व सय
 धंतर में लिपटे मुरधनु भगवित !
 बहिरु स्तम्भ थे छात्र ! - लभी सहसा
 कवि को कभी निमा इंगित सोपन -
 मान प्रष्ट धनु बम मे सुंदरपुर
 ध्वस्त हो गया - भर बिदीग गर्जन !
 जात नहीं फिर कसा कन्ध का क्या
 धंत हुमा - संश्रुति कास दुर्बह
 ज्योति द्वार मानव उर में शास्वत -
 भगवत् पीठ धरा पय - बिद् विपद !

प्रेम स्वर्ग विस्त

स्वप्न पंख मृद् पमकों पर सित,
अधिक पूर्ण बनने

फिर फिर होता अंतहित ।

अमर बैठना अचिर रूप

शास्त्र रस परिषय

सृजन हृदय अक्षय

पद विष्णा पर पाठा जय ।

ਰਬਰ ਸੁਪਨ
(ਸ਼ੀਰਿ)

सहज बोध ! जीवन इतकाम
 उत्तर स्वप्न न सत्य समाप्त ।
 रस संस्कृत जन भू स्वर्गानि
 मुक्त प्रकृति धन प्रीति धनानि ।

धन प्रकृति मुक्त निष्काम प्रेम
 मोक्ष भू पर जसती निर्भय
 मन सहज बोध से उन्मेषित
 सित प्रकृति पुरण का रस परिणय ।
 भू स्वर्ग स्वर्ग भू में परिणत
 जन हृदय बुद्धि ज्ञत संयोजित
 धात्महन् सम्मता ध्वस्त - विरक्त
 सांस्कृतिक पीठ हित संरक्षित !

धार्मिक धनु रण क्या हुआ दैव !
 कब बहल गया भू मानस पट ।
 उच्छ्वसित जतना सागर स
 फिर निकल रहा नव जीवन तट ।
 संभव हा सका न पून ध्वम
 माध्यम्य बनी जतना नवस
 स्वर्गा हिया भय कर्म स
 जय नव प्रबोध का प्रियता कर्मस ।

गठ ह्रास गाल विपन्न का तम
 जाने कब सीन हुआ कट छँट,
 नव युग स्वर्गोदय मुसफाठा
 बग मुखरित फिर जय प्रसाद बट !
 भीठे दलकों पर दशाक खनै
 जन नव जीवन करते निमित्त
 पबराया भू मन हुआ चुर्न
 उर सुजन प्रेरणा प्रति अपित !

मानव उर सत्य हुआ बिजयी
 नव साक एकठा कर स्थापित
 मिश्ररी देश राष्ट्रों से भू
 नव विश्व चेतना अनुप्राणित !
 चित् स्वर्णिम मिठ स्वर तार सँभो
 प्राप्ति की तंत्री में नूतन
 रस तन्मय कवि उर संकृत कर
 बाणी माती उत्तर जीवन !

प्रब कला केन्द्र मधुमय स्मृति पर,
 उक्त दारण क्षम से बच कुछ जन
 भाए प्रशस्त हिम प्रातर में—
 कवि जैतव स्वप्नो का प्रायण ।
 गठ भू जीवन मन की भाषण
 अनुभूति हृदय में संक्षिप्त कर
 हिमगिरि प्रचल में मेरी ने
 जन साक बसाया साकोतर !

मत्र कला केन्द्र मुद् पात्र न का
 बहु का वैतन्य समुत् सापर,—
 रम ससृज भाषारा का पा
 फिर मूर्त हो उठा सत्य प्रसर !
 मरी कहपाती मंघुता
 सौद प्रिय प्रब उसाका भाषम
 द साकायतन उम संजा
 उर उरने उर जीवन साकार !

अब निकट प्रकृति क की सृष्टि
 जीवन अपने में पूर्ण स्वयम्
 प्रतियोगिता स संयुक्त हृदय
 आसक्ति भू पय का दिग् भ्रम !
 शृंगों की आसी छाया में
 दृश्यों की चाटी में गुंदा
 वह अधिष्ठात या शांति पीठ
 जीवन सक्रिय प्रगर उर्वर !

अब माठ मुष्ठा पट गरह बिता
 सृष्टि मरह मधु में पोषित
 समता छम सा रम पक्व प्रतुम -
 मन में किन्नोर, तम ने पुसकित !
 तम में छोए पर्वत उसरु
 तमय उर में भरते विस्मय
 अमिमिप रखत नयनों को निर
 शक्ति की अति सूभू स्वर्णोदय !

वैदिक ऋषिबन् ही देव कल्प
 मगत उसको जस अग्नि पवन
 धन पुट में ज्ञानमत नीमा में
 मिसते असीम छत्रि क दशन !
 पावन की भू पावन जीवन
 शिर पावन मानव का उन मन
 सर्वत बह्य जग में व्यापक
 वह मन्त्राचरमय जड़ श्रेतम !

अब सहज स्फुरित जगता प्रबीध
 आबोम्भेपित कर उमका मन
 बाने करन उमम तृप्त तद
 गावाए कहना मूड समय !
 उद्गमामित हो उठते महमा
 धंजर में सहन रह्य मीन
 जामे किम स्वर लिपि में अकित
 कर देना उर में मय कीर्त !

भिरि धितिया की हंसभुष कोपल
 भर्या मन में बहुरंग मर्मर,
 तस्मत्त निरुग से जाने क्या
 संभाषण करता वह निःस्वर !
 धन कुंतल फैसाए बन में
 भेटी तर छाया हरी मन —
 गृह हीन प्रकृति हो मांग रही
 मानव स जीवन संरक्षण !

पुरघनु जल कबरी में बाँधे
 घत फेन बणि झरते निरंतर
 भिरि धेनु दुग्ध धाराभा से
 भात मांसी क उत्स मुखर !
 जीवन ठरुमिनी वह धन्य
 क्या कुछ गोपन गाती कम कम
 वह जान क्या तट अपनो पर
 सुनता भू पापा रम विद्वान !

रेशमी नीलिमा क मुख में
 तिरत कितने ही रंग प्रतिपल
 पाटली बैंगनी फलसई
 पीताम हरे — गहर कोमल !
 जाने धनत के ध्यान में
 मन कब चुपके से कर विचरण
 खेपता मिथौनी गारुड से —
 घरती पर कबल रूता तन !

पूछती बड़ि — क्या जन पावक
 चरम समीर निरधम धंवर ?
 तस्मत्त हा — मैं ही निरधम निरध
 उत्संगित हृदय देता उगार !
 भूमा की परिष्मा कर मन
 फिर हागा धीरे धंत स्थित
 भू मानव धण में धतिधम कर
 गारुड का मुग करना विम्बन !

सामने खड़ा था दिग् बिपद्
 मू स्वग सतु सा हिम पर्वत
 महिमाश्रित करता प्रंबर को
 मू का यौरव मस्तक उग्रत !
 देखा गिरि उखने प्रथम बार
 भानन् सिधु सा हिस्सोलित
 जड़ जीवन मन की घोषि साथ
 शैतन्य सोक हा सित शोभित !

निश्चल समता बहु शुभ पथ
 सौन्दर्य हस * उद्गीयमान
 निज सित मति के धामिगन स
 स्वगिक दियत पय रच महान् !
 देवों की सगती निदर पंकित
 रकि रश्मि किरीटों स मंडित
 ज्योत्स्ना में सगता हिम प्रांतर
 स्वप्ना क ज्वारों में स्तभित !

पीठा हिमाद्रि बृग बिस्मय सा
 मू स्वग पीठ हा दिग् भास्वर
 चर्पर गेरुवी धामार्ण
 सेटी शोभा नत बासा पर !
 क्लैप फाल्गुर्ण मोहारों क
 कहूत रश्मि ज्वमित कंत्रन
 चक्रिका ब्याम स उतर मौम
 धरती शृंगा पर स्वप्न चरण !

निश्चरा क बसा में हुआ
 बरिनों क जपनों पर माहित
 गिरिमासा की पुषु घोषी पर
 सेटा रहता नम मुद्र विस्मृत !
 करती सार्विक रम भाग प्रहृति
 मधुकर उड़ मधु रम कर संजय
 समजाने स्वग मरदा स
 भरत कपियों क गर्भाजय !

ऊषा शृंगों पर देख रूप,
 शोभा ससज्ज रंग रंग जाती
 तुष तद खग मृग हिमजल बम में
 स्वमिक सम्मोहन बरसाती !
 संख्या में समते समाधिस्थ
 गिरि सानु मौम गरिमा मञ्जित
 नैसर्गिक थी सुपभा का मुख
 हैसता निजि में तारा गुच्छित !

लहरे कोनों दृढ़ शिखरों की
 वह दुष्म पृथी समती सुरर,
 मखमल ज्वाला सी थी फैसी
 नीचे मरकत शोभी बुस्तर ।
 फूला की प्रिय घाटी रहती
 घगभित रगों में रोमांचित
 रगों ही में जीवन लोभा
 मगता होती समधिक मुखरित !

उड़ता पराग पक्षी समीर
 भीनी बम सीरम स भर मन
 पर्वत प्रशाधि को देता स्वर
 बिहगो का भाव मुखर वृजन ।
 हिम बाप्यों की धनकें छहरा
 रवि घातप मृदु मासम स्वर्गी
 मद्य प्रमद यौवन उन्मुख
 भागा किरार मा प्रिय रगी !

पुन जीवन क अलि उदासीन
 धपने ही भीतर भत-स्मित
 ध्यक्षित्व धनुन का बना प्रौढ़-
 निर्मलय ध्यक्षि प्रहृति परिचित ।
 कपित हरीतिमा जिग्रतों से
 बन देवदार भग्न मर्मर,
 मर्बध प्रहृति म ह्य पूढ़
 धनधध करता उमका प्रंतर !

छू मक नारी का तम उसने
भालियन में बाँधा तमय
भर भाव संघ से गया हृदय
पा रस सित प्राणों का परिचय !
कैसी विमुक्ति स्त्री की सोभा
बोसा विमुग्ध उसका धर -
बह छाँटि शीस मुचि सहृदयता
स्वर्गिक प्रहर्ष की स्वजिम धर !

बह या जीवन का नम छात्र
मम सतत सीखने को उद्यत
गुण ज्ञान धार से मुक्त हृदय
मम बेधित्यों के प्रति जाग्रत् !
ठिर नारी सोभा का सागर
जीवन का रोमांचित प्रागण
निरूपम निसर्ग सुपमा प्रति ध्रुव
उसके उर का वा धाकर्षण !

मृ धम विराम के लिए बना
धुति विषय स्वप्न निशि का प्रिय कर्म
जस पवन धमि की पावता
भरती उद्ये मन में संभ्रम !
बह देख निसर्ग कसा कौशल
रहता धारधर्म चकित धर -
या विश्व प्रकृति को दयामयी
जाता कृपज्ञता से उर धर !

मृग उद्ये देखत मुग्ध मयन
सञ्चराचर का बह या सहृदय
गाते कंधा पर फुदक बिहग
जयवातमा पी उसक भीतर !
तकते रक डक चरले मत्र शिशु
नाचते उरम सम्मुख मत फल
तन से सट नितसी मँडराती
धमि जाना में धरने गुजन !

बनत स्वर उर में मधुर रीत -
 सुंदर जप जीवन का उपवन
 खर गुप्तों से यदि बिरे फूस
 जन भू विकास पथ में प्रतिक्षण !
 जोभा प्रेमी मधुकर उड़ फिर
 संभव करते जीवन मधु रण
 सुंदर कमि कुसुम सुभग सब जग -
 सुंदर न धमी मानव जीवन !

भाषा म होता मनुवादि
 मन को छू कायस का गायन -
 पिक प्रेम दूत जोभा ज्वाभा
 मुनपाता भू मन में नूतन !
 मुन कृह कृह पावन पुकार
 जस उल्ला कलि कोपस में जन
 धानंद व्यक्तित्व जोभा प्रेमी
 रक्षत तन मन करने धर्पण !

जीवन प्रमात म मुग्धा पर
 घटक उसके अपसक सोचन
 बंधी ने उसको दे प्रयोध
 सौटाया उसका जोभा मन !
 साधा उसने - तन का परिणय
 जानस जीवी के हित बंधन
 हृदया का परिणय हो जग में
 उचत न धमी जन भू जीवन !

जोभा पहिले फिर रूप यष्टि
 तन की छवि में रूना सीमित
 यह जीवन धारमा की हृया -
 यह हुमा काम मति पर लखित !
 या रूप रू का धोह स्वर्ग
 पाया उमने जोभा का जग
 यह नामा इष्टा का निरचय
 नामा प्रेमी हित भू धमि मम !

शैत्य स्वप्न का युग बनि क
 यज्ञा धपिन कर ज्ञान मन
 प्रसृष्टि कृपा उमर उर में
 धीरे भाबी जीवन दगन ।
 हठ काम इन्नि प्रीमा क
 खोमे मू मग स्वप्निम गृहम
 सिध प्रेम पीठ बन मक धरा
 मुख मनोरम का हा उग्रम !

धिक् मस्कृति त्रिमो पुरुषि पुरुष
 कर सकृत् मुक्त न प्रेमापन
 धिक् जग त्रिमो म बयस्क अपक
 बन मगम धम में रत प्रतिगम ।
 त्रिमो प्रबयम् भव दर्शन में
 बलते न ईश्वर का ज्ञान
 मिश्रुषो क हित जो मू प्रमत्त
 उन्मुक्त न धिक् श्रीदा प्रागम !

सौम्य प्रम ज्ञान जहाँ
 करे स्वच्छ नहीं विचरन
 कहना ऊर्ध्व न जाति कृ
 निर्भीक जहाँ न मनुष का मत ।
 निश्चिन् विमल विज्ञान जहाँ
 ईश्वर न ब्रह्मात्मा कर्मण
 धनसक पीवन क मन्त्रों में
 स्वप्नो का नहीं धनत विमल ।

उम मू का कर्मा कर्णर
 तिमि कर मित्र धर्तरीक
 मयदिपु भव मुक्त धनिक्रम कर
 धने मानव का उर्ध्व करण ।
 बतन विद्या श्री बागार
 नर का धने कर में सकर
 संवादि कर्मा कर में सकर
 विचर मू पप पर स्व जीवन रव

पति वर्ती या क्या युग चरण
 खोपठा प्रतुम मन में शक्ति -
 धारण प्रीति सौन्दर्य स्रोत
 होते जीवन निधि में प्रवसित !
 सित प्रीति काम से नहीं पुष्पक
 मन भू जीवन ही का दर्पण
 समस्त न सबगत मनोप्रयत्न
 रस नुद न यदि जीवन प्राण !

समस्त कवि का या यही लक्ष्य
 जीवन से विलग नहीं ईश्वर
 इन्द्रिय ही धारणा की गवाह
 हो घरा स्वर्ग ही प्रभु का घर !
 रस हृदि संस्कृत हो काम बहि
 उन्मुक्त प्रीति रस नारी नर
 तृष्णाओं के कुमि कदम से
 चेतन्य पथ निखरे उपर !

साम्प्रतिक उन्नयन हित भू के
 उसने निज प्राण किए घपित
 जग दिग्भ्य भावना में जीवन
 सौन्दर्य हुआ उर में विकसित !
 मन नम्य धतमा में रहता -
 नर भू जीवन विसृष्ट दर्पण
 धतमस्त भावी जीवन पथ
 जन मापर चित् उर का सच्च कण !

जीवन प्रेमा या निश्चय कवि
 जीवन ही में ईश्वर तद्गत
 जीवन भंगुगता क पथ पर
 प्रपण्य बिछा चमत्ता गारुड !
 उद का निज पावन पीठ जमा
 भू मन क प्रोस धुरि सावन
 र्थी सामान्य जीवन दिक् पट पट
 रंग घरे काम यदि गृह्य चरन !

मन ग्रह सब मति में सीमित
कर सका ममग्र न परिभीसन
जय ईश्वर, प्रकृति पुरप इह पर-
मूल्या का प्रति हुषा बितरण !
पक्ष सकट भव बाधा निरख
उर, राग द्वेष भय न पीड़ित -
कुस जाति बर्ष गत स्वाधो में
हा मया धरा जीवन खन्ति !

कुटिल मन जग क प्रति विरक्त
घट लिखरा पर कर विचरण
खा मया ऊर्ध्व में घटक मौन
वित बिन् प्रहर्ष में कर मज्जन !
बहिरंतर ऊष्म घष इह पर,
हा सक न जग में संयाजित
जीवन ईश्वर को मुस-मुकु
नर बिज्जामा क प्रति धपित है

ईश्वर क बिग्रक नही साधु
बहु शक्ति निद्रिया क समुपत
क ज्ञान मुक्ति बैराम्य पथिक
धनि याग साधत तप जत रत !
निश्चय क ही प्रमु क प्रेमी
जा जीवन में उसका धानन
दयत - उष मंगल मुठित
करने रचन जग भू प्रायण !

धार्म्यात्मिक सत्त्वों क बस पर
संभव न धरा का कृपांतर
जब तक न बहिरंग की धाहृति
बर्षे मानव मंगल हित नर !
नव मूल्यां मे रच मानव जग
पत्र मतानुक्ति का कर बित्पुन
ईश्वर का भू जीवन पट में
करना जग को बनता धपित !

रस मुड न हा अब तक भू मन
 श्री सोभा मांसस भू जीवन
 धंत गरिमा प्रति जायत् बन —
 प्रभु मोम्य न तव तक सब प्रांगण !
 सित प्रीति द्यपित नर नारी उर
 अब तक न करे प्रभु मुख बिम्बित
 तब तक मनुषीचित नहीं धर
 निज ममुम्पत्य से नर बंचित ।

समरस स्थिति न ही घटक ऊर्ध्व
 समस न बहिर्मुख विश्व प्रमति
 बहु रस वैचिष्यों के भीतर
 मानव जीवन की सत् परिपति !
 सम विषम न बहु बहु एक न बहु,
 सापेक्ष्य मान भर ये निश्चित
 सम विषम एक बहु से प्रतीत
 सम विषम एक बहु में मूर्तित ।

संसाप प्रकृति करती उससे
 माकेतिक बापी में निस्वर
 बन मर्मर में पा निश्चित स्पर्श
 अब उठती हूतरी पर पर ।
 गिरि कोमल कहती — कुहू कुहू
 तर नम से धरती पर धाकर —
 पशु पक्षी से क्या मनुष्य सम्प
 मङ्ग सीध नगर बन पय सुंदर ?

रस धर्म नीति संस्कृति दर्शन
 क्या सुखी सुख मानव जीवन ?
 बहु पाठि बर्ग बर्गों में बैठ
 संघर्ष क्षेत्र बन भू प्रीत्य !
 क्या सब बसत रम स्पर्शों स
 रोनाचित होना उसका मन ?
 भू सोभा का मंत्रलि ज्वार
 मरना तन प्राणों में स्पंदन ?

क्या मुक्त गद्य ध्यानंद स्वर्न
 मुमयाता प्राणों का जीवन ?
 मिटता धतर का मूमापन
 जब मुहुमिठ होता पठसर बन ?
 कट बिम्ब प्रकृति से निज में रत
 बह महत् प्रेरणा सुख बंधित
 मैं मुखर सही पर सत्य यही
 मानव न धमी पशु न विकसित !

मैं विद्युत चातक बिरह बिहग
 सित प्रीति स्वाति रस का प्यासा
 जीवन मृत वे बर्जन निष्क्रिय
 जिनके न हृदय में अभिसापा !
 पी कहाँ ? पी कहाँ ? - कह बन में
 उपजाता शारवत जिज्ञासा
 बह बट बट बासी - कहती ध्वनि
 ध्वंजना मुक कविता धापा !

यदि निमग प्रेम हृदय - जग में
 बह सञ्चारर उर की समता
 सित बिरह, - मिसन का स्वय निरूप
 पर, मृत्यु - पूजा की निमगता !
 कट रस होप म कहीं महत्
 रस प्रीति व्यथा बग का जीवन
 मुञ्च बैभव के मर न बरेष्य
 धपसक बुग प्रेम-श्रतीला क्षम !

जाना में धर चीनी बन धन
 बन स धाकर कहते मधुकर -
 सामाजिकता का गब गुम्हे
 गुण में पीटी मे निपुण न तर !
 हम भी रचन मधु स्वय छत्र
 गुम उमे कहा पर, मधुप तर
 बह तर समाज स भी मुमठिन
 जिनमें रहते मिल नारी तर !

चुन मधुर फूल तब प्रखर मूल
 मधु चक सँभोट मसि सुपर,
 के जीवन त्रिस्वी भू भम रत
 सुदरशा के लक्ष्मी सहचर ।
 भू मरस छाड़ मधु सचम कर,
 गुन का करते जग में पावर,
 बन फूल उपेक्षित शोभा का
 मुख भूम - प्राण करते उर्बर !

मुख यंत्र प्रतुस को पिता मधुर
 बोले प्रपन्नक वृग सरल फूल -
 हम शोभा पावक के स्फुमिग
 छाए बन उपवन में प्रकूल !
 उर सीरम से भर भू पाँगन
 हम सित प्रपन्न के सन पावन
 देखती हमारे रपन्न में
 जीवन सुदरशा निव प्रानन !

भू शोभा क संदेहबाह,
 वास्वत प्रहर्ष के मुकुसित क्षत्र,
 गाता सीस्वर्ष त्रिरामा में
 बहुरम उवास मय भू जीवन !
 हो फूल सुपर जन जीवन मुख
 मी सुवमा के प्रति उर चेतन
 शोभा विहीन भू जीवन मन
 ज्यो दृष्टि मूय तम रूप नयन !

इत उछम बारि मे चदुस मीन
 कहनी तन पर इक कर क्षण भर,
 किछ बोझिक मय में भटक रहा
 धिक छम मूयनस के पीछे गर ।
 तेना क्या मुलम न कुछ जम में
 ज्यो मीना न हिन जम प्रपन्न ?
 मानव जीवन की स्वाम प्रीति -
 जो नर मजनी जन भू मंगल !

वह भाव मुक्ति - जो बौद्धिक को
 दुर्मम - रह सोमा प्रीति मीन
 जग मे रह सक्रता मनुज सहज
 ज्यों निस्तम जस में मुक्त मीन !
 चिद् रस निर्मस जीवन सापर
 जस सा प्रकृत सिध मनुज प्रेम
 तट हुआ करे जन मन प्पाबित -
 इसमें ही मंगल योग लेम !

जल के कोमल बल स्पर्श मे
 छिप गई मीन छिर रस प्पासी
 जस से ही मूठम पर घ्राए
 स्वस जीवन को वे शुभ घ्रासी !
 बोसा कानन मृग - सीधो से
 सहसा बन सखा प्रतुम का तन
 पमुघों को डरा प्रहेरी मर
 क्या जीव सका मू जीवन रम ?

श्रीका प्रिय बन जीवन विमुक्ति
 मुम में उभांग भरती निर्मम
 फिर भी मुन सहसा बसी रव
 मे रहता चित्त सिधित तन्मय !
 यह प्रेम सृष्टि मन्त्रराचर सँग
 रहना जो सीख म पाया मर
 तब बुधा मान - बन हृदय हीन
 वह कैमे देखेगा ईश्वर ?

बन बहता - मे जीवन प्रांगण
 मुममें ही खेमे कूदे जन
 सब एक मूत्र में बँधा हुआ
 तब तब कृमि जग पशु मर जीवन !
 बन छो - न न मृग बर्बरता
 नर छाड़ सका चिर रम तत्पर
 मय पुच्छ मृग पंचित पशु बह
 कहता इतिहास - म पशु स बर !

कानन जीवन ही में उसने
 सूर्य के प्रथम किरणों में
 बहस्यारम्भक उसकी तप रत्न
 भगवत् विज्ञान से भास्वर !
 जिस प्रतरिक्ष में बूढ़ फीट
 नभ छाया मृग प्रय वह यवित
 उससे विराट् के प्रतरिक्ष
 जो देखे उसने ध्यानस्थित !

फिर धामस्थित करता नर को
 मैं मरकत छाया प्रायण में
 वह बहिर्गत में बोधा प्रय
 उसका प्रकाश उसके मन में ! -
 सुनता था प्रतुम प्रकृति के स्वर
 वह भी विदास कामी निरिपत -
 मानव को ले नव क्योति विद्या
 जीवन पम करना था क्योति !

बोधा हिम शिखर - निरग किरीट
 मस्तक का धू चरणों पर धर,
 मैं ऊर्ध्व दृष्टि से देख रहा
 था भंगुर बही प्रसर प्रसर !
 निर्बुध प्रसंग प्रत स्थिति स
 मैं देता जन को धारवाचन -
 मुझको अपने स भी फिर प्रिय
 जन चरणी का मरकत प्रायण !

धामस्थित रूप मैं हूँ प्रपूर्ण
 मैं स्वतः एक स बहु नम कर
 प्रिय मांसस धू जीवन में
 रस मूर्त - सत्य त्वि मे मुंदर !
 धारमा केवल मेरा दर्शन -
 जीवन मेरा शाश्वत ध्यान
 मैं धारम बोध हित मुद्द जन भर
 करना उगमों अपने दर्शन !

धारम स्थित भी - जन मू ही का
 मैं लिखर - मही इसमें सत्य
 का मात मूस्य - दिक् कास न विधि
 मैं तुम न जमर् म जगत् प्राथय !
 से प्रेम बेहु छेड़ी मैंने
 रस तमय विश्व सृजन की समय
 मैं प्रकृति पुर्य बन महर् बुधि -
 धर ज ततमय जीवामय !

बहु सापानों में विचार उतर
 साकार हुमा मैं जीवन में
 पर्याय उमस हम - यह निश्चय
 देखो तो तुम तद्वयत क्षण में !
 यों कह फिर मीन हुमा श्रुपी
 प्रवर में गई प्रतिबन्धि भर
 गुंजा धनत - यह सत्य ! - तद्वित
 रवि से नव युति श्रु लिख मास्वर ।

बोला धानदित धतुस - धन्य !
 पर मुझे तुम्हारे मुझ शिखर
 धाकपित करत ऊध प्राप -
 तमय रहता मेरा धतर !
 धनुषब करना मुझका उर में
 उम महामा का स्पत्र महर्
 जिसक प्रतीक तुम धारम भान
 जिनका बीड़ा स्पस निक्षिप्त जगत !

हाकर धनत में तीन मुझे
 साग्बत मुख क करने धर्मन
 स्वनिम उन्मपाँ क प्रभात
 देखने चाटियों पर नृतन !
 चाहता - हुय में श्रोने मित
 उपार्ण नित्र रम बातायन
 देख्य नित्र तेजोमय स्वरूप
 मैं कही पुर्य जो रम पपक !

इस भाँति एक दिन निर्भय उर
 बहु शिखरों पर कग्ने रोहण
 बुपके से निकस गया घर से —
 निज तन मन धीबन कर धर्पण !
 निश्चय बहु धी धीबन ही का
 चित् शिखर जिसे बहने ईश्वर
 पकता ही गया अतुल्य अद्विगत
 उस मान प्रखर सित अग्नि पथ पर !

बहु रजत नील लीहार्गों में
 हो गया तने दृष्य स घोसल —
 तब जाना उसन बहु केवल
 धारमा का चिमर अस्त्रि धवल !
 सय होने से पहुँचे सहसा
 देखा उमने धीर्षो धर कर —
 धम जग म मिखिम पराधर मे
 धीबन विकाम पथ में ईश्वर !

पर सौट न सका अगत में फिर
 बहु धारम ज्योति का दग्ध लक्ष्म
 धनिधायं ज्ञान हित सोक कर्म
 कहता था नत मुखा निर्जन नम !
 धिम मुहुषा ने धी ध्यर्ष्य धाम
 धिम सका न फिर उसका परिधय
 धित नाम रूप पाते विकार —
 यह अगत् अतना पथ अक्षय !

धिर पावन या बहु हिम प्रातर
 धम्पुध उध्धोअठ नीर शिखर —
 एकाध दृष्टि गिरि की अरती
 धिग् मुध प्रेरणा मे अतर !
 धिधि मे धिरचा हा निभूत धट्ट
 धर्जन धम पर करने चितन —
 नीध धाधामिन जम समुद्र
 धुम धु धीबन का अंधधन !

धनु संगर स सरक्षण पा
 यह युग प्रबुद्ध देशों के जन
 हिम प्रथम में एकत्रित हो
 करते निज मन सिन्धु मंथन !
 गत जाति वर्ण शृंखला खोल
 राष्ट्रों की सीमा कर प्रतिष्ठा
 मामबता क सागर तट पर
 समवेत डुबाते निज तम भ्रम !

जब नव इतिहास न मड पाते
 जन भू के प्रथम जन मायक
 उर पसने में नव मस्कृति को
 युग शिस्पी देते जगम प्रथक !
 मामब धारणा को पुष्पी पर
 धनतरित करते के धारित
 जो ध्यान धारणा के मम में
 घटकी भी - जीवन से उपरत !

युग खंडहर क उपकरणों को
 नव चिति पट में कर सयोजित
 नव मानव संस्कृति का ध्यापक
 प्रासाद उठते दिक् शोभित !
 गत बुना ड्रेप की गार्ड भर
 कर धरा प्रीति का मिमाग्याम
 संयुक्त कर्म रत धननाले
 के नव युग जीवन भ्रम बिकाम !

इतिहास भूमि न उठा चरण
 मास्कृतिक पीठ पर कर राहण
 नव स्थितियों न ऊपर उठने
 नव मूर्तियों न रथ भू प्राणन !
 मुट्ठी भर धारणों की से
 बड़ सक्ता धन न धरा जीवन
 भीतर से बदन मनुज मम का
 गड़मा बाहर न जग नूतन !

एकांगी यत् शीतिवता - का
 वे देव बुके वे कठन यत्
 पतमार वही विसकी मरते
 कन ह्येता वही विभव वसंत !
 समदिप् मातिकाता में बंधकर
 मन सकता समुच्च म चक्र इत
 वह सुवतारमा यंती - उसनी
 चाहिए ऊर्ध्वमुख विद् विगंत !

संस्कृति की निकट प्रकृति के धन
 सात्त्विक ममद्य मानव जीवन
 नव स्वप्न चेतना में परिणत
 बहु जाति पातियों का मिथ्यत्व !
 नर भारी गम उरमुक्त प्राण
 युध रचना क्षम में रहते रत
 भू शांति पीठ धव मानवता
 जन जीवन मगल हित बृद्ध यत् !

मित अल्प बाह्य जीवन साधन
 अङ्क यत् सर्व सुख क बाह्य
 अतर्मुख्यो के सर्वत्र में
 उत्तर रज्जुता नव भू जीवन !
 धारमा वे मुख का दर्पण हो
 यत् समृद्ध मानव जीवन
 भू मानवीय हो जय संस्कृत -
 संयुक्त यत्न करता भू मन !

यत् समय हो बहिर्मुखित
 नामा नव जीवन उन्मेषक
 ह्ये साह कर्म में रत चिन्तक
 शीतिवता हा शोभा सजक !
 नुंबर हो जन धरणी का मुख
 भू रहे न दीय ध्यया मुञ्जित
 वह चिर तरणी - नव जीवन की
 गोभा म मनन रहे भूयित !

जीवन की मरकट सतिका में
 अथ स्वर्ण शुभ कलिका विकसित -
 मानस का प्रकरोदय अंबर
 रस विषय चेतना से दीपित !
 जीवन का शैल घट मिश्रण
 मित सुवन हर्ष से रोमाञ्चित -
 तुम भोजन भाव विचार मूल्य
 जीवन मा हो रम सपोषित !

गिरि अधित्यका में पथं कुटी
 मिमित कर रहते साधक बर
 अठर्मुख सित विस्तार में रत
 अधिमन शिखरों पर रोहम कर !
 शिगमूष्यों के अनुशीलन हित
 विज्ञान भूमि में रहता मम
 बहु शक्ति सिद्धि भी उन्हें प्राप्त
 दुग मूर्ख सुमम प्रभु के वर्तन !

संयुक्ता मुखकाती उम पर
 जो जय से कट रहते ऊपर,
 अंत प्रकाश के दग्ध शमम
 अटका करत मन के भीतर ! -
 जमवारमा स रह पूषक सतत
 शिगमुक्ति कूप रम में मञ्जित
 धारमा के प्रति पथ ब्रती पाप
 जीवन उपरत जन भू हित मूत !

प्रभु मुख न प्रतिफलित कर पापा
 उमका बिरलत मानस दर्शन
 के महान रूप से जीवन का
 कर पाते पूष म साथ ग्रहन !
 मम भीत बाह्य भयुक्ता में
 अकसौक न पाते तत्त्व अमर,
 उर मय रज्जु अम में उमसा
 विमगा जग जीवन म ईश्वर !

जीवन विकास गति प्रति चतन
 ध्यात्म तत्त्व के धमिसापी
 संतर्पन के वैज्ञानिक के
 कुछ अंत बुद्धि ध्यात्मवासी !
 सामूहिक जीवन निर्मित कर
 व्यक्तित्व हो रहा वा कुमुमित
 पा रस प्रकाश का सूक्ष्म स्पर्श
 वात धू मगन हाता विकसित !

चित् मुझ छाति हिम शिखरों की
 गिरि धधिस्यका में पी स्थापित
 प्रेरणा द्रवित वा रजत हरित
 परिवेष्ट - ऊर्ध्व गरिमा शोधित !
 क्या जीवन ? कौन जगद् स्रष्टा ?
 उठते अंतर में प्रस्योत्तर -
 खोजती स्वत ही निभृत शक्ति
 चिन्म को निज भीतर बाहर !

खगती मानस में विज्ञासा
 क्या सृष्टि जीव ध्यात्मा ईश्वर ?
 क्या पाप पुण्य ज्यों कुछ कुछ भय ?
 क्या धर्म प्राप्त मन क्षर अक्षर ?
 शब्दा ध्यात्वा पय सु कैस
 धू जीवन में भर संपाजन
 घट प्रकाश के धुबनों में
 नश्यन मन कर मगडा विचरण ?

मम नियमा का निर्जन मर तिर
 कर चित्त बुद्धिया का निरोध
 चड ऊर्ध्व प्राप्त साधनों पर
 मिमता ध्यात्मा का मुष्क बाध !
 उर रहना ईश्वर के बंधित
 जीवन - निषेध बर्जन पीडित
 जग नरक कुंड रहना जीवन
 मन निज चिन्ति मम म बुद्धि !

तन मन प्राणों के भुवनों को
 कर महत् स्पर्श स धामोच्छ्रित
 मिसरा न चेतना रश्मि मूल
 जिससे जग जीवन पट गुफित !
 धो निखिल हृदय मन का कस्मप
 झरता न ज्योति निर्झर पावन
 दिखता न मुझ शरहत का मुख
 उभित करे जो मू प्राणप !

बुभता न परम शोभा गवाल
 छँटा न झंटा का तम धन
 धानव प्रीति के भ्रमृत श्रोत
 मू पर न उतरते गम स छम !
 बिद्युत्पति भ्रमवत् क्वित विपर
 करती न जपत् का क्पांतर
 मू जीवन विमुख बिरानी हित
 चिमक जसवत् रहता ईशवर !

सच्चिदानंद सा शुभ शृंग
 भावोन्मेषित मित रचता मन
 सर्वत दिव्याई देत प्रभु
 प्रतिराज रहस्य कुसते गोपम !
 बड़ से चेतन तक एक सत्य
 धग धग में व्याप्त - स्वयं रस धन
 इन्द्रिय से ईशवर तक भवंद
 संभरण प्रेम का सत् पावन !

भव रोग शोष धम कर्दम में
 बहु धनव बिड रम निःसंशय
 जीवन विज्ञान पत्र में अविश्व
 मू तरक स्वय उपक्रम निरक्षय !
 धीरे धीरे पीड़ी पीड़ी
 होगा धमूर्त मानव विकसित
 जीवन विज्ञान धम महयोगी
 मू ईशवर प्रतिनिधि धम अविजिन !

साजन का घर उस पार नहीं
 भू जीवन ही उसका प्रांगण,
 मन मात्र न बहिर्बगल पट भी
 ईश्वर के मुख का हो दर्पण ।
 भागवत कर्म ही मनुज धर्म
 हो धरा स्वर्ग मयल सर्वन
 संयुक्त हृदय हो ऊर्ध्व दृष्टि
 भू जीवन प्रभु रज को धर्म ।

अधिमानस के देवा का मुग
 धब भीत पुका - भू नर ईश्वर
 तब से विभक्त - धब भू जीवन
 भगवत् विकास संवरण धमर ।
 जग ही में संभव प्रभु सर्वन
 भब ब्रह्म सत्य - यह निःसंशय
 ईश्वर प्रतिनिधि नाश्वत मानव
 रज रूप मर्त्य नर से प्रतिनाय ।

बहु पराशक्ति - धम ईश्वर की
 धमनी - देना को कर विकसित
 बुद्ध प्रीति पात्र में बाध रही
 सित जीवन में कर संयोजित ।
 पंतवर्षी को भू बासी
 बनना निज रज को कर उपहृत
 भू को धमने हृत् ततवन में
 रस स्वर्ग संजोना उमने हित ।

धिरुत धब वर्षा के मुख धम
 मिम धादि धातिया के स्त्री नर
 रजते पावस धनु का उत्मव
 धिदि तनहृदियां का मुखरित कर ।
 नर धादिम धस्तों के धूपित
 मुहु बन पगु धमों में वेष्टित
 पंशों के तीज किरौट में
 मगत बिछन् धम न हृपित ।

स्त्री बन फूलों की बनी रच
 सब रचि विचित्र महनों स तन
 नीसी पीसी मुरियाँ सटका
 पुरुषों के सँघ करती नरम !
 बे हंसमुख प्रथम फुहारों सी
 छा जाती गिरि बन प्रातर में—
 पावसोत्सास को बाणी दे
 अपने कसकंठा क स्वर में !

नव सस्कृति क स्पर्शों से भव
 हो मानवीय बन भू जीवन
 जन भू कुटुंब का सभ्य भ्रम
 बनता जाता—नव युग चेतन !
 उनकी प्रसन्न तन्मयता का
 स्वागत करती सस्कृति प्राण
 उमुक्त हर्ष की भाषों स
 कौपता निश्चेतन बन का मन !

पत्नी हृषित परत कुनम
 शय मृग रक्त करते छोड़े भवप
 महर्षी तद बन छायाएँ
 प्राकृद् का करने धर्मिवाहन !
 पी खम पुकारता—दख शिवा
 नयनों में घन ध्वज रेखा
 गिरि महार, सर सरिताओं स
 मौकती जपल विद्युस्नेहा !

नाचती संग में सोर पीठ
 बन भू जीवन क प्रति धपित
 जन पीठ मृत्य का पर्व मना
 भू धोर छार करने संस्कृत !
 रचते शृंगार मुवतियों का
 नव युवक प्रसूनों स सुंदर,
 कबरी में रक्तिम बना मूँ
 कनरी जान में खोंग मुपर !

पुसकित कदंब के गैरा स
 बसों का कर केसर रंजित
 कटि म धर बहुम मुहुम कापी
 भुजबंध मासती के रच सित ।
 कंदसी पत्र के करतम से
 वे ऊद रूप करते धावत
 कंदकित कुटब के कुसुमों की
 सित पायल से पद कर भूषित ।

धर फुम मास के से धकसुप
 मुग्धाभो क वे कामस ठम
 रस मीर प्रीति मंदिर प्रांगण —
 घोमा तिल्ली करते पूजन !
 देता भावों का मुझ धर्म्य
 मन रत स्वर्ग सुपमा पावन
 उमेपित करता जन अंतर
 मु बीजम ही बन प्रमु दर्शन !

हिम तिखरा पर रोहण करता
 साहसिक कर्म प्रिय मध मीजन
 भू स वा घोमा में बिलिख
 शर्वों के वे निजय्य भुवन !
 सित चिरीस्वर्य श्रेणी मंडित
 हो ऊर्ध्व प्राण भाषित अधिमन —
 गत इंद्रधनुष केतन फहण
 हस्ता नगराज भवन साधन !

हिम नीतल स्पष्टिक गितापों पर
 मूरज पावक बन निज प्रकाश
 गत रमों की रच चकापीय
 भरता विगत में मुझ हास !
 ऊषा तंध्या स्मित शृंगो को
 करती मनि स्वरा किरण भूषित
 दूरती प्रेरणा निर्भर सी
 हाता पर सहमा स्पष्टित तर्हित !

निर्जर करते हों पुष्प वृष्टि
सखे हों रत्नों के सारने
किरमों बत बनों का बीमव
बरसार्ती सिखरों को बरने ।
कैप नीस हरित सोहित रंग के
सहयते रेणम जस के स्रद
प्रमरों की मुख शोभा से स्मित
समते किशोर प्रपन्नक पुष्कर ।

प्रसरियों की मुहु बाहों से
भाते मूमास कैसा करतल
नखों स राज मणल यौर
मुँह बपि पबों में क्रोमस !
रंभा मेमा सी बोभाएँ
तिरती हिम सरसी में बिम्बित
लयता फेनोच्छल जल उभार
पुष्प याचि मार सा प्रादोसित ।

कितने ही रंग के धूपछाँह
बसते निस्वर गिरि सिखरों पर,
पर चिह्न मुखर प्रभुत चापें
सुग पड़ती उर में बिस्मय भर !
नीचे हँसमुख श्यामल प्रसार
कैसाएँ फूसों का धौबल -
बहु बनों पद्मा ध्वनियों स
हरता मन स्वर्ग लंड मृतम ।

प्रथ एक महत् चेतना शक्ति
मक्षिमी की बर्ही मृजग उर्वर,
प्रतिष्ठा कर जो गत भू मन को
रचती जग जीवन लोकोत्तर !
मानंद ज्योति सीन्दय ताति
बड़ लीच ऊच्च मम स भास्वर
निमित्त करती नव भू चतम्
सित प्रीति प्रचित उर कर स्त्री भर !

उठ देह बाध स जन भतर
 भगुमन करजा बिन् मुक्ति महत्
 नर नारी उर साभिष्य सूक्ष्म
 रस प्रज्ञा में होता परिणत ।
 स्वर्गिक प्रतीति से वीपित मन
 हरता भू पद भय सुख्य भ्रम
 श्री लोभा सर्जन में कुसुमित
 होता बुधि शार्धों का समय !

भू जीवन की लोभा देती
 नव यौवन को सित धामंकरण
 पद निन्द प्रतीति कर्म न वा
 प्रति सहज परस्पर धाकर्षण ।
 स्वर्गिम संवति श्री जीवन मे
 रस मूख्य न ह्रास तमस कुंठित
 मित व्यक्ति प्रीति तन वष्टि मोह
 पद सर्ध प्रीति लोभा विकसित !

भू प्राण हृदय मम मे केन्द्रित
 जन काम प्रीति रस में परिणत
 पद लोक शक्ति होती कृतार्ध
 नव कला सुजन स्वप्नों में रत ।
 त्वच रूप मोह लोभा पूजन
 सित युग्म प्रलय बम धर्दार्यन
 इन्द्रिय सुख बम घंठ प्रहर्ष
 खोन्नता प्रीतिन मन म मूतन ।

गीसाधिराज वा हिम पर्वत
 मरकत भू धारन पर लोभित
 करती परिष्मा लोभा नत
 पद् चतुडे नव यौवन मुकुमित ।
 मधु धाती लोभा स्वप्नों म
 निम्न पड़ती जम पर्वत पानी
 पुष्पों के शान विपत पंग
 घण्टारियों भी उड़ती पाटी ।

पल्लव पावन प्रगुनि मुब से
 हँव उल्ले दिशि मुब रोमाञ्चित
 नीसी पीसी पाटन सी से
 गिरि कामन सगते दिव् दीपित ।
 स्वनिम मरद बन मघों के
 साठप प्रसार भाते विस्तृत
 उड़ता बिहगों का माता मम
 बम पखों से दिशि कर चिदित ।

इठलाता कौम मसुण समीर
 बहु वन्य सुरभियो मे मुष्टित
 सिन्धु मुकुनों की मुब मंघ सूब
 तत्रिल तलहटियाँ कर मुब्रित ।
 रंगों के छीटों के बिगत
 कोंप कोंप भरते मोहित मर्मर
 पौवनोग्मेप से उद्दीपित
 हरता निमयं मुब बन घंठर ।

हँसता निवाच रवि धंवर में
 माखन के कंबुक सा उज्ज्वल
 हिम बाप्यों का मूड पट बुनती
 सुरधनु बिठरित किरम भीठल ।
 छाया की बाहों में छाठप
 धमनाया सा रहुता कौमम
 गिरि खोहों से बम नव हिम बन
 पव करघों से बड़ते प्रतिपम !

मधु में धौगड़ा धीप्पागम में
 त्रिसने नव कल्पियों के धानन
 हसके गहरे प्रिय रंगा की
 धपमित छायाओ के दपन !
 बिलुठ सगता नम मुब्रित दिशि
 निरलम प्रसन्न पवन प्रांठर,
 हिम धंवन में मयता निराध
 मधुबधु का ही म्येही मरुचर ।

ऋतुषा की ऋतु बर्षा घाटी
 स्पामम गर्भेन्द्र बन पर शोभित
 पर्वत ऋतुषों की सम्राज्ञी
 विद्युत् मणि लक्षियों स धूपित ।
 मन्तक पर सुरधनु मोर मुकुट
 नभ छत्र विन्दु मुक्ता मंडित
 कित बाष्प बंबर शोभा बीजित
 दिग्, गर्भम से घागम शोभित !

दुहरे तिहरे टंग इंद्रबाप
 बदनबाण स छा कुसुमित
 सुर बासाभा की विद्युत् प्रभ
 पद बापा स रूत कपित ।
 मोती हारां सी बीछारे
 गिरि वामा को करती हूपित
 हंस पकृती मन्मस तनूदियां
 मरकत सापाना सी बिरभित ।

ऊँच उड़ने बासे पुष्पक
 बारिद भरते उन्मद गर्भम
 शत तद्विस्तारभां से बधित
 तिरते नभ में गिरि स मज तन ।
 हिम शृंगों स लिपटे रूते
 बस चित्रपीठ पाणबत बन
 सीपा क पक्षों से ब्रह्मका
 सुरधनुषा के रस बिद्ध मोहन ।

मद्य सिमन पंचदिया फैसा
 शाभा देने पुष्कर जलधर
 बन तुहिन कर्णों का किरणा में
 मणि हार मूषके भु पर तर ।
 भीनी पीपी धित हरी सास
 तन्वी बपमा सुभू बचम
 बंबर की ज्योति निराभां सी
 जलघा विरीध - हीनी घागम ।

बितकबरे सापों से सेटे
 कुठल बन भाटी में बसते,
 क्षम में क्षितियों में फन फँसा
 पिरि निखरा से टकरा हँसते !
 तीतर पंखी रामिस बायस
 बिखरे रहत मम में निस्वर
 संभ्या सिन्धूरी तूमी से
 रँगती जिनके मिठ निर्बस पर !

मधों की छामारै बुपके
 बसती वृण शाश्वत पर क्षम क्षण
 जल हरित चिनगियों से बुझते
 पावस के तम में पट बीजन !
 उड़ स्नेह बकों की ध्वजा पंकित
 राखी का करछी धमिर्नदन
 सित प्रीति वृपित गा स्वाति बिहग
 मधु उर उडेस करते करन !

मणिमुखी शरद ! — उकते धपसक
 किस सरसी उर क पप नयन
 स्मित प्रीति तरी सी बस्य कला
 तिरछी नीसम जल में मोहन !
 पर्वत प्रदस की मिय रुका
 सौन्दर्य मिग्धु सो हिस्सोमित
 धानंद स्वज से शृंगों को
 करछी धषाक छबि सम्मोहित !

तारा का अंशस द मय पर
 उहरा हिम घीठ तिमिर कुठल
 बह स्वप्ना की मोरी श्यामा
 निर्पसता स सगती निर्पस !
 भूतम का कस्मप पंक बीर
 वृत्त का प्रकाज साधन उत्पल
 कति कुमुमों क कामस स्वच से
 पर्वत पंजर समते मासल !

भीनी गंधों से भर दीक्षा
 कुसुमित धीपधियाँ न कामन
 काँसों की शय्या पर प्रगती
 श्नु करतम पर घर अंशान ।
 वह राजहंसिनी सी भु पर
 बसती बसती पायस निस्वर,
 विछरी मिरि बम में पूह गग में
 स्मिति जेफामी कसियाँ सर सर ।

हेमंत क्षिति - पर्वत प्रदेश
 कृहरों से हो जाता परिवृत,
 पस भर मे होती वृष प्रोक्षण
 सब दुस्य पटी माया कल्पित ।
 हिम - बुद्ध फेन माखन कोमल
 शरदा रोमिस कई सा हिम
 चाँदी के फाहो सा उम्बस -
 हंस उठती रोमाहित रिमक्षिम ।

पीरानिक पक्षी सा प्रांठर
 उड़ता शिखरों न पक्ष बोल
 नत राब मयसा की लोभा
 रिफ बुद्ध छटा म मुक्त तोम ।
 हिम परिषों की छित बरन चाप
 होती मदस्य समुत संकृत,
 फिरते हिम पक्षी रंग पंख
 पृसों - मे उड़ कमरब मुबारित ।

पनसर के बन पंजर से छन
 मनु छनु बसती घर हिम समीर,
 पक्षों को रंग कल्पित कर श्रंग
 हो जीत बह्नि की तप्त तीर ।
 बस जाती मरिनासा की गति
 पपरते स्पष्टिक जिना के मर
 कोमल जग बन जाता कटार
 कोन भी बँप उठनी घर घर !

1918 सा स विरहित रवि का मुख
 सगता दिन के लक्षि सा कुर्बल
 खिसये न रश्मि सुख रहित पथ
 छाया रहता वन रज मङ्गल ।
 इस भाँति सानुमद् प्रायण में
 पल पल घटते नव परिवर्तन
 वह हो निर्याग श्रुमार कञ्ज
 ऋतुएँ सज घञ करतीं मर्दन ।

धन राजनीति को पीछे कर
 सम्मुख समता संस्कृति का रथ
 भवर्षीपित मानव अंतर
 श्री शोभा मुकुलित दिग् भू पथ ।
 कठपुठसों से नेताओं के
 पद मद स धन न धरा चाहत
 सुध लीस धन्य अठ संस्कृत
 मानवता रचना मंगल रत !

मम समय का दिग् गहन धूम
 बन बाधा विघ्नो का पर्वत
 धन या विनीत हो रहा जनै
 नव युग प्रबोध से अठ शिक्षत ।
 पा लयी दृष्टि नव युग मानव
 जीवन का करता मूर्खाकन
 देशों राष्ट्रों स्त्री पुँवों के
 धुम गए भाव गत थे बंधन !

धन मूल्य मुझ जिति में परिमत
 परिवस बिम्ब का परिवर्तित
 जीवन पथार्थ रस सित पावन
 भू धाध्वारिक मंगल हपित !
 शुभ भाँति लोक मन में स्थापित
 मनु अस्त सिद्धु जग में मज्जित
 कट्टु पूर्णवहा स मुक्त धरा
 निधि में सहायन नी प्रहमित ।

मर अंतरिक्ष मुख से परिचित
 फहराते यह ग्रह में केतन
 रम बंदी बड़ विज्ञान मुस्त
 नव जन भू रचना प्रति केतन !
 सब मानवीय गठ यांत्रिक बग
 विद्युत् धनु बस जन युग बाहन
 वैज्ञानिक स्वर्ण प्रतिष्ठित जो
 ग्रह नक्षत्रों तक भू प्रांगण !

क्य विक्रम स्पर्धा दलों में
 सब हुई शेष - जीवन समुद्र
 पद बहिर्बिम्ब से अंतर का
 चिद् बेमल जन प्रिय - स्वतः सिद्ध !
 सब भाव वस्तु बस समोचित
 अंत प्रबुद्ध मानव अंतर
 अंतर्मुख आध्यात्मिक जीवन
 से चुका अम्म नव जन भू पर !

पैतृन्म रश्मि से कर प्रवेश
 उपचेतन रक्षनी की शीपित
 युग कुठा संगम रिम् भ्रम को
 अज्ञा का स्पष्ट मिमा जीवित !
 अपरूप अमृत कलाओं ने
 देखा सौन्दर्य क्षितिज नूतन
 सब छिन्न विहृतियों के अपाट
 नव खुसा साक भगम तोरण !

मित विमल विराधी जक्ति शिबिर
 नव जन भू रचना में तत्पर,
 सहयोग स्वर्ण सोपान बना
 जन अहं मोह में रहे उदर !
 पौराणिक पशुपां मा ही सब
 गठ यव मनुज स्मृति अरिष शेष
 वैज्ञानिक आत्मिक किरणों म
 आत्मर्षिन बहिरुदर प्रवेश !

अणु- अर्थ प्रीति युग मानव मन
 भौतिक जीवन प्रति प्राप्ति मुक्त-
 अंतर्मुक्त्या प्रति आकर्षित
 वह आस्था प्रीति प्रतीति मुक्त !
 नव अंतर्मन अद्वैत का
 जन भू मानस करता स्वागत
 नव जीवन क मूह ध्यान का
 ईश्वर आस्वत् अव आम्नागत !

बहु भू देशों का सैनिक बल
 भारत का करता मरक्षण
 आभा रत भू - धान्य ज्योति
 सौन्दर्य शांति की सित प्राण !
 आबस्यक यद्यपि सैन्य शक्ति
 अब नहीं - किन्तु भू उपचेतन
 अब तक ही रूपांतरित नहीं
 रक्षा प्रतीक बहु बल माधन !

अणु रण सं हुमा न पूर्ण ध्वज
 सम्यता शेष अब भी निश्चित
 नव मिथ्या मूल्य हुए विनष्ट
 नव वास्तवता प्रति मन आसूत !
 बौद्धिक विवेक क मर्म जीवन
 अब महज बोध न अज्ञासित
 जग मूल्य चित् स्फुरण बतमाता
 भीतर आलोक मुक्त विमूत !

अणु किरणों न हाता विकीर्ण
 भू माय उधर - विघ्नस्त मूल
 जननी मा प्रकृति विकल्प प्रसव
 विघटित मन बनता अघ रूप !
 उठ संस्कृति पीठ इधर भू पर
 ऐनाली नव जीवन प्रकाश
 चित् रूपारं नव दितिक्र थाप
 बहिरंगर करती युग विनाम !

उपभोग गह्वर में निस्वर
घर सुकम शक्तिया ज्योति चरक
निज कदगा स्वर्गों से भरती
घण्टु दश मुख मू मन क जप ।
भय संलय मूना निराशा का
युग प्रंतरिक्ष में धिरता सम -
नव भाष्या की हीरक किरनें
कुन्ती मर घाता पट हर प्रम ।

रस भाव बेतना मू सश्रम
धिर गत इतिहासा क प्रांगन
मास्कृतिक स्वर्ग मुख बेमर का
जन मू पर करती धावाहम ।
बह मुक्त सुजन धानवमयी
उर स्वर्ग प्रीति में कर गुफित
धंत श्री शोभा पावक से
नव मू जीवन करती निर्मित ।

यह मातृ प्रकृति योजना घटन
शिक्षु मुकुमिठ धरें धरा प्रांगन
सस्कार करें मन का कितोर
प्रबनन रत सिष्ट रहे जीवन ।
जीवन अनुभव रस पक्व प्रौढ़
मिम करें धरा पप निर्देहन
नगवत् रम तम्भय तरदु बुद्ध
मिन श्रद्धा बीज करें रोपन ।

मर राम नाच शक्तिप दन
स्मृति भर - विम् बितरित उत्पादन
निधा सस्वति गुरुमिठ घटर,
जन धन बिना - शोभा सर्वन !
भौतिक धार्म्यात्मिक चूडि सिद्धि
धर नव मू मानव के कर दन
निजीम कतना मंदिर पव
न्यांटावर पग पग पर नारकत !

सित राम भावना स्रोत मुक्त
 धंत श्री शोभा में कुसुमित
 प्राणों में वह धामद सृजन
 उर का रबता तम्मय विस्मृत !
 वह रस घनत यौवना ज्योति
 सित रजत नाति सागर में स्थित -
 भावी भू रचना मंगल की
 प्रथ इति न - मनुज ऐश्वर्य चकित !

प्रथ प्रथ ऊर्ध्व चिन्मूर्त्यों का
 हो रहा पूष रस कृपांतर,
 बहिरतर मुमपत् प्रतिबिम्बित
 मूर्तित भू जीवन में ईश्वर !
 प्रथ उतर ऊर्ध्व वैभव म पर
 निर्मित करता नव जीवन मन
 जग में विकास पथ पर ईश्वर,
 प्रथ प्रथ हीन गत मूर्त्याकन !

प्रज्ञान तिमिर स मुक्त दृष्टि
 सुदर सुवरतर बम भू पर
 धर मर्य महतर मर्य चरण
 विकसित हाता निब बन निबतर !
 धतना प्रकित हो भेव बुद्धि
 जीवन का मुख कर भासोकित
 देखती - वरग में निहित स्वग
 मन प्राणा का करता विकसित !

जन भू जीवन प्रति धर्म ही
 धतिम न प्रेम की रस परिपति
 खोजता बीप्ट मानव धतर
 जग में भववत् चरणों प्रति रति !
 ईश्वर ही वह संपूर्ण मर्य
 जिसन प्रति नव भू जीवन मति
 शरणावति ही रस प्रीति साठ -
 स्वीकृत करती तद्मन जन मति ?

पौष्टिक मू जीवन प्रद हृत्कार्य
 गृह प्रस वन्द स्मित रिद्ध मुकुटित
 तन हृष्ट पुष्ट संवम पोषित
 प्रवचनन जय रस ग्रामोक्ति !
 प्रद रड वाचना प्रीति सौम्य
 प्राणों की घोषा में प्रहृष्टित
 नद मूर्खों से भिमित मानस -
 समदिम् ऊर्ध्वग मति सयोचित !

घटविचि प्रति आपत् बन उर,
 गठ भक्ति ज्ञान पय हो विस्तृत
 भगवद् गोमा धानद ज्योति
 मह प्रीति शाति रस में विक्रमित !
 प्राध्यात्मिक प्रतर्जिन पद
 रस लिखा चेतना म दीपित
 भागवत एकता वा वैभक्त
 नद जन मू जीवन में वितरित !

प्रद कमयाग बन मू रचना
 मिह सोक प्रीति बन भक्ति सुपर
 जन जीवन मगम प्रति घपित -
 माकार सृष्टि गति म ईश्वर !
 गोमा पाश्च बन रम प्रकाश
 भाषा का मुद्र करणा ज्योतिष्ठ
 स्वनिम प्रतीति में परिणत हा
 मू प्रीति हृदय करती गुफित !

निर्मम किनार उम्ताम उमद
 घर देता नर मारी प्रंतर
 मना का हा धानर महज
 रिग् ध्यात् - प्रवचन बाधा तर !
 प्राहृत्तिक पगद् म मूह माम्ब
 धनुभव करते मन में मू जन
 हृदिय घेरों म र्प मुक्त
 विम्पन मगता जीवन प्रीमण !

मु प्रकृति हा गई थी नीस्व
 परिवेश स्वच्छ आहार मुख
 उत्तम विचार सौन्दर्य बोध
 भव कर्म न संस्कृति क विरट ।
 रस सौम्य मन्द सौन्दर्य शुभ्र
 पाठा वार्धक्य न असमय पर,
 विज्ञान ज्ञान के परिणय म
 चरितार्थ मनुज का बहिरांतर ।

जीवन समीठ मिथन मिन मम
 करटा भव स्वर सय गति यथित
 नव जन्म ह्य म रेखांकित
 होता धनत यौवन विकसित ।
 भव भव विछोह दुःखप्रद न तनिक
 रस तप्त पक्व छम मर भू कर
 शिद्द बीज प्ररोहित हामे फिर
 धपित होता प्रमु चरणा पर ।

मासूतिक कन्त्र बहु जन भू पर
 से रहे जग्य से नित नूतन-
 धाम्मात्मिक मृत्पों म धीरे
 सामित हाता धीतिक जीवन ।
 धव बहिमुधी यातिकटा के
 जड़ पदाघात न मदित मन
 धतबीजन प्रति आपद् धा
 सित धत संघद् प्रति जउन !

संमुक्त कम रत रह कर जम
 मिसकर करत भगवद् चिन्तन
 भव रूपों में मार्यक करत
 भू कर्मों म प्रमु का पूजन ।
 धव मध्य जतना कपु में धा
 धवप्ररित हा रहा नव निरुधर,
 तन मन जीवन धतर्नत
 कर्मों धर्मों धते

सात्विक जीवन मित वेत बसन
 शोभा ही तन की प्रिय भूपन
 रस संस्कृत मन प्रतर्जय की
 भी सुपमा के प्रति प्रति भतन ।
 चिद् माव विभव से धी समूह
 जन कला जगत् करते सर्वन
 उर मुख प्रकृति मुख शोभा पर,
 किन्तु चित्तमय से अपसक सोचन !

निज सृजन कला स प्रकृति पुत्र
 करत नु शोभा भग गमित
 नव मता गुल्म कमि कुमुम जंतु
 निज जीव बोध से कर निर्मित ।
 तास्वत प्रमत यौवना प्रकृति
 प्रलय पौरुषमय प्रिय मुत नर
 बंध स्वर्ण प्रीति में रस तन्मय
 भग जग ना करने क्यांतर !

पुष्पों के म्ठबको से स्त्री नर
 बहु संस्थाना म संयोजित
 नृ ध्येय प्रेम स भनुप्राप्तित
 संस्कृति पावक करते बितरित ।
 छात्रे मोत्रे सब सोक केन्द्र
 वे एक ध्येय स धर्मप्रेरित -
 मन बहिर्जगत तम में मटका
 प्रत प्रकाम में हा बन्धित !

मानव विकास वा मुख्य ध्येय
 हा रहा पूर्ण धीरे निश्चय
 प्राणा का जीवन रग संस्कृत
 विचरण करना नृ पर निर्भय ।
 मित प्रीति संक में मानवीय
 मगता नृ जीवन का मानन
 नर नारी क प्रतर्मुख से
 उठ गया निर्मित वा पा गुंठन !

चरितार्थ राग चतना द्य
 बन प्योति प्रीति घोभा बाहन
 धानंद निष्ठावर धर भू पर
 धर सुजन स्वप्न के मुझ चरम !
 सित माव मुक्ति सं मनुष्य प्रीति
 मानवत प्रीति में हो विकसित
 नर ईश्वर का अभ्यघाम मिटा
 प्राशक्त प्रतीति में ठसती निव !

धर मन मुक्त कामना प्रंधि
 भी महक संयमित सीस नमित
 गत जाति बर्ष कुस अतिक्रम कर
 जन के सुवर क्षिति संस्कृत !
 मामक कुटुंब के धरयक सब
 न मुझ प्रेम की वे संवति
 परिवार नियोजन स्वत सिद्ध
 संयम पावन की जीवन गति !

पूंजीवादी जनवादी धम
 म स्वर्ग पीठ में संयोजित
 सित धार्म्यात्मिकता की प्रेमी
 नभ भू मानवता हुए उदित ।
 मुह माह गर्त दापत्य स्वर्ग
 धर बन भू जीवन में विस्तृत
 स्वर्गिम प्रतीति में स्त्री मर का
 रम मुझ प्रीति करती मुफ्त !

धामुस बदस अध्यात्मवाद
 जन भू पर जयी दुष्मा निश्चित
 भौतिकता मन्दति पा पीठ -
 धर बर्ग मन्पता जीवन मृत !
 गण धामिक नैतिक खर्ब मून्प
 रम कर्पावरिन हुए विकसित
 कट्ट राजनयिक धामिक स्वर्धा
 मह रचना धम में विक्र कुमुमित !

भव जीवन स्वर संगति में बँध
 जन भ्रंश ग्रहणा ज्योति इवित
 सधु सुख दुखों से मुक्त हृदय
 जन भू जामा रस में मज्जित ।
 पा सर्व प्रीति ध्यानद स्पर्श
 गत निमम कुंठार विमसित
 ईश्वर ही जग प्रब वही व्यक्ति
 जीवन मम भ्रंश संयोजित !

धनु रज बिचटित भू भागों में
 धबधतन धाबेगों से हृत
 धगा क कर्म में सन जन
 हो उठे काम मद प्रति उपरत ।
 नर निष्पौरुष नारी निष्पी
 कुठा बिपाय भय से पीड़ित
 जीवन धी सोभा प्रति बिरक्त
 सोचते - ध्यर्ष रहना भीषित !

काया प्रिय कुस्मित कुमियों सं
 बे पात निज को तुच्छ क्षुणित
 पक्षु मुख मघार्थ क तम में जय
 धारमा उनको करती दक्षित ।
 दमनीय वस्तु सपती नारी
 सोभा धामा मंडस बंधित
 धाम्ना धाम्ना के बँडहन नर
 पुरुषार्थ हीन निद्रिय मवित !

नव संसृति के सित स्वर्णों से
 धीर बे हा जाग्रत् अतन
 क्षीणे प्रकाश प्रांगण में फिर
 प्रेरणा स्वश पाकर नूतन ।
 मन प्रीति मुक्त धब काम मुक्त
 नव भू रचना मंगल में रत
 भ्रंश जामा मे उग्मपित
 उभ्रत वास्तवता से धबगत !

माते म काम उत्प
 वह प्रीति सुधा रम संजीवन
 जा हृदय शिद्यया में वह सित
 जीवन मन का करती पापन !
 तन की निरा म सोमा मन
 करता शिद्द मन में धाराहण
 धारमा की ज्योति उतर भू पर
 होती इत्यार्थ - बन नव जीवन !

मिल भाव प्रबित नव युवति युवक
 मानव भाबी के अभिभावक
 रस प्रजसि भर बितरित करते
 प्राणा का सित शोभा पावक !
 जीवन प्रेमी भू धनुषगी
 मानव तन का करते धारर,
 धारमा को करते रम इत्यार्थ
 शिद्द शोभा से इत्रिय घट भर !

पठर की संसृष्ट यो मुपमा
 प्रयो म इलती छवि मूर्तिव
 मुग्धा के तन उर शोभा स
 पुम्पो क मन करते मोहित !
 भावों ही के सद् बीभव स
 ज्यो नव जीवन तन हो बिरचित
 जन काम बिरत रम प्रीति मिरत
 रूत धपित भी संत त्वित !

बन फूम मन्त्र नामा वही
 निरले पुष्करिणी में स्त्री नर
 व पप पत्रबन् जस में रू
 रहते जल कर्म म ऊपर !
 जस में म बेह, दह में म मन
 मन में म डूबती बिति संसृष्ट
 व दह बोध म भार मुक्त
 नव धारम बाध न ये दीपिन !

जीवन बसत के कुंजों में
 मंचरित चाटियों के भीतर
 सेटे होत नव तरुणि तरुण
 धी शोभा बाँहों में बँधकर ।
 रस सुख विस्मृत रहते तन मन
 प्राणों की सौरभ पी मादन
 बहु यौन गद्य से मुक्त प्रीति
 अंत प्रतीत सुख भी पावन ।

स्वर्गिक बिराम से भाव स्वस्व —
 के होते भव कर्मों में रत
 भू शोभा मगल प्रति जाग्रत् —
 जीवन यापन वा प्रभु हित अत ।
 तन फूल मास के से सुखर
 ऊष्णता भोगता मन की मन
 बहु नाम रूप मर नारी में
 शीड़ा करता नास्वत जीवन ।

स्त्री पुरुष देखते अपमक या
 ईश्वर का मुख तकता ईश्वर,
 तन मन की श्री शोभा गरिमा
 भगवत् बीमब की भी मित बर ।
 रस मूस्य ही मए वे विकसित
 रति प्रकृति स्वत अंत सस्कृत
 समय न काम हित बधन—बहु
 श्री शोभा सुख प्रति वा अपित ।

धव पशु धारक न वा जीवन
 बहु प्रीति मंचरण वा पावन
 मानव उर प्राणों को निमत
 रस बुद्ध भाव पोषक भाजन ।
 बिद्वेष भूणा न मुक्त हृदय
 स्वर्गिक प्रकाश का वा दर्पण
 भू मंगल गप्टा मंग व्यक्ति
 करना सामूहिक मंरदाभ ।

फूसों के पास्टरणों में धन
 शोभित संयम पौषित यौवन -
 उपकृत होता प्राणिक पावक
 साक्ष्य बारि में कर मज्जन ।
 रस संस्कृत युवती शिष्ट मुक्क
 सित समय शोभा कर्म काम
 मंगल प्रजनन रत स्वस्थ युग्म
 मू जीवन वा रति स्वग धाम ।

शिद् ज्योति गर्भ में धारण कर
 सुवर सपती स्त्री सम्पक तन
 दीपों से नव दीपों में जग
 लिखु जीवन ली घोसती मयत ।
 मायी जग नेठा पुष्प जग्म
 बलता साक्षरत जीवन यतिक्रम
 भी मष बन हैसता जरा जीम -
 जीवन ही समय - मरण बुन ध्रम ।

फूसों से हैसमुख बच्चों में
 सुंदर से हो लिख सुंदरतर
 जन मू विकाश होता उपकृत
 शिद् प्रीति नीड़ रस शिशु धंतर ।
 सहघर्मी बन नर ईश्वर का
 धनु तड़ित् शक्ति से गड़ नव जय
 जीवन मूर्तित कर दिव बैमन
 प्रमु धोर मज्जय बढ़ता प्रतिपन !

सत् प्रेम समाहित मारी नर
 धन तप्त काम सुख प्रति उपरत
 बंध प्रकृति मज्जन स्वर सपति में
 मित संतति का करते म्बागत ।
 यों धारम नियोजित जन कृटम्ब
 बमता न भार जन मू के प्रति
 शिक्षित प्रमप्र जन शोभा - पौषिन
 संस्कृत होगी मायी संतनि !

नव नव गुण होते सहज प्रकट
 अभ्यक्त प्रकृति को कर विकसित,
 बिर रुद्र - ऊर्ध्व मम से भरती
 श्रुत बिन्दु संपद् बन उर खोदित !
 घंटरत्नेतन सित क्षितिजों में
 उर ध्यान मौन करछा विचरण
 आत्मा के स्वप्नों से ज्योतिष -
 मन साध - पूर्ण विस्तार जीवन !

अब प्रीति नहीं प्राणों की रति,
 अनुरक्ति न बिरह मिसल बधन
 क्षुब्ध स्फटिक पीठ पर श्रद्धा की
 वह घर मुक्त श्रुत कुम्भ चरण !
 रस पुरुष पवी सित बिन्दु गंगा
 करने धार्मिक बन भू पावन
 नर नारी उर कर स्वर्ग धमिल
 उज्ज्वल कर कर्मण्य का ध्यान !

अब भू ममल ही जन भू वर
 जीवन रचना ही तप साधन
 अपित मन का धम पूर्ण याम
 अब जोभा मुख में प्रभु दर्शन !
 सत् प्रेमापन ही पाणि ग्रहण
 मानव कुल ही शिशु कुल पावन
 संस्कृत घंटर ही जन संपद्
 भू ध्यान अब का चर ध्यान !

निष्काम प्रेम की भी सुपमा
 रसी घंटों में इस हरती मन
 विम्वय धवाक रहता घंटर
 शेष शेष जात मुख से भावन !
 बन्दु राग द्वेष से मार मुक्त
 मानव उर अब प्रभु का शपण
 रचना मंगल रत भूतल पर
 सित स्वर्ग गानि बरती विचरण !

हा राग भावना ने विकसित
 प्रब बदल दिया धू जीवन पट
 रस सुभ्र बेतना उबारों से
 शोभा प्लावित जन मानस ठट !
 बिस्तुत प्रब सामाजिक प्रायण
 धानंद प्रेम बसते धू पर
 धास्था प्रतीति रठ एक प्राण
 धू प्रीति यचित स्त्री नर सुदर !

पशु काम बसि का पीछे कर
 सित प्रेम धा नया का सम्मुख
 दीपित सगता संस्कृत धू पथ,
 स्त्री शोभा स्मित जीवन का मुख !
 प्रिय काम सखा जीवन बसत
 नभ रस सुपमा में हो मुकुसित
 धानंद गंध से प्राणों को
 बरदे प्रतीति गति सम मुखरित !

रस पूत प्रीति में बंध स्त्री नर
 तन बोध रहित मन में ये स्थित
 धू साधन कस्मय से ऊपर
 प्राणों का सरसिज धा शोभित !
 प्रब काम गतानि से मुक्त हृदय
 स्त्री शोभा का करता पावर,
 सौटी धी निर्बाधित सीता
 जग धू मन का कर रूपांतर !

सौन्दर्य प्रेम बाहों म बध
 लम्प - कृतार्थ हस्ता जीवन
 रस सित चुंबन परिरमज म
 प्राणों का पावन हृदि पावन !
 घट संस्कृत संयम करता
 धू महजीवन का संरक्षण
 यही प्रबुद्ध हा स्त्री नर में
 तन मन का कर्मा संधान !

प्रतिबाह न भी धन प्रीति मुक्ति
 यत् मुम ने जिसे क्रिया साधित -
 कोषोद्य जनों ने कला विभिर
 विद्यस्त क्रिया ईर्ष्या प्रेरित !
 प्रभु मुडोत्तर - गत बर्ष मूस्य
 नव भू संस्कृति में हो विकसित
 गत क्वि बर्षनों से विमुक्त
 सद् जीवन सौष्ठव में कुमुमित !

मन देह मोह रब से उपरत
 अंतर्बिभव के प्रति बापत्,
 धन राग मुक्ति रस संस्कृति बन
 नव भू मानवता में परिणत !
 बन जीवन के संस्कारों से
 हो मुक्त पुस्य स्त्री का अंतर
 पित् रस प्रकाश के शिठिजों में
 विचरण करता जीवन भास्वर !

त्वच मोह, काम तुष्मा विरहित
 नव मानव का अत संस्कृत मन
 अंतर्जीवन रचना म रत -
 प्राणिक प्रहर्ष बमता सर्जन !
 भी शौम्य जाठ धन मानवता
 शोभा पक्ष पर करती विचरण
 तित स्वर्न पीठ जीवन शेतत्,
 अंतुट दिव बापी से जम मन !

तप काम बन बुना या काचम
 सांस्कृतिक मूस्य धन बह निश्चित
 उपशेठम कर्दम स विमुक्त
 धार्म्यारिमक शोभा में विकसित !
 सात्विक प्रहृष - नव धारों के
 मधु बुवना का करता सर्जन
 इद्रिय मन धार्या का बीमन
 नव भू जीवन प्रति कर धर्षन !

स्त्री पुरुष विरत निब तन के प्रति
 मोमा रचना प्रति धन धपित
 धंत लिठिजों की श्री सुपमा
 गरिमा मन को करती बिस्मित !
 भीतिक बीमव शिला संस्कृति
 हों भले सोक जीवन हित बर—
 बित् प्रीति स्पर्त ही जीवन का
 मन का कर सकता स्पांतर !

बर्बर बन युग सामथी भय
 होगा न घरा से उच्छेदित
 जो भाव मुक्त होगा न जगत्
 सत् प्रीति प्रपित नर नारी बित !
 इह पर नर ईश्वर धर्म काम
 तब तक जन भू मन में खंडित
 रस बुद्ध न जब तक राग भूमि
 तर काम होप से नहीं रहित !

धन स्वर्ग चेतना का प्रतिनिधि
 मानव भू पर करता बिचरण
 प्राध्यात्म घरा रज में बिछ कर
 बनता धरधों को छू पावन !
 ईश्वर से पुबक नहीं धन जग
 होता प्रमूर्ध मूर्तिध प्रतिशय
 धनवत् सुख में रहता जन मन
 धनवत् जीवन करता सर्जम !

मन को न ऊच्च सोपाना पर
 करना पड़ता निमम रोहण
 धन ममकिण् जीवन पब पर ही
 शाश्वत मोमा करती बिचरण !
 धैयस्तिक मामूहिक यतिया
 स्वार्थों से बिपम न धन खंडित
 प्राध्यात्मिक भीतिक अर्ध धय
 जन भू जीवन में संयोजित !

मन से ऊपर - जगदात्मा का
 प्रतिनिधि जब विकसित भू मातृक
 वह सूर्य किरण मणि पार्श्वों से
 पीता स्वर्णिम चित् रस प्राप्त ।
 मणि प्रमूठ पाणि बीजा उसकी
 सागर मरकत विगसित प्रंतर,
 गिरि उसके चिन्तन मौन निखर,
 नीलिमा दृष्टि मीरव भास्वर ।

पम पम पर ईश्वर का अनुभव
 जम मन में भरता सित विस्मय
 गिरि बन खग मृग कलि कुसुम न थे -
 सत् ब्रह्म सकल जम जीवालय !
 मिलता प्रसीम का मुह स्वर्ण
 सीमा से - उर को कर तन्मय
 धर वस्तु रूप रेखाओं से
 सांकेतिका सत्य प्रसाय प्रतिपन्न !

कपिला गी ही सी प्राणों के
 दृष्टि से प्रकित बँधी नर नर
 चिद् बुध द्वार से मुखा मुध
 पोषित करती मानव प्रंतर ।
 जब ज्ञान न वा जीवन निरिच्छ
 जब मुह्यत न थे कर्मों के फल
 जब जीवन की स्वर सय में बँध
 वा व्यक्ति सर्व मुह्य रत प्रतिपन्न ।

आत्मा के स्तर पर प्रभु दशन
 दुष्कर हों - इतिम भी निश्चय
 जीवन दर्शन में ईश्वर मुख
 देयता मुमम - जा विधि प्राप्तय !
 जन भू मन में उन्नत शारवट
 मूर्खों का बीमव हा संनय
 ममवत् शोभा धानंभ ज्योति
 जगत् भू पर - प्रभु जगदालय !

जीवन के क्षु में ही प्रभु के
मांसस समग्र रसम संभव
आत्मा ईश्वर का चिद् स्फुटिग
केवल - युग कवि का वा अनुभव !
प्रब व्यक्ति मुक्ति गत ऋद्धि सिद्धि
करती न हृष्य को भाकपित -
ईश्वर को जग जीवन क्रम में
सर्वांग रूप करना विक्रमित !

रस प्रेम तत्त्व ही मलय स्वत
उसके सम्मोहन से जीवन
हो उठता शोभा मूढ महन -
बह निश्चित सृष्टि का सित कारण !
क्यों जग क्यों प्रगम मरण मुक्त दुःख
ये व्यर्थ प्रकन - रस सुजन स्वयम्
कर देती प्रीति निवृत्तर मन -
बह सत्य सिद्धि पक्ष गति उपक्रम !

इस प्राप्त हृष्टि जीवन तद को
मरकत जन भू पर कर स्थापित
उसमें ही भगवत् प्रेम तीक्ष्ण
मन्त्रा सुण से करमा निर्मित !
हो मार्ग भीम भगवत् वैभव
जन भू जीवन मन में मूर्तित
वैयक्तिक मुक्ति न प्रकृति ज्येय -
बह सृष्टि उत्तमान से बचित !

मन आध्यात्मिकता में न भक्ति
कर्म धर्म जप तप जन पूजन
बह ईश्वर तन्मय रह भू पर
विकसित जन जीवन की माधम !
धर्म ज्ञान न निष्कर्म आत्म बाध
या शास्त्रों का अध्ययन मनन
बह जप में प्रभु प्रभु में जग क
शाश्वत घट्टं कर्ता वर्तन !

युव ध्येय कर्म फल त्याग न भव
 धम भू ममस प्रति वा अपिठ
 बघन न कर्म बे सोक मुक्ति
 वाहक बे, शुभ फल से उपहृत ।
 प्रव भक्ति ज्ञान का स्वर्ण निकप
 वा सोके श्रेय में सप्त परिणति
 तर ईश्वर बे श्रुत प्रीति प्रथित
 भू स्वर्ण सृजन ही नरपागति ।

प्रव उच्च बोध स्तर से द्रष्टा
 जन भू मन को करते प्रेरित
 जीवन कुंठाओं सं पीड़ित
 भू मन की सीमा कर विस्तृत ।
 धामंद ज्योति सौन्दर्य साति
 बरसा नव बिद् ऐश्वर्य भ्रमर
 समदिक संवपन के निर्मम
 गुणे वन प्रभु कठना से भर !

ज्या क स्वर्ण मुकुट पर वा
 हीरक सा शुक्र जड़ा भास्वर -
 संयुक्ता ने देवा हिमगिरि
 सामने लड़ा प्रज्वलित तिसर !
 स्वनिम धनु सी नव रवि रेखा
 पी विषी मौन उदयाचल पर
 लष म नर गये दिशाओं में
 नव भूवि रश्मियों क नत नर !

विशुष्य भाव सावर से जग
 निवरा हो घंत नृन मुषर
 घाँवों में उदित हुषा हिमवद्
 नव मोवा गरिमा में निःस्वर ।
 उतकी उग्मेय हुषा सहसा
 घणु ध्वस गर्त तम से धमोप
 भू स्वर्ण उठ रहा हो बिराद्
 मौल्य स्वप्न मा निनिमेय !

संयुक्ता क सित स्वामत में
 विरि पत्र के जय मरते कुजन
 बन माला यंघ भयजन प्रसता
 तह व्योम पुष्प करते बर्षण !
 कोकिल उसके स्वर में पाटी
 सित बुष्टि सिद्धिज बनती विकसित
 पर विह्व फूल बन बिल उठते
 धरती होती मय वृण हवित !

फूलों के वीरों में बग की
 बहुरंगी बबालाई दीपित
 उसके सित प्रार्थों को करती
 पावक रस स्पर्शों से पुसकित !
 सौन्दर्य प्रेरणा सी यत्नत
 विद्युत् होती उर में धकित
 स्वमिक प्रहर्ष की दूबक बन
 पायी धू मानवता के हित !

गोभा का स्काटिक मंदिर या
 धरर बुनी बहु गिरि प्रातर,
 मरकट के करतम में दीपित
 हो हीरक पावक विक सुंदर !
 उग्युक्त मीस हंसमुख प्रसार,
 मर्मरित धितिज निर्भर मुञ्जरित -
 सोबती निनिमिप संयुक्ता
 कति देव देव नम में सोभित -

जय जीवन की धारमा परमा
 गोभा - न मुझे संसय किचित्
 होती इतनी सुंदर न मुष्टि
 बिस्मय रस दूनी से चित्रित !
 कितने सुंदर फूलों के मुख
 जय कला प्रतीक रहन व्यंजित
 चेतना सिन्धु में चंद्र ज्वार
 हिस्सोभित स्वमिक गोभा नित !

चित्त प्रीति - स्वयं भ्रान्त मूर्ति
 कर नभ विकास गति सचासिध
 सोमा प्रकाश के स्वर्ण विविध
 करती जन मन में उद्घाटित !
 सपूर्ण विश्व जीवन प्रबल
 प्रार्थना पीठ सा सत्य धोर
 बढता धनंत गति से प्रबाध
 जड़ विद्या कास के दुबा छोर !

देखा नभ ईश्वर का धामम
 उसने - जो बसता जन मू पर
 अपने मठ स्मों से बिराद्
 नाशबठ असीम प्रलय धास्वर !
 तम मन जड़ बित् के पाग खोम
 वह रस समग्र सत् सर्वालय
 इद्रिय से आत्मा तक प्रहसित
 ध्यानंद मुक्त - उनसे प्रतिजय !

भगवद् सोमा में हो मूर्ति
 प्रब जन मू पर मानव जीवन
 उपचरण मुक्तों का विपाय
 हरठा अत अंतर्दीपित मम !
 मठ मू मानम की डामा में
 हो रहा बुझ रस सूर्योदय
 तुम तक पमु पसी जन भी प्रब
 नभ की प्रपृक्स सगता निर्मय !

क्या उसने दिक् कास जगद्
 कुछ भी न होय प्रब पा निश्चित
 रम बुझ प्रीति बित् मिथर मात्र
 केवल अपने में अंत स्थित !
 त्रिपुरों के छाया मुक्तों का
 जो करता प्रतिघात कपातर
 मुनहमे धरणिमा स्मों से
 उनको कत रम में मग्नित्रत कर !

हाँ देखा उसने एक बार
 सम्मुख गरिमा मंडित भानन
 नगपति है खड़े बिपद् मौन
 हो सत्य स्वप्न या प्रति दर्शन !
 द्रुत धर राजोचित मनुज बेश
 के बैठे पा नब तुम प्राप्त
 विस्मय हत संयुक्ता बोली -
 प्रिय देव, कहे कैसे पूजन ?

हम प्रतिभि आपके बधु, स्वयं
 धर बने हमारे प्रभ्यागत
 किन शब्दों में सुख कहे व्यक्त
 किन शुभ उपकरणों से स्वागत !
 बोले गिरधर तुम उमा तुस्य
 मेरे प्राणों की हो प्रिय धन
 मेरा यह निभूत निमग कक्ष
 तुमने फिर किया तप पावन !

मैं जड़ निरचेतन जग का रूप
 करने प्राया जग प्रतिपादन
 मानव स्वर्गों से मानवीय
 बनने - प्रबुद्ध नब रस धतन !
 जड़ पितृ दिशि क्षम को प्रतिक्रम कर
 नब जन्म से रहा भू मानव
 सब प्रकृति शक्तियों पात्र मुक्त
 धर बना रही जीवन उरसब !

देखा संयुक्ता ने विस्मित
 नगपति के मंत्री पार्षदपत्र
 बहु मिह श्रुता गज रूप खग पशु,
 वे जहाँ उपस्थित धर कर तन !
 मुहु रोमित ज्यों में धूपित
 गिरि प्रजा चाटवी प्रपन्न चरण
 निज पंथों में गति जब समट
 खग कुम गात्रा मंगल मायन !

सर सरिष्ठ सिन्धु, कानन पर्वत
 रवि जगति ग्रह गगन पवन पावक
 मानवता का स्वागत करने
 धाएँ - बिस्मय से अपसक !
 भूपिठ प्रतीक परिवारों में
 धाएँ के कुल सता जय मृग
 मू मंगल पर्व मताने हित
 बन शोभा देख सफल हों हुए !

जय केठन बनते इंद्र धनुष
 जपसा पटु पर करती सर्वन
 पद्मस्तु धार्ड की एक साध
 स्वयिक शोभा करने वर्षण !
 मानव मुख से वा सुखी जगत
 उस निमृत् प्रकृति बन प्रायण में
 भाषी जीवन शोभा गरिमा
 जगती संयुक्ता के मन में !

प्रिय रंघों के मासल तन घर
 देखते फुल अपसक सोचन
 मधु सारिों स बरसा शीरम -
 धमि भाव पंख भरते गुंजन !
 पशु पत्नी जग तर भीति मुक्त
 मानव कुटुंब का धन्यव बन
 मूड तीव्र मिथ हर्ष धमि स
 करता नव युग का धमिनंदन !

बड़ नील गाय मृग पीठों पर
 फिरते किलोर बन क भीतर,
 खन मीड़ मँजो बन पशुघों का
 सहला निरि लोहों में रच घर !
 कुचते जब बाएँ सिपा क
 जपते धंजुघों ने सीध मुबार
 के रूप पेंन चुना मम कर
 उसरी बाधा हुन सेठ हर !

बन हिरणी गर्भवती होती
 के उसे दिसाते सब वृष दल
 अग्ना में छाया में बिठसा
 झरने का मधुर पिसाते बल !
 के बड़ी बूटियों के रस से
 पशुओं के बाबों को छोटे
 गिरि बासों पर मृग शायों को
 गोपी में से लेकर होते !

मकड़ी के जाने वन में भर
 के रक्त धार रोक्के तुरत
 सब घोषधि नव उपकरणों से
 उनकी सेवा में रहते रत !
 देखा संयुक्ता ने विस्मित
 वृष तब पशु पक्षी गिरि कामन
 भूमा के बहुमुख मूर्त रूप
 सब एक चेतना पावक कन !

विस्मय अबाध उसको बिलोक
 बोले नगपति संमत कर स्वर
 गुंजी धन मंद प्रतिष्पनिया
 सिंघारों से उठ भवर में भर ! -
 स्नेहने प्रकृति का प्रायण यह,
 शोभा का विस्तृत बसा स्पल
 पसता सभराचर जग जिसमें -
 मा का हो बरसत छायांचल !

मेरे सिंघारा का चिद् वैभव
 जग मू के चरमा पर अर्पित
 के मूय्य स्फटिक मन्दिर से स्थिर
 रस स्पर्श रहित ईश्वर अर्पित !
 नगपति तलहटियों में जीवित
 जो प्राण हरित जीवन मुखरित -
 अधिमन आत्मा के मूस्य अर्थ
 यदि के इन्द्रिय वैभव विरहित !

नयनों को शोभा घंटरिञ्ज
 मयनों को स्वर संगीत मुबन
 बिह्ला को पद् रस के समुद्र
 मासा को मंघ मुबन मादन -
 स्पष्टेन्द्रिय को जो मिसे नहीं
 मोसल भयवत् तब का मार्ग -
 वह बह नहीं भ्रम रूप मंघ
 आत्मा वह नहीं बिरब बड़ तब ।

मृत आत्मवाद के ही तम से
 भारत का पतन हुआ निश्चय
 जन जगदात्मा को घुस गए
 आत्मा के जो पद में हो सय ।
 भक्त से भक्त, महत् महत् से वह
 सित प्रेम तब रस निधि भक्त
 निज से निज को प्रतिष्ठा करता
 कर निबिल बिरोधों का परिणय ।

क्यों बिना शब्द के शर्ष भ्रम
 क्यों बिना शर्ष के शब्द भ्रम -
 संयुक्ते तुमको जात सत्य
 संयुक्त सिद्धि तुम हो समर्थ !
 प्राथमिक शैतिक तब निबिल
 जीवन निधि में हस्त भवसित
 जीवन भगवत् नबनीत सार
 मानव में सर्वाधिक बिकसित !

ईस्वर उसकी क्षमता प्रलय
 जीवन ही प्रभु मुख का दर्शन
 आत्मा मन उसके मंज मात्र
 जड़ जगत् मुबन नीसा प्रागज ।
 वह कम बिकास का पथिक भ्रम
 छायाभा शोभा में गुच्छि
 जो स्वयं पीठ हा जन भू पथ
 वह मानवता में हो मूर्ति ।

समता धर्म का पाप सबग
 धर्मपूर्वकों के वैभव स
 कृसुमित कर जन भू जीवन मग !
 प्रभु लक्ष्य न निश्चय उच्च शिखर
 जीवन का स्वर्ग बने भूतम
 सौन्दर्य प्रेम धानंद धाम -
 रस ईश्वर हो सोभा मंसिम !

प्रिय सुते गुणारमक परिवर्तन
 मानव जम में हा रस संस्कृत
 सित गुण में हो संगठित रहि
 जीवन धर्म सोभा विकसित !
 सचित धार्मिक मुक्तों में
 भू जीवन हित शास्त्रत मयस
 धरम पावक रस सुखों स
 मुक्ति हो भू मानस धरम !

हो निकट प्रकृति के नव संस्कृति
 हा मूस शिखर जस स चिचित
 चरितार्थ इदियो का पावक
 पा सित इच्छा हृदि नूत रस भूत !
 जीवन ईश्वर हो पूर्ण काम
 जड उर में चित् रस संयोजित
 उपरत मन बने न ऊर्ध्व दृश्य
 हा ऊर्ध्व प्राण मन में वितरित !

यह प्रेम सृष्टि - हो प्रेम धम
 जन में प्रतीति समता स्थापित
 मन पाप पुष्प फल प्रति तटस्थ
 जन हा न नरक मय मे तापित !
 यह पूर्ण दया स भी धरिणय
 मित प्रीति - परस्पर हा धरित
 हो मानव जम सुख मिरत प्राण
 उर सृजन जाति रस में मज्जित !

मैं जिन्दगी का अन्तिमपक्ष तुमको
क्या सीखा हूँ ? तुम अत रस स्थित
यह बड़ा ज्ञान मम से न मुसम
जीवन में सोक करें अहित !
व माध्य युगों के अर्थ सत्य
अह से चेतन को कर विभक्त
जो गैरिक आत्मा तुम छोड़े
जीवन प्रति मन करत विरक्त !

अह सत्य मूपाधो में छोए,
ज्ञानाद्य बुद्धि मद्य में अटके
अग में ईश्वर को देख न पा
वे मुक्ति अन्व नम में अटके ।
अन पर अमृत - दाखिअ मार
सिखना विराम निश्चिअ अर्जन
जीवन के हारपारे अग को
दे गए आत्मभाठी अर्जन !

तुम जीवन ईश्वर को पूजो
अह प्रेम अनिर्बचनीय परम
अह अक्षय रस अट अट बासी
अह सृष्टि स्वर्ग का सधु उपक्रम !
अंतर्धामी अकनारं हृदय
पारस मधि - महिमा से फूकर
अह अना ह्ये की प्रेम अना
अम अग का अरता अपाठर ।

अर्थाय प्रेम ईश्वर, जीवन -
अवक अिसक अुद्धि स्मृति अर्जन
देखो अत मम आक्षय उठा
अह अरा स्वर्ग गोमा अापन ।
आत्मा के अतर पर अैव अुअ
अखिदानन्द अग का अानन
अति अमा उमे उन अाग अिरत
अग्यस्त अर्म अत - अुअ का मन !

आनन्द स्वर्ग विस्मय विनूड
 वह रहा समाधित - बन अहवत्,
 तदुपत हाता अर्घोपलब्धि
 रस पूर्ण सिद्धि - भू हो तदुपत् !
 धन कबल धन अत रम वरमा
 जन धरणी को करना उबर,
 बधि संस्कृत शोभा मयस में
 दिव मुकुमित हो दिव जीवन बर !

मी साध विश्व मानस ममस्त
 प्राणी पश्चिम का अतिश्रम कर
 इतिहास धर्म संस्कृतियों के
 शिखरों पर नव युग क पय धर -
 वे रहा तुम्हें जीवन दर्शन -
 यह महत् कल्प परिवर्तन क्षम -
 निर्माण करो नूतन अविष्य
 पू जीवन हो अथवत् दर्पण !

यह सिठ निरग मुपमा अंधस -
 देखो इसमें फूमा का मुख
 देखो गाते गति पत्र बिहग
 बरसाते मुक्त यमन का मुख !
 इठसाते रसमस रजठ स्रोत
 भरते गन मुक्ता के निगर
 देखा हिम शृणों की गरिमा -
 स्तंभित - सह्रा आभा मागर !

यह इंद्रिय प्राणों का जीवन
 सुख से बन निर मुबरतर
 मानव में हो अरिताव - शिखर
 वह मधरावर का - मर्त्य अमर ! -
 सहसा अदृश्य हा पा अद्रि -
 घोषत अम पनु गिरि बन प्रातर
 जगि जेखर भूमा मीम मीम
 बुग मम्मुग प्रकट हृषा माम्बर !

खा गया कास सेग बिना बोध
 शास्त्र का या जीवन प्राण्य
 वैद्य प्रेम पात में सचराचर
 कीड़ा करते मोहित उन मन ।
 जम नाम रूप वे गीम सत्य
 विक काम परण घर रस यावत
 जड़ चित् कर में जीवन तिनु यन
 भू पव का या दिव प्रत्यागत ।

जब शरद घरा सी नाँस पबेस
 समुक्ता जगती रस पबित
 चिद् घीत मौन प्रभुभूति प्रबित
 हिम ताप पक्व मू प्रीति चित ।
 सिद्ध स्वर्ग दया बट से उरोज,
 दूय दिव स्वप्नो क नातायन
 मुख घंत सुपमा का र्पय -
 धरती मू पर सपीठ चरच !

मितछा उमका सर्वाधिक मुख
 जब बहु प्रभु सम्पूर्ण होती नठ
 हाता अस्तित्व कृतार्थ पूर्ण
 उर काक हीन रम में तद्गत !
 उस मधु प्रहृय की धामा में
 बीजत जमत् में प्रभु बीजित
 पी रूप वेतनाप्रभु - करता
 यूने का गुद न हृदय मोहित ।

प्रभु में पबित ना घोर न कुछ
 बीसा न पूम कुछ मयममय
 हाती कृतार्थ जोभा उनमें
 धानंद हृदय करना तग्मय ।
 पागली भाति मित चरणा पर
 उनस न प्रधिक मोहक मुँदर
 चरिनार्थ मूच्छि हाती उनम
 के प्रीति घनय रम क मागर ।

प्रभु की ही अतर्क्यरिमा से
 सपता प्रसाठ निःस्वर अवर
 गिरि ध्यान मौन करते विस्तृत
 अविदित उच्छायों में खो कर !
 छवि मुग्ध नृत्य करत रवि शक्ति
 सागर रहता स्मृति प्रायोमित
 पा गद्य खोजता जग समीर
 सगता विगत बिस्मय स्तमित !

नीहार सरोवर में तिरता
 ज्यों शुक रजत जल में बिम्बित -
 निर्बसन ठरती समुक्ता
 सित मानस शोभा में परिकृत !
 मम को सगते तन वस्त्र भार
 रहती तमय बिज्जल मज्जित
 दीपित करता निर्बन का छर
 मुख सूकम ज्योति रेखा मंडित !

देखा उसने मन के बुग से -
 वह स्वप्न सोक का वा प्रांगम
 बिद्रुम आभा छाई मम में
 मासिक प्रथ घरा पटम गोभन !
 ऊपाएँ परिष्कमा करती
 स्मित अप्सरियाँ करती नतम
 उड़ अंतरिक्ष में देव भूत
 सित पुष्प श्रुष्टि करते प्रति क्षण !

से बुद्धा जगम पा सब मानव
 प्राते अश्रुत सारी क स्वर
 पलने में उसको विरय प्रकृति
 यी शुभा रही मा मा निःस्वर ! -
 कितने संवत्सर बीत बुद्ध
 दी रही प्रतीक्षा में अपसक
 जब अद्य प्रकृतिया म भू की
 कट स्रवण रत रह सब तट !

तुम उदय हुए रस सूर्य दिव्य
 कर घरा योनि का तम दीपित
 प्राभ्यारिभक्त प्रथम प्रभात शुभ
 भू पर साए, - बन मन विस्मित !
 विक काल हुए गति चरण प्रकृत
 बंदी स्मिष्ट पसकों में आवगत
 करतम पुट में तोपित धनंत
 जीवन समग्रता में परिपत !

भू यानि गर्भ में छिपा स्वयं
 साकार हो सफा प्रथम बार
 हंस मानव ईश्वर ने खोले
 भू अंधकार क गुहा द्वार !
 मीन्द्रयं ज्योति धानंद प्रीति
 हो सके सृष्टि पट मे सार्थक
 तुम म धर रूप कृतार्थ हुआ
 धाम्मा का रूप हीन पावक !

रस प्रीति चतना स मुतित
 फिरत धब जग में मारी नर,
 मय राग नाक दारिद्र्य हीन
 जन भू तम छोर विभव भास्वर !
 मोमा से गीत मरुत बस
 धमती सहृदय भू पर निर्भय
 मित्र संस्कृत नव मानव जीवन
 ईश्वर में अंतर रस तुग्मय !

मय हुआ काम मय विता ज्ञान
 भूमा का का निग्बधि प्रायण
 बंध प्रीति पाज में सचराचर
 शीड़ा करते अमित तन मन !
 महता जीवन मे निब मुष्ट मे
 धामा स्वनिम भावी गुठन
 पद क भीतर पट बे धनंत -
 होमना हिरण्य रस मित्र पुपण !

या ज्ञात उस जा मुद प्रेम
 छम सकता उसे न दश काम
 वह क्षम बौद्धिक सिद्धांत नहीं
 सिपटाए जिसको तर्क जाम । -
 वह धात्म त्याग सित धात्म दान
 जिसको नत मस्तक स्वीकृत कर
 बनता चिर निर्मम सौह स्वर्ग
 होता धम जय का रूपांतर ।

सार्य प्रात स्वर्णभा में
 खेतता मिषीली बंकी कबि
 उठ ज्योति बर्ष धन दूष सम्मुख
 अंकित करता उर में वह छवि ।
 तद्वत हा संयुक्ता का मन
 करता संसाप स्वमत घोषन
 मासिष्य मूकम इष्टा कबि का
 युग मन का करता सञ्चालन ।

हो उठता स्वत स्फुरित उसक
 उर में स्वधिम भावी धानन
 धमरों की चापों म झट्ट
 सगता जन भू जीवन प्रांगण ।
 सब मंगल की मित धाशा स
 दीपित हा उठता निरच्छल मन
 धजाण मुक्त चिन्महत् सत्य
 धब भू पय पर करता विचरण !

रस मुहा द्वार म उतर ज्योति
 बनती जन धरणी पर पय धर,
 जय जीवन जामा में मुहुसित
 हाता खुस भठमृन्त्र ईश्वर ।
 धरत गृणों स मुक्त बेम
 धानंद प्रीति रम क निर्भर -
 दूष भूँद लिए उसने - उनमें
 भाबी भू जीवन जामा धर ।

देखा सब ने - नभ में धनञ्ज
 सित इन्द्रधनुष पथ कर विरचित
 रत्नश्यामाधर्मों में वितरित
 भू स्वर्ग संतु सी बहु शोभित ।
 बिस पर साधार बिबर रस कबि
 बरसाता स्वप्ना के घट सित
 सेटा भू पर कृति लेखा सा
 सब - भात स्वेत आभा मटित ।

गूमी सहसा प्रार्थना मौन
 जन भू प्राणन को कर पावन
 प्राणा में बरसा मुझ शक्ति
 सब भङ्गा आस्था मे भर मन ! -
 जो साँस साँत में ईश्वर का
 करती तमम उर प्रीति स्मरण
 सित मन का प्रभु मंदिर बिसका
 प्रति कर्म सोव धर्मित पूजन ।

बहु जन मन स प्रभु में मय हा
 छा गई निखिल जग में गोपन
 रम पूत वेतना जीवन की
 बम कर जन मन में पुष्प स्मरण ! -
 हे प्रेम पूर्ण जीवन ईश्वर
 जन भू बिसका आभा प्राणन
 तुम प्रकृति पुरय रस युमन मिलन
 निष्काम सहज कम व कारण ।

तुम मनस बिज - सब कर्म म
 तिसते बम ज्योति मयन पुष्कर
 तुम मरय धमर से परे - धरम
 तिरते निठ जन्म मरण सागर ।
 बिबर पाप पुष्य मदनग पीड़ित
 हाता जब तुमस हृदय युक्त
 बहु मुक्त मुक्ति बंधन न ह
 बंधन में रहना निग्य मुक्त ।

तुम सत्य धर्मत्या म ऊपर
 मरित करत मित्र कृत महान
 इतिहास तमस क पार शान्त
 सांस्कृतिक ज्योति तारण जगत् ।
 जन धर्म कर्म मन में दन्ति
 नई जगत इन्द्रा म नदिन -
 भौतिक धार्मिक विद्वि धर्म
 यदि प्रीति असूत न क विगति ।

पीढ़ी पाढ़ा घर मजन क
 तुम हल जीवन में मूर्ति
 जन मू प्राणा श्री माया क
 वैभव भगवत म कर मुकुति ।
 मू रज पसका में रज स्वप्न
 योवन उर में शकृत मानि
 नर नारी उर की धाराला
 मित्र प्राणि मुक्ति रम म बचिन ।

उभुक मयुक्त जना का धर्म
 मू-स्वग मनु करत निष्कित -
 धाराला मानव भाषा का मुख
 प्रिय कर म करत धनवगति ।
 मन क मूल्या में शायी जग
 कर व्यक्ति व्यक्ति का मुट भक्त
 मन मस्कारों क इमिया म
 बिय नल मनुज वैजय रत ।

दास्य धनीत क प्रता का
 पीढ़ा प्राणा जन मनुज कल
 धाराला मानवता क प्रशास
 युग लम म कर जन क लमल ।
 नर धरा प्रीति जन उतरा धर
 दास्य हा इदिय जीवन पन
 ह मनुज प्रेम क परमेश्वर
 हीवा धन कर्म में भव रत ।

प्राणा रस में कर उर परिव्रज
 बिचरो धू पर नर मारी गण,
 खोसो मन से तन के बंधन
 संभव न धीर जग में जीवन ।
 यह अग्नि सेतु अग्नि धारा पब
 समम मित धरो प्रबुद्ध चरण
 कर पार ज्योति के अग्रिम
 खोसो भाबी मगल तोरण ।

•

इस प्रकार सांस्कृतिक कल्प नव
 धू जीवन में होता बिचरित
 एक बेतना रस सागर में
 बिबिध रूप उठ होते अचरित ।
 प्रथम बार अत्र जगत् ब्रह्म में
 ब्रह्म जगत् में हुआ प्रतिष्ठित
 मुक्त सेव मन से धू जीवन
 सित चित् पट में हुआ समन्वित ।

जन्म से बुका अत्र नव मानव
 नद चित् का कर रस संयोजित
 धरा स्वर्ग कल्पना न रह अत्र
 जन जीवन म होता मूर्तित ।
 कवि मन क रम मित दर्पण में
 देख अविद्य मनुज का ध्यानन
 प्राणा धू मन के बिधान को
 करें प्रेम के प्रथम को अर्पण ।

•

